Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी और उनका युग

सर जदुनाथ सरकार

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

95403

3443

SALKRISHNA BOOK CO.
Hazratganj, Lucknow

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी और उनका युग

[Hindi edition of *Shivaji and His Times*
by Sir Jadunath Sarkar]

मूल लेखक
सर जदुनाथ सरकार

अनुवादक
मदनलाल जैन, एम.ए.
निवृत्त प्रधानाचार्य

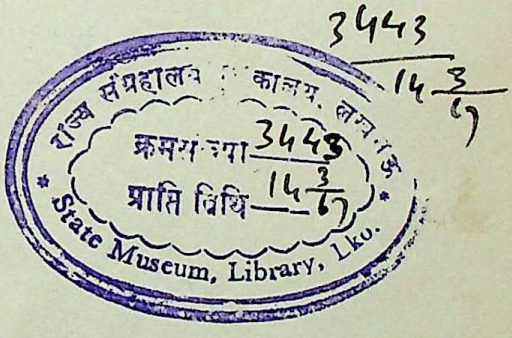

शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी (प्रा.) लिमिटेड
पुस्तक-प्रकाशक एवं विक्रेता
जयपुर • आगरा • इन्दौर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

यह पुस्तक अंग्रेजी के पाँचवें एवं अन्तिम संस्करण का अनुवाद है

© जदुनाथ सरकार

रजिस्टर्ड कार्यालय
अस्पताल रोड, आगरा

●

शाखाएँ
चौड़ा रास्ता, जयपुर ● खजूरी बाजार, इन्दौर

954.02
स अ

प्रथम हिन्दी संस्करण १९६४

●

मूल्य : १५ रुपये मात्र

शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड, आगरा के हेतु
दुर्गा प्रिंटिंग वर्क्स, आगरा में मुद्रित

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी के चित्र

शिवाजी की निजी छवि के बारे में हमको विश्वसनीय जानकारी है जब सन १६६४ में उनको सूरत में कुछ अंग्रेजों ने देखा था। पादरी एसकेलियट ने लिखा है कि "जिन लोगों ने उनको देखा वे कहते हैं कि उनका शरीर कुछ ठिंगना था, मेरे शरीर से कुछ छोटा था और वह सुडौल था। काम में वह बड़े परिश्रमी थे, मुस्कराहट उनके चेहरे पर सदा खेलती रहती थी, उनकी दृष्टि चौकन्नी एवं पैनी थी, और रंग में वह अपने समस्त लोगों से अधिक गोरे थे।" फ्रांसीसी थेवनोट ने जिसने दक्षिण भारत में नवम्बर १६६५ से फरवरी १६६७ तक पर्यटन किया, उनके विषय में लिखा है, "राजा का कद छोटा है और रंग गेहुँआ है और उनकी सजीव आँखों से स्फूर्ति झलकती रहती है।" यह खेद का विषय है कि न राजापुर के अंग्रेज व्यापारी ने, जिसने शिवाजी के साफे पर कौतूहलवश हाथ फेर कर देखा था (मार्च, १६७५), और न हैनरी ऑक्सिनडन ने जो शिवाजी के राजतिलक के अवसर पर उपस्थित था (१६७४), उनकी निजी सूरत-शक्ल का कोई वर्णन छोड़ा है। पिछले ने केवल यह लिखा है कि तोल में वह केवल लगभग १६,००० पैगोडा के बराबर थे (ले फेबर के अनुसार १७,००० पेगोडा या लगभग १६० पौंड)। शिवाजी के सर्वोत्तम पुराने चित्रों का वर्णन नीचे दिया जाता है।

१. एफ. वैलेंटिन की *Oud-en Nieuw Oost-Indien* (१७२४-२६) के चित्रों में एक उत्कीर्ण चित्र है जो सम्भवतः मुगल दरबार में भेजे गये डच ईस्ट इंडिया कम्पनी के मिशन ने १७१२ में प्राप्त किया था (मुखपृष्ठ का चित्र देखिए)। ओर्म के खण्डलेखों (*Fragments* १७८२) में इस्पात के उत्कीर्ण सजीव चित्र की यह प्रतिलिपि है जिसे एक यूरोपीय शिल्पी ने सँवार दिया था।

२. शाहआलम के परिवार में १६८८ से पूर्व मीर मुहम्मद नाम का एक कलाकार था जिसने इटैली के मनुक्की यात्री के लिए ५६ चित्र खींचे जो उसने वेनिस के सीनेट को भेंट किये। इस संग्रह में (जो अब पेरिस में है) शिवाजी का भी एक चित्र है (ब्लौचेट की सूची में संख्या ३९) जिसे श्री अरविन ने अपनी पुस्तक 'स्टोरिया डू मोगोर', खंड ३ (चित्र संख्या ३५) में फोटो लेकर प्रकाशित किया है। यह मेरी पुस्तक में दूसरा चित्र है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

३. ब्रिटिश म्यूजियम में शिवाजी का समसामयिक और वास्तविक चित्र सुरक्षित है, नामशः पांडुलिपि विस्तार २२,२८२ (चित्र संख्या १२)। उस पर निम्न डच अभिलेख भी है—'शिवाजी विगत मराठा राजा।' भारतीय चित्रों का यह संग्रह किसी डच के पास था जिसमें हर एक चित्र पर प्रत्येक मनुष्य के नाम १७०७ से पूर्व डच भाषा में लिख दिये गये थे, क्योंकि औरंगजेब के चित्र पर लिखा हुआ है "वर्तमान महान मुगल"। इरविन का मत है कि ये चित्र बहुत ही सजीव बने हुए हैं जैसा कोई कलाकार बना सकता है। शिवाजी के इस सुनिर्मित चित्र का वर्णन इरविन ने निम्न लिखा है—

"तीन-चौथाई लम्बाई, बायीं ओर देखते हुए—चेहरा वही जो ओर्म के 'फ्रेगमेंट्स' में वर्णित है। काली दाढ़ी और काली मूँछें—दोनों ओर लम्बे बाल—सुनहरी साफा—रत्नजड़ित बगुला—काली कलजी—सफेद 'जीधा' (मोतियों से सुसज्जित)—सफेद चोगा, कामदानी किया हुआ—कंधे पर पड़ा हुआ लाल रेशमी दुपट्टा, जाली का काम किया हुआ—पेशकब्ज (कटार) बायीं ओर कमर से निकली हुई—दायें हाथ में 'पट्टा' या किर्च का दस्ता छिपा हुआ—बायें हाथ में 'धूप' या सीधी तलवार पकड़े हुए।"

४. शिवाजी का छोटा चित्र, घोड़े पर सवार, तलवार से शेर का शिकार करते हुए, अब पी० डबल्यू० म्यूजियम बम्बई में सुरक्षित है। (इसकी तारीख मेरे अनुमान से लगभग १७२५ है।)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भूमिका

जब केप्टन जे० ग्रांट डफ अपना ग्रन्थ **मराठों का इतिहास** (सन् १८२६ में तीन खंडों में प्रकाशित) लिख रहे थे, तो वयोवृद्ध विद्वान, राजमर्मज्ञ माउण्ट स्टुअर्ट एलफिंस्टन ने उनको अपने २० अप्रैल, १८२२ के पत्र में शिवाजी के जीवन से सम्बन्धित उपलब्ध सामग्री के विषय में बिलकुल ठीक ही लिखा था "आपकी कठिनाई थी तथ्यों को जानना और उनको विवेकपूर्ण रीति से संकलित करना जिससे कि गप्प मारने वाले **बखरों** और डींग हाँकने वाली **तवारीखों** की विपुल राशि से संगत और विचारशील इतिहास तैयार हो जाय।" इन दोनों संदिग्ध स्रोतों को अंग्रेजों की कोठी के अभिलेखों ने अनुपूरित किया, जिनको ग्रांट डफ ने "तारीखों के नियत करने में बहुत महत्त्वपूर्ण, और देशी विद्वानों द्वारा मान्य तथ्यों की सम्पुष्टि के लिए अति मूल्यवान" घोषित किया।

ग्रांट डफ को चार स्रोत नहीं मालूम थे जिन्होंने अब हमारे ज्ञान में अनेक कमियों को पूरा किया है और उनके द्वारा शिवाजी की लिखित जीवनी को कई बातों में अमान्य और अशुद्ध सिद्ध कर दिया है। (क) समसामयिक फ्रांसीसी और पुर्तगाली पांडुलिपि स्रोत प्रथम बार हमको उपलब्ध हुए हैं, पेरिस पुरालेख-संग्रहालय में सुरक्षित (नामशः फ्रेंकोई मार्टिन के संस्मरण—*Memoires*), तथा गोआ अभिलेख जो शिवेलियर पी० एस० पिसूरलेंकर के घोर परिश्रम के फलस्वरूप ही प्राप्य हैं। मनुक्की का मूल इतिहास अब डबल्यू० इरविन के उत्कृष्ट अनुवाद 'स्टोरिया डो मोगोर' (*Storia do Mogor*) के नाम से प्राप्य है। फ्रांसीसी और डच पुस्तकों में जो यात्रियों के विवरण प्रकाशित हुए थे और जिनको ओर्म ने ठीक ही निराशापूर्ण कहा था, अब उनको एकदम अस्वीकार किया जा सकता है। (ख) मराठी में संक्षिप्त कालक्रम (**शकावलियों**) में दी गयी अनेक तारीखें और तथ्य बहुत छानबीन के बाद तथा दूसरे स्रोतों के ज्ञान के पश्चात स्वीकार किये जा सकते हैं। **चिटनीस बखर** (१८१०) की अपेक्षा **९१ कलमी बखर** बहुत पहले का और कम पौराणिक ग्रंथ है—इनमें से चिटनीस बखर पर ग्रांट डफ ने बहुत भरोसा किया और इसका परिणाम यह हुआ कि उनका शिवाजी का विवरण अनेक स्थलों पर गलत हो गया है। (ग) फारसी ऐतिहासिक पुस्तकों के सम्बन्ध में ग्रांट डफ को यही निराशा

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मिली। उन्होंने खाफीखाँ की बहुत देर (१७३५) के और परम्परागत इतिहास पर भरोसा किया जिसको अब चिटनीस बखर के समान ही अविश्वसनीय ठहराया जा सकता है, और औरंगजेब के सविस्तर तथा नितान्त समकालीन इतिहासों (जैसे **आलमगीरनामा** और **मासिरे-आलमगीरी**), सरकारी समाचार वाले पत्र (**अखबारात**), भीमसेन के निजी संस्मरण तथा जयसिंह के पत्रों का उनको कुछ भी ज्ञान न था—ये सब फारसी भाषा में लिखे गये हैं और मैंने इस ग्रंथ में उनका पूरा उपयोग किया है। (ग) जयपुर में सुरक्षित फारसी और डिंगल के प्रपत्र। इनके अतिरिक्त हमको शिवाजी विषयक तीन समसामयिक ऐतिहासिक कविताओं को भी इसी श्रेणी में रखना चाहिए, जो हमारे समय में ही प्रकाशित हुई हैं।

इस विभिन्न प्रचुर नयी सामग्री के विश्लेषण के फलस्वरूप, जो हमको ग्रांट डफ की पुस्तक के प्रकाशित होने के बाद की शती में उपलब्ध हुई है, एक ओर तो उनके द्वारा शिवाजी पर लिखित अध्याय अमान्य हो गये हैं और दूसरी ओर मराठी **बखर** (सिवाय सभासद के समकालीन अनुस्मरणों के) भी अस्वीकार कर दिये गये हैं, जो दोनों ही अब तक मान्य थे। शम्भूजी और राजाराम के इतिहास के विषय में भी ऐसा ही हुआ है, जिसे मैंने अपनी पुस्तक **औरंगजेब**, खंड ४ व ५ में नये सिरे से लिखा है, और शिवाजी के पिता शाहजी का इतिहास का भी पुनर्निर्माण किया है जिसे मैंने **शिवाजी का राजवंश** (House of Shivaji) नामक अपनी पुस्तक में लिखा है।

इस पुस्तक के अन्त में मैंने एक आलोचनात्मक सहायक ग्रन्थों की सूची दी है—इनमें वे हैं जिनको मैंने अस्वीकार कर दिया है और वे भी हैं जिनका मैंने अनुसरण किया है।

चौथा संस्करण (फरवरी, १९४८)—तीसरे संस्करण के प्रकाशित होने के पश्चात उन्नीस वर्षों में जो नवीन सामग्री प्रकाश में आयी है उसका मैंने पूरा उपयोग किया है। इन नवीन स्रोतों में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण—और प्रत्येक दृष्टि से विशेष महत्त्व के ऐतिहासिक प्रपत्र—शिवाजी विषयक जयपुर के अभिलेख हैं जो १९३९ में प्रकाश में आये, और जिनके फलस्वरूप औरंगजेब से शिवाजी की भेंट तथा आगरे में उनके बन्दी जीवन पर अध्याय नये रूप में लिखना पड़ा है। इस बीच में कई पुर्तगाली स्रोत पुस्तकों के रूप में छप गये हैं, और वे १६३४ में दक्षिण कोंकण और कनारा में शिवाजी की कृतियों पर अधिक प्रकाश डालते हैं। १९२७ और १९३० में दो विभिन्न विचार वाले समुदायों ने क्रमशः बम्बई और पूना में शिवाजी की त्रिशती मनायी, और इनके

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

फलस्वरूप प्रचुर मात्रा में पत्र, कालक्रम और मराठी भाषा में पुस्तकें आदि प्रकाशित हुईं, जिनके आधार पर मैंने पुस्तक के पूर्व संस्करणों में दिये गये अनेक तथ्यों और विचारों का पुनः परीक्षण किया है। यद्यपि इस सामग्री के आधार पर आधुनिक मराठा लेखकों ने जो परिणाम निकाले हैं उनमें से मैंने बहुतों को स्वीकार नहीं किया है, तथापि इन प्रकाशित स्रोतों ने शिवाजी विषयक अध्ययन और अनुशीलन को बहुत प्रेरणा दी है, और इनमें से कुछ ग्रन्थ (विशेषकर **पत्र-सार-संग्रह** अथवा तीन खंडों में पत्रों आदि की कालक्रमानुसार तालिका) सदा ही इतिहास के विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होंगे।

वर्तमान संस्करण में नये प्रकाशित स्रोतों में उन तथ्यों के सम्मिलित करने के अतिरिक्त जिन्हें मैं यथार्थ मानता हूँ, मैंने सूक्ष्म संशोधन किया है और कई छोटी-मोटी भूलों को सुधार दिया है जो प्रेस के लिए शीघ्रता से तैयार किये गये तीसरे संस्करण में रह गयी थीं। वी० एस० वाकस्कर द्वारा प्रकाशित सटिप्पण **९१ कलमी बखर** (बड़ौदा १९३०) का विस्तारपूर्वक प्रयोग किया गया है, और इसलिए तारीखे-शिवाजी के फारसी संस्करण के सभी उद्धरणों को, जिनका प्रयोग मैंने तीसरे संस्करण तक किया था, इस संस्करण में छोड़ दिया है।

इन परिवर्तनों का कुल परिणाम यह हुआ है कि इस संस्करण में नवयुवक शिवाजी का नवीन विवरण (अध्याय २, परि० ४ और ८) में दे दिया गया है, जावली व पुरन्दर के उपाख्यान और शिवाजी के बन्दी-काल (१६४८-४९) नये सिरे से पुनः लिखे गये हैं (अध्याय २, परि० ११-१३ और परिशिष्ट) पुनः नवीन रूप में लिखे गये हैं, अफजल काण्ड की अधिक खोजबीन की गयी है, औरंगजेब व शिवाजी की भेंट तथा आगरे में उनके बन्दी जीवन के विवरण को बिलकुल बदल दिया गया है (अध्याय ६), नेताजी पाल्कर के जबरदस्ती धर्मपरिवर्तन के जीवन का अधिक ब्यौरा दिया गया है, तान्त्रिक अनुष्ठानों सहित शिवाजी के दूसरे राजतिलक को एकदम नये विवरण के रूप में जोड़ दिया गया है (अध्याय ९, अनु० ७), कुदाल के निकट खवासखाँ तथा बाजी घोरपड़े से उनके युद्ध अधिक ब्यौरे से और अधिक सही तौर पर वर्णित किये गये हैं (अध्याय १०, परि० ४), पुर्तगालियों के प्रति उनके व्यवहार को अधिक विस्तृत रूप से लिखा गया है (अध्याय १४, परि० ९)। सहायक ग्रन्थों की सूची को नया रूप दे दिया गया है और उसकी तारीखों में अब तक की नयी खोजों के अनुसार परिवर्द्धन कर दिया गया है, और विषयानुक्रमणिका बढ़ा दी गयी है।

सत्रहवीं शताब्दी में दक्षिण के इतिहास के जटिल ताने-बाने के बहुत-से तंतुओं में मराठे केवल एक थे। अतएव शिवाजी के स्वयं के कार्य और नीति के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सही कारण और उनके पूरे परिणामों को समझने के लिए, यह आवश्यक है कि मुगल साम्राज्य और साथ ही बीजापुर व गोलकुण्डा के आन्तरिक मामलों के पूरे ब्यौरे को भी समझा जाय। इसलिए वर्तमान पुस्तक केवल शिवाजी की ही जीवन-गाथा नहीं है; इसमें बहुधा इन तीन मुस्लिम राज्यों के समसामयिक इतिहास का भी उल्लेख है, यद्यपि विषय का विस्तृत विवरण मैंने औरंगजेब का इतिहास *(History of Aurangzib)* खण्ड ४ में दे दिया है। शिवाजी के जीवन से सम्बन्धित अधिकांश प्रपत्रों, विवेचनों और समर्थक अंशों *(pieces justificatives)* को मैंने अपनी पृथक पुस्तक **शिवाजी का राजवंश** *(The House of Shivaji)* (दूसरा संस्करण, १९४८) में प्रकाशित किया है, और उस पुस्तक का अनुशीलन इस ग्रन्थ के पूरक के रूप में करना आवश्यक है।

पाँचवाँ संस्करण (दिसम्बर, १९५२)—इस संस्करण में मुख्य परिवर्द्धन निम्न हैं—शिवाजी के जहाजों और नौसेना के अड्डों का पूरा वर्णन, एक मुस्लिम इतिहासकार का कथन कि एक गर्वपूर्ण योजना के अनुसार अपने को "बहादुर" साबित करने के लिए शिवाजी ने अफजलखाँ पर पहले आक्रमण किया, शिवाजी की मृत्यु के तीन वर्ष पूर्व उनके दरबार में सिंहासन पर बैठने के लिए चल रहे षड्यन्त्र जिनके फलस्वरूप शम्भूजी मुगलों से जा मिला, अपने पिता की विरासत के बँटवारे के लिए शिवाजी और उनके सौतेले भाई के मध्य कलह, और सिद्दियों तथा मराठा नौसेना विषयक पुर्तगालियों द्वारा नया ज्ञान। कोल्हापुर में प्राप्त परमानन्द कृत संस्कृत कविता के खण्ड-भाग का, जिसका सम्पादन गो० स० सरदेसाई ने 'बड़ौदा ओरियंटल सीरीज' में किया और जिसका प्राक्कथन मैंने लिखा है, मैंने पूरा उपयोग किया है, और इससे शिवाजी के घरेलू जीवन की कथा का एक अंश निर्मित हो गया है। अन्तिम हिन्दू नौसेना के जन्म का अध्ययन पूरे विवरण और आलोचना सहित किया गया है, और इस विषय का महत्त्व नवीन भारत के लिए भी अधिक है। शेवालियर पेनडुरंग एस० एस०, पिसूरलेंकर शिवाजी और उनके पड़ोसियों के सम्बन्ध में प्रत्येक नयी जानकारी का मूल मुझे कृपापूर्वक भेजते रहे हैं, जो उनके गोआ के सरकारी तथा गिर्जा के अभिलेखों से प्राप्त हुई हैं। नयी सामग्री के कारण इस पुस्तक के कलेवर में १९ पृष्ठ और बढ़ गये हैं।

१०, लेक टैरेस,
कलकत्ता, २९

जदुनाथ सरकार

प्रथम संस्करण (अप्रैल, १९१९), द्वितीय संस्करण (जून, १९२०)
तृतीय संस्करण (दिस०, १९२८), चतुर्थ संस्करण (फरवरी, १९४८)
पंचम संस्करण (फरवरी, १९५२)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दो शब्द

इस पुस्तक के लेखक श्री जदुनाथ सरकार का स्थान भारत के महानतम इतिहासकारों में से है। उनकी प्रतिभा की धाक केवल अपने देश में ही नहीं वरन विदेशों में भी जमी हुई है। भारत की सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दियों के इतिहास के वह माने हुए विद्वान हैं। प्रस्तुत पुस्तक उनकी अमर कृतियों में से है।

शिवाजी को इस संसार से विदा हुए लगभग ३०० वर्ष हो गये। परन्तु अब भी देश की वर्तमान परिस्थिति में विशेषकर चीनी आक्रमण और पाकिस्तान की धमकियों के संदर्भ में हमको उनके जीवन तथा शासन से बहुत प्रेरणा और निर्देशन मिल सकते हैं। उनका निर्मल उच्च नैतिक चरित्र, उनकी पैनी अन्तर्दृष्टि, धार्मिक सहिष्णुता, प्रशासन प्रणाली, राजस्व-व्यवस्था, नौ-सेना का प्रबन्ध, रण-कौशल, युद्ध विषयक पूर्व-तैयारियाँ, गुप्तचर-व्यवस्था, भ्रष्टाचार-उन्मूलन, राजनयिकता, राजमर्मज्ञता आदि अनेक बातों से हम बहुत-कुछ सीख सकते हैं।

वह एक राष्ट्र-निर्माता थे। यह कार्य उन्होंने उस समय की चार बड़ी शक्तियों से लोहा लेकर किया था—मुगल साम्राज्य, बीजापुर राज्य, पुर्तगाली भारत और जंजीरा के अबीसीनियाई। इस संघर्ष में उनको महान सफलता मिली। छत्रपति शिवाजी के लिए यह बड़े गौरव की बात थी।

हमारे नवयुवक, राष्ट्र के वर्तमान कर्णधार तथा अन्य सभी जिनको देश का कल्याण अपेक्षित है उनके जीवन और कृतियों से बहुत प्रेरणा ग्रहण करेंगे।

जन्माष्टमी
संवत २०२०

मदनलाल जैन

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

विषय-सूची

भूमिका

अध्याय १. भूमि और निवासी १-१२

[१. विस्तार, वर्षा, मिट्टी और फसलें; २. निवासियों का एकाकीपन; ३. समाज की निर्धनता, सरलता और समानता; ४. मराठा चरित्र; ५. धार्मिक गुरु; ६. साहित्य और भाषा; ७. आधुनिक मराठा सैनिक और कृषक; ८. मराठा चरित्र के दोष]

अध्याय २. किशोर एवं युवा-अवस्था १३-४६

[१. शिवाजी के पूर्वज; २. शाहजी भोंसले का उत्थान; ३. शिवाजी का जन्म और बचपन; ४. शिवाजी के प्रारम्भिक जीवन की कथा का पुनर्निर्माण; ५. पूना जागीर की दशा, १६३७; ६. शिवाजी की शिक्षा; ७. मावलों पर आधिपत्य; ८. सामाजिक वातावरण जिसमें शिवाजी ने कार्य किया; ९. शिवाजी द्वारा अपनी वृत्ति का चुनाव; १०. शिवाजी द्वारा दुर्गों की प्रारम्भिक विजय; ११. आदिलशाह ने शाहजी को बन्दी किया; १२. पुरन्दर किले पर अधिकार १६४८; १३. जावली और रायगढ़ पर विजय १६५६; १४. शिवाजी की विजयें; **परिशिष्ट**—जावली के मोरे]

अध्याय ३. राज्य-क्षेत्र का तीव्र विस्तार और मुगलों तथा बीजापुर से प्रथम युद्ध १६५७-५९ ४७-७४

[१. सन् १६५७ तक मुगलों से सम्बन्ध; २. मुगल दक्षिण में शिवाजी का पहला छापा; ३. औरंगजेब द्वारा प्रतिरक्षा के उपाय; ४. शिवाजी ने मुगलों से सन्धि की; ५. शिवाजी का कोंकण पर आक्रमण १६५७; ६. बीजापुरी योजनाएँ—अफजलखाँ का भेजा जाना; ७. अफजल की युद्ध-योजना और शिवाजी के प्रति नीति; ८. शिवाजी को डर और उनकी परेशानी; ९. षड्यन्त्र और प्रति-षड्यन्त्र; १०. शिवाजी और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अफजल की भेंट; ११. अफजल की सेना का विनाश; १३. अफजल के विषय में दन्तकथाएँ; **परिशिष्ट**—अफजल काण्ड]

अध्याय ४. कठोर युद्ध, १६६०-६४ ७५-१०२

[१. शाइस्ताखाँ को शिवाजी के विरुद्ध भेजा जाना; २. शिवाजी का पन्हाला किले में घिरना; ३. शाइस्तखाँ का पूना पर अधिकार; ४. शाइस्ताखाँ का चकन पर कब्जा १६६०; ५. शिवाजी की रत्नगिरि किले पर विजय १६६१; ६. शाइस्ताखाँ पर रात्रि में आक्रमण १६६३; ७. सूरत का वर्णन; ८. सूरत की अंग्रेजों द्वारा वीरतापूर्वक रक्षा; ९. सूरत की पहली लूट १६६४; १०. शिवाजी की हत्या का प्रयत्न; ११. धन किस प्रकार वसूल किया गया; १२. सन १६६४ में शिवाजी के कारनामे; **परिशिष्ट**—सूरत निवासियों की यातनाएँ]

अध्याय ५. शिवाजी और जयसिंह १०३-१३१

[१. जयसिंह शिवाजी के विरुद्ध भेजा गया; २. जयसिंह का चरित्र; ३. जयसिंह की व्यग्रताएँ और सुनियोजित तैयारियाँ; ४. शिवाजी के वैरियों का सहमित्रण; ५. युद्ध-क्षेत्र का विवरण; ६. मुगलों ने बाह्य चौकियाँ स्थापित कीं; ७. जयसिंह ने अभियान आरम्भ किया; ८. पुरन्दर का वर्णन; ९. घेरा आरम्भ किया गया; १०. वज्रगढ़ का पतन; ११. द्रुतगामी दस्तों ने शिवाजी के गाँवों को लूटा; १२. मराठों द्वारा घेरा तोड़ने के प्रयत्न; १३. पुरन्दर की बाह्य सुरक्षा पर आक्रमण; १४. मुरारजी बाजी की मृत्यु; १५. शिवाजी द्वारा आत्मसमर्पण की चर्चा; १६. शिवाजी ने जयसिंह से भेंट की; १७. पुरन्दर की सन्धि १६६५; १८. शिवाजी को मुगलों से सम्मान-प्राप्ति; १९. बीजापुर के आक्रमण में शिवाजी ने मुगलों की सहायता की; २०. शिवाजी का पन्हाला पर आक्रमण विफल हुआ]

अध्याय ६. औरंगजेब से भेंट १३२-१५८

[१. मुगल दरबार में पहुँचने पर शिवाजी की आशंकाएँ और आशाएँ; २. शिवाजी की अनुपस्थिति में उनके राज्य का प्रबन्ध; ३. आगरे के लिए शिवाजी की यात्रा; ४. आगरे में शिवाजी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

को नयी जानकारी; ५. शिवाजी की औरंगजेब से भेंट क्यों असफल हुई; ६. शिवाजी औरंगजेब के समक्ष; ७. शिवाजी जाल में और भी अधिक जकड़ दिये गये; ८. शिवाजी के प्रति मुगल नीति; ९. शिवाजी का आगरे से निकल भागना; १०. शिवाजी का घर वापस लौटना; ११. जयसिंह की चिन्ताएँ और शिवाजी के विरुद्ध योजनाएँ; **परिशिष्ट**—शिवाजी की वापसी, तारीखें और यात्रा-मार्ग]

अध्याय ७. १६६७-१६७० १५९-१७९

[१. सन १६६७ में मुगल दक्षिण की दशा; २. शिवाजी ने मुगलों से सुलह की १६६८; ३. मुगलों से युद्ध फिर छेड़ दिया गया; ४. मुअज्जम और दिलेर में अनबन; ५. सूरत की दूसरी लूट १६७०; ६. दिन्दोरी का संग्राम; ७. बरार और बगलाना पर धावा; छत्रसाल बुन्देला]

अध्याय ८. मुगलों और बीजापुर से संघर्ष १८०-१९८

[१. महावत और दाऊद की मुहिम १६७१; २. बहादुर और दिलेर की मुहिम; ३. मराठों ने कोली प्रदेश पर अधिकार किया १६७२; ४. सूरत खतरे में; ५. मराठा सफलताएँ १६७२; ६. अनियमित युद्ध १६७३; ७. पन्हाला और सतारा का पतन; ८. उमरानी का युद्ध; ९. नेसारी की लड़ाई १६७४; १०. दिलेरखाँ की पराजय]

अध्याय ९. शिवाजी का राज्याभिषेक और उसके बाद, १६७४-१६७६ १९९-२१६

[१. शिवाजी क्यों सिंहासनारूढ़ होना चाहते थे; २. शिवाजी को क्षत्रिय होने की मान्यता मिली; ३. राज्याभिषेक की तैयारियाँ; ४. पूजा और अनुष्ठान; ५. राज्याभिषेक का दृश्य; ६. नगर में जलूस; ७. शिवाजी का तान्त्रिक राज्याभिषेक; ८. राज्याभिषेक का व्यय; ९. बहादुरखाँ के शिविर की लूट; १०. शिवाजी की दिखावटी वार्ता; ११. मुगलों के विरुद्ध पुनः युद्ध आरम्भ हुआ]

अध्याय १०. दक्षिण कोंकण और कनारा २१७-२४१

[१. कनारा, उसके शासक और व्यापार; २. राजापुर आदि पर प्रथम आक्रमण; ३. दक्षिण कोंकण की मराठा विजय

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१६६३; ४. कनारा में शिवाजी, १६६४—घोरपड़ों का संहार; ५. बसरूर और कारवार की लूट; ६. दक्षिण कनारा में बीजापुरी संघर्ष १६६५; ७. शिवाजी और रुस्तमे-जमाँ; ८. गोआ पर अधिकार करने का उनका षड्यन्त्र; ९. बीजापुरी कनारा में उनकी असफलता; १०. कनारा में भीतरी परेशानियाँ; ११. फौंदा का पतन १६७५; १२. कनारा उच्चभूमि में मराठे]

अध्याय ११. नौसेना अभियान २४२-२७१

[१. राष्ट्रीय नौसेना की आवश्यकता; २. शिवाजी की नौसेना के अड्डे और गोदियाँ; ३. मावलों की किलेबन्दी; ४. पश्चिमी तट की समुद्रगामी जातियाँ; ५. मराठा नौसेना की दुर्बलता—उसका व्यूह कौशल; ६. लड़ाकू पोत—गुराब और गल्लीवत; ७. शिवाजी का व्यापारी समुद्री बेड़ा; ८. पश्चिमी तट के अबीसीनियाई; ९. अबीसीनियाइयों पर मराठा विजय १६६१ तक; १०. शिवाजी की नौसेना का विकास; ११. मराठा नौसेना की कृतियाँ १६६४-१६६५; १२. जंजीरा पर मराठा आक्रमण १६७०; १३. अबीसीनिया वालों ने डाँडा (दाँदा) वापस लिया; १४. नौसेना युद्ध १६७२-१६७५, १५. जंजीरा पर महान आक्रमण १६७६; १६. नौसेना युद्ध १६७६-८०; १७. खंदेरी के लिए अंग्रेजों से युद्ध]

अध्याय १२. कर्नाटक का आक्रमण १६७७-१६७८ २७२-३०२

[१. मद्रास का तट : उसकी धन-दौलत; २. बीजापुरी कर्नाटक में आपसी फूट; ३. पूर्व कर्नाटक में शिवाजी के दावे; ४. कर्नाटक-अभियान की राजनयिक तैयारियाँ; ५. हैदराबाद के लिए कूच; ६. हैदराबाद में शिवाजी का भव्य प्रवेश; ७. शिवाजी की कुतुबशाह से भेंट; ८. गोलकुण्डा के साथ मैत्री; ९. श्रीशैल के लिए प्रस्थान; १०. जिंजी पर अधिकार और वैलौर का घेरा; ११. आक्रमित देश की दशा; १२. शेरखाँ लोदी के साथ संघर्ष; १३. कोलेरून नदी पर शिवाजी; १४. शिवाजी और व्यंकोजी की भेंट; १५. उनका घर लौटना तथा विजय; १६. व्यंकोजी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के साथ युद्ध—अन्तिम समझौता; १७. आक्रमण-काल में यूरोपीय व्यापारी; १८. व्यंकोजी का वास्तविक चरित्र]

अध्याय १३. **शिवाजी के अन्तिम वर्ष** ३०३-३२६

[१. कर्नाटक से लौटते समय साहसिक कार्य; २. १६७७ में मराठों के कार्य; ३. तुंगभद्रा के उत्तरी तट की विजय; ४. १६७८ में मुगल, बीजापुर और शिवाजी; ५. शम्भूजी मुगलों से जा मिला; ६. बीजापुर लेने के लिए मराठों का षड्यन्त्र; ७. दिलेर ने भूपालगढ़ पर अधिकार किया; ८. धार्मिक सहिष्णुता पर शिवाजी का औरंगजेब को पत्र; ९. दिलेर ने बीजापुर पर आक्रमण किया १६७९; १०. दिलेर द्वारा लूट-मार; ११. शिवाजी का अन्तिम अभियान; १२. उनकी घरेलू कठिनाइयाँ; १३. शिवाजी की मृत्यु; **परिशिष्ट**—उनकी पत्नियाँ और सन्तान]

अध्याय १४. **शिवाजी के अंग्रेज और पुर्तगालियों से सम्बन्ध** ३२७-३४८

[१. अंग्रेजों से पहली भिड़न्त १६६०; २. राजापुर के कैदियों में अंग्रेज व्यापारी; ३. राजापुर की कोठी में क्षति के हर्जाने के लिए वार्ता; ४. लेफ्टिनेंट ऊस्टिक के मिशन की असफलता १६७२; ५. टी० निकल्स का दौत्य १६७३; ६. एच० ऑक्सिनडन का दौत्य १६७४; ७. अंग्रेज व्यापारियों की शिवाजी से भेंट; ८. राजापुर हर्जाने का इतिहास; ९. शिवाजी और पुर्तगाली]

अध्याय १५. **सरकार, संस्थाएँ और नीति** ३४९-३६३

[१. राज्य और अधीन क्षेत्रों का विस्तार; २. राजस्व और छिपा हुआ खजाना; ३. सेना की शक्ति; ४. आठ मन्त्रियों की काउंसिल; ५. सेना का संगठन; ६. राजस्व की व्यवस्था और प्रशासन; ७. धार्मिक नीति; ८. शिवाजी के शासन का प्रभाव]

अध्याय १६. **शिवाजी के कार्य, चरित्र और इतिहास में स्थान** ३६४-३८१

[१. शिवाजी की नीति कहाँ तक परम्परागत थी; २. चिर-स्थाई राज्य न बना सकने में उनकी असफलता के कारण; ३. वास्तविक राष्ट्रीयता में रुकावटें; ४. मराठों द्वारा आर्थिक पक्ष की उपेक्षा; ५. छल और षड्यन्त्र की अतिता;

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

६. शिवाजी का चरित्र; ७. शिवाजी की प्रतिभा का विश्लेषण; ८. उनका राजनीतिक आदर्श और कठिनाइयाँ; ९. लोक-मानस पर उनका प्रभाव]

सहायक ग्रन्थ ३८३
कालक्रम ३९४
अनुक्रमणिका ४०७
शिवाजी के चित्र मुखपृष्ठ

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी
(वैलिग द्वारा निर्मित उत्कीर्ण चित्र)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी
(मीर मुहम्मद द्वारा सन् १६८६ से पूर्व निर्मित)

वर्तमान मूर्ती

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय १

भूमि और निवासी

१. विस्तार, वर्षा, मिट्टी और फसलें।
२. निवासियों का एकाकीपन।
३. समाज की निर्धनता, सरलता और समानता।
४. मराठा चरित्र।
५. धार्मिक गुरु।
६. साहित्य और भाषा।
७. आधुनिक मराठा सैनिक और कृषक।
८. मराठा चरित्र के दोष।

१. विस्तार, वर्षा, मिट्टी और फसलें—१९३१ ई० की जनगणना के अनुसार मराठी भाषा-भाषी जनता की जनसंख्या लगभग दो करोड़ साढ़े बारह लाख थी जिसमें कोंकणी बोली बोलने वाले पाँच लाख से कुछ कम व्यक्ति भी सम्मिलित थे। मराठी भाषा बम्बई प्रेसीडेन्सी की जनसंख्या की आधी से कुछ कम (४२·२३ प्रतिशत) की, निजाम राज्य की चौथाई से अधिक (२६·२३ प्रतिशत) की और मध्य प्रदेश तथा बरार के निवासियों के लगभग एक-तिहाई (३१·२३ प्रतिशत) भाग की भाषा है।[1] शेष मराठी भाषी अधिकांशतः भारतीय रियासतों में पाये जाते हैं। यह भाषा पेशवाओं के समय से निरन्तर उन्नत होती जा रही है और उसके द्वारा अधिक ठेठ तथा कम साहित्यिक भाषाओं को शान्तिपूर्वक अपने में विलीन करने का कार्य ब्रिटिश युग में भी अविरल गति से चलता रहा है।

किन्तु जिस भू-भाग में आज मराठी बोली जाती है वह मराठा देश नहीं कहा जा सकता। चार शताब्दी पूर्व 'महाराष्ट्र' नाम दक्षिण के पठार के पश्चिमी तटवर्ती भाग तक ही सीमित था जिसकी सीमा उत्तर में ताप्ती, दक्षिण में कृष्णा की ऊपरी सहायक (सम्भवतः वरणा) तथा पूर्व में

---

[1] १९११ ई० में मराठी भाषा कोंकण डिवीजन की ८६%, बम्बई प्रेसीडेन्सी के दकन डिवीजन की ८५% तथा बम्बई शहर की लगभग ५४% जनता की भाषा थी। (१९६१ ई० की जनगणना के अनुसार महाराष्ट्र की कुल जनसंख्या ३,९५,०४,२४९ थी जिसमें लगभग ३ करोड़, ३ लाख मनुष्य मराठी भाषा-भाषी थे। —अनु०)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सीना[२] नदियों द्वारा बँधी थी। इस प्रकार महाराष्ट्र का प्रांगण नासिक, पूना और सतारा जिलों, अहमदनगर और शोलापुर के भागों तथा सम्भवतः औरंगाबाद के पश्चिमी कोने को मिलाकर बना था जिसका क्षेत्रफल लगभग २८,००० वर्ग मील था। मराठा जाति पश्चिमी घाट तथा हिन्द महासागर के मध्यवर्ती सँकरे भू-भाग कोंकण में भी बसी हुई थी। यहाँ के थाना, कोलाबा और रत्नागिरि जिले तथा सावन्तवाड़ी रियासत—जिनका सम्मिलित क्षेत्रफल १०,००० वर्ग मील से अधिक है—अब प्रमुख रूप से मराठी भाषी हैं, किन्तु १६वीं शताब्दी में यहाँ की जनसंख्या का पर्याप्त—लगभग आधा—भाग अन्य जातियों का था जो दूसरी भाषाएँ बोलती थीं।

चार शताब्दी पूर्व महाराष्ट्र की जनसंख्या अत्यन्त क्षीण थी और भूमि का अधिकांश भाग वनों से ढका था। दक्षिण के पठार के पश्चिमी सिरे पर वर्षा कम और अनिश्चित होती है, कृषि उत्पादन बहुत कम और अनियत होता है और केवल थोड़ी-सी नदियों के सँकरे किनारों पर ही कृषक को अपने श्रम का अच्छा प्रतिफल प्राप्त होने का भरोसा रहता है। पश्चिमी दकन का लगभग समूचा भाग या तो घाट-श्रेणी के द्वारा दक्षिण-पश्चिमी मानसून के घने बादलों से एकदम वंचित कर दिया जाता है अथवा यदि वे बादल इस घाट-श्रेणी की बाधा को पार कर भी लेते हैं तो भी वे इस भूमि को असिंचित तथा बिना जोती हुई छोड़ते हुए पूर्व की ओर उड़े चले जाते हैं। इस प्रकार "दकन सामान्यतः बहुत परिश्रम के फलस्वरूप जीवनयापन का अति न्यून परिमाण प्रदान करता है।"[३] (Moral and Material Progress, १९११-१२, पृष्ठ १०)

ऐसी भूमि में चावल की खेती असम्भव है और गेहूँ तथा जौ भी बहुत

---

२ 'दकन' शब्द से उस प्रदेश का बोध होता है जिसे ऊपरी गोदावरी सींचती है और जो गोदावरी तथा कृष्णा के मध्य स्थित है। ऐसा जान पड़ता है कि किसी समय महाराष्ट्र भी इसी प्रदेश तक सीमित था। कारण कि, पुराणों तथा अन्य ग्रन्थों में, यह प्रदेश उत्तरी कोंकण से तथा नर्मदा और ताप्ती के दोनों ओर के क्षेत्रों से तथा विदर्भ अथवा बरार से भी भिन्न माना गया है। (पृष्ठ १३४, ५५७; २४८१)

३ समुद्रतट पर (अर्थात कोंकण में) वर्षा का वार्षिक औसत १००-१२० इंच है। पश्चिमी घाटों के शिखर के पार वर्षा की मात्रा तेजी से घटती है। पहाड़ियों से केवल ३५ मील दूर भूमि की एक ऐसी पट्टी आ जाती है जहाँ वर्षा का वार्षिक औसत केवल १७ इंच रह जाता है। और आगे पूर्व की ओर पहुँचते-पहुँचते दक्षिण-पश्चिमी मानसून लगभग समाप्त हो चुकता है, किन्तु उत्तर-पूर्वी मानसून का प्रभाव पड़ने लगता है और वर्षा

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कम मात्रा में उपजते हैं। इस क्षेत्र के अधिकांश भाग के प्रमुख अनाज ज्वार, बाजरा और रागी या मक्का हैं। किन्तु इन पर भी सदा निर्भर नहीं रहा जा सकता। किसी वर्ष वर्षा नहीं हो तो नन्हे पौधे धूप में जल जायँ या अनाज की कोमल बालें परिपक्व होने से पूर्व ही मुरझाकर सूख जायँ और समस्त प्रदेश में अकाल पड़ जाय। भूमि, जो कहीं नग्न चट्टान से ढकी है और कहीं जिस पर मिट्टी की केवल पतली तह ही है, धूप में भुनकर भूरी रेत बन जायगी, कहीं पर हरी घास की एक पत्ती भी दिखायी न देगी, और मनुष्य के अतिरिक्त पशु भी हजारों की संख्या में काल के ग्रास बन जायँगे।

२. **निवासियों का एकाकीपन**—इस प्रदेश के भग्न पथरीलेपन ने तथा वनों की प्रचुरता ने जहाँ जनसंख्या को बढ़ने नहीं दिया वहाँ उसने यात्रा करना भी कठिन तथा अलाभकर बना दिया। सौदागरों को आकर्षित करने के लिए वहाँ धनी दरबार, घने बसे नगर या समृद्ध बाजार नहीं थे। और न ही वहाँ पर सैनिकों की बड़ी टुकड़ियों के, एक सुगठित एवं शक्तिशाली साम्राज्य के एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त को, कूच करने के नियमित अवसर ही थे। प्रदेश को प्रकृति ने छोटे-छोटे खण्डों में विभाजित कर रखा था जिनमें वहाँ के निवासी एकाकी एवं स्वयं-सीमित जीवनयापन करते थे; जो संसार को भूले हुए थे और संसार जिन्हें भूला हुआ था।

में वृद्धि होने लगती है। खानदेश के दक्षिण में हमें मुख्य दकन मिलता है जो तीन भागों में विभाजित है (जो घाटों के समान्तर हैं और) जिनके नाम हैं—पश्चिम में **डाँग** या **मावल**, केन्द्र में **संक्रमण** और पूर्व में **देश** या काली मिट्टी का मैदान। यह मिट्टी उपजाऊ नहीं है और पूर्व से पश्चिम की ओर नग्न चट्टानी पहाड़ियों की श्रेणियाँ चली गयी हैं (मानो घाटों के प्रक्षेप हों) जो न तो कृषि के लिए पानी एकत्र रखती हैं और न वर्षा ही कराती हैं···कर्नाटक (अर्थात् धारवाड़, बेलगाँव और बीजापुर जिले) में अधिक निश्चित रूप से एवं अधिक परिमाण में वर्षा होती है और वहाँ की भूमि भी अधिक उपजाऊ है। (भारतीय जनगणना, १९११, ७, भाग १, पृष्ठ ४-६) पश्चिमी पहाड़ी पट्टी उत्तर में **डाँग** (अर्थात बगलान) कहलाती है, केन्द्र (अर्थात नासिक, पूना और सतारा जिले) में **मावल** तथा दक्षिण में **मलाद** (अर्थात कर्नाटक) कहलाती है। इसके विपरीत, कोंकण निश्चित तथा भारी वर्षा का क्षेत्र है जहाँ की प्रमुख उपज चावल है, और समुद्रतट के सहारे जहाँ कहीं भी मिट्टी है··· ताड़वृक्षों की पंक्तियाँ, आम के कुंज तथा केले के बाग उस क्षेत्र की भूमि के सौन्दर्य की तथा निवासियों की सम्पत्ति में वृद्धि करते हैं। थाना और कनारा (कन्नड़ ?) वनाच्छादित जिले हैं। (वही)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

यह उस भूखण्ड-पट्टी के लिए विशेष रूप से सत्य है जो घाटों के ठीक पूर्व में स्थित है। पठार के केन्द्रीय तथा अधिक समतल भाग के राज्यों ने, हिन्दू और मुस्लिम दोनों के समय में, अपनी विजेता सेनाएँ पश्चिम की ओर भेजी थीं, किन्तु आक्रमण की बाढ़ पहाड़ियों की तलहटी में अथवा उनके बहुसंख्य शृंगों पर रोक ली जाती थी, अथवा जहाँ दर्रों में होकर सेना की पतली पंक्ति प्रविष्ट हो गयी थी, वहाँ उसे कुछ समय तक व्यर्थ ही ठहरकर वापस लौटना पड़ा था। उन पहाड़ियों के निवासियों को ऊबड़-खाबड़ तथा बर्बर स्थानों में सुरक्षा एवं शान्ति प्राप्त हुई जबकि धनी मैदानों में विद्रोह और लूटमार की घटनाएँ घटित हुई थीं।

पश्चिमी भूखण्ड-पेटी का यह प्राकृतिक एकाकीपन निस्सन्देह यात्रियों, व्यापारियों और सैनिकों द्वारा कभी-कभी भंग हो जाता था। पश्चिमी समुद्र-तट के बन्दरगाहों से मध्य दकन की धनी राजधानियों और बाजारों को जाने के लिए सभी रास्ते इसी ऊबड़-खाबड़ भूमि में होकर थे। केवल इसी भूमि में होकर फारस, अरब, तुर्किस्तान, अबीसीनिया और मध्य एशिया तक के रंग-रूटों के प्रवाह कुलबर्गा, बीदर, अहमदनगर, बीजापुर और गोलकुण्डा के तत्पर मुस्लिम दरबारों में पहुँच सकते थे। केवल महाराष्ट्र में ही होकर ऊपरी गोदावरी और कृष्णा की घाटियों का कपड़ा, धातु का सामान और मसाले यूरोप जाने के लिए बन्दरगाहों तक पहुँच सकते थे।

और फिर, भूमि बंजर होने के कारण उसकी सन्तान को उसे जोतने का निष्फल कार्य नहीं करना पड़ता था। मजबूत पुट्ठों और दृढ़ हृदयों को मध्य पठार के शक्तिशाली राजाओं की सेनाओं में सेवा करके उससे अधिक बड़े पुरस्कार तथा ऊँचे पद प्राप्त हो जाते थे। एक योग्य दलीय नेता निश्चय ही, इन दरबारों में से किसी में, उच्च वेतन, प्रतिष्ठापूर्ण पद तथा सम्भवतः नरेश-निर्माता का गर्वपूर्ण पद प्राप्त कर सकता था। ये रजवाड़े अपने पड़ोसियों से निरन्तर युद्ध में रत रहते थे और 'देश' क्षेत्र के उपयोग के लिए सैनिकों को अच्छा वेतन देने के लिए तैयार रहते थे।

किन्तु महाराष्ट्र की इन एकाकी घाटियों में ऐसे कभी-कभी आने वाले यात्री बाहरी संसार की केवल एक झलक ही लाते थे। वे वहाँ के निवासियों की शान्त दैनिकचर्या में तनिक भी विघ्न नहीं डालने पाते थे क्योंकि उन निवासियों को स्वयं घूमने-फिरने के लिए मुश्किल से अवसर मिल पाता था। जब कभी वे सैनिक बनकर बाहर जाते भी थे तो वे प्रायः उन्हीं स्थानों में बस जाते थे जो उन्हें जागीर के रूप में प्राप्त होते थे, और अपने पूर्वजों की उजाड़ भूमि पर मुश्किल से ही लौटते थे।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मराठों के स्वतन्त्रता एवं एकाकीपन के सहज प्रेम को प्रकृति द्वारा अत्यन्त सहायता प्राप्त हुई। प्रकृति ने उन्हें निकट में ही बने-बनाये तथा सहज रक्षित किले प्रदान किये, जहाँ वे बचाव के लिए तुरन्त भागकर छिप सकते थे और आक्रमण का कड़ा मुकाबला कर सकते थे। गंगा के मैदान के विपरीत, यह प्रदेश घुड़सवारों के एक धावे अथवा एक वर्ष के संघर्ष से भी विजित नहीं किया जा सकता था। यहाँ के निवासियों को इस बात का पूर्ण अवसर प्राप्त था कि वे अपने से अधिक संख्या वाले एवं बलशाली आक्रामक से लम्बे समय तक संघर्ष कर सकें और, जैसा कि प्रायः होता था, जब आक्रमणकर्ता थक जाय तो पासा पलट दें। "सम्पूर्ण घाट-श्रेणी तथा आसपास के पर्वतों के शिखर प्रायः चिकनी चट्टानों की दीवाल के रूप में हैं जिनके शृंग तथा एकल पहाड़ियों के पृथक्कृत खण्ड प्राकृतिक किले हैं। इन स्थानों में सुरक्षा के लिए केवल इतना ही श्रम करना पड़ता है कि सर्वोच्च शिखर पर स्थित समतल भाग तक पहुँच जायँ। समय-समय पर विभिन्न राजाओं ने इन चट्टानों में सीढ़ियाँ अथवा चक्करदार सड़कें बना लीं, उन पर एक के बाद एक अनेक फाटक बना लिये, और मार्गों पर निगाह रखने के लिए मीनारें बना लीं। इस प्रकार, उन्होंने घाटों तथा उनकी शाखाओं के आसपास के सम्पूर्ण क्षेत्र को किलों से पाट दिया।" "इन किलों में से कई में सर्वोत्तम जल के सोते (स्रोत) हैं, और सभी किलों में प्रति वर्ष मई से अक्तूबर तक होने वाली वर्षा का जल हौजों या तालाबों में एकत्र करके रखा जा सकता है।" नरम लावा की चट्टानें पिघल जाने पर कठोर बैसाल्ट की चिकने शिखरों वाली एकदम सीधी खड़ी चट्टानें निकल आयी हैं जिनसे प्राकृतिक किले बन गये हैं।[४]

३. **समाज की निर्धनता, सरलता तथा समानता**—ऐसे देश में कोई भी मनुष्य संरक्षित जीवन व्यतीत नहीं कर सकता। प्राचीन महाराष्ट्र में कोई परजीवी वर्ग नहीं था। गाँव के मुखियाओं को भी अपने सीर खेतों की देख-भाल करने के अतिरिक्त अपनी जीविका उपार्जन करने के लिए मालगुजारी वसूल करने वाले कलक्टरों, स्थानीय न्यायाधीशों तथा क्षेत्रीय पुलिसमैनों का कार्य भी करना पड़ता था। व्यापारी के अतिरिक्त, जो इस पुरातन समाज का एकमात्र बैंकर होता था, शायद ही कोई अन्य व्यक्ति धनवान था। भूमिपति भी सोने या चाँदी की सम्पत्ति की अपेक्षा अनाज की राशियों तथा सशस्त्र

---

४ एल्फिस्टन कृत इतिहास, छठा संस्करण, पृष्ठ ६१५; डफ १.७; बम्बई गजेटियर १८, भाग १, पृष्ठ ९-१०, १९, १६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सेवकों की सम्पत्ति के स्वामी ही होते थे। कुछ मन्दिरों में, विशेषकर प्रमुख तीर्थ-स्थानों के मन्दिरों में, सम्पदा एकत्रित थी। किन्तु उनकी आय अनिश्चित थी और स्वेच्छापूर्वक दिये गये दान पर ही पूर्णतः निर्भर थी। इन मन्दिरों की सम्पत्ति मद्रास के भव्य मन्दिरों की अपेक्षा अति न्यून थी।

ऐसी परिस्थितियों वाले समाज में प्रत्येक पुरुष को, और प्रायः प्रत्येक स्त्री को भी, काम करना पड़ता है, और हाथ से काम करना पड़ता है। सौन्दर्य और सौजन्यता वहाँ उत्पन्न ही नहीं हो सकते। बुद्धि का आनन्द के लिए प्रयोग ही यदि संस्कृति की परिभाषा मान ली जाय तो जिन मनुष्यों को जीवन की मूल आवश्यकताओं के हेतु आनन्द का त्याग करना पड़ता है उनमें तो संस्कृति के लिए कोई गुंजायश ही नहीं। जहाँ प्रकृति पूर्ण सादगी से रहने को बाध्य करती है वहाँ न तो विलास सम्भव है, न पांडित्य के लिए अवकाश (पुजारियों को छोड़कर), न सौन्दर्यानुभूति का विकास और न सभ्य शिष्टाचार ही।

मराठों ने जब राजनीतिक सत्ता प्राप्त की तो अधीनस्थ प्रजा पर उनका अच्छा प्रभाव नहीं पड़ा। मुगल राजधानियों के सुसंस्कृत पतनोन्मुख लोगों की दृष्टि में दक्षिण के योद्धा प्यादे से फर्जी बनने वाली जाति के, समृद्धि के गर्वोन्माद से धृष्ट, शालीनता, सौजन्यता एवं शिष्टाचार से शून्य थे। उनमें ललित कलाओं के लिए तनिक भी रुचि न थी, बोलचाल का कोई सलीका न था, सामाजिक जीवन की सुख-सुविधाओं के लिए कोई अभिरुचि न थी। उनकी घुड़सवारी बेढंगी और अनाकर्षक थी यद्यपि वह विशिष्ट रूप से व्यावहारिक थी। मराठा वैभव के युग ने भारत को एक भी भव्य भवन, या सुन्दर चित्र या उत्तम पांडुलिपि की सम्पदा प्रदान नहीं की। पेशवाओं के महल भी छोटी तुच्छ प्रतीत होने वाली तथा छोटे-छोटे कमरे और तंग सीढ़ियों वाली कमजोर इमारतें हैं। यदि उन भवनों के चेहरे आकर्षक नक्काशीदार लकड़ी के न होते तो वे नितान्त तुच्छ ही प्रतीत होते।

४. **मराठा चरित्र**—किन्तु ऐसे देश और जलवायु के कुछ सम्पूरक लाभ भी होते हैं। उनसे आत्म-निर्भरता, साहस, कर्मठता, कठोर सादगी, कठोर स्पष्टवादिता, सामाजिक समानता की भावना और फलतः मनुष्य के रूप में मनुष्य के गौरव के गर्व का विकास होता है। ईसवी सन् की सातवीं शताब्दी में एक विद्वान् चीनी यात्री ने अधिक समृद्ध मध्य दकन के निवासी मराठा लोगों के चरित्र का इस प्रकार वर्णन किया है—"निवासी गर्व की भावना वाले और लड़ाकू, भलाई के लिए कृतज्ञ और बुराई का बदला लेने वाले, संकटग्रस्त शरणागतों के लिए आत्म-बलिदान करने वाले और अपना अपमान

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

करने वाले के खून के प्यासे होते हैं।" "यदि उन्हें बदला लेना होता है तो वे पहले अपने शत्रु को चेतावनी दे देते हैं।" (Beal *Si Y. K.*, ii, 256; Watters' *Yuan Chwang*, ii, 239)

आगामी दस शताब्दियों में मराठों का यह जातीय चरित्र थोड़ा-बहुत बदल गया। प्रदेश के बड़े हिन्दू राज्यों के संरक्षण की समाप्ति, देश में मुस्लिम शासन की बढ़ती हुई कठोरता, और शत्रु रियासतों के मध्य होने वाले सतत युद्धों द्वारा हुए विनाश के कारण, शेष मराठा प्रजा अधिक चतुर तथा कम शौर्यवान बनने को बाध्य हुई। शिवाजी ने अफजल अथवा शाइस्ताखाँ को "पूर्व-चेतावनी नहीं दी।"[५]

किन्तु उनका चारित्रिक आधार ज्यों का त्यों बना रहा—क्रियाशीलता, साहस, आत्म-निर्भरता, आत्म-सम्मान और समानता-प्रेम। चौदहवीं शताब्दी में गोदावरी तथा कृष्णा के तटों पर स्थित अपने नगरों और राजधानियों के छिन जाने से वे पठार के पश्चिमी बंजर तट पर धकेल दिये गये। फलतः वे और भी निर्धन तथा एकाकी बन गये। प्रकृति और पशुओं के साथ एकान्त संघर्ष करते हुए उनमें और अधिक चतुराई का विकास हुआ, किन्तु उनकी शूरवीरता और कठोर सहनशीलता में कमी नहीं आयी। साहस, कौशल तथा सहनशक्ति का समन्वय—अचरज में डालने वाले तथा रात्रि में किये जाने वाले आक्रमणों की योजना बनाना तथा उन्हें क्रियान्वित करना, अफसर के निर्देश की प्रतीक्षा किये बिना लड़ाई के बदलते हुए रुख के अनुसार व्यूह तोड़कर बच निकलने अथवा पैंतरा बदलने की सैनिक कुशलता—इन गुणों में मराठों की, समस्त एशियाई जातियों में, सबसे अधिक समानता अफगानों से है।

सोलहवीं शताब्दी के मराठों में अन्य अधिक धनवान तथा अधिक सभ्य सम्प्रदायों की अपेक्षा सामाजिक भेद न्यूनतर थे। ऐसे सरल समाज में धनी व्यक्ति निर्धन की अपेक्षा अधिक ऊँचा नहीं था। निर्धनतम व्यक्ति भी योद्धा तथा अनिवार्य श्रमिक के रूप में अपना महत्त्व रखता था; कम से कम वह अपना आत्म-सम्मान बनाये रखता था, क्योंकि जहाँ बहुत कम लोग ही कुछ देने के लिए समर्थ थे वहाँ आगरा या दिल्ली की भाँति पेशेवर भिखारियों या

---

५ (कुनबी जाति के) मराठा कृषकों के विषय में एक अंग्रेज पर्यवेक्षक ने १८८० में लिखा था—"वे कठिन परिश्रमी, संयमी, आतिथ्यकारी, अपने बच्चों के शौकीन, और अजनबियों के प्रति दयालु हैं। साथ ही वे बदला लेने में निर्दय हैं, और सरकार या अपने साहूकारों को ठगने में शायद ही कभी हिचकते हैं।" (बम्बई गजेटियर १८, भाग १, पृष्ठ २८८)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

याचकों का अपमानित जीवन व्यतीत करने के लिए कोई लालायित नहीं था। निर्धनता एवं पुरातन प्रथाओं के कारण महाराष्ट्र की महिलाएँ हरम में पहुँचने से बच गयीं (उन जातियों को छोड़कर जो क्षत्रिय बनने की महत्त्वाकांक्षी थीं)। इस प्रकार समाज की प्रभावकारी शक्ति दुगनी हो गयी और समाज में स्त्रियों की क्रियाशीलता के कारण जन-जीवन के स्वास्थ्य तथा मधुरता में वृद्धि हुई।

५. **धार्मिक गुरु**—समानता की यही भावना धर्म द्वारा प्रोत्साहित की गयी। निस्संदेह, ब्राह्मणों ने धर्म-ग्रन्थों पर अपना एकाधिकार तथा एक प्रकार की आध्यात्मिक कुलीनता के रूप में, अन्य जातियों से अलग रहने की प्रवृत्ति को बनाये रखने का प्रयत्न किया। किन्तु शक्तिशाली धार्मिक आन्दोलन उठ खड़े हुए और समूचे प्रदेश में फैल गये। इन आन्दोलनों द्वारा यह पाठ पढ़ाया गया कि केवल जन्म की अपेक्षा कर्म की पवित्रता अधिक श्रेयस्कर है, केवल कर्मकाण्ड की अपेक्षा जीवित व्यक्तिगत आस्था श्रेष्ठ है, और ईश्वर के समक्ष समस्त सच्चे भक्तजन एक-समान हैं। ये लोकप्रिय आन्दोलन ब्राह्मण पुरोहित-वाद के गर्वीले दावों के घोर विरोधी थे। उनका केन्द्र पंढरपुर था जो प्रदेश में तीर्थयात्रा के सबसे प्रसिद्ध स्थानों में था।

यूरोप में १६वीं शताब्दी में हुए 'प्रोटेस्टेण्ट रिफारमेशन' की तरह भारत में धार्मिक, सामाजिक तथा साहित्यिक जागरण एवं सुधार आन्दोलन, दकन में १५वीं तथा १६वीं शताब्दियों में विशेष रूप से हुआ। इस धार्मिक जागरण में ब्राह्मणवादी कट्टरता न थी। जन्म पर आधारित वर्ग-भेदों तथा कर्मकाण्डवाद के विरोध में इस आन्दोलन की भावना कट्टर न थी। यह धार्मिक आन्दोलन समस्त अन्य उपार्जित गुणों एवं सत्कर्मों की अपेक्षा विशुद्ध हृदय एवं प्रेम के विधान को नैतिक रूप से श्रेष्ठ मानता था। यह धार्मिक आन्दोलन जनसाधारण का कार्य था न कि उच्च वर्ग के लोगों का। इस आन्दोलन के नेता सन्त और महात्मा, कवि और दार्शनिक थे जो ब्राह्मणों की अपेक्षा समाज के निम्न वर्ग में अधिकतर उत्पन्न हुए थे, यथा दर्जी, बढ़ई, कुम्हार, माली, दूकानदार, नाई और महतर। तुकाराम (जन्म लगभग १५६८), रामदास (जन्म १६०८), वामन पंडित (जन्म १६३६), और एकनाथ (जन्म १५२८) के नाम अब भी महाराष्ट्र की जनता के मन पर प्रभुत्व जमाये हुए हैं। (रानाडे, १०; एवं बम्बई गजेटियर २०, ४७३)।

तीर्थ-यात्रा के प्रमुख स्थानों पर विशेष पर्वों व त्यौहारों के अवसरों पर मेले लगते थे, उनसे हिन्दू एकत्व की भावना को प्रोत्साहन प्राप्त होता था,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

ठीक उसी प्रकार जैसे प्राचीन यूनान के राष्ट्रीय खेलों से। किन्तु इन मेलों का प्रभाव यूनान के खेलों से कम था क्योंकि हमारे समाज में जाति-भेद सदैव विघटनकारी शक्ति रहा है। ये पुण्य स्थल धर्म-शिक्षा एवं संस्कृति के वितरण-केन्द्र बन गये और इनसे जातीय अथवा क्षेत्रीय संकीर्णता टूटी, यद्यपि अदृश्य रूप से।

६. **साहित्य और भाषा**—महाराष्ट्र में एकता का दूसरा बन्ध साहित्य था। उसके विषय प्राचीन धर्म-ग्रन्थों तथा महाकाव्यों से लिये गये थे जो सभी हिन्दुओं की सामान्य दाय हैं। तुकाराम और रामदास, वामन पण्डित और मोरो पन्त जैसे लोकप्रिय गुरुओं के भक्ति-गीत तथा नैतिक सूक्तियाँ प्रत्येक घर में, जिसमें मराठी वर्णमाला पढ़ी जा सकती थी, पहुँच गयीं। "दकन और कोंकण के प्रत्येक गाँव और कस्बे में, विशेषकर वर्षा ऋतु में, धार्मिक मराठा अपने परिजनों एवं मित्रों सहित श्रीधर (जन्म १६७९ ई०) की 'पोथी' का पाठ करता हुआ, और उसमें वास्तव में रस लेता हुआ, पाया जाता था। श्रोता अत्यन्त शान्ति से सुनते रहते थे—केवल कभी-कभी भीनी-सी मुसकराहट, अथवा दीर्घ निःश्वास, अथवा आँसू देख पड़ते थे। और कभी-कभी उच्च-वर्गीय करुणरस के संदर्भ आ जाते थे जिससे सभी श्रोता एक-साथ प्रभावित हो जाते थे और अपने संवेगों को प्रदर्शित करने लगते थे जिसमें उपदेशक का स्वर भी मन्द पड़ जाता था। (Acworth's *Ballads*, xxvii)

आदि मराठा समाज की सरलता तथा एकरूपता भाषा में भी प्रतिबिम्बित होती हैं। उनके काव्य में महाकाव्यों (रामायण एवं महाभारत) के समान छोटे-छोटे गेय पद, दोहे एवं चौपाइयाँ होती थीं, जिनमें गीतात्मकता, लम्बे-लम्बे सुरीले पद और ध्वनि की प्रधानता न थी। संस्कृत की अन्य पुत्रियों की भाँति मराठी भाषा में भी १८वीं शताब्दी में भी अनेक वर्षों तक कोई साहित्यिक गद्य नहीं लिखा गया। जिस गद्य का अधिकारी वर्ग द्वारा उनके पत्रों तथा विवरणों में सृजन हुआ वह लगभग तीन-चौथाई फारसी शब्दों तथा फारसी मुहावरों के भद्दे शाब्दिक अनुवादों से निर्मित अनर्गल शब्दों की एक भौंडी भाषा थी। जिस संस्कृत-बहुल, परिष्कृत और विविध गद्य का आजकल प्रयोग होता है वह ब्रिटिश युग की सृष्टि है। (राजवाड़े ८, भूमिका में फारसी तत्त्व का पूर्ण विवेचन किया गया है।)

"अन्त में यह कहा जा सकता है कि महाराष्ट्र के कृषक तथा मावली लिखित कविता से परिचित नहीं हैं, क्योंकि वह नीति के उपदेशों तथा विभिन्न देवी-देवताओं के गुणगान से पूर्ण है। और यदि वे उससे परिचित थे तो उस

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पर उनका ध्यान नहीं जाता था और न वे उसकी प्रशंसा करते ।..... महाराष्ट्र में, जहाँ कृषक वर्ग का विशाल बहुमत न तो लिख सकता है और न पढ़ ही सकता है, यह कहना नितान्त सत्य है कि उस देश के साहित्य का उन्हें बिलकुल ज्ञान नहीं है ।[६] किन्तु यह अनुमान न करना चाहिए कि उनका अपना कोई काव्य नहीं था । मराठों में जनसाधारण की भावनाओं को लोक-गीतों में मूर्तरूप प्राप्त हुआ है; उनके लोकगीत राष्ट्रीय भावनाओं के सच्चे प्रतीक हैं ।.....दकन के मैदानों में और सह्याद्रि की गहरी घाटियों तथा उन्नत शिखरों पर, गाँव-गाँव में विनम्र गायक 'गोंधाली' अब भी घूमता है । वह गायक अब भी उल्लसित और उत्तेजित श्रोताओं को उस महान युग की गाथाओं के गीत सुनाता है जब उन श्रोताओं के शस्त्रसज्जित पूर्वपुरुष भारत के समस्त राजाओं को तलवार के बल पर कानून सिखाते थे अथवा समुद्र निवासी अजनबी की तलवार से घायल और भयभीत होकर वापस लौट आते थे । (ऐकवर्थ और शालिग्राम, पोवाड़ा, १ व २) । किन्तु यह राष्ट्रीय लोकगीत साहित्य शिवाजी और उनके उत्तराधिकारियों के युग की सृष्टि था ।

न केवल उनका साहित्य निर्धन था, किन्तु उनकी जनभाषा भी भौंडी व्यावहारिक बोली थी जिसमें अति-विकसित उर्दू भाषा की व्यावहारिक शिष्टता, परोक्षता और अर्थ के नाजुक भेद प्रकट करने की क्षमता न थी । मराठा लोगों की प्रजातान्त्रिक प्रवृत्ति इस बात से प्रदर्शित होती है कि उनके यहाँ उत्तरी भारत के 'आप' के समान कोई सम्मानपूर्ण सम्बोधन न था—समस्त पद 'तू' व 'तुझ' से सम्बोधित किये जाते थे ।

इस प्रकार, महाराष्ट्र में १७वीं शताब्दी में—शिवाजी द्वारा राजनीतिक एकता प्रदान किये जाने से भी पहले—भाषा, मत और जीवन की उल्लेखनीय एकता प्राप्त हो गयी थी। जनता की अविच्छिन्नता के लिए जो कुछ कमी रह गयी थी उसे शिवाजी ने एक राष्ट्रीय राज्य बनाकर, उनके पुत्रों ने दिल्ली के आक्रामक से दीर्घ संघर्ष करके और पेशवाओं ने उस जाति का साम्राज्यवादी विस्तार करके पूरा कर दिया । इस प्रकार अन्त में एक प्रजाति—या यों कहना चाहिए कि प्रजातियों और जातियों का एक समूह—मिलाकर एक 'राष्ट्र'[७] बना दिया गया । और १८वीं शताब्दी के अन्त तक एक मराठा

---

६ किन्तु दन्तकथाओं तथा परम्पराओं की विशाल सम्पदा समूचे देश की जनता की समान सम्पत्ति थी और उससे उन्हें सांस्कृतिक एकता प्राप्त हुई थी ।

७ "मराठे एक राष्ट्र हैं और ब्राह्मणों से लेकर कृषक तक सभी इस बात में गौरव अनुभव करते हैं ।" (ऐकवर्थ और शालिग्राम, पोवाड़ा, ३)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जाति—इस संज्ञा के राजनीतिक और सांस्कृतिक अर्थों में—बन गयी थी यद्यपि जाति-भेद तब भी शेष थे। इस प्रकार इतिहास ने समाज को सँवारा और एक रूप दिया।

७. **आधुनिक मराठा सैनिक और कृषक**—शिवाजी की सेना का मेरुदण्ड कृषक थे जो 'मराठा' और 'कुनबी' नामक दो निम्न जातियों के थे। १९११ ई० में मराठा जाति की—यह संज्ञा सामान्यतः मराठी भाषा-भाषी जनता के लिए प्रयोग नहीं की जानी चाहिए—जनसंख्या ५० लाख थी, और (केवल बम्बई प्रेसीडेन्सी के) कुनबियों की जनसंख्या २५ लाख थी। हमारे युग में इनका चरित्र इस प्रकार है :

"मराठा जाति के लोग सरल, स्पष्ट, स्वतन्त्र और उदार, विनम्र और दया का बर्ताव करने पर विश्वसनीय होते हैं। वे निर्भीक और बुद्धिमान, अपनी पूर्व महानता के अभिमानी, दिखावे के शौकीन और गरीबी को छिपाने में सावधान होते हैं।·····वे कुनबियों से अधिक बलवान, क्रियाशील और सुगठित शरीर वाले होते हैं। अनेक मराठे, निर्धन वर्गों के भी, सुसंस्कृत होते हैं। (वे कुनबियों की भाँति, मांसाहारी पक्षियों का मांस भी खाने वाले हैं और ताड़ी तथा अन्य मादक द्रव पीते हैं।) बम्बई की सेना में किसी अन्य जाति के इतने रंगरूट नहीं जाते जितने कि रत्नागिरि के मराठे। अन्य लोग या तो पुलिस में भर्ती हो जाते हैं अथवा सन्देशवाहक के रूप में सेवा करते हैं। मराठा लोग कुनबियों के समान अनुशासित, सद्व्यवहारी, और मृदु स्वभाव वाले होते हैं किन्तु साहस और दयालुता में उनसे बढ़कर होते हैं। वे बड़े मितव्ययी, सरल, सम्माननीय और संयमी हैं·····वे अत्यन्त धार्मिक लोग हैं।"

"दकन के कुनबी (अब) सब दृढ़ और परिश्रमी कृषक हैं।·····यह जाति अत्यन्त शान्त, सरल स्वभाव वाली और अनुशासित है। वे अपराधों से एकदम मुक्त हैं और देवताओं के प्रति अति श्रद्धालु हैं। दकन के कुनबी बलवान, हृष्टपुष्ट, सहनशील तथा मांसल हैं, (किन्तु कोंकण के कुनबी ठिंगने, काले और कम हृष्टपुष्ट हैं।) कुनबी स्त्रियाँ अपने पतियों के समान बलवान और हृष्टपुष्ट होती हैं, किन्तु पर्दानशीन मराठा स्त्रियाँ सामान्यतः दुर्बल होती हैं·····विधवाओं को प्रायः पुनर्विवाह की अनुमति दे दी जाती है।" (बम्बई गजेटियर, २४.८०; १०.१२३, १२१; १८, भाग १, २८५, १०७)

८. **मराठा चरित्र के दोष**—अब हम मराठा चरित्र के दूसरे पहलुओं पर दृष्टिपात करेंगे। जब कोई सरकार लूट को ही अपनी पूर्ति का नियमित

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

स्रोत बना लेती है तो उसके अधिकारी स्वभावतः स्वयं रिश्वत लेने को अनैतिक नहीं मानते। सेवक की नैतिकता सहज ही स्वामी की नैतिकता में समा जाती है। प्राचीन यूनान के स्पार्टा निवासी भ्रष्टाचार से जितने मुक्त थे उससे अधिक ये सरल हृष्टपुष्ट और समानता की भावना वाले भारतीय स्पार्टा निवासी न थे। समसामयिक यात्रियों ने देखा कि मराठा राज्य के ब्राह्मण अधिकारी, महान शिवाजी के शासन में भी, रिश्वत के बहुत लोलुप थे।

मराठों का प्रधान दोष उनमें व्यवसायिक क्षमता का अभाव है; इस दोष का भयंकर दुष्परिणाम उनके राजनीतिक इतिहास पर पड़ा है। इस जाति ने कोई बड़ा बैंकर, व्यापारी, उद्योगपति या सेना-रसद-विभाग का संगठनकर्ता अथवा ठेकेदार उत्पन्न नहीं किया। अतएव आर्थिक पक्ष में, मराठा प्रशासन अत्यन्त दुर्बल था। अपनी राजनीतिक सफलताओं की चकाचौंध करने वाली चमक के बावजूद पेशवा लोग, बाजीराव प्रथम के समय से आगे तक, दिवालिये रहे। यहाँ तक कि शिवाजी को भी अपने संक्षिप्त शासन-काल में बार-बार अर्थ-संकटों का सामना करना पड़ा—यद्यपि उनके अर्थ-संकटों का कारण वास्तविक दिवालियापन इतना न था जितना कि उनकी यह भावना कि सेना के सामान्य व्यय के लिए संग्रहीत कोष को हाथ न लगाया जाय।

किन्तु मराठों को आज के भारत में अनुपम महत्त्व प्राप्त होने का ऐतिहासिक लाभ है। उनके निकट पूर्वजों ने सैकड़ों युद्धक्षेत्रों में मृत्यु का सामना किया था, सेनाओं का नेतृत्व किया था, और राजनयिक वार्ताओं में भाग लिया था, राज्यों के राजस्व का प्रबन्ध किया था और साम्राज्य की समस्याओं को सुलझाया था; उन्होंने भारतीय इतिहास का निर्माण करने में उस युग में सहायता प्रदान की थी जो हाल में ही व्यतीत हुआ है और अभी विस्मृत नहीं हुआ है। इन सब बातों की स्मृति उनकी जाति के लिए एक अमूल्य निधि है। बौद्धिक तेजस्विता, सधैर्य उद्योग, जीवन की सरलता एवं मानव के उच्चादर्शों के प्रति आस्था के सम्मिश्रण में; विचार को कार्य में परिणत करने हेतु आवश्यक साहस में; बलिदान की भावना, चरित्र की उज्ज्वलता और जनतन्त्रीय समानता की विकीर्ण भावना में—आधुनिक महाराष्ट्र की बहुल मध्यवर्गीय जनता से श्रेष्ठ कोई अन्य भारतीय जाति नहीं है और भारत में उनकी समानता कर सकने वाली जाति भी शायद ही कोई हो। काश, उनमें ऐंग्लो-सेक्सन जाति की संगठन करने की निपुणता, टोली-कार्य की भावना, यन्त्रों और साथियों को व्यवस्थित करने की चतुराई, दूरदर्शिता तथा बचत विषयक सहजबुद्धि होती !

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय २

किशोर एवं युवा अवस्था

(१६२७–१६५६)

१. शिवाजी के पूर्वज ।
२. शाहजी भोंसले का उत्थान ।
३. शिवाजी का जन्म और बचपन ।
४. शिवाजी के प्रारम्भिक जीवन की कथा का पुनर्निर्माण ।
५. पूना जागीर की दशा (१६३७) ।
६. शिवाजी की शिक्षा ।
७. मावलों पर आधिपत्य ।
८. सामाजिक पर्यावरण जिसमें युवक शिवाजी ने कार्य किया ।
९. शिवाजी द्वारा वृत्ति का चुनाव ।
१०. शिवाजी द्वारा दुर्गों की प्रारम्भिक विजय ।
११. आदिलशाह ने शाहजी को बन्दी बनाया (१६४८) ।
१२. पुरन्दर किले पर अधिकार (१६४८) ।
१३. जावली और रायगढ़ पर विजय (१६५६) ।
१४. शिवाजी की अग्रेतर विजयें ।

परिशिष्ट—जावली के मोरे ।

१. **शिवाजी के पूर्वज**—मराठा जाति के भोंसले कुल में अनेक परिवार थे जो पश्चिमी भारत में विभिन्न स्थानों पर बसे हुए थे । उनका राजपूत अथवा स्कॉटिश वंश के समान एक सामान्यतः मान्य मुखिया के अधीन एक संघ न था और न सामाजिक एकत्व ही था । वे तो केवल एक ही उपनाम (वंशनाम) धारण करते तथा अन्य मराठा परिवारों में विवाह करते थे । मराठा जाति के अधिकांश सदस्यों की भाँति उनका मूल व्यवसाय कृषि था । किन्तु पश्चिमी भारत के बड़े राज्यों (अर्थात् १५वीं शताब्दी के अन्त में बहमनी राज्य तथा १७वीं शताब्दी के प्रारम्भ में निजामशाही) के विघटन से उनमें सर्वाधिक योग्य पुरुषों के लिए सैन्य-शक्ति में उन्नति करने और देश पर शासन करने के अवसर उपलब्ध हो गये । शिवाजी के परिवार का इतिहास इस बात का उदाहरण है कि भूमि को जोतने वाला कृषक किस प्रकार क्रमशः डाकू, वेतनभोगी सैनिकों का कप्तान, सामन्ती सरदार और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

एकछत्र शासक बन गया। बहमनी अथवा दिल्ली साम्राज्य जैसी केन्द्रीय शक्तियों के पतन के पश्चात के संकटमय समय में इस प्रकार का परिवर्तन प्रायः होता रहता था और इसका अन्त तभी हुआ जब ब्रिटिश सार्वभौमता एवं ब्रिटिश शान्ति स्थापित हो गयी।

१६वीं शताब्दी के मध्य में पूना जिले में (पाटस सब-डिवीजन), जो उस समय अहमदनगर के निजामशाह के अधीन था, बाबाजी नामक एक भोंसले कृषि के मामूली उत्पादन पर शान्तिपूर्वक गुजर करता हुआ रहता था; उसे कृषि के अतिरिक्त हिंगानी तथा दीवलगाँव नामक ग्रामों के मुखिया (पटेल) के पद से भी आय होती थी। उसके दो बेटों, मालोजी और विठोजी, की अन्य निवासियों से नहीं बनी और वे अपनी पत्नियों सहित दौलताबाद की पहाड़ियों की तलहटी में स्थित वेरूल (एलोरा) ग्राम में जा बसे। यहाँ कृषि का भविष्य असन्तोषजनक होने के कारण दोनों भाई नौकरी की खोज में सिंधखेड़ के निजामशाही दरबारी जादवराव के पास पहुँचे और उसके यहाँ सामान्य सैनिकों (बारगीरों) के रूप में नौकर हो गये। किंवदन्ती है कि जादवराव ने अपने महल में एक जलसे के अवसर पर मालोजी के पुत्र बालक शाहजी और अपनी पुत्री जीजाबाई की सुन्दरता की प्रशंसा की, उन दोनों को साथ-साथ अपनी गोद में बिठाया और कहा कि इनकी जोड़ी बड़ी सुन्दर बनेगी; इस पर मालोजी तुरन्त उठ खड़ा हुआ और अन्य अतिथियों को इस बात के साक्षी बनने को कहा कि उसके स्वामी ने अपनी पुत्री की सगाई उसके पुत्र के साथ कर दी है। इस दुःसाहसी दावे के कारण उसे उसी समय जादवराव ने नौकरी से अलग कर दिया।

इसलिए दोनों भाई अपने गाँव एलोरा में लौट आये और वहाँ अगले कुछ वर्ष तक कृषि द्वारा जीवनयापन करते रहे। मालोजी ने एक रात को खेत में अपनी फसल की चौकसी करते समय एक बड़े सर्प को बाँबी में से निकलते देखा और इस प्रसिद्ध विश्वास के आधार पर कि सर्प गड़े हुए खजाने की रक्षा करते हैं, उन्होंने उस स्थान को खोद डाला तो स्वर्ण मुद्राओं से भरे हुए सात बरतन गढ़े हुए पाये। आखिरकार उन्हें अपनी महत्त्वाकांक्षा को पूरा करने का साधन प्राप्त हो गया। चमारगुण्डा में पुंडे नामक एक ईमानदार महाजन के पास उस खजाने को जमा करके उन्होंने घोड़े, जीन, हथियार और तम्बू खरीदे और एक हजार घुड़सवारों की सेना सज्जित कर ली; उनके नेतृत्व में इन सैनिकों की तलवारें किसी भी धनदाता स्वामी की सेवा के लिए प्रस्तुत थीं। (फाल्टन के) निम्बालकर नामक एक दस्यु

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सरदार का साथ करके उन्होंने इतना महत्त्व और शक्ति प्राप्त कर ली कि पतनोन्मुख निजामशाही सरकार ने उन्हें प्रसन्नतापूर्वक अपने सेनानायकों में नियुक्त कर लिया। यह १७वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ, जब राजधानी अहमदनगर पर अकबर की विजय से उस राज्य में खलबली और विध्वंस के चिह्न दिखाई पड़ने लगे। इसके परिमाणस्वरूप योग्य वेतनभोगी सैनिकों का महत्त्व बढ़ गया और उनके नायकों के लिए उन्नति के अगणित अवसर उपलब्ध हो गये। नवोन्नत भोंसले के पुत्र के साथ अपनी पुत्री का विवाह करने में जादवराव को अब कोई आपत्ति न थी।

मालोजी ने अपने भाग्य प्रदत्त कोष को बुद्धिमानीपूर्वक मन्दिर बनवाने, ब्राह्मणों को दान देने, और सतारा जिले में शुष्क शम्भू महादेव की पहाड़ी पर एक विशाल तालाब खुदवाने में व्यय किया। उस पुण्यस्थली पर प्रति-वर्ष जमा होने वाले लाखों यात्रियों के लिए वह तालाब एक वरदान सिद्ध हुआ। अपने धन को इस प्रकार धर्म-कार्यों में लगाने का सुफल उन्हें यह मिला कि समाज में उनकी प्रतिष्ठा एकदम बढ़ गयी। उनकी मृत्यु होने पर उनके परिवार के सैन्य दल का जिसकी संख्या अब मूल एक हजार से बहुत अधिक बढ़ गयी थी—उनके छोटे भाई बिठोजी ने निजामशाही की सेवा में नेतृत्व किया और बिठोजी की मृत्यु के बाद (संभवतः १६२३ में) मालोजी के ज्येष्ठ पुत्र शाहजी ने।[1]

२. **शाहजी भोंसले का उत्थान** (१६२५-३६)—शाहजी का नाम लिखित इतिहास में पहले पहल १६२८ में, मलिक अम्बर की मृत्यु के दो वर्ष बाद आता है, जब वे उस निजामशाही वजीर के पुत्र एवं उत्तराधिकारी फतहखाँ के द्वारा, एक मुगल सेना के पृष्ठ भाग में पूर्वी खानदेश पर आक्रमण करने के लिए, भेजे गये थे। उसके कुछ समय बाद ही, निजामशाह और उसके नये वजीर के एक-दूसरे के विरुद्ध किये गये षड्यंत्रों, फतहखाँ को उसके

---

१ दिल्ली और बीजापुर के फारसी इतिहासों में इस परिवार का जो वर्णन दिया गया है उसे मैंने संक्षिप्त रूप में अपनी पुस्तक 'शिवाजी का घराना' में दिया है। मराठी के राजकवियों द्वारा संस्कृत में दिये गये अतिशयोक्तिपूर्ण वर्णनों को मैंने अमान्य कर दिया है। बिठोजी (मालोजी प्रथम के छोटे भाई) के आठ पुत्रों में से चार—खेलोजी, पारसूजी, मालोजी द्वितीय और मम्बाजी—शाहजहाँ के शासन काल के प्रारम्भ में मुगल सेवा में थे। (अब्दुलहमीद, १ ए)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

राजा द्वारा बन्दी बनाये जाने (लगभग अप्रैल, १६३०), दरबार में लाखजी जादवराव की हत्या (लगभग १६३०), वायसराय खानेजहाँ लोदी द्वारा अहमदनगर राज्य के मुगल भाग का धोखे से परित्याग करना (१६२७), देश पर नये मुगल आक्रमण (१६२८) और बीजापुरियों द्वारा अहमदनगर राज्य के यथासम्भव भग्नावशेषों को अपने अधिकार में कर लेने के प्रयत्न---इन सब बातों ने मिलकर निजामशाही सरकार को अकथनीय दुर्बलता और खलबली में डाल दिया। शाहजी जैसे योग्य, पुरुषार्थी एवं महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति के लिए यह स्वर्ण अवसर था। अपने श्वसुर जादवराव की हत्या के बाद शाहजी ने निजामशाह को त्याग दिया, कुछ सैनिक एकत्र किये और जुन्नार से अहमदनगर तक के प्रदेश को अधिकार में करने की चेष्टा की। इस प्रयत्न द्वारा उस अनिश्चित सीमाओं वाले और अरक्षित तीन राज्यों के मिलन-विन्दु में भयंकर उपद्रव उपस्थित कर दिया। तब उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र और कनिष्ठ भ्राता के साथ मुगलों की नौकरी कर ली (१६३० के अन्त में) किन्तु डेढ़ वर्ष बाद नौकरी छोड़कर (जून, १६३२) बीजापुर के आदिलशाह की सेवा में जा पहुँचा। वहाँ उसने वजीर खवासखाँ के दाहिने हाथ मुरारी जगदेव पर पूर्ण प्रभुत्व जमा लिया।

बुरहान निजामशाह की उसके वजीर फतहखाँ द्वारा हत्या (लगभग फरवरी, १६३२) और मुगलों द्वारा उसके उत्तराधिकारी हुसैन निजामशाह सहित दौलतबाद पर अधिकार (१७ जून, १६३३) किये जाने के पश्चात अहमदनगर राज्य का अन्तिम रूप से विघटन हो गया जो कभी वैभवशाली था। शाहजी ने अब पूना और चाकन से लेकर अहमदनगर और नासिक के निकटवर्ती प्रदेश के समूचे निजामशाही राज्य को अपने अधिकार में कर लिया और चारों ओर लूट मचा दी। बीजापुर की सहायता से उन्होंने प्रेमगढ़ में (जिसका नाम बदलकर शाहगढ़ रख दिया गया) अगस्त, १६३३ में एक लड़के को निजामशाह के तख्त पर बिठा दिया और इस कठपुतली के नाम से तीन वर्ष तक शासन-सूत्र का संचालन किया। इस अवधि में उन्होंने (उत्तरी कोंकण सहित) कई जिलों पर कब्जा किया, सैनिक भर्ती किये (जिनमें वे १२,००० निजामशाही सैनिक भी सम्मिलित थे जो दौलताबाद के पतन के बाद सेवा से निवृत्त कर दिये गये थे), और बीदर तथा दौलताबाद तक के प्रदेश पर धावा बोल दिया जिससे मुगलों को भारी परेशानी हुई। १६३४ में उनके अधिकार में भूतपूर्व निजामशाही के कुल राज्य का चौथाई भाग आ चुका था (जिसकी वार्षिक मालगुजारी २० लाख 'होन' थी), और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बीजापुरियों की सहायता से उन्होंने परेन्दा पर मुगलों द्वारा डाले गये घेरे को विफल कर दिया था।

किन्तु बादशाह ने फरवरी, १६३६ में उनके विरुद्ध विशाल सेनाएँ भेजीं। कठिन संघर्ष के उपरान्त उस युद्ध का अन्त अगले अक्तूबर में हुआ और उसमें शाहजी की पूर्णरूपेण पराजय हुई। उन्हें इस बात के लिए बाध्य किया गया कि वह अपने कठपुतली निजामशाह को तथा अपने सात किलों को विजेताओं को सौंप दें तथा बीजापुर की सेवा में प्रविष्ट होकर अपनी अदम्य महत्त्वाकांक्षा एवं विघ्नकारी कार्यों को महाराष्ट्र की मुख्य भूमि से सुदूर स्थित क्षेत्रों में लगा दें। इसके उपरान्त उन्होंने मैसूर के पठार और पूर्वी कर्नाटक में अपने निज के लिए एक विशाल जागीर बना ली और उन्नति करते हुए आदिलशाह के सर्वश्रेष्ठ हिन्दू सरदार बन गये। (उनकी पूर्ण जीवनी के लिए मेरी पुस्तक 'शिवाजी का घराना' देखिए।)

३. **शिवाजी का जन्म और बचपन**—शाहजी भोंसले की प्रथम पत्नी जीजाबाई से उन्हें दो पुत्र शम्भूजी और शिवाजी हुए। चूँकि ज्येष्ठ पुत्र शम्भूजी का कार्यक्षेत्र महाराष्ट्र से बहुत दूर था और उनकी मृत्यु भरी जवानी में हो गयी, इसलिए यह इतिहास उनसे सम्बन्धित नहीं है। उनके द्वितीय पुत्र शिवाजी का जन्म पूना जिले के धुर उत्तर में, जुन्नार नगर के निकटवर्ती शिवनेर के पर्वत-दुर्ग में हुआ। जीजाबाई ने अपने गर्भस्थ बालक की कुशलता के लिए स्थानीय देवी शिवाईदेवी से प्रार्थना की थी और इसलिए उन्होंने बालक का नाम उन्हीं के नाम पर शिवाजी रखा।

शिवाजी के जन्म[२] की ठीक तिथि का कोई विश्वसनीय समसामयिक अभिलेख नहीं है। यहाँ तक कि उनके दरबारी कृष्णाजी अनन्त सभासद भी, जिन्होंने १६९७ में पुस्तक लिखी, इस विषय में मौन हैं।

---

२ शिवाजी की सही जन्मतिथि के प्रश्न पर वी. एस. वाकस्कर द्वारा उनके '९१ कलमी बखर' के संस्करण में पृष्ठ २७-२८ पर तथा वी० के० राजवाड़े एवं बी० जी० तिलक द्वारा 'शिवा चरित्र प्रदीप' (पुनर्मुद्रण) में विस्तार से एवं भलीभाँति विवेचन किया गया है। उन्होंने अप्रैल, १६२७ का मास एवं वर्ष निश्चित किया है जबकि परस्पर-विरोधाभासी 'जेधे शकावली' और 'सूर्यवंशम्' पर विश्वास करने वाले उनकी जन्मतिथि १९ मार्च, १६३० मानते हैं। (शिवाजी सॉवेनिर, जी० एस० सरदेसाई, मराठी खण्ड, अध्याय ५)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लेखकों के दो भिन्न वर्गों द्वारा उनके जन्म की जो दो भिन्न तिथियाँ दी गयी हैं उनमें से मैं सोमवार, १० अप्रैल १६२७ को अधिक उपयुक्त मानता हूँ।

उनके माता-पिता के, उनके जन्म से पूर्व के वर्ष के, इतिहास तथा उनके बीस वर्ष की अवस्था तक के जीवन की घटनाओं के सम्बन्ध में जो कहानियाँ बाद के मराठी 'बखरों' में कही गयी हैं वे कई विषयों में प्रामाणिक इतिहास से विपरीत हैं और अन्य कई विषयों में असम्भव हैं—इतना तो निश्चित है ही कि उनकी पुष्टि के लिए कोई प्रमाण नहीं दिया गया है। समसामयिक फारसी इतिहासों से हमें ज्ञात होता है कि १६३० से १६३६ के मध्य अधिकांश समय में शाहजी ने पर्यटक जीवन व्यतीत किया, और इस बीच उन्हें विविध शत्रुओं से प्रायः संघर्ष करना पड़ा और निवास-स्थान बदलने पड़े। इन परिस्थितियों में उन्होंने स्वभावतः अपनी पत्नी एवं शिशु को सुरक्षा के हेतु शिवनेर जैसे किसी किले में रख छोड़ा होगा। किन्तु वास्तव में ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोनों ही उनकी उपेक्षा के भाजन बने। ज्ञात तथ्यों से यह निष्कर्ष निकालना संगत होगा कि १६३० तक या उसके आसपास जीजाबाई ने संभवतः अपना यौवन खोने के साथ ही, अपने पति का प्रेम भी खो दिया और शाहजी ने उन्हें तथा उनके बालक पुत्र शिवाजी को त्यागकर एक सुन्दरतर नवयौवना तुकाबाई मोहिते को पत्नी बना लिया। तत्पश्चात् उन्होंने तुकाबाई तथा उसके पुत्र व्यांकोजी को अपनी संगति एवं समस्त आय प्रदान कर दी।

समसामयिक फारसी इतिहास 'पादशाहनामा' (१. बी, १५०) में यह स्पष्ट रूप से उल्लिखित है कि मार्च, १६३६ में शाहजी का परिवार शिवनेर में रहता था। क्योंकि अक्तूबर, १६३६ की सन्धि की शर्तों के अनुसार शाहजी ने मुगलों को जो सात किले सौंपे थे उनमें शिवनेर का किला भी था, इसलिए शिवाजी उस किले में उस वर्ष के अन्त के बाद नहीं रह सके होंगे। अपनी पराजय के पश्चात् शाहजी स्वयं बीजापुर चले गये थे, और आदिलशाह की सेवा में नियुक्त होकर सुदूर दक्षिण में युद्धों के लिए भेज दिये गये थे। उस राज्य से उन्होंने अपनी जागीर के रूप में पूना का जिला, चाकण से इन्दापुर और शीरवाल तक, प्राप्त किया था और उस क्षेत्र का प्रशासन करने के लिए दादाजी कोंणदेव को नियुक्त किया था। दादाजी को उन्होंने आदेश दिया कि "मेरी पत्नी जीजाबाई शिवनेर के किले में रह रही है और उसने शिवाजी नामक बालक को जन्म दिया है। उसे और उसके बालक को वहाँ से लाकर अपनी देखरेख में (पूना में) रखो और उनके आवश्यक व्यय के लिए उन्हें धन प्रदान करो।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इस प्रकार शिवाजी, सम्भवतः १६३७ के अन्त में, पूना में जा बसे। इस लिए वे अपने जन्म के कई वर्ष बाद तक अपने पिता के लिए लगभग अपरिचित ही रहे (शाहजी द्वारा, अपने युद्धों के मध्य अवकाश के समय में, शिवनेर आगमनों को यदि हम अपने वर्णन में सम्मिलित न करें) और पूना चले जाने के बाद तो वे शाहजी के लिए पूर्णतः अपरिचित हो गये।[3]

अपने पति द्वारा की गयी अवहेलना के कारण जीजाबाई का मन अपने अन्तःकरण की ओर उन्मुख हुआ और उनकी आध्यात्मिक भावना गहन हो गयी। यही आध्यात्मिक भावना उन्होंने अपने पुत्र को प्रदान की। शिवा एकाकीपन में वय को प्राप्त होने लगे; उनके साथ न कोई सखा था, न भाई, न बहन और न पिता। माता और पुत्र अपने एकाकी जीवन के कारण एक दूसरे के अति निकट आ गये और पुत्र का माता के प्रति प्रेम इतना प्रगाढ़ हो गया कि वह एक देवी के समान उनकी आराधना करने लगे। शिवा स्वाभाविक रूप से, बहुत छोटी अवस्था से ही स्वावलम्बी बन गये थे और उन्होंने अपने विचारों को किसी की सहायता बिना स्वयं ही क्रियान्वित करना सीख लिया था, किसी उच्च सत्ता के प्रति उत्तरदायित्व अथवा अधीनता की भावना से रहित होकर पहल करना भी उन्होंने सीख लिया था। शाहजी भोंसले का यह त्यक्त पुत्र पूर्णतः हसन सूर के त्यक्त पुत्र के समान था। उनके बचपन में उनके घरों की स्थिति, उनके प्रारम्भिक जीवन और शिक्षण तथा उनके चरित्र के विकास यहाँ तक कि उनके राज्यारोहण के क्रमों तक में पूर्णतः समानता थी। शिवाजी और शेरशाह न केवल चरित्र एवं प्रतिभा में समान थे अपितु समान परिस्थितियों में ही वे बड़े भी हुए।

४. **शिवाजी के प्रारम्भिक जीवन की कथा का पुनर्निर्माण**—किसी समसामयिक प्रमाण और बाद के भी विश्वसनीय अभिलेखों के अभाव में अब यह असम्भव है कि शिवाजी के प्रारम्भिक जीवन का विवरण, तिथियों एवं घटनाओं की निश्चितता के साथ, तैयार किया जा सके। किन्तु उस समय के कतिपय ज्ञात तथ्यों से निष्कर्ष निकालकर और सम्भावनाओं का एक-दूसरी के विरुद्ध संतुलन करके मैं, सत्य के बहुत-कुछ निकट अनुमान के रूप में, निम्नलिखित विवरण प्रस्तुत करता हूँ।

---

3 १६४१ के लगभग जीजाबाई और शिवाजी दादाजी के साथ शाहजी से बंगलौर में मिले, किन्तु वे उन्हीं के साथ वापस पूना लौटा दिये गये। (सभासद ३-४)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जब, अक्तूबर, १६३६ में, शाहजी महाराष्ट्र से निकाल दिये गये तो उन्हें सुदूरवर्ती स्थान को जाना पड़ा, किन्तु चालीस वर्ष की अवस्था में नया जीवन निर्माण करने को वे बाध्य नहीं हुए। पूना जिले में उनके पूर्वजों तथा स्वयं उनके द्वारा अर्जित एक अच्छी खासी जागीर उनके अधिकार में थी; और थोड़े-से किन्तु अत्यन्त कुशल एवं परायण सैनिक तथा प्रशासक भी उनकी अधीनता में थे जो कहीं भी उनका अनुगमन करने को तैयार थे। शाहजी ने सबसे पहले आदिलशाह (विगत निजामशाह के मान्य उत्तराधिकारी) से पूना की जागीर के अनुदान की विधिवत पुष्टि ले ली (२५ फरवरी, १६३७)। उन्हें स्वयं पूना में रहने की अनुमति नहीं मिली थी, इसलिए उन्होंने एक विशिष्ट रूप से योग्य और ईमानदार प्रबन्धक दादाजी कोंणदेव (मल्थान के पूर्व 'कुलकर्णी') को अपनी पूना की जागीर का प्रशासन करने के लिए, और अपनी उपेक्षित पत्नी तथा अपने पुत्र शिवाजी को शिवनेर से पूना लाकर वहाँ उनका पालन-पोषण करने के लिए भी, नियुक्त किया।

विगत कई वर्षों से पूना एक उजड़ा हुआ स्थान था जहाँ केवल थोड़ी-सी कंगाल एवं चलती-फिरती जनसंख्या और कुछ-एक फूस की झोंपड़ियाँ थीं। शाहजी के नये भू-प्रबन्धक सम्भवतः पहले पहल 'खेड़े-बारे' गाँव में बसे; जहाँ उन्होंने एक नया खेड़ा 'शिवापुर' नाम से बसाया और बाग लगाये। यहाँ उन्होंने जीजाबाई और उनके पुत्र को रखा जबकि इनके लिए एक उपयुक्त मकान (लाल महल) और प्रशासनिक कार्यालयों का पूना में निर्माण हो रहा था और उनकी दूरदर्शी एवं चातुर्यपूर्ण नीति द्वारा आसपास के प्रदेश को कृषि के योग्य बनाया जा रहा था।

इस प्रकार शिवाजी पूना में पहले पहल १६३८ से पूर्व नहीं आये और इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि शाहजी की पूना जागीर इतने पहले शिवाजी को उनके उत्तराधिकार के रूप में दे दी गयी। जो अभिलेख उपलब्ध हैं उनसे सिद्ध होता है कि उन्हें और उनकी माता को इस जागीर से अपना गुजारे का भत्ता मिलता था किन्तु तब तक वे उस पर कोई अधिकार नहीं जता सकते थे—इस कार्य के लिए दादाजी सीधे शाहजी के अधीन थे और अधिकृत रूप से उनके पूर्ण अधिकार प्राप्त कारिन्दे (मुतालिक) थे।

बीजापुरी सरकार के अधीन, १६३७ और १६३८ में, शाहजी ने क्या कार्य किये और उनका क्या पद था इसका कोई अभिलेख नहीं है। शाहजी को अपनी द्वितीय पदोन्नति का अवसर अपने प्रशंसक सेनापति रन्दौलाखाँ के अधीन (जो अब रुस्तमेजमाँ बना दिया गया था) अक्तूबर, १६३८ में ही प्राप्त हुआ

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जब आदिलशाह ने कर्नाटक (मैसूर और पूर्वी समुद्रतट) पर वार्षिक आक्रमणों का सिलसिला शुरू किया। १६३९ के युद्ध में बीजापुरियों ने बंगलौर पर अधिकार कर लिया और वह शाहजी को अपनी नयी जागीर की राजधानी बनाने के लिए दे दिया गया। वहाँ स्थापित होने में उन्हें कुछ महीने लग गये किन्तु अब (१६४० के शुरू में) शाहजी को—१६३६ से भटकते रहने के बाद—आखिरकार एक 'नया घर' मिल गया था।

शिवाजी तब पूरे बारह वर्ष के हो चुके थे—एक मराठा सरदार के पुत्र का सामान्यतः जिस अवस्था में विवाह होता है उसे वह पार कर चुके थे; और जीजाबाई ने अपने पति को पत्र लिखकर अनुरोध किया कि शिवाजी का विवाह कर दें और उनके लिए एक प्रथम श्रेणी के सरदार के पुत्र के योग्य विधिवत व्यय-राशि निश्चित कर दें—एक अवैध सन्तान की तरह उन्हें केवल 'भोजन भत्ते' पर गुजर करते हुए नहीं रहने दिया जा सकता। इसलिए माता और पुत्र १६४० या १६४१ में बंगलौर बुला लिये गये (बीजापुर नहीं, जैसा कि उन्नीसवीं शताब्दी के रोमांसवादियों ने—जिन्हें गलती से 'बखरकार' कहा जाता है—अनुमान किया है)। शाहजी के रनवास में जब प्रतिद्वन्द्वी सौतें अपने-अपने पुत्रों के लिए लड़ी होंगी तब जो तूफानी दृश्य उपस्थित हुआ होगा, उसकी कल्पना सांसारिक ज्ञान वाला व्यक्ति सहज ही कर सकता है।

जीजाबाई का यह तर्क उचित ही था कि बंगलौर के स्वामी की समस्त नयी सम्पत्ति और अधिकार शाहजी के साथ रहने वाली तुकाबाई मोहिते के पुत्र व्यांकोजी को मिलेगी, जबकि उनके निज के पुत्र शिवाजी को अपने पिता से कुछ भी नहीं मिला था—दृष्टि से दूर, मन से दूर। (जीजाबाई के ज्येष्ठ पुत्र शम्भूजी अपने पिता के साथ, माता से अलग, रहते थे और उन्हें उनसे कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ था।)

बुद्धिमत्तापूर्ण समझौता हो गया। पूना की जागीर (लेखानुसार जिसकी वार्षिक आय ४०,००० होन अथवा लगभग डेढ़ लाख रुपये थी) अब विधिवत शिवाजी को प्रदान कर दी गयी—इस शर्त के साथ कि शाहजी के जीवन-पर्यन्त वे पूना में उनके एजेण्ट और उनकी मृत्यु के उपरान्त उसके पूर्ण स्वामी रहेंगे। उसी समय शिवाजी का, बंगलौर में, साईबाई निम्बालकर के साथ विवाह कर दिया गया और वह पूना वापस भेज दिये गये। उनके साथ चार प्रशासकीय विभागों के अध्यक्ष भी भेजे गये। ये प्रशासकीय विभाग शिवाजी की अधीनता में निर्मित किये गये, यद्यपि दादाजी कोंणदेव का नाबालिग के अभिभावक के रूप में, अब भी नियन्त्रण था। तभी से दादाजी पूना के 'मन्त्रि-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मण्डल' और न्यायालयों (महज़र) की शिवाजी और जीजाबाई के साथ-साथ (और बाद में केवल शिवाजी के साथ) अध्यक्षता करने लगे। इस नये प्रशासनिक प्रबन्ध के अनुसार कार्यारम्भ १६४२ से हुआ जब शिवाजी ने १६वें वर्ष में पदार्पण किया ही था। पूना की जागीर की, पूर्ण स्वामी के रूप में, बागडोर उन्होंने १६४७ में दादाजी की मृत्यु के बाद ही सँभाली। उनका तत्पश्चात् का जीवन भलीभाँति विदित है, यद्यपि कुछ तिथियाँ सन्देहप्रद हैं।

५. पूना जागीर की दशा (१६३७)—शाहजी की पूना और सूपा की जागीर में—जो पहले निजामशाह तथा उसके बाद आदिलशाह के अधीन थी—चाकण से इन्दापुर तक पूना जिला, सूपा, शिरवल और वाई का सीमा प्रदेश था; इस क्षेत्र की पश्चिमी सीमा पर भीमा नदी और दक्षिणी सीमा पर नीरा नदी थी।

दादाजी ने जिस पूना जिले को अपने निरीक्षण में लिया वह अत्यन्त ध्वस्त दशा में था। छह वर्ष के युद्ध ने उस प्रदेश को उजाड़ दिया था और आक्रमणकारी सेना से जो कुछ कोर-कसर बाकी रह गयी थी वह उसके चले जाने के बाद डाकू सरदारों द्वारा पूरी कर दी गयी जिन्होंने अराजकता से लाभ उठाने की चेष्टा की। वास्तव में, इस प्रदेश को निजामशाही सत्ता से बीजापुरी सत्ता में गये हुए इतना कम समय हुआ था कि अभी वहाँ नयी सरकार की जड़ें जम नहीं पायी थीं। जिले को एक शक्तिशाली जागीरदार का शासन ही शान्ति एवं समृद्धि प्रदान कर सकता था; किन्तु १६३० से १६३६ तक के वर्षों में शाहजी को निरन्तर प्रयाण, संकट एवं युद्धों का जीवन व्यतीत करना पड़ा था। इसलिए बीजापुर राज्य के धुर उत्तर-पश्चिमी कोने में स्थित पूना तथा थाना जिले विवादास्पद क्षेत्र थे जिनका प्रशासन करने और रक्षा करने के लिए कोई न था।

१६३० ई० में शाहजी ने पूना के आसपास के निजामशाही प्रदेश को लूटकर अपने अधिकार में कर लिया था। उसके कुछ ही समय बाद एक बीजापुरी सेना ने शाहजी के पूना, इन्दापुर तथा अन्य गाँवों को लूटकर जला दिया और उन्हें "पूरी तरह उजाड़ दिया।" उसके बाद उन्होंने बलपूर्वक उन पर पुनः अधिकार कर लिया। तत्पश्चात् १६३०-१६३१ का अकाल पड़ा जो दकन के दुखद इतिहास में सबसे अधिक भयानक था। जुन्नार और उत्तरी पूना क्षेत्र में १६३४-३६ में लगातार मुगल आक्रमण हुए। खानेजमाँ ने जब (जुलाई-अक्तूबर, १६३६ में) शाहजी के विरुद्ध युद्ध किया तो वह पूना तक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बढ़ा चला गया किन्तु वहाँ उसके लिए लूटने या जलाने को सम्भवतः कुछ भी नहीं बचा था। जब अहमदनगर सल्तनत का विघटन हो रहा था तब मोरो ज्ञानदेव होणप नामक एक मालगुजारी के लेखापाल ('देशपांडे') ने, "जो भीमा नदी के आसपास के क्षेत्र से भलीभाँति परिचित एक गर्वीला विद्रोही था, हंगामा मचा दिया और पूना का निकटवर्ती इलाका अपने कब्जे में कर लिया। इन सब गड़बड़ों ने अहमदनगर से लेकर वाई और शिरवल की सीमा तक समूचे साम्राज्य को विनष्ट कर दिया था।"

अपनी जाति का संहार करने वाले मानव ने जो विध्वंस किया उससे जंगली जानवरों की वृद्धि हुई। पूना जिले, विशेषकर उसकी पश्चिमी सीमा का निर्माण करने वाली सह्याद्रि पहाड़ी में अब भेड़ियों की भरमार हो गयी थी जिन्होंने जनसंख्या को क्षीण कर दिया और कृषि में बाधा उत्पन्न कर दी। दादाजी कोंणदेव ने भेड़ियों को मारने के लिए पहाड़ी के निवासियों को पुरस्कार दिये और इस प्रकार थोड़े ही समय में सम्पूर्ण क्षेत्र से इन विनाश-कारियों का सफाया कर दिया। उसने पहाड़ियों से मेल करके उन्हें घाटी में बसने तथा खेती का विस्तार करने के लिए अत्यन्त उदार शर्तों पर राजी कर लिया। इन शर्तों पर पट्टे दे दिये गये कि नये पट्टेदार "पहले वर्ष में केवल $\frac{1}{64}$ आना प्रति बीघा किराया दें, दूसरे वर्ष में $\frac{1}{8}$ आना, तीसरे में $\frac{1}{4}$ आना, चौथे में $\frac{3}{8}$ आना, पाँचवें में चार आने, छठे में आठ आने, सातवें वर्ष में एक रुपया और आठवें वर्ष में और उससे आगे मलिक अम्बर के जमींदारी बन्दोबस्त की दर से किराया दें। इस प्रकार सम्पूर्ण प्रदेश में हल चलवा दिया गया।"[४] जब दादाजी ने पूना जागीर का प्रबन्ध सँभाला, तब उसकी मालगुजारी, सरकारी कागजों पर, तत्कालीन विनिमय दर के अनुसार, केवल ४०,००० होन अथवा १,४०,००० रुपये थी। किन्तु वास्तव में इस राशि का केवल एक अंश ही वसूल किया जाता था।

---

४ '९१ कलमी बखर', परिच्छेद, २१. मराठी शब्द 'रूका' का अर्थ वास्तव में एक आने का बारहवाँ भाग अथवा ब्रिटिश भारतीय ताँबे की पाई है, किन्तु इस बखर का फारसी में अनुवाद करने वाले ने भूल से इसका अनुवाद 'रुपया' किया है। आदिलशाही बीघा (जो मेरे विचार से १६३७ में पूना में प्रचलित था) ४३८३ वर्ग गज अथवा एक अंग्रेजी एकड़ (=४८४० वर्ग गज) के $\frac{8}{11}$ भाग से कुछ अधिक था। *Wilson's Glossary*, ८५. मैंने इस स्थल पर अपने पूर्व संस्करणों को संशोधित कर लिया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उनके सुयोग्य एवं लाभप्रद प्रशासन की स्मृति दीर्घ समय तक सुरक्षित रही। बाद के एक ऐतिहासिक अभिलेख के अनुसार, "उन्होंने इतना कठोर न्याय किया कि जिले से डाकुओं और अपहरणकर्ताओं का नामोनिशान मिट गया।" एक दन्तकथा से उनकी न्यायप्रियता का उदाहरण मिलता है: "उन्होंने फलदार वृक्षों का एक बाग लगाया, जिसका नाम शाहजी के नाम पर रखा, और कड़े आदेश दिये कि यदि किसी ने वृक्षों से एक पत्ती भी तोड़ी तो उसे दण्ड दिया जायगा। एक दिन दादाजी ने स्वयं अपने हाथ से एक वृक्ष से एक आम तोड़ लिया। इस अपराध के लिए वह अपना हाथ काटने ही वाले थे कि अन्य व्यक्तियों ने उन्हें रोक लिया। किन्तु नियमों के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने के हेतु उन्होंने अपने गले में लोहे की जंजीर डाल ली," अथवा एक अन्य वर्णन के अनुसार, "अपराधी हाथ को एक लम्बे दस्ताने में कैद करके रखा!"[५]

६. **शिवाजी की शिक्षा**—शिवाजी की शिक्षा के विषय में सभासद मौन हैं। '९१ कलमी बखर, २१' में लिखा है कि "दादाजी ने शिवाजी को प्रशिक्षित किया और उनके लिए एक श्रेष्ठ अध्यापक नियुक्त किया। थोड़े ही समय में शिवा कुश्ती, घुड़सवारी तथा अन्य प्रवीणताओं में निपुण हो गये।" प्रमाणों से इसी विचार की पुष्टि होती है कि मध्यकालीन भारत के तीन अन्य वीरों—अकबर, हैदरअली और रणजीतसिंह—की भाँति शिवाजी भी निरक्षर थे। जो अनेक यूरोपवासी उनसे मिलने आये उन्होंने कभी उन्हें कुछ लिखते नहीं देखा; जब वे शिवाजी को कोई प्रार्थना-पत्र देते थे तो वह सदैव उसे पढ़कर सुनाने के लिए अपने मन्त्रियों को दे देते थे। उनके हाथ के लिखे किसी लेख के अस्तित्व का पता नहीं है।

भले ही वह पुस्तकें पढ़ने में असमर्थ रहे हों, किन्तु यह निश्चित है कि उन्होंने दोनों महान् हिन्दू महाकाव्यों (रामायण व महाभारत) की कथावार्ता को उनके पाठ एवं कथाएँ सुनकर भलीभाँति याद कर लिया था। कर्तव्य

---

५ शाहजी की पूना जागीर, विस्तार (९१ क. ब. २०); उसकी मालगुजारी (सभासद, १०४); मोरो तानदेव होणप दण्डित, (९१ क. ब. २०); दादाजी द्वारा मालगुजारी वसूल करने के लिए नियुक्त (वही २१); दादाजी ने कृषि की किस प्रकार उन्नति की (वही २१. और २४); दादाजी का चरित्र एवं प्रतिष्ठा (वही २१ और २४); पूना का पिछली बार उजड़ना (वही, २०); बसातिन-उस-सलातीन, २८७; अब्दुल हमीद १. ए, ३६२

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

करना और दुख भोगना, कर्म और त्याग, सैन्य कौशल, और राज्य प्रबन्ध के उदाहरण—जो राम और पांडवों की कथाओं से प्राप्त होते हैं—राजनीतिक शिक्षाएँ और नीति-वचन—जिनसे ये महाकाव्य भरे पड़े हैं—इन सबने उनके युवक मस्तिष्क पर गम्भीर प्रभाव डाला। वह धार्मिक ग्रन्थ-पठन और कीर्तन के प्रेम में पागल थे, और जहाँ-कहीं वह जाते थे वहीं हिन्दू तथा मुस्लिम सन्तों की संगति करते थे। इसलिए किताबी शिक्षा के अभाव के कारण उनका मस्तिष्क कुण्ठित एवं निष्प्राण नहीं बना, और न ही उस मध्यकालीन युग में एक क्रियाशील मनुष्य के रूप में उनकी कुशलता में ही कमी आयी।

७. **मावलों पर आधिपत्य**—पश्चिमी घाटों के किनारे-किनारे स्थित, ९० मील लम्बी और १२ से २४ मील तक चौड़ी, पूना जिले की पश्चिमी पट्टी 'मावल' अथवा सूर्यास्त भूमि कहलाती है। "यह बेहद ऊबड़-खाबड़ है, पठारों की एक शृंखला है जिसके हर तरफ गहरी चक्करदार घाटियाँ हैं।·····उन घाटियों के ऊपर विभिन्न ऊँचाइयों तथा आकारों की पहाड़ियाँ खड़ी हैं, मंजिल पर मंजिल, जिनकी ढलानों में प्रायः काले बेसाल्ट के शिलाखण्ड पाये जाते हैं। जहाँ कहीं पेड़ छोड़ दिये गये हैं उन्होंने लगभग अप्रवेश्य झाड़ियों के साथ मिलकर पहाड़ियों को ढक लिया है। यत्र-तत्र प्राचीन सदाबहार वनों के खंड हैं।·····उत्तरी घाटियों के निवासी कोली और दक्षिणी घाटियों के निवासी मराठे हैं। उनमें पहाड़ी खून है और उनके शरीर काले, सुगठित तथा पीतवर्ण हैं। पश्चिमी या दक्षिणी भारत के अधिकांश भागों की अपेक्षा जलवायु शुष्क तथा शक्तिप्रद है, यहाँ की हवा हलकी है और गरमी कम कष्ट-दायक है।" (बम्बई गजेटियर १८, भाग १, पृष्ठ २, १३, १५)

इस पश्चिमी पट्टी की घाटियाँ सम्मिलित रूप से प्रचलित भाषा में 'बारह मावल' कहलाती हैं यद्यपि उनके नामों के अन्त में 'मावल' के अतिरिक्त 'नेर' और 'खोड़े' प्रत्यय भी हैं तथा उनकी संख्या १२ से अधिक है। एक मराठी लोकगीत में बारह मावल जुन्नार के अन्तर्गत तथा बारह अन्य पूना के अन्तर्गत बताये गये हैं।

मावल प्रदेश बिलकुल कृषि-प्रदेश है, उसमें कोई नगर नहीं है और व्यापार नाममात्र को ही है। उसके सामान्य निवासियों में मराठों तथा कुनबियों से केवल इतना अन्तर है कि वे अधिक बलिष्ठ, अधिक सहिष्णु, तथा अधिक सरल हैं, और आमोद-प्रमोद तथा व्यसन ने उनको कम निस्तेज किया है। उनका सामाजिक संघटन न तो कबाइली था और न पितृ सत्तात्मक (स्काटलैण्ड और राजपूताना के पर्वतवासियों के समान),

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बल्कि दकन के प्राचीन ग्रामीण समाज की भाँति था जिसमें प्रत्येक गाँव विविध जातियों एवं व्यवसायों के स्वयंपूर्ण गणतन्त्र का लघुरूप होता था। प्रदेश का प्रत्येक उपमण्डल एक 'देशमुख' के अधीन होता था जिसे एक भूमि-पति अथवा अधिक स्पष्ट रूप से राजा का स्थानीय प्रतिनिधि कहा जा सकता था। वह विभिन्न गाँवों के किसानों से मुखिया (पटेल) द्वारा सरकारी मालगुजारी वसूल करता था और उस पर कुछ प्रतिशत अपना पारिश्रमिक भी; इसके अतिरिक्त कुछ विशेष माफी-जोत के गाँवों की पैदावार भी उसे मिल जाती थी।

ये छोटे सरदार (देशमुख) अधिकतर मराठे थे अथवा उसी जाति के थे जिसके शिवाजी। महाराष्ट्र में अन्य स्थानों की भाँति, वे कुल प्रबन्ध ब्राह्मण प्रबन्धकर्ता (कारभारी) के सुपुर्द कर देते थे और हिसाब तथा पत्र-व्यवहार का कार्य कायस्थ (प्रभू) जाति के लोगों को। प्रत्येक मावली देशमुख को पड़ोसियों द्वारा भूमि के अपहरण अथवा लुटेरों के अचानक आक्रमणों से रक्षा के लिए एक सशस्त्र सेना रखनी पड़ती थी जिसके अधिकांश सदस्य उसके काश्तकारों में से ही होते थे। इसके अतिरिक्त, आवश्यकता के समय के लिए राज-सत्ता की ओर से राज्य की सेवा के लिए प्रायः सेना रखने के लिए कहा जाता था, और इस अतिरिक्त कार्य के लिए अतिरिक्त गाँवों के अनुदान और नकद अधिदान दिये जाते थे।

इस प्रकार, उस समस्त प्रदेश में मावल भूमिधर और उनके बलिष्ठ काश्तकारों को, जो उसकी लूट और जीतों में सहायक थे, रोजगार का विस्तृत क्षेत्र मिल गया, और इससे घर पर खेती करने की अपेक्षा कहीं अधिक उनको धन, बल और सम्मान प्राप्त हो जाता था। उनकी महत्त्वाकांक्षा उसके साथ अभिन्न रूप से संयुक्त हो गयी और इस प्रदेश में शिवाजी के बारम्बार दौरे तथा अपनी प्रजा के साथ अच्छे मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों द्वारा यह सम्बन्ध और भी दृढ़ हो गया—यहाँ तक कि मावल लोग उनको अपना 'लघु कौरपोरल' (छोटा सेना-अधिकारी) समझने लगे, जिसके लिए वे साथ-साथ जान न्यौछावर करने के लिए तैयार रहते थे। मावल देश शिवाजी की शक्ति का उद्गम स्थान था और मावली लोग उसकी सेना के मेरुदण्ड थे।

दादाजी ने पूना जिले के निकट के मावलों पर पूरा आधिपत्य जमा लिया था। चतुरतापूर्ण व्यवहार एवं पारितोषकों द्वारा अधिकांश स्थानीय सरदार (देशमुख) अपने तरफदार कर लिये गये थे। जो उसके आधिपत्य को नहीं मानते थे उन पर आक्रमण किया गया और उनको अधीनता मानने के लिए

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बाध्य किया गया।[६] इस प्रकार उस प्रदेश में शान्ति और समृद्धि स्थापित हुई, और वह पूना के लिए, अलाभदायक और भयानक स्वामित्व होने के बजाय, सम्पत्ति और शक्ति का स्रोत हो गया। इस क्षेत्र से शिवाजी को अपने सर्वोत्तम सैनिक, अपने सर्वप्रथम साथी और अपने परम भक्त अनुगामी प्राप्त हुए। यसाजी कंक और बाजी पासलकर उन्हीं की वय के मावली सरदार थे; वे बहुत आरम्भ में ही उनके साथ हो लिये और वे उनके प्रथम कप्तान (नायक) बने। इसी प्रकार तानाजी मालुसरे और उसका भाई सूर्याजी भी थे। शिवाजी के सर्वप्रथम भक्त दो मावली देशमुख थे, कारी का जेधे नायक और हरिदास मावल का बाँदल नायक। उन्होंने इतनी स्वामिभक्ति से उनकी सेवा की कि एक जनप्रिय लोकगीत में यों आता है—"जिस प्रकार अंगद और हनुमान रामचन्द्रजी के लिए थे उसी प्रकार जेधे और बाँदल शिवा के लिए थे।" अन्य जो उनके झंडे के नीचे आये वे थे गुंजन मावल के सिलिम्बकर नायक (उपाधि—हैबतराव) और कानड़ खोड़े के मराल देशमुख (उपाधि—जुझारराव)।

८. **सामाजिक पर्यावरण जिसमें युवक शिवाजी ने कार्य किया**—जिस सामाजिक पृष्ठभूमि पर शिवाजी ने सर्वप्रथम कार्य किया और जिससे उनका शासक बनना सम्भव और सरल हुआ, उसका चित्र महाराष्ट्र के गाँवों के मुखियों के उन हजारों परिवारों के कागजों से मिलता है जो अब प्रकाशित हो गये हैं। पूना जिले में सैकड़ों ही छोटे-छोटे स्वामी थे जिनमें से प्रत्येक अधिकार अथवा अपहरण द्वारा किसी-न-किसी गाँव का मालिक बन बैठा था, और तत्पश्चात् वह अपनें पड़ोसी सरदारों से लड़ता रहता था अथवा किसानों की लूट-खसोट करता रहता था। असैनिक प्रशासन और सामाजिक व्यवस्था के लोप के उस समय जो शिवाजी के स्वतन्त्र शासक के उदय से पूर्व संक्रान्ति काल के रूप में थे, न्याय की आशा व्यर्थ थी, और कोई सामान्य शान्तिपूर्ण

---

६ राज०, १५. ३१६ और ३८३ में उसके पराजय का अभिलेख मिलता है—"दादाजी कोंणदेव शिवपुर आया। बारह मावलों में कृष्णाजी नायक बाँदल ने, जो हरिदास मावल का देशमुख था, एक अन्य मनुष्य की भूमि दबा ली और उसे वापस देने को मना कर दिया। दादाजी ने उस पर चढ़ाई कर दी, परन्तु वह हार गया और उसे शिवपुर लौटना पड़ा। फिर उसने कान्होजी नायक जेधे को भेजा कि वह कृष्णाजी तथा अन्य मावल देशमुखों को उससे मिलने के लिए राजी कर ले।" जेधे करीन से इस क्षेत्र के एक भाग की भीतरी दशा का हाल मालूम होता है। (सभासद, पृष्ठ ४)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

माध्यम न था जिसके द्वारा वैध अधिकारों की रक्षा की जा सकती क्योंकि ऐसे साधन नष्ट हो चुके थे। शक्तिशाली ही अपनी रक्षा कर सकते थे, परन्तु वे आत्म-सुरक्षा से ही सन्तुष्ट न थे और प्रायः दूसरों के अधिकारों को छीन लेने का यत्न करते थे।

ऐसी परिस्थिति थी, जब पहले दादाजी सीमित रूप में और फिर शिवाजी उत्तरोत्तर अधिक विस्तृत रूप में, ईमानदार न्यायाधीश और शक्तिशाली दंड-नायक (अर्थात् मजिस्ट्रेट) के रूप में उदय हुए। जब पैतृक भू-सम्पत्ति के बँटवारे (**बाँटनी**), अथवा ग्राम समाज के वंशानुगत मालगुजारी एकत्र करने वाले अभिकर्ता या कर्मचारी के रूप में, एक कुटुम्ब और दूसरे कुटुम्ब के बीच में या उसी परिवार के भाइयों के मध्य झगड़े उठ खड़े होते थे, तो अति प्राचीन परम्परा के अनुसार स्थानीय ग्राम-निवासियों के तथ्य ज्ञात करने वाली एक जूरी (**महजर**) से परामर्श लेकर, केवल ये ही दोनों पक्षपातरहित वैध निर्णय दे देते थे।

महाराष्ट्र के अगणित गाँवों में गाँव के प्रशासन में वंशानुगत पद (जिसके साथ पूर्व प्रथा के अनुसार उपलब्धियाँ भी थीं) अथवा भूमि की प्राप्ति सबसे बड़ी आकांक्षा थी, और अधिकांश उच्चवर्गीय मराठा परिवारों में प्रायः आजीविका का केवल यही एक साधन था, उनके लिए यह गौरव की वस्तु थी और सामाजिक सम्मान में ऊँचा उठने का यह एकमात्र साधन था; और इसको प्राप्त करने के प्रयत्न में मनुष्य की कुल शक्तियाँ लग जाती थीं। मराठों की दृष्टि में कुटुम्ब की जायदाद जो **वतन** कहलाती थी भले ही वह एक गाँव तक सीमित होती, अत्यन्त पवित्र समझी जाती थी। शाहू छत्रपति मालवा अथवा गुजरात की चौथ से भी अधिक प्रिय अपनी पूना की पैतृक **देशमुखी** (अर्थात् केवल एक जिले की मालगुजारी की वसूली एवं दंडनायक का शुल्क) को मानते थे, जब वे अपने विजेता सैनिक अधिकारियों को मुगल साम्राज्य में चारों ओर भेजते थे। महादजी सिन्धिया, जब वह दिल्ली के पादशाह का रक्षक और उसके वजीरों का निर्माता था, अपने छोटे-से जामगाँव के पटेल के रूप में आवेशपूर्वक चिपटा रहा।

अपने '**वतन**' के लिए मराठा देशमुख या पटेल के पुत्र सदा कुछ करने या मरने के लिए तैयार रहते थे—और साथ ही कोई भी अपराध करने के लिए भी। प्रत्येक पीढ़ी में परिवार की वृद्धि के कारण गाँव के मुखिया के धरती और देय के इस अधिकार को भ्राताओं और चचेरे भाइयों में बाँटना आवश्यक हो जाता था (**निबाद**)। ऐसे वादों (या मुकदमों) को दादाजी और शिवाजी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बहुत ईमानदारी से तय करते थे, और केवल वे ही ऐसे राज्यपाल (गवर्नर) थे जो पराजित वादियों को—जब वे वैध उत्तराधिकारी के अधिकार पर कुठाराघात करते थे—दबा देते थे क्योंकि उन्हीं में अपने निर्णयों को कार्यान्वित कराने का संकल्प और सैनिक शक्ति थी।

इस प्रकार शिवाजी ने एक व्यापक सामाजिक आवश्यकता को पूरा किया, और उनके सफल उन्नयन का कारण नैतिक समर्थन था जो उन्हें जनता से प्राप्त था। ज्यों-ज्यों उनके न्याय, दृढ़ता, और दुर्बलों के प्रति सहानुभूति की प्रसिद्धि महाराष्ट्र के गाँव-गाँव में फैलती गयी, लोग अधिक से अधिक संख्या में उनको अपना रक्षक मानने लगे और उनकी हुकूमत में आने को लालायित होने लगे। उनकी प्रभुता सर्वप्रथम लोगों के हृदयों के द्वारा विस्तृत हुई जो सरल हृदय वाले लोगों पर केवल एक ईमानदार और दृढ़ प्रशासक ही प्राप्त कर सकता है। और इसके अलावा, उनके झंडे के नीचे सामान्य सैनिक के पद से उठकर सेनानायक के पद पर अप्रत्याशित उन्नति के अवसरों को प्राप्त करने की उनकी महत्त्वाकांक्षाओं को मौका मिलता था। अन्त में उन्होंने मराठों की सामूहिक भावना को जाग्रत किया और उत्साहित किया; वे इस प्रत्यक्ष तथ्य में अपने को गौरवान्वित मानने लगे कि मुस्लिम अत्याचार से पीड़ित लम्बी और दुखद नींद के पश्चात् वे अन्त में जाग पड़े थे अथवा "पिंजड़े में पक्षी के शक्तिशाली यौवन" के स्वतन्त्र होने की भाँति वे अन्त में एक राष्ट्र के रूप में निर्मित हो रहे थे। शिवाजी सफल हुए क्योंकि वह शासक के रूप में अपनी प्रजा के राष्ट्र-नायक थे।

केवल एक 'महान राजा' ही सफल हो सकता था जिसके पास एक सुसम्बद्ध विस्तृत राज्य था, जिसके आधिपत्य में सुव्यवस्थित और असैनिक प्रशासकों का एक दल था और जिसके पास विरोध को दबाने के लिए एक शक्तिशाली सेना थी जो ग्राम-समाज में धन की सुरक्षा और शान्ति दे सकती थी जिसके लिए दक्षिण के प्रतिद्वन्द्वी मुसलमान सुल्तानों के विस्तार के कष्टों से मुक्त होने के लिए महाराष्ट्र का प्रत्येक निवासी उत्सुक था, अथवा उनके अन्तिम वर्षों में प्रशासन के विघटन के कारण बहुत दुखी था। वह राजा शिवाजी थे।

यह उच्च प्रशंसा पूर्ण-विकसित शिवाजी के लिए उचित है, परन्तु बाल्यावस्था में वह वीर इतने निष्कलंक चरित्र के न थे। दादाजी कोंणदेव के जीवन काल में ही, उनको प्रशासन का कार्य देना प्रारम्भ कर दिया गया था, परन्तु उस समय वह बीस वर्ष के भी नहीं थे और अपने दायित्व को इतनी अच्छी तरह नहीं समझते थे कि अपने भविष्य को गम्भीरता से समझ सकें। उनके

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नवयुवक हृदय को 'रॉबिनहुड' प्रकार के जीवन ने आकर्षित किया। जब-जब समय व्यतीत करने में उनको कठिनाई प्रतीत होती वह अपनी वय के युवक मावली सरदारों के साथ इधर-उधर भ्रमण करते, और अपनी जायदाद के बाहर जब कभी किसी छोटे गाँव को लूटकर अथवा मार्ग में जाते हुए किसी सरकारी मालगुजारी-अधिकारी से बलात रुपया वसूल करते—ऐसी कार्रवाई को वह बिलकुल उचित समझते थे। परन्तु कोई समसामयिक साक्ष्य नहीं है जिससे यह ज्ञात हो कि वह राजमार्ग पर चलते हुए निरपराध यात्रियों को लूटते थे। अहमदनगर राज्य के नष्ट हो जाने से उस प्रदेश में कानून और व्यवस्था के पूर्णतः अस्त हो जाने पर साहसी मनुष्यों को ऐसे साहसपूर्ण कार्यों में भाग लेने का प्रलोभन होता था; यह कार्य सरल और सुरक्षित था। हम उनके सेवकों के कथन पर विश्वास कर सकते हैं, जिन्होंने उनका सबसे आरम्भ में जीवन-चरित लिखा, कि शिवाजी के इन कार्यों से उनके संरक्षक दादाजी दुखी हुए और उन्होंने उनकी निन्दा की—शायद इसका कारण यह न था कि ये कार्य वैध न थे, बल्कि यह कि एक प्रथम श्रेणी के सरदार के पुत्र और उत्तराधिकारी के गौरव के यह अनुकूल न था। (९१ कलमी बखर, परिच्छेद २४)

९. **शिवाजी द्वारा वृत्ति का चुनाव**—मावली लोगों के साथ युवक शिवाजी सह्याद्रि श्रेणी की पहाड़ियों और वनों में तथा नदी की घाटियों के दुर्गम मार्गों पर घूमा करते थे; इसके दो परिणाम हुए—वह अभाव और कठोर श्रम के जीवन के अभ्यस्त हो गये, और साथ ही उस प्रदेश और उसके निवासियों के विषय में उन्हें घनिष्ठ ज्ञान हो गया। पूना के निवास-काल में उनके संरक्षक तथा अन्य ब्राह्मणों ने और विशेषकर उनकी माँ ने हिन्दू महाकाव्य और अन्य धार्मिक ग्रन्थ उनको पढ़कर सुनाये, जिनका उनके नम्य मन पर गहरा प्रभाव पड़ा। जीजाबाई के अत्यन्त धार्मिक और संन्यासमय जीवन ने, जो उपेक्षा और एकाकीपन में व्यतीत हो रहा था, उनके चरित्र पर उपदेशों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रभाव डाला और उनमें जितेन्द्रिय जीवन के साथ-साथ धार्मिक व्यग्रता भी जड़ पकड़ गयी। वह स्वतन्त्रता से प्रेम करने लगे और किसी मुस्लिम शासक की सेवा में रहकर ऐश-आराम के जीवन से घृणा करने लगे। परन्तु यह अत्यन्त संदिग्ध है कि इस समय उन्होंने सबल मुसलमानों द्वारा प्रायः किये गये अपमानों और अत्याचारों[७] से सामान्यतः

---

[७] बसातिन-उस-सलातीन, ३५०-३५५ में विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है कि मुहम्मद आदिलशाह के समृद्ध काल में बीजापुर के राज्य की सुनिश्चित नीति यह थी कि हिन्दुओं को दबाया जाय।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हिन्दुओं को मुक्त करने की कोई युक्ति सोची हो। वह अवश्य अपने लिए स्वतन्त्र राज्य-सत्ता के प्रबल इच्छुक थे; परन्तु समस्त देश के हिन्दुओं के मुक्ति-कर्ता के रूप में वह कभी नहीं प्रगट हुए, कम से कम निस्संदेह बहुत समय बाद तक उन्होंने ऐसा नहीं किया।

अस्थिरता, षड्यन्त्र और रक्तपात उस समय बीजापुर के दरबार के कलंक थे, और ये अहमदनगर की भाँति उसके पतन के पूर्व-सूचक थे। शिवाजी के लिए मुगलों की सेवा भी कोई अच्छा विकल्प न था। साम्राज्यवादियों ने उनके चाचा खेलोजी भोंसले की हत्या कर दी थी, और उनके अधिक अच्छे साधनों और व्यवस्था के कारण यह आशा करना व्यर्थ था कि दक्षिण के हिन्दुओं को उनके निकट के कमजोर और छोटे सुल्तानों की सेवा में रहने की अपेक्षा बादशाह की अधीनता में अधिक सहिष्णुता और शक्ति प्राप्त हो सकेगी। इसके अलावा, दक्षिण वालों के लिए, हिन्दू और मुसलमान दोनों के लिए, दिल्ली दूरवर्ती नगर था जहाँ की भाषा भिन्न थी और जहाँ की शासक जाति भी पृथक् थी, जो अपने दक्षिणी कर्मचारियों को सेवा में ले लेने के पश्चात् निर्दयतापूर्वक अलग कर देने से नहीं हिचकिचाते थे। अवश्य ही शिवाजी के लिए स्वतन्त्रता की वृत्ति जोखिम की थी, परन्तु सफल हो जाने पर जोखिमों के मुआवजे के रूप में उसके अत्यधिक लाभ थे।

दादाजी का देहान्त बड़ी उम्र में ७ मार्च, १६४७ को हो गया और शिवाजी बीस वर्ष की वय में अपने स्वामी स्वयं हो गये।

अहमदनगर के अन्तिम सुल्तान के राजप (रीजेंट) के उत्तराधिकारी के रूप में शिवाजी ने महसूस किया कि उस जागीर में उनका अवश्य अधिकार था जो बीजापुरी सरकार की सहमति से उनके आधिपत्य में १६३४ में थी। उस वर्ष निजामशाही सल्तनत इस प्रकार विभाजित थी—८४ लाख होन की मालगुजारी के कुल राज्यक्षेत्र में से मुगलों ने २१ लाख मूल्य की भूमि छीन ली थी, और आदिलशाह ने २०$\frac{1}{2}$ लाख की (इनके अलावा शोलापुर और औसा की क्रमशः सात लाख और एक लाख मूल्य की भूमि उनके दो स्वतन्त्र दरबारियों ने हथिया ली थी), और शाहजी के अधिकार में २०$\frac{3}{4}$ लाख मालगुजारी की भूमि रह गयी थी। उस समय शाहजी के अधिकृत क्षेत्रों में निम्न थे—जुन्नार (तीन लाख होन), (शाहगढ़ एक लाख), नासिक त्रिम्बक (एक लाख), चाकन (एक लाख), चमारगुंडा (७५,०००), कोंकण का लगभग तीन-चौथाई भाग (ग्यारह लाख), और अन्य छोटे स्थान (तीन लाख); परन्तु पूना (७५,०००), इन्दापुर (५०,०००), एवं निलांग (एक लाख) उनके अधिकार में न थे, जो

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उस समय आदिलशाह के हिस्से में थे। कोंकण का एक-चौथाई भाग जिससे तीन लाख होन प्राप्त होते थे और साथ में चौथ भी शाहजी ने आदिलशाह को दे दिये थे। (गोआ के पुर्तगाली वाइसराय की डायरी जिसमें बीजापुर में नियुक्त ब्राह्मण दूत के पत्रों का अभिलेख है। पिसिरलेंकर कृत 'ऐंटीगुलहास' खंड १, अनु० १, पृष्ठ ५२)

परन्तु दो वर्ष बाद, उत्तर के बलापहारक ने जबरदस्ती आदिलशाह से एक नयी विभाजन संधि कर ली जिसके अनुसार शाहजी को अपनी भूमि से पूर्णतः हाथ धोना पड़ा और उसमें बीजापुर के सुल्तान का भी साझा हो गया। यह मनमाना पंचाट केवल तलवार के बल पर हुआ, और तलवार के बल पर ही शिवाजी ने इसका निराकरण करने का निश्चय किया।

शिवाजी ने विचार किया कि लुप्त अहमदनगर राज्य की चल सम्पत्ति को हथियाने और स्वदेश में एक स्वतन्त्र राष्ट्रीय राज्य निर्माण करने का शिवाजी को उतना ही वैध अधिकार है जितना आदिलशाह को; वरन् इसके अलावा कुछ और भी। एक कारण यह भी था कि उनके पिता अन्तिम निजाम शाह के राजप (रीजेंट) और उसकी सरकार के पुनरुद्धारकर्ता थे, जबकि आदिलशाह निजामशाही सुल्तानों के निरन्तर प्रतिद्वन्द्वी और वैरी रहे थे। युवक शिवाजी किसके खिलाफ विद्रोही कहला सकता है ? अवश्य ही निजाम-शाह के प्रेत के प्रति नहीं जिसको मरे हुए अब दस वर्ष हो गये थे; और न बीजापुरी सुल्तान के विरुद्ध जो महाराष्ट्र में अनाहूत आगन्तुक था।

१०. शिवाजी द्वारा दुर्गों की प्रारम्भिक विजय—दादाजी कोंणदेव की मृत्यु के उपरान्त शिवाजी अपने कार्य के लिए तैयार थे। सैनिक अभ्यास और असैनिक प्रशासन में वह पहले ही प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके थे; उन्होंने अपने पिता की जागीर तथा उन लोगों से जिन पर उन्हें राज्य करना था पहले ही परिचय प्राप्त कर लिया था। पहल और कमान करने की शक्ति उनमें स्वतन्त्र रूप से विकसित हो चुकी थी जिसमें उनके अभिभावक ने कोई रोक या बाधा नहीं डाली थी। प्रशासन के आदेश कभी-कभी अपने पिता के प्रतिनिधि के रूप में उन्हीं के नाम से निकलते थे। शिवाजी ने कई न्यायिक जाँचों और कानूनी विवादों के सार्वजनिक निर्णयों में अपनी माता या अभि-भावक के साथ काम किया था (**महजर**)।

अधिकारियों का जो दल उनके अधीन था वे बहुत योग्य थे और उनके प्रति श्रद्धालु थे। श्यामराज नीलकंठ रानभेकर चांसलर (**पेशवा**) था; बाल-कृष्ण हनुमन्ते महालेखाकार (**मजमुआदार**) था; सोनाजी पंत मन्त्री (**वजीर**)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

था और रघुनाथ बल्लाल वेतनदाता (**सबनिस**) था। शाहजी ने ये चार अधिकारी १६४२ के लगभग पूना भेजे थे। शिवाजी ने अब दो और बढ़ाये—तुकोजी चौर मराठा अश्व-स्वामी नियुक्त किया गया (**सरे-नौबत**) और नारायणपन्त जिला वेतनदाता (सभासद ३ व ४; ९१ क० ब०, परिच्छेद २४)।

सन् १६४६ बीजापुर के इतिहास में संकट का वर्ष था। सुल्तान सख्त बीमार पड़ गया और कुछ समय के लिए उसके बचने की आशा नहीं रही थी। परन्तु यद्यपि वह दस वर्ष तक और जैसे-तैसे चलता रहा; ये दस वर्ष लोक-विश्वास के अनुसार फकीरशाह हाशिम उल्वी ने अपने जीवन में से सुल्तान को दे दिये थे। इस अवधि में मुहम्मद आदिलशाह ने राज्य के किसी गम्भीर कार्य से हाथ नहीं लगाया। कर्नाटक राज्य की वृद्धि कुछ सरदार करते रहे, परन्तु राजधानी में सुल्तान निष्क्रिय रहा और प्रशासन का कार्य बेगम 'बड़ी साहिबा' चलाती रही। बीजापुर का अधिकृत इतिहास १६४६ से १६५६ में उसकी मृत्यु तक मुहम्मद आदिलशाह के कामों के विषय में बिलकुल खामोश है। (ब० स० ३१२)

यह शिवाजी के लिए बहुत अच्छा अवसर था। दादाजी के देहान्त के पहले ही उन्होंने अपनी विजय आरम्भ कर दी थी। १६४६ में बिना लड़े हुए ही किसी कुशल युक्ति द्वारा उन्होंने बीजापुरी सेनापति से तोर्ना किला ले लिया था। यहाँ उन्हें दो लाख होन का सरकारी कोष प्राप्त हुआ। अधिकृत गढ़ का नाम प्रचण्डगढ़ रखा गया, परन्तु यह नाम अधिक दिनों तक नहीं चला। उसके पाँच मील पूर्व में पहाड़ी के प्रक्षेप की चोटी पर उन्होंने एक नया किला राजगढ़ बनाया और पहाड़ी के निचले तल पर उसके चारों ओर तीन गढ़ी (माची) और बनायीं। (सभा० ६; ९१ क० ब० परिच्छेद २९)

इन आक्रामक कार्यों की खबर बीजापुर को दी गयी। परन्तु शिवाजी ने दरबारी मन्त्रियों को घूस देकर उन्हें मित्र बना लिया और वे स्थानीय जागीरदारों के विरुद्ध जिनको उसने हटा दिया था, उनकी ओर हो गये। (खाफी खाँ, २, ११४)

दादाजी कोंणदेव के देहान्त के पश्चात स्वभावतः शिवाजी का यह उद्देश्य था कि शाहजी की कुल पश्चिमी जागीर को वह अपने अधिकार में कर लें जिससे कि एक छत्र के नीचे एक सुगठित राज्य बन जाय। परन्तु यह कार्य धीरे-धीरे किया गया और इसे पूरा करने में कई वर्ष लगे, क्योंकि चारों ओर अपनी सेना को लगाना उन्होंने उचित न समझा।

दादाजी कोंणदेव ने चाकन के किले को फिरंगजी नरसाला के सुपुर्द कर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दिया था, जो उत्तर से पूना जाने वाली सड़क की रक्षा करता था। इस अधिकारी को शिवाजी की अधीनता मानने के लिए राजी कर लिया गया और उसे अपने पद पर स्थायी कर दिया गया। जागीर के पूर्वी सीमान्त पर स्थित बारामती और इन्दापुर के थानों के लघु अधिकारी शान्तिपूर्वक शिवाजी के आधिपत्य में आ गये। पूना के दक्षिण-पश्चिम में कोन्दाना का गढ़ आदिलशाही गवर्नर को रिश्वत देकर हाथ में ले लिया गया।[८]

११. आदिलशाह ने शाहजी को बन्दी बनाया (१६४८)—१६४८ के मध्य में कर्नाटक से भयानक समाचार मिलने पर शिवाजी के राज्य विस्तार का लघु आरम्भ अकस्मात ही रुक गया। वहाँ २५ जुलाई को उनके पिता बन्दी बना लिये गये और बीजापुरी प्रधान सेनापति मुस्तफाखाँ ने, जो उस समय दक्षिण आर्काट जिले में जिंजी पर आक्रमण कर रहा था, उनकी सब जायदाद और सेना की टुकड़ी जब्त कर ली।

जहूरी के पुत्र जहूर ने, अपने 'मुहम्मदनामा' में, जो उसने मुहम्मद आदिलशाह की आज्ञा से लिखा था, इस घटना का सबसे पहला और अत्यन्त विश्वसनीय वर्णन इस प्रकार लिखा है : "जब जिंजी का घेरा अधिक समय के लिए जारी रहा और युद्ध लम्बे समय तक चला, तो मक्कार शाहजी ने नवाब मुस्तफाखाँ के पास अपना प्रतिनिधि भेजा कि उसे अपने देश को लौट जाने की आज्ञा दी जाय और उसकी सेनाओं को आराम दिया जाय। नवाब ने उत्तर दिया कि उस समय सेना को हटाना घेरे के कार्य में बाधा डालना है। तब शाहजी ने समाचार भेजा कि शिविर में अन्न बहुत महँगा है और उसके सैनिक अब अधिक काल तक भूख और श्रम को सहन नहीं कर सकते और इसलिए वह अब (मुख्य सेनापति के) आदेश के बिना ही अपने देश को वापस चला जायगा। यह विश्वास हो जाने पर कि शाहजी दुष्टता करने पर उतारू है और लड़ने को तैयार हो जायगा, उसे अत्यन्त सावधानी और अच्छी व्यवस्थापूर्वक गिरफ्तार कर लिया जिससे उसकी जायदाद का कोई भाग लूटा नहीं गया वरन् समस्त सरकार द्वारा जब्त कर ली गयी।" (अध्याय १६, परि० १)।

---

[८] ९१ क० ब०, परिच्छेद २९, सभा० ४-५. चाकन और कोन्दाना के प्राप्त करने की तारीखें नहीं ज्ञात हैं। शिवापुर देशपांडे बही में पिछली घटना का वर्ष १६४७ दिया गया है और बापूजी पंत का नाम दिया गया है जिसने यह शिवाजी को हस्तान्तरित किया; परन्तु जेधे शा० जिसमें से इसका बहुत भाग नकल किया गया है इस विषय पर चुप है। १६४७ का वर्ष 'मुहम्मदनामा' में दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बाद के परन्तु अत्यन्त विश्वसनीय बीजापुर के फारसी इतिहास, 'बसातिन-उस-सलातिन', में कुछ अतिरिक्त वृत्तान्त दिया गया है—"शाहजी ने नवाब मुस्तफाखाँ की आज्ञा का उल्लंघन किया और उसका विरोध करने लगा, अतएव अन्त में नवाब ने उसे बन्दी बनाने का निर्णय किया। एक दिन उसने बाजीराव घोरपड़े और जसवन्तराव आसद खानी को अपनी सेनाओं सहित बहुत सवेरे ही शाहजी के शिविर में भेज दिया। शाहजी अभी सो ही रहा था क्योंकि उसने पहली रात आमोद-प्रमोद में व्यतीत की थी। जैसे ही दोनों राव पहुँचे और उसने उनका मंतव्य ज्ञात किया, उसने एकदम घबराकर अपना घोड़ा सम्भाला और अपने मकान से अकेले ही दौड़ भागा। परन्तु घोरपड़े ने उसका पीछा किया, उसको पकड़ लिया और नवाब के सामने पेश कर दिया जिसने उसे बन्दी बना लिया। उसकी ३,००० घुड़सवारों की सेना छिन्न-भिन्न कर दी गयी और उसका शिविर पूर्ण रूप से लूट लिया गया।··· यह सुनकर·····आदिलशाह ने अपने दर्बार से अफजलखाँ को शाहजी को लाने के लिए भेजा और एक हिजड़े को उसकी जायदाद कुर्क करने के लिए भेजा।" (अध्याय १३, परि० १०)

शिवाजी बहुत बड़ी दुविधा में पड़ गये। अपने पिता को मुक्त करने का केवल एक चारा था और वह था कूटनीति, और उसकी परिस्थिति के अनुसार केवल यही एक मार्ग खुला हुआ था। मुगल सम्राट आदिलशाह का वंशानुगत वैरी था और बीजापुर के प्रत्येक वैरी को सम्राट का आश्रय मिल सकता था यदि उससे उसे यह आश्वासन मिल जाता कि वह और उसके अनुगामी दक्षिण में शाही हितों की रक्षा करेंगे। मुगल बादशाह अकेला ही आदिलशाह को दबाने के लिए काफी था।

शिवाजी ने पहले दक्षिण के मुगल वाइसराय मुराद बख्श[६] को लिखा और उससे प्रार्थना की कि वह शाहजी को पूर्व व्यवहार के लिए क्षमा कर दे और भविष्य में उसके और उसके पुत्रों की रक्षा करे, और यह भी लिखा कि यदि सुरक्षा के लिए उसे लिखित आश्वासन (कौल) मिल जाय तो वह मुगल

---

६ शिवाजी ने शाहजहाँ को न लिखा और न कोई दूत ही भेजा। अपने पिता के विषय में समस्त वार्ता मुराद से ही की, जैसा कि परासिन के अधिकार में मुराद के चार मौलिक फारसी पत्रों से विदित है। राजवाड़े ८, २-३ ने गलत लिखा है कि ये पत्र शाहजहाँ ने भेजे, परन्तु नवें अन्तिम परिच्छेद में उसने सही लिखा है। बादशाह ने शाहजी के छुटकारे के मामले में कभी हस्तक्षेप नहीं किया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सेवा में आने को तैयार हो जायगा। इस पर मुराद ने १४ मार्च, १६४९ को उनकी माँगों के स्पष्टीकरण के लिए अपना विश्वसनीय प्रतिनिधि भेजने के लिए लिखा। यह प्रतीत होता है कि शिवाजी ने ऐसा ही किया और मुराद ने उसके मामले के पक्ष में बादशाह को लिखा, और उसकी स्वीकृति पाकर १४ अगस्त को शिवाजी को अपने पिता और स्वजनों सहित दरबार में आने को लिखा और यह भी सूचित किया कि उसे पंज-हजारी का पद दिया जायगा और शाहजी को वह पद पुनः वापस दे दिया जायगा जो मुगल सामन्तों में उसे पहले प्राप्त था। कुछ समय बाद ३१ अक्तूबर को मुराद ने शाहजी को सीधे लिखा और सूचित किया कि उसे उसकी मुक्ति के लिए शिवाजी का प्रार्थना-पत्र मिल गया है, और वह शीघ्र ही शाही दरबार को जा रहा है और वहाँ पहुँचकर वह बादशाह को शाहजी की प्रार्थना से अवगत करेगा और उस पर उसका आदेश प्राप्त करेगा। उसने मराठा सरदार को अपना प्रतिनिधि शाही दरबार में भेजने के लिए कहा जिससे वह बादशाह का 'फरमान' और सुरक्षा का आश्वासन प्राप्त कर ले, और अपनी ओर से उसने उसे सम्मान-परिधान भेंट किया। इस पत्र में शम्भूजी तथा शाहजी के अन्य पुत्रों को विमुक्त नहीं किया गया बताया गया है।

शिवाजी ने इस पर राजकुमार की सेवा में अपना दूत रघुनाथ कोर्डे भेजा जिसमें जुन्नार और अहमदनगर परगनों की देशमुखी की माँग की। ३० नवम्बर, १६४९ को मुराद ने बादशाह के पास पहुँचकर उसके लिए इन अधिकारों को प्राप्त करने का वचन दिया। शाहजहाँ शाहजी को मुक्त करने के लिए आदिलशाह पर दबाव डालने के लिए कभी राजी नहीं हुआ।

शाहजी की मुक्ति दिल्ली सम्राट के हस्तक्षेप के अतिरिक्त अन्य साधनों द्वारा हुई। वह छह महीने तक जिंजी के सामने शिविर में कैद रहा; और २८ दिसम्बर को जब वह किला आदिलशाही सेना के हाथ में आ गया तो उसको हथकड़ी-बेड़ी डालकर अफजलखाँ ने बीजापुर भेज दिया, परन्तु इस कार्य में बहुत सावधानी बरती गयी, उसने जिंजी से प्राप्त हाथियों तथा अन्य लूट के माल के साथ बहुत मंदगति से यात्रा की।

इस बीच में, जबकि शाहजी दूरस्थ कर्नाटक में अभी कैद थे, आदिलशाही सरकार ने इस अवसर से लाभ उठाने की चेष्टा की और उससे बंगलौर और कोन्दाना छीनने का प्रयत्न किया। इन दोनों किलों के विरुद्ध बीजापुर से दो सेनाएँ भेजी गयीं; परन्तु क्योंकि मुख्य आदिलशाही सेना अभी तक सुदूर कर्नाटक में उलझी हुई थी, राजधानी से केवल थोड़ी ही कुमुक इन अभियानों को भेजी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जा सकी और इनमें केवल हाल में भर्ती नौसिखे सिपाही थे जो अधिक योग्य न थे। दोनों किले अजेय थे और वे अद्वितीय योग्यता के दो नवयुवकों के हाथ में थे; अतएव दोनों आक्रमण भारी हानि के साथ विफल हुए। शाहजी के सबसे बड़े पुत्र शम्भूजी ने फरहादखाँ और तानाजी डूरे के विरुद्ध बंगलौर की सफलतापूर्वक रक्षा की। फतहखाँ की कमान में स्थानीय मराठा सहायकों के साथ शिवाजी के विरुद्ध दूसरी सेना भेजी गयी, जो इस समय पुरन्दर में रह रहे थे। फतहखाँ ने वेलसर (खलादगाँव के निकट) पर अधिकार कर लिया, जबकि उसका मित्र बालाजी हैवतराव आगे बढ़ा और उसने शीरवाल पर अपनी चौकी स्थापित की; परन्तु शिवाजी के सेनापति कावजी ने आक्रमण किया और बीजापुरियों को उनके सेनापति ने मारकर शीरवाल से खदेड़ दिया। अन्त में फतहखाँ ने स्वयं शिवाजी के विरुद्ध कूच किया और पुरन्दर के किले पर पहुँचकर आक्रमण किया, परन्तु वह हार गया और सेना पीछे खदेड़ दी गयी।

इस प्रकार युद्ध के दोनों क्षेत्रों में बल असफल हुआ, और फिर आदिलशाह के लिए इसके सिवाय कोई चारा न रहा कि वह अपनी इच्छाओं को पूरा करने के लिए अनुनय-विनय से काम ले। बीजापुर आने पर बन्दी शिवाजी को कारागार में नहीं डाला गया वरन उसे अति प्रसिद्ध सरदार अहमदखाँ (कल्याण का मुल्ला अहमद नवायत ?) की रक्षा में रखा गया और उसे हिदायत की गयी कि प्रत्येक सम्भव साधन द्वारा उससे मेल कर ले। शर्तें शीघ्र तय हो गयीं। शाहजी ने अपने दोनों पुत्रों को आदेश दिया कि बंगलौर (कन्दर्पी सहित, चित्तलदुर्ग के पूर्व ४० मील) और कोन्दाना बीजापुरी अधिकारियों को वापस कर दें। उन्होंने आज्ञा का पालन किया, और १६ मई, १६४९ ई० को आदिलशाह ने शाहजी को भेंट के लिए बुलाया, उसको एक सम्मान-परिधान नजर किया और साथ ही उसकी समस्त जागीरें और पद वापस दे दिये। ५ मई, १६४९ ई० को मुहम्मद आदिलशाह के पुत्र और उत्तराधिकारी उत्पन्न हुआ, और यह शुभ घटना राजनयिक रूप में शाहजी की "क्षमा" के लिए बहाना बना दी गयी। (मुहम्मदनामा ३८९-३९५; जेधे करीना; सूर्यवंशम्, छन्द १३-१५)

१२. पुरन्दर किले पर अधिकार (१६४८)—महादजी नामक ब्राह्मण, जिसका पारिवारिक पद नीलकंठराव था, पूना से दक्षिण-पूर्व १८ मील दूर स्थित पुरन्दर के किले के आसपास के क्षेत्र का वंशानुगत 'नायकवाड़' या मुखिया था। वह बीजापुरी सरकार के अधीन था और सरकारी शुल्क के रूप

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

में उसे कुछ माफी के गाँव मिले हुए थे। निजामशाही वंश के नाश और मुहम्मद आदिलशाह की लम्बी बीमारी के काल में उसके उत्तराधिकारी आदिलशाही ह्रास के फलस्वरूप अस्तव्यस्तता में, उसने स्वयं को स्वतन्त्र घोषित कर दिया, और किले पर अधिकार कर लिया जिसकी प्रतिरक्षा कम-जोर हो रही थी और जिसकी सेना भी कम थी तथा जो सुल्तान की उपेक्षा के कारण भूखों मर रही थी; फिर वह निकटवर्ती गाँवों से कर वसूल करने लगा था जो कानूनन उसके अधिकार में न थे, और कर न देने पर उन्हें लूटने लगा। जब वह मर गया तो उसका सबसे बड़ा पुत्र नीलोजी नीलकंठराव उसकी वंश की जागीर पर प्रशासन करने लगा।

जून, १६४८ के लगभग, बीजापुर सरकार की ओर से अपने वंश पर तूफान आता देख शिवाजी ने नीलोजी को लिखा कि वर्षा ऋतु में किले से सुरक्षित गाँव में उसको और उसके परिवार को शरण दी जाय। चूँकि शाहजी उस परिवार का पुराना मित्र था, प्रार्थना तुरन्त स्वीकार कर ली गयी, और बरसात के महीनों के लिए शिवाजी पुरन्दर के गढ़ के अंचल में स्थित गाँव में ठहर गये, और उनकी सेना आसपास ठहर गयी। नीलोजी ने अपने सम्माननीय अतिथि की देखभाल के लिए अपने सबसे छोटे भाई शंकराजी को नियुक्त कर दिया।

परन्तु यह नीलोजी बड़ा कठोर मनुष्य था, जिसने उनकी पैतृक जागीर की आय में अथवा अपनी शक्ति में अपने छोटे भाइयों पीलाजी और शंकराजी को हिस्सा देने से मना कर दिया। जन्म-अधिकार से वंचित होने पर उन्होंने आपत्ति की और शिवाजी से पंच फैसला करने तथा उनको अपना अधिकार दिलाने के लिए अनुरोध किया। दोनों के घनिष्ठ निजी सम्पर्क बढ़ जाने के कारण शिवाजी और शंकराजी में मित्रता हो गयी, और शंकराजी ने शिवाजी से अपना मंतव्य कह सुनाया, और किले के आधिपत्य से अपने ज्येष्ठ भ्राता को हटाने के हेतु सहायता के लिए प्रार्थना की, जिससे कि अन्य दोनों भाई अपनी पैतृक सम्पत्ति का उपभोग कर सकें। शिवाजी षड्यन्त्र में शामिल हो गये। शंकराजी की धोखे की योजना की सहायता से उन्होंने नीलोजी से अपने और अपने परिवार तथा रक्षक-दल के लिए किले में घुसने और दिवाली की खुशियों में भाग लेने का निमन्त्रण प्राप्त कर लिया (उस वर्ष दिवाली ५ अक्तूबर को मनायी गयी थी)। परन्तु ८ तारीख की रात को शंकराजी के निर्देशन में शिवाजी ने सोते हुए नीलोजी को उसके शयनागार में पकड़ लिया और उसको बन्दी कर लिया। उनके स्वयं के सिपाहियों ने किले के द्वारों पर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अधिकार कर लिया और नीलोजी के फटेहाल सेनानियों को मार भगाया।[१०]

दोनों विद्रोही भाइयों को शीघ्र ही फल मिल गया। अपने मित्र को पुरन्दर देने से मना करने पर, वे भी कैद कर लिये गये। परन्तु कुछ दिनों बाद ही दोनों भाइयों ने अपने भाग्य को स्वीकार कर लिया और वे मुक्त कर दिये गये। उनके भरण-पोषण के लिए चामली का गाँव स्थायी रूप से उन्हें दे दिया गया और उनके वंशज आज दिन तक उसके स्वामी हैं। दूसरे भाई पीलाजी नीलकंठ को कोंकण अभियान में शिवाजी ने अपनी सेना में भर्ती कर लिया और इस प्रकार उसको उन्नति का अवसर दिया। शिवाजी के मावली लोगों ने उसके लिए किले की रक्षा की और उसने अपना आधिपत्य मजबूत करने के लिए रामूसी लोगों के कुछ परिवारों को वहाँ बसा दिया। इस समय से, जब कभी पूना पर आक्रमण की आशंका होती उसके स्वामी पुरन्दर किले में शरण ले लेते थे।

इस प्रकार हम देखते हैं कि कैसे अनेक गीदड़ अपने भिटों से निकल पड़े और अहमदनगर राज्य के शव को खाने लगे, परन्तु ठीक इसी समय वहाँ पर एक शेर भी उदय हुआ; थोड़े-से गीदड़ जिन्होंने उसका सामना करने की हिम्मत की उनको उसने अपने पंजे से मार दिया, कुछ उस क्षेत्र के बाहर भाग गये, परन्तु अधिकांश उसकी पूँछ के पीछे-पीछे पालतू पशुओं की भाँति चलते रहने में प्रसन्न थे; और शिवाजी का निजामशाही लाश पर पूर्ण अधिकार हो गया, अवश्य ही उन्होंने अपने भक्त अनुगामियों को कुछ बोटियाँ डाल दीं।

१३. जावली और रायगढ़ पर विजय (१६५६)—सतारा जिले के धुर

---

[१०] मेरा वर्णन एक पत्र पर आधारित है जो 'शिवा चरित्र साहित्य', भाग ३ (पत्र संख्या ३९९) में प्रकाशित हुआ, और जो चामली के नायक हरी-नारायण नीलकंठराव ने लिखा; यह दिनांक २९ अगस्त, १६७४ ई० का है। इसकी यथार्थ प्रतिलिपि वाकनीस-मलखड़े 'बखर' में (जिसे '९१ कलमी' कहते हैं) दी गयी है। वी० एल० भावे द्वारा परिवार के अभिलेखों के अध्ययन से प्रतीत होता है कि चामलीगाँव शंकराजी को दिया गया था और नीलोजी ने पैतृक 'इनाम' गाँव नायकवाड़ के रूप में उत्तराधिकार में प्राप्त किया था। सभासद (पृष्ठ ५) में संक्षेप में लिखा है—"नीलकंठराव नाम का ब्राह्मण पुरन्दर के आदिलशाही किले का स्वामी था। वह मर गया। उसके दो लड़के आपस में लड़ने लगे। शिवाजी झगड़ा तय करने के लिए पुरन्दर गये। फिर दोनों भाइयों को कैद करके उन्होंने किले पर स्वयं अधिकार कर लिया और वहाँ पर स्वयं अपना 'थाना' स्थापित कर दिया।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उत्तर-पश्चिमी कोने पर जावली गाँव स्थित है जो उस समय एक अच्छी खासी रियासत का केन्द्र था जिसमें लगभग वह पूरा जिला शामिल था। जावली का उपखण्ड "पूर्णरूप से पहाड़ी है और सदाबहार वृक्षों से आच्छादित है।..... सह्याद्रि की ऊबड़-खाबड़ और खड़ी चोटी समुद्रतल से ४००० फुट या अधिक उठी हुई उसकी पश्चिमी दीवार है; और घाटियों में वृक्ष बहुत घने हैं जिससे ऊँचे वन बन गये हैं।" (बम्बई गजेटियर, १९.३)। ६० मील की लम्बाई के अन्दर आठ दर्रे श्रेणी को पार करते हैं जिनमें से दो बैलगाड़ियों के आने-जाने के लिए अनुकूल हैं और आजकल दक्षिण के पठार से कोलाबा में महाद के लिए तथा रत्नागिरि में चिपलूण के लिए बहुत-सा यातायात होता है। इनके अतिरिक्त अगणित कन्दर तथा पगडंडियाँ है जो जावली से कोंकण को गयी हैं।

सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ में बीजापुर के प्रथम सुल्तान ने मोरे नामक मराठा परिवार को जावली राज्य का अनुदान दिया, और उसने उस पर तलवार के बल पर अपना अधिकार सिद्ध कर दिया। उसकी आठ पीढ़ियों ने अपने निकटवर्ती सरदोरों पर विजय प्राप्त करके उनसे जबरदस्ती दान लेकर बहुत-सा धन एकत्र कर लिया। उनके पास १२,००० पैदल सेना थी, जिनमें अधिकांश हृष्ट-पुष्ट पहाड़ी दक्षिणी मावल थे, और वे सतारा के पूरे जिले तथा कोंकण के कुछ भाग पर अधिकार करने में सफल हो गये। परिवार के मुखिया को चन्द्रराव का वंशानुगत पद मिला था, जो बीजापुर के एक शासक ने संस्थापक के व्यक्तिगत बल और साहस पर प्रदत्त किया था। वंश की अन्य प्रशाखाओं का कुछ जागीरों पर अधिकार था जो क्षेत्र के गाँवों में फैली हुई थीं।

अपनी स्थिति के कारण जावली का राज्य शिवाजी के विस्तार को दक्षिण-पश्चिम में रोकता था। चन्द्रराव ने शिवाजी की विभिन्न मावल सरदारों को अपनी ओर मिलाने की नीति को धक्का पहुँचाया, और उस क्षेत्र में निकटवर्ती आदिलशाही गवर्नर से मिलकर शिवाजी-विरोधी सहमित्रण बनाया, क्योंकि उस क्षेत्र में शिवाजी की शक्ति बढ़ने का परिणाम था मोरे लोगों की शक्ति और स्वतन्त्रता का ह्रास। दूसरे शब्दों में, इस सबका अर्थ था शिवाजी की महत्त्वाकांक्षा की नवजात गतिशील शक्ति और मोरों की पुरानी, अयोग्य और गतिहीन शक्ति में टक्कर; पीढ़ियों तक धन और अधिकार के उपभोग ने अन्तिम चन्द्रराव को घमंडी, सुस्त और शराबी बना दिया था जो शासन के कार्य की बिलकुल देखभाल न करता था।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी ने रघुनाथ बल्लाल कोर्डे से (जो उसका 'सबनिस' या वेतनदाता था) कहा कि "जब तक चन्द्रराव मोरे की हत्या न कर दी जायगी, उसका राज्य अधिकार में नहीं आ सकता। सिवाय तुम्हारे इस काम को कोई नहीं कर सकता। मैं तुमको अपना दूत बनाकर उसके पास भेजता हूँ।" प्रभू १२५ चुने हुए सैनिकों को (जो तलवार चलाने में बहुत होशियार थे) लेकर जावली पहुँचा, और उसने यह बहाना किया कि मैं शिवाजी से चन्द्रराव के लिए कुछ आवश्यक राजनयिक प्रस्ताव लेकर आया हूँ। सबसे पहले दिन उसने औपचारिक बातचीत की। उसने महल के विषय में पूरा ब्यौरा ज्ञात कर लिया, और यह मालूम करके कि चन्द्रराव प्रायः अरक्षित दशा में रहता है, रघुनाथ ने अपना कार्य करने की योजना बनायी। चन्द्रराव से दूसरी भेंट निजी कमरे में हुई। रघुनाथ ने कुछ देर तक तो बातचीत की, और तब उसने अकस्मात ही अपनी कटार निकाल ली और चन्द्रराव और उसके भाई सूर्यराव दोनों का काम तमाम कर दिया। हत्यारे तुरन्त ही फाटक के बाहर हो लिये, वे भयभीत और अस्त-व्यस्त पहरेदारों के बीच में होकर निकल भागे, पीछा करने वालों के छोटे और शीघ्र-एकत्रित समूह को पीछे धकेल दिया और जंगल में बहुत अच्छी छिपने की जगह पर पहुँच गये।

शिवाजी अपने प्रतिनिधि के अपराध के अनुसरण के लिए तैयार ही थे। मोरों की हत्या का समाचार पाते ही वह जावली में जा धमके, और उस पर आक्रमण कर दिया (१५ जनवरी, १६५६)। बिना नेता की गढ़-सेना ने छह घंटे तक अपनी रक्षा की और फिर वे हार गये। चन्द्रराव के दो बेटे और पूरा परिवार रायड़ी भाग गये। परन्तु उसके स्वजन और प्रबन्धक हनुमन्तराव मोरे ने अपने वंश के लोगों को जुटाया, निकटवर्ती गाँव में सेना एकत्र की और इस प्रकार शिवाजी की नयी जीत को खतरे में डाल दिया। शिवाजी ने विचार किया कि "जब तक हनुमन्त की हत्या न कर दी जायगी, जावली से काँटा नहीं निकलेगा।" इसलिए उसने शम्भूजी कावजी नाम के एक घरेलू मराठा अधिकारी को भेजा और वह हनुमन्तराव की लड़की के लिए एक वर का झूठा प्रस्ताव लेकर उसके पास पहुँचा। फिर एक निजी भेंट में हनुमन्तराव को भी तलवार के घाट उतार दिया गया।

शिवाजी स्वयं जावली लगभग छह सप्ताह रहे और वहाँ रहकर उन्होंने अपने नये जीते हुए राज्य की व्यवस्था की; इसके पश्चात ३० मार्च को वह रायड़ी पर जा धमके। वहाँ उन्होंने उसका घेरा डालने का विचार किया क्योंकि वहाँ पर दिवंगत चन्द्रराव मोरे के पुत्र कृष्णाजी और बाजी परिवार

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

की बहुत-सी स्त्रियाँ शरण ले रही थीं। रायड़ी उस समय बहुत ऊँचा तथा बहुत दुर्गम पठार था, और उसकी किलेबन्दी नहीं हो रही थी, जिसे शिवाजी ने बाद को निर्मित किया और उसका नाम रायगढ़ रखा। घेरा थोड़े काल तक ही रहा; नेता के अभाव और रसद की कमी के कारण युवक मोरे ने शिवाजी के दो मालवी अनुगामियों के द्वारा अधीनता स्वीकार कर ली, (अप्रैल, १६५६)। इस प्रकार जावली का पूरा राज्य शिवाजी के पूर्ण आधिपत्य में आ गया और अब वह दक्षिण कोंकण पर बेरोकटोक आक्रमण करने के लिए अथवा कोल्हापुर जिले में अपने राज्य को दक्षिण की ओर बढ़ाने के लिए स्वतन्त्र हो गये।

दोनों मोरे लड़के, जिनमें से बड़े कृष्णाजी ने अपने पिता की मृत्यु के पश्चात चन्द्रराव का पद ग्रहण कर लिया था, पूना लाये गये और बन्दी कर लिये गये। कुछ महीनों के बाद इस चन्द्रराव को शिवाजी ने मरवा डाला, उस पर यह आरोप लगाया गया कि उसने अपनी वरासत को पुनः प्राप्त करने के लिए बीजापुर की सरकार से गुप्त पत्र-व्यवहार किया है—यह उसकी स्वाभाविक और वैध इच्छा ही थी। छोटा लड़का, बाजी, भाग निकला ('शिवापुर दफ्तर यादी' के अनुसार २८ अगस्त को)। उसने चन्द्रराव का वंशानुगत पद धारण कर लिया, और वह मार्च, १६६५ ई० में शिवाजी से युद्ध करने के लिए जयसिंह से जा मिला। उसके साथ अम्बाजी गोविन्दराव मोरे भी आया। ('हल्फ अंजुमन', पैरिस पांडुलिपि, ११३ ए, १२३ ए)

जावली की प्राप्ति शिवाजी की ओर से सुनिश्चित हत्या और व्यवस्थित धोखे का फल था। उनकी शक्ति उस समय अपने शैशव-काल में थी, और वह स्वयं को बलशाली बनाने के साधनों की पसंद में अति सतर्क नहीं रह सकते थे। ठीक वैसी ही परिस्थितियों में उनके ऐतिहासिक समकक्ष शेरशाह ने सिंहासन-प्राप्ति की तैयारी के लिए दक्षिण बिहार में किले लेने के लिए वैसी ही धोखाधड़ी का प्रयोग किया था।

उनके जीवन में इस दुखद घटना का केवल एक ही अच्छा पक्ष है कि दम्भ द्वारा इस पाप में अधिक वृद्धि नहीं की गयी। उनके सभी हिन्दू इतिहासकार एकमत हैं कि यह व्यक्तिगत लाभ के लिए पूर्व-निश्चित हत्या थी और आत्म-रक्षा के हेतु अथवा खुले युद्ध में उत्तेजना का परिणाम न थी जो क्षम्य हो सकती है। स्वयं शिवाजी ने भी यह कभी नहीं कहा कि तीन मोरों की हत्या 'हिन्दू स्वराज्य' स्थापित करने की इच्छा से की गयी, अथवा अपने मार्ग

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

से धोखेबाज दुश्मन को हटाने की दृष्टि से जिसने उसकी उदारता का बार-बार दुरुपयोग किया हो।[११]

१४. **शिवाजी की अग्रेतर विजयें**--जावली के अधिनहन ने शिवाजी के लिए दक्षिण और पश्चिम में केवल विजय का मार्ग ही नहीं खोल दिया, वरन इससे उनकी शक्ति में बढ़ोतरी हो गयी; यह इस रूप में हो गयी कि चन्द्रराव के पूर्व सिपाहियों और प्रजा में से सहस्रों मावली पैदल सेना के लिए प्राप्त हो गये। संक्षेप में, सह्याद्रि पर्वत में इन सुन्दर लड़ाकों के लिए रंगरूट प्राप्त करने का क्षेत्र दूना हो गया। मोरों ने आठ पीढ़ियों के अबाधित तथा विस्तारशील शासन में अपार धन एकत्र कर लिया था, और यह कुल शिवाजी के हाथ लग गया।

जावली के दो मील पश्चिम में उन्होंने प्रतापगढ़ नामक किला बनवाया और यहाँ उन्होंने अपनी आराध्य देवी भवानी की मूर्ति स्थापित की क्योंकि तुल्जापुर की प्राचीन भवानी तक पहुँचना कुछ कठिन हो गया था। देवी के लिए उन्होंने खुले दिल से बहुमूल्य आभूषण और परिधान बनवाये, और उसके मन्दिर की वह बार-बार यात्रा करते रहे। (सभा० २३)

शिवाजी ने अपनी जावली की विजय (१५ जनवरी, १६५६ ई०) को आगे बढ़ाया; उन्होंने अप्रैल में चन्द्रराव मोरे से उसका अन्तिम शरण-स्थान छीन लिया, अर्थात रायगढ़ का अद्भुत विशाल पहाड़ी किला जो आगे चलकर मराठा राजा की राजधानी बना। उसी वर्ष उन्होंने २४ सितम्बर को राज्य-विप्लव कराकर पूना के दक्षिण-पूर्व में ३५ मील दूर स्थित सूपा पर अधिकार कर लिया। शाहजी ने अपने साले (दूसरी पत्नी के भाई) शम्भूजी मोहते को सूपा उपक्षेत्र में अपना प्रतिनिधि बनाकर नियुक्त कर दिया था और पूना के शासक से मुक्त रखा था। परन्तु शिवाजी किसी हिन्दू त्यौहार के दिन उससे मैत्रीपूर्ण भेंट के लिए गये, उसके पहरेदारों को पराजित कर दिया और उसकी समस्त जायदाद को जब्त कर लिया। पदच्युत पदाधिकारी को अपने निजी सामान के साथ शाहजी के पास भेज दिया गया, क्योंकि उसने अपने भतीजे की अधीनता में सेवा करने को मना कर दिया। (सभा० ४; ६१ क०ब० २८)

सूपा, बारामती और इन्दापुर के अधिकार ने पूना जिले के दक्षिण-पूर्व कोने को पुष्ट कर दिया और पुरंधर, राजगढ़, कोन्दाना और तोर्ना पर अधिकार प्राप्त करने से शिवाजी के राज्य को दक्षिण में पहाड़ी किलों की एक

---

[११] श्री सी० पी० वैद्य के निधड़क और अद्भुत विशेष प्रतिपादन के लिए 'मराठा' (३१ अगस्त, १६२४) देखिए।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शक्तिशाली शृंखला मिल गयी। उस क्षेत्र में एक किला रोहिदा था जिसके प्राप्त करने की तारीख का पता नहीं चलता। पूना में उत्तर-पश्चिम में उन्होंने तिकोना, लोहगढ़ और राजमाची के किलों को अधिकृत कर लिया—इनमें से अन्तिम सह्याद्रि शृंग (भोर दर्रा से ६ मील उत्तर) पर स्थित था और पश्चिम के अंचल में कोंकण मैदान था।

४ नवम्बर, १६५६ ई० को मुहम्मद आदिलशाह मर गया, और एक नयी परिस्थिति बन गयी जिससे शिवाजी को बहुत लाभ हुआ, जो आगे के अध्याय में बताया जायगा।

परिशिष्ट

जावली के मोरे

जावली सबसे पहला इलाका था जिस पर शिवाजी ने अधिकार किया और यह ऐसे समय पर प्राप्त किया था जबकि उनकी शक्ति अपने शैशव काल में ही थी। अतएव यह स्वाभाविक ही था कि लोग इस घटना के ब्यौरे को बहुत शीघ्र भूल गये, और उसके शीघ्र बढ़ने वाले नये राज्य की अगणित विजयों तथा दूरस्थ उपलब्धियों के मध्य ये सम्भ्रमित हो गये। परन्तु इस प्रकरण की मुख्य रूपरेखा स्पष्ट है, यद्यपि विवरण की छोटी-छोटी बातों में विद्यमान स्रोतों में भेद है। चारों मोरों का वध वास्तव में अलग-अलग स्थानों और भिन्न-भिन्न समयों पर हुआ और कथानक का यह भाग अस्पष्ट है। मैंने अपना विवरण मुख्यतः 'सभासद बखर' पर आधारित किया है और '९१ कलमी बखर' (परिच्छेद २९-३०) से कुछ ब्यौरा ले लिया है। ये दोनों स्रोत सबसे पुराने हैं और इनमें इस प्रकरण का वह विवरण दिया गया है जिसको शिवाजी की मृत्यु के तुरन्त पश्चात् शिवाजी के ब्राह्मण और प्रभू अधिकारी सही मानते थे। मेरी दी हुई तारीखें और नाम पूर्णतः समकालीन 'शाकावलियों' (भू-स्वत्वधारी परिवारों में सुरिक्षत तिथि-पटल) और जयसिंह प्रथम के पत्रों से लिये गये हैं, ये पत्र, कुछ निर्दिष्ट बातों के विषय में बिना लेखक के नाम के, तिथिरहित तथा असत्य 'मोरे बखर' एवं अन्य स्रोतों में निहित दंतकथाओं का निराकरण करते हैं और इस प्रकार इन दन्तकथाओं की सामान्य अविश्वसनीयता साबित हो जाती है। संस्कृत काव्य 'सूर्यवंशम्' भी अविश्वनीय है, वह केवल काल्पनिक है और किसी भी अर्थ में उसे इतिहास नहीं कह सकते।

हम सामान्य किंवदन्ती पर अवश्य विश्वास कर सकते हैं कि चन्द्रराव मोरे शिवाजी को एक छिछोरे के रूप में मानता था और उनसे घृणा करता

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

था। शिलालेखों से यह ज्ञात होता है कि ईसा की पाँचवीं शताब्दी के अन्त में कोंकण पर 'मोरिया' नाम का एक वंश राज्य करता था। (बम्बई गजेटियर, खण्ड १, भाग २, २८२-२८४, ५४१)। यह लगभग निश्चित है कि वे अशोक मौर्य के ऐतिहासिक वंश की एक शाख थे, और अशोक के साम्राज्य के छिन्न-भिन्न होने पर उन्होंने उस सूबे में अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया जहाँ वे पहले केवल वाइसराय ही थे। ईसा की पाँचवीं शताब्दी में महान गुप्त साम्राज्य के विघटन के समय भी ऐसा ही हुआ था। यह मानने में कोई विशेष कल्पना की आवश्यकता नहीं है कि जावली के 'मोरे' अपने को कोंकण और इससे अधिक मगध के प्राचीन साम्राज्यवादी मौर्यों के वंशज मानते थे। प्रथम मोरे, जिसने चन्द्रराव की उपाधि अंगीकार की थी, सामन्तों की उस वंशपरम्परा में था जो तेलिंगाना में दक्षिण के पठार के मध्य भाग में विजयनगर के राजाओं की अधीनता में लड़े थे और बाद को आदिलशाह की (अथवा मेरी राय में सम्भवतः बहरी निजामशाह की) सेवा में आ गये थे।

दिनांक २३ दिसम्बर, १६५७ ई० के कानूनी प्रलेख में (मूल की एक ही प्रतिलिपि सुरक्षित है), तीनों चन्द्ररावों के नाम जिन्होंने शिवाजी की विजय के पूर्व क्रमशः जावली पर शासन किया, बालाजी, उसका लड़का (या लड़के) दौलतराव और येसाजी सूरराव चन्द्रराव थे। (शिवा चरित्र साहित्य, ३, संख्या ६३९)। क्या अन्तिम चन्द्रराव यशवन्त सूर्यराव मोरे का पुत्र था? सभासद (पृष्ठ ६) में लिखा है कि शिवाजी के प्रतिनिधि ने सर्व प्रथम "चन्द्रराव (नाम नहीं दिया गया) और उसके भाई या चचेरे भाई (भाऊ) सूर्याजीराव दोनों" को मार डाला। मोरे बखर में जो परम्परागत वर्णन सुरक्षित है, चन्द्रराव मोरे का नाम यशवन्तराव बताया गया है जिसको शिवाजी ने मारा था (जिसे १६४८-४९ के लगभग पूर्व चन्द्रराव की विधवा ने पुत्र के रूप में गोद ले लिया था)। संस्कृत काव्य 'सूर्यवंशम्' के अनुसार "बाजीराज एवं कृष्णराज और उनके पिता चन्द्रराज" को शिवाजी ने युद्ध में मारकर जावली पर अधिकार किया, चन्द्रराव का 'बांधव' (भाई अथवा प्रायः चचेरा भाई) प्रताप वर्मा भागकर आदिलशाह के यहाँ पहुँचा और बाद को १६५९ ई० में वह अफजलखाँ से मिल गया (सर्ग १८, ५.४-९)। किन्तु हमको जयसिंह के प्रपत्रों से भली-भाँति विदित होता है कि बाजी चन्द्रराव बीजापुर में १६६५ ई० में जीवित था और वहाँ उपस्थित था, और उसने मिर्जा राजा जयसिंह से मित्रता कर ली। समस्त वर्णनों के अनुसार उसके पिता और भाई को (और वंश के दीवान हनुमन्तराव मोरे को भी) शिवाजी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

ने मार डाला, परन्तु बाजीराव मोरे को नहीं। 'शिवापुर यादी' के अनुसार शिवाजी के बन्दीगृह से इस चन्द्रराव का पलायन २८ अगस्त, १६५६ को हुआ। इस प्रकार, जैसे कुछ कहानियों में वर्णित है, पूना में शिवाजी द्वारा उसका बध नहीं हुआ होगा

परमानन्द ने इस बाजी को सब जगह 'प्रताप' कहा है, जिससे स्पष्ट है कि संस्कृत काव्य बहुत ही अविश्वसनीय है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय ३

राज्य-क्षेत्र का तीव्र विस्तार और मुगलों तथा बीजापुर से प्रथम युद्ध

(१६५७–१६५९ ई०)

१. १६५७ तक मुगलों से सम्बन्ध।
२. मुगल दक्षिण में शिवाजी का पहला छापा।
३. औरंगजेब द्वारा प्रतिरक्षा के उपाय।
४. शिवाजी ने मुगलों से संधि की।
५. शिवाजी का कोंकण पर आक्रमण, १६५७।
६. बीजापुरी योजनाएँ— अफजलखाँ का भेजा जाना।
७. अफजल की युद्ध-योजना और शिवाजी के प्रति नीति।
८. शिवाजी को डर और उनकी परेशानी।
९. षड्यन्त्र और प्रति-षड्यन्त्र।
१०. शिवाजी और अफजल की भेंट।
११. अफजल की सेना का विनाश।
१२. अफजलखाँ के विषय में दन्त कथाएँ।
परिशिष्ट—अफजल कांड।

१. **१६५७ तक मुगलों से सम्बन्ध**—स्वतन्त्रता की प्रथम घोषणा के पश्चात शिवाजी ने कई वर्षों तक मुगलों से शान्ति बनाये रखी। इसका एक कारण यह था कि उनकी शक्ति अभी सुरक्षित न थी, और बीजापुर व दिल्ली दोनों को एक साथ उकसाना अत्यन्त मूर्खता होती। दूसरा कारण यह था कि १६५३ से आगे मुगल दक्षिण शाहजादा औरंगजेब द्वारा शासित था जो अत्यन्त योग्य और शूरवीर था, और उसके पड़ोसी उसको नाराज करने से ठीक ही डरते थे। जब औरंगजेब गोलकुण्डा से युद्ध में उलझा हुआ था (जनवरी-मार्च, १६५६), शिवाजी जावली और उत्तरी रत्नागिरि जिले के विजित क्षेत्रों की व्यवस्था करने में इतने संलग्न थे कि उन्हें अपने क्षेत्र से शाहजादे की अनुपस्थिति में मुगल राज्य-क्षेत्र पर धावा करने की फुरसत नहीं थी।

मुहम्मद आदिलशाह की मृत्यु (४ नवम्बर, १६५६) के बाद औरंगजेब ने बीजापुर पर आक्रमण करने के लिए सक्रिय तैयारियाँ कीं और अनेक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आदिलशाही सामन्तों और अधीन सरदारों को यथाशक्ति अपनी ओर फुसलाया। तब शिवाजी ने अहमदनगर के मुगल गवर्नर मुल्तफतखाँ को एक पत्र लिखा जिसका आशय यह था कि यदि उनकी इच्छाएँ पूरी कर दी जायँ तो वह शाही सेना में सम्मिलित होने को तैयार हैं। इसका उत्तर मैत्रीपूर्ण दिया गया, क्योंकि औरंगजेब का आदेश यह था कि "उसके साथ पत्र-व्यवहार का मार्ग खुला रखा जाय।" (आदावे-आलमगीरी, १४४ बी.)

२. **मुगल दक्षिण में शिवाजी का पहला छापा**—शिवाजी ने सीधे औरंगजेब को भी लिखा। उनका दूत सोनाजी बीदर के सामने शहजादे के घेरे के शिविर में पहुँचा (मार्च, १६५७ में) और उसको विश्वास दिलाया गया कि मुगल सरकार मराठा सरदार की समस्त प्रार्थनाओं को स्वीकार करेगी, अर्थात (१) उसके वास्तविक अधिकार में समस्त बीजापुरी किलों और गाँवों पर उसके आधिपत्य की औपचारिक मान्यता, और (२) दाभोल के बन्दरगाह और उससे संलग्न क्षेत्र पर अधिकार की मान्यता। औरंगजेब ने २३ अप्रैल, १६५७ को इन शर्तों के अनुरूप शिवाजी को उत्तर भी लिख दिया जब वह कल्याणी का घेरा आरम्भ करने को थे, और शिवाजी से अनुरोध किया गया कि मुगलों के निमित्त सैनिक सहायता देकर वह अपनी राजभक्ति का परिचय दें। (परासनिस पांडुलिपि, पत्र संख्या ५; आदाव० १४६ ए)

परन्तु इस तिथि से बहुत पूर्व ही शिवाजी ने स्वयं अपने ही लिए युद्ध करने की भिन्न नीति का निश्चय कर लिया था। मुगल शाहजादे के अनिश्चित वादे उसे सन्तुष्ट न कर सके। उससे कम चतुर आदमी अवश्य समझ सकता था कि शाही आवश्यकताओं के पूरी होने के बाद कार्य रूप में ऐसे वादों का कोई मूल्य न था। उन्होंने एक अलग मार्ग सोचा जो बीजापुर के लिए लाभदायक था; उन्होंने मुगल दक्षिण के दक्षिण-पश्चिम कोने पर छापे मारने शुरू कर दिये जबकि औरंगजेब की सेना उसके दक्षिण-पूर्व सीमा से आगे कल्याणी के घेरे पर केन्द्रित थी। उन्होंने अपने दूत को औरंगजेब के शिविर से परामर्श के बहाने वापस बुला लिया (अप्रैल के मध्य में), और इस प्रकार चालाकी से सैनिक कार्रवाई की तैयारी करने लगे; इसके बाद उन्होंने तुरन्त ही लड़ाई छेड़ थी।

दो मराठे कप्तान मीनाजी भोंसले और काशी ने ३००० घुड़सवारों सहित भीमा नदी को पार किया और क्रमशः चमारगुण्डा और रासीन प्रभागों को लूटना शुरू कर दिया। उनके विध्वंस और आतंक का कार्य मुगल दक्षिण के मुख्य नगर अहमदनगर तक पहुँच गया। (कम्बू, ३ बी; आदाव० १४८ ए)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मराठों ने नगर (पेठ) को लूटने की कोशिश की जो अहमदनगर के किले के अंचल में बसा हुआ था, परन्तु गढ़-सेना के सामयिक धावे ने इसको विफल कर दिया; किन्तु इससे इतना आतंक छा गया कि किले के किलेदार मुल्तफतखाँ ने निवासियों की अधिक सुरक्षा की दृष्टि से उनकी सम्पत्ति किले के भीतर ले ली। (आदाब० १४८ बी.)

जब मीनाजी पूर्व में अहमदनगर जिले को लूट रहा था, शिवाजी उत्तर में जुन्नार उप-भाग में लूट-मार कर रहे थे। ३० अप्रैल की अँधेरी रात में रस्सियों की सीढ़ियों के सहारे वह चुपके से जुन्नार नगर के परकोटे की दीवारों पर चढ़ गये और पहरेदारों को मारकर, ३,००,००० होन नगद, २०० घोड़े और बहुत-सा बहुमूल्य वस्त्र तथा रत्नराशि लूट ले गये। मराठा आक्रमणों की सफलता का मुख्य कारण स्थानीय मुगल अधिकारियों की लापरवाही थी (जैसा कि दिल्ली के इतिहासकार कम्बू ने लिखा है), और सम्भवतः इसका कारण उनकी सैनिक दुर्बलता भी थी। इन उपद्रवों का समाचार पाकर औरंगजेब ने 'थानेदारों' की निन्दा की और अहमदनगर जिले में अतिरिक्त सेना भेजी। (सभा० ५; आदाब० १५३ बी)

३. **औरंगजेब के सुरक्षा के उपाय**—नासिरीखाँ, इराजखाँ और कुछ अन्य अधिकारी ३००० घुड़सवारों सहित वहाँ भेजे गये। रावकर्ण को, जो औरंगाबाद से बीदर को आ रहा था, रास्ते में ही आदेश मिला कि वह उस स्थान के लिए मुड़ जाय। शाइस्ता को आज्ञा दी गयी कि वह अपने सेना-दल के १००० सैनिक वहाँ भेजे। किन्तु नासिरीखाँ की गति अत्यन्त धीमी थी। ३० अप्रैल को उसने बीर नामक परगने में प्रवेश किया और चार दिन के पश्चात उसने आष्टी की ओर कूच किया।[1] इस प्रकार उसे अहमदनगर और जुन्नार जाने में, बैरी को खदेड़ने में और शिवाजी के अधिकृत क्षेत्र को लूटने में, जैसी कि औरंगजेब ने आज्ञा दी थी, बहुत देर हो गयी। (कम्बू ३ बी; आदाब० १४७ ए, १५३ ए, १५४ बी)

इस बीच में मुस्तफाखाँ अहमदनगर के किले से निकल पड़ा था, और उसने मीनाजी को हराकर चमारगुण्डा की घिरी हुई चौकी को मुक्त कर दिया (२८ अप्रैल)। परन्तु मराठे कुछ समय तक और परगने में घूमते

---

[1] बीर (या बीड़) अहमदनगर से ६८ मील पूर्व में है और आष्टी अहमदनगर से ३५ मील दक्षिण-पूर्व में है। चमारगुण्डा (या श्रीगुण्डा अहमदनगर से ३३ मील दक्षिण में है।) भारत की एटलस, ३९° उत्तर-पूर्व। राइसीन चमारगुण्डा से २० मील दक्षिण-पूर्व में है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रहे। परन्तु, मुल्तफत और मिर्जाखाँ ने अपनी विजय को पूर्ण किया और अन्त में चमारगुण्डा उपक्षेत्र से वैरी को निकाल दिया। (आदाव० ११० बी, १५३ बी, १५४ ए)

शिवाजी जुन्नार उपभाग में कुछ दिनों तक रुके रहे और गाँवों को लूटते रहे, क्योंकि मुगल सेना को वहाँ आने में देर हो गयी और उन्हें मैदान साफ मिला। परन्तु, रावकर्ण और शाइस्ताखाँ के आने पर, वह जुन्नार नगर के पड़ोस से चले गये और कुछ समय तक जिले में घूमते रहे क्योंकि वह पकड़े और दबाये न जा सके। परन्तु जब दबाव अधिक बढ़ गया तो वह अहमदनगर जिले में खिसक गये और उसे लूटने लगे, किन्तु अब (मई के अन्त में) नासिरीखाँ वहाँ पहुँच गया। बहुत तेजी से चलकर वह शिवा की सेना पर आ धमका और उसे लगभग घेर लिया। अनेक मराठे मारे गये, अनेक घायल हुए और शेष भाग गये (४ जून)। परन्तु उनका पीछा नहीं किया गया क्योंकि मुगल घोड़े अत्यन्त थक गये थे। (कम्बू ४ बी; आदाव० ११० बी, ११२ ए, १५६ बी)

नासिरीखाँ तथा अन्य अधिकारियों को औरंगजेब द्वारा लिखे गये पत्रों में क्रोध और बदले की भावना थी; उन्हें आक्रमणकारियों को शाही राज्य के बाहर खदेड़ना था और शिवा की भूमि में चारों ओर से घुसकर प्रतिशोध करना था, जिसमें उन्हें "गाँवों को नष्ट करना था, लोगों को निर्दयता से मारना था और उनका सब कुछ लूट लेना था"; शिवाजी के अधिकृत स्थान पूना और चाकन को बिलकुल नष्ट कर देना था और लोगों को मार डालने तथा कैद करने में तनिक भी प्रमाद नहीं दिखाना था; शाही क्षेत्र के गाँवों के उन मुखियाओं और किसानों को बिना दया के मार डालना था जिन्होंने चुपके-चुपके वैरी को अवप्रेरित किया था। (आदाव० १४७ ए व बी, १४८ ए)

दक्षिण-पश्चिमी सीमान्त प्रदेश की रक्षा के लिए उसने जो नयी नियुक्तियाँ कीं वे श्रेष्ठ संयोजन और निर्णय की द्योतक थीं। कारतलबखाँ की नियुक्ति जुन्नार के निकट की गयी, अब्दुल मुनीम की गढ़ नमूना में, नासिरीखाँ और रावकर्ण की "परेन्दा किले के सामने" पंडा में जो चमारगुण्डा, कड़ा और आष्टी परगनों की रखवाली करता था।[२] ये अधिकारी सीमान्त रेखा की

---

[२] पंडा (फारसी पुस्तक में 'पंडेह') परेन्दा से सोलह मील उत्तर-पश्चिम में और करमाला से तीन मील दक्षिण में है। कड़ा आष्टी से नौ मील उत्तर-पश्चिम है। मैंने ऊपर ('आदाव' में) औरंगजेब के पत्रों के अनुसार

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

ओर देखते रहते थे और वैरी को आगे बढ़ने को रोकते थे जिससे उनके पीछे की ओर शाही राज्य के किसान सुरक्षित रहें। अधिकारियों को यह भी आज्ञा दी गयी थी कि वे अवसर मिलते ही सीमा को पार कर जायँ और सामने वैरी के क्षेत्र में बहुत-सी लूटमार करके अपने स्थानों की सुरक्षा के लिए तुरन्त वापस आ जायँ। (आदाब० १४७ बी, १४८ बी)

अहमदनगर जिले में शिवा पर विजय प्राप्त करने के पश्चात नासिरी को औरंगजेब ने आज्ञा दी कि "मराठों का पीछा करो और उन्हें एकदम नष्ट कर दो।" परन्तु यह नहीं हो सका। वर्षा पूरे वेग से आरम्भ हो गयी और सैनिक कार्रवाई बन्द करनी पड़ी। शिवा अपने देश में वापस लौट गये और मुगल अधिकारी अपने नियत स्थानों पर सीमा की सुरक्षा के लिए वापस आ गये। "समस्त क्षेत्र में शान्ति स्थापित हो गयी।" (आदाब० १५६ ए, १४६ ए)

जून, जुलाई व अगस्त, १६५७ शाही सेना के दिन मजबूरी की हालत में बेकारी में गुजरे। सितम्बर में शाहजहाँ की बीमारी और उसके बेटों में सिंहासन के लिए उत्तराधिकार के युद्ध की तैयारियों के कारण परिस्थिति जटिल हो गयी। बीजापुर ने मुगलों से सन्धि कर ली। परन्तु सितम्बर के महीने में लगातार औरंगजेब ने अपने अधिकारियों को आदेश दिया कि वे अपनी सतर्कता में ढील न डालें, वरन दक्षिण-पश्चिम सीमा का मोर्चा जारी रखें जिससे शिवाजी अपने आक्रमण फिर न आरम्भ कर दे। अक्तूबर के मध्य में उसने अहमदनगर के गवर्नर को लिखा कि वह नगर की सुरक्षा का ध्यान रखे और अपनी फौजों को बिलकुल तैयार रखे जिससे कि नासिरीखाँ के वापस चले आने पर शिवा मैदान साफ देखकर फिर कहीं आक्रमण न शुरू कर दे। (आदाब० १४६ बी, १५७ बी)। ठीक इसी समय (मध्य अक्तूबर, १६५७) जुन्नार के मुगल फौजदार मुहम्मद यूसुफ ने कल्याण से बहुत तेज यात्रा की, उस प्रदेश के विद्रोही सरदार हब्शखाँ को हराया तथा उसे तलवार के घाट उतार दिया, और शिवाजी के घुड़सवारों की छोटी सेना उस अबीसीनिया निवासी की सहायता के लिए विलम्ब से पहुँची। घमासान युद्ध के पश्चात जिसमें बहुत-से आदमी हताहत हुए, यूसुफ को जुन्नार वापस

लिखा है; परन्तु कम्बू ने 'गढ़ नमूना' का जिक्र नहीं किया और कहा है कि अब्दुल मुनीम की नियुक्ति चमारगुण्डा में की गयी थी। मैं 'गढ़ नमूना' को नहीं ज्ञात कर सका; सम्भव है यह चमारगुण्डा की पुरानी और नष्ट चौकी का ही नाम हो जो आठ मील दक्षिण में थी।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लौटना पड़ा। तुरन्त बाद ही (२४ अक्तूबर को) शिवाजी ने कल्याण नगर पर अधिकार कर लिया। (आदाब० १६६ बी; जेधे शा०)

४. **शिवाजी द्वारा मुगलों से सन्धि**—जब उनके निष्ट-स्वामी, बीजापुर के राजा, ने सितम्बर में मुगलों से सन्धि कर ली, शिवाजी ने मुगल साम्राज्य के साथ अकेले युद्ध जारी रखना व्यर्थ और अपने लिए हानिकारक समझा। उन्हें अपनी पैतृक भूमि की रक्षा करना आवश्यक था। अतएव उन्होंने नासिरीखाँ को अपनी अधीनता अर्पण करने के लिए लिखा, और खान ने मैत्रीपूर्ण उत्तर दिया। फिर, प्रार्थना के अनुसार शिवा ने खान को अपनी माँगें पेश करते हुए एक विश्वसनीय प्रतिनिधि भेजा। ये प्रस्ताव औरंगजेब को भेजे गये; परन्तु कोई निश्चित समझौता न हो सका। उसी समय शाहजादा उत्तरी भारत को कूच कर रहा था (२५ जनवरी, १६५८), और उसने शिवा को उत्तर में लिखा, "यद्यपि तुम्हारे अपराध क्षमा के योग्य नहीं हैं, परन्तु फिर भी क्योंकि तुमने पश्चात्ताप किया है मैं तुमको क्षमा करता हूँ। तुमने प्रस्ताव किया है कि यदि तुम्हारे वंश के सब गाँव (अर्थात शाहजी की पुरानी जागीर) तुमको दे दिये जायँ और साथ ही आदिलशाह के अधिकृत निजामशाही भूमि-क्षेत्र पर शाही सेना का अधिकार होने पर कोंकण और समस्त किले तुमको वापस कर दिये जायँ, तो तुम मेरे दरबार में सोना पंडित को दूत बनाकर भेजोगे तथा मेरी सेवा में अपने एक अधिकारी की अधीनता में ५०० घुड़सवारों का दस्ता भेजोगे और तुम शाही सीमाओं की रक्षा करोगे। तुम सोनाजी को भेज दो, और तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार कर ली जायगी।"[3]

यद्यपि औरंगजेब ने शिवाजी की अधीनता बाहरी प्रसन्नता से स्वीकार कर ली, परन्तु उसकी ओर से उसके मन में वास्तविक रूप से शान्ति न थी। उसने उस क्षेत्र में सेना द्वारा शान्ति रखने में कोई बात नहीं उठा रखी, क्योंकि उसकी धारणा थी कि नवयुवक मराठा सरदार एक लुटेरा था जिसकी बहादुरी उसकी चालाकी से कम न थी, और जो एक महत्त्वाकांक्षी साहसी योद्धा था जो अपने दिये हुए वचन के प्रति निष्ठा अथवा अनुग्रहों के प्रति आभार से अधिक अपने स्वार्थ को महत्त्व देता था। उसने मीर जुमला

---

[3] दिनांक २४ फरवरी, १६५८ का यह पत्र वास्तव में धर्मात के युद्ध (१५ अप्रैल) के बाद भेजा गया, जिसमें एक पश्चलेख में औरंगजेब की विजय का हवाला था (पारसनिस पांडुलिपि, पत्र संख्या ६)। (आदाब० १५६ बी, १५७ ए)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

(दिसम्बर १६५७), को लिखा, "नासिरीखाँ के चले जाने के बाद वह जिला खाली रह गया है। उसकी ओर ध्यान दो क्योंकि एक 'कुत्ते का बेटा' ताक लगाये बैठा है।" शहंशाह ने आदिलशाह से इस प्रकार दृढ़तापूर्वक अनुरोध किया, "इस देश की रक्षा करो। शिवा को मार भगाओ जिसने हमारी भूमि के कुछ किलों पर अधिकार कर लिया है। यदि तुम उसकी सेवाओं को ग्रहण करना चाहते हो तो उसे शाही भूमि से दूर कर्नाटक में कुछ जागीरें दे दो जिससे कि वह सल्तनत की शान्ति में बाधा न डाल सके।" (आदाब० ९२ ए, १६३ ए)

इसलिए औरंगजेब ने शिवाजी को सुलह और क्षमा के बिना ही दकन को छोड़ दिया। मुगलों ने पेदगाँव के पुराने और जीर्ण किले की मरम्मत करवाई तथा उसमें सेना रखी क्योंकि वह पूना के विरुद्ध कार्रवाई करने के लिए अच्छी चौकी थी। परन्तु शिवाजी मुगलों के आतंक से बिलकुल मुक्त हो गये क्योंकि उत्तराधिकार के युद्ध के कारण औरंगजेब अगले दो वर्ष १६५८ और १६५९ में बहुत व्यस्त रहा।

५. शिवाजी द्वारा कोंकण पर आक्रमण (१६५७)—सन् १६५७ के पिछले आधे भाग में, शहजादा औरंगजेब का उत्तर की ओर पलायन, दिल्ली के सिंहासन के लिए गृह-युद्ध की सम्भावना, और मुगलों से हाल के युद्ध में असफलता के दायित्व पर बीजापुरी सरदारों में कलह (जिसकी पराकाष्ठा थी वजीर खान मुहम्मद की हत्या)—इन सब बातों ने शिवाजी की महत्त्वाकांक्षाओं के मार्ग से सब रुकावटें हटा दीं, और अब उन्होंने विजय और लूट के जीवन में नये सिरे से प्रवेश किया जिसमें कोई भय या सतर्कता बाधक नहीं थी।

३१ जुलाई को जंजीरा के सिद्दियों पर आक्रमण को बल देने के लिए उन्होंने रघुनाथ पन्त को रवाना किया। और जब वर्षा खत्म हो गयी और सेना-संचालन के लिए सूखा मौसम आरम्भ हो गया (अक्तूबर में), तो उन्होंने स्वयं नये क्षेत्र में कदम बढ़ाया। पश्चिमी घाट को पार करके वह कोंकण में कूद पड़े। इस तटीय पट्टी का उत्तरी भाग कल्याण (वर्तमान थाना) जिला था और उस समय वह नवायत (प्रवासी) फिरके के मुल्ला अहमद नामक एक अरब के अधिकार में था, जो बीजापुर के प्रमुख सरदारों में था। मुहम्मद आदिलशाह की लम्बी बीमारी ने इस गवर्नर को बीजापुर में दीर्घकाल के लिए रोक लिया था, और उसकी अनुपस्थिति में जागीर की सुरक्षा ढीली और अक्षम हो गयी थी। जिले के छोटे सरदारों में पर्याप्त असन्तोष और अव्यवस्था फैल गयी थी—यह जिला हाल में निजामशाही राज्य से लिया गया था और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वहाँ नयी सरकार की सत्ता ढीली थी। (आलमगीरनामा, ५७६; ९१ क० ब० परि० ३६)

उन्होंने आसानी से कल्याण और भिवांडी के धनी नगरों पर अधिकार कर लिया (२४ अक्तूबर, १६५७ ई०) जो इस समय बिना चहारदीवारी के थे, और वहाँ से उन्होंने बहुत-सी सम्पत्ति तथा कीमती माल लूटा। इसके पश्चात माहुली का किला ले लिया (८ जनवरी, १६५८ ई०), जो शाहजी का अन्तिम शरण-स्थान था। इस प्रकार कल्याण उप-क्षेत्र और थाना जिले के कुछ अन्य भाग शिवाजी के अधिकार में आ गये और उत्तरी कोंकण में उनके पैर मजबूती से जम गये, जिसको उन्होंने उसी साल में शीघ्रता से उन्नत किया। दक्षिण की ओर कोलाबा जिले में उनकी उन्नति का मुख्य कारण यह मालूम होता है कि छोटे स्थानीय सरदारों ने उनकी बहुत सहायता की जो मुस्लिम शासन से मुक्त होना चाहते थे और जिन्होंने उनको आने का निमन्त्रण दिया। सूरगढ़ (८ मील पूर्व), बीरवाड़ी (५ मील पश्चिम), तला (१० मील दक्षिण), घोसालगढ़ (५ मील दक्षिण-पश्चिम), भूरप या सुधागढ़ (रोहा नगर से १५ मील पूर्व), कांगोरी (महाद से १२ मील पूर्व), और सर्वोपरि राइड़ी (रायगढ़) का अजेय दुर्ग, जो उसकी भविष्य की राजधानी होने वाली थी—सब उनके हाथ में आ गये, और इस प्रकार जंजीरा के अबीसीनियाइयों के हाथ से कोलाबा जिले का आधा भाग उनके हाथ में चला गया। बीरवाड़ी और लिंगाना (रायगढ़ से ५ मील पूर्व) में उन्होंने मजबूत किले बनवाये। कल्याण के अंचल से उनकी सेनाओं ने पड़ोसी पुर्तगाली क्षेत्र को लूटा (जो दामन के सूबे में था और उनके अभिलेखों में 'उत्तर' कहलाता था), और वे असेरी के गढ़ में (माहिम और जव्हार के बिलकुल मध्य) स्थायी अभिशाप के रूप में स्थापित हो गयीं। कहा जाता है कि पुर्तगालियों ने उन्हें वार्षिक कर देकर निवृत्ति प्राप्त कर ली थी। कल्याण और भिवांडी में शिवाजी ने तुरन्त ही नौ-सेना के अड्डे और वहाँ गोदी-बाड़े बना दिये।[४]

---

४ जेधे शकावली ने एक मुसलमान लड़की (मुल्ला अहमद की पुत्रबधू) के प्रति वीरता का वर्णन किया है जो कल्याण अभियान में उसके हाथ पड़ गयी। ९१ क० ब० ३०. टेवर्नियर (२.२०५) में एक अफवाह का वर्णन है कि शिवाजी को कल्याण में गढ़ा हुआ खजाना मिला; ९१ क० ब० ३० के अनुसार प्रधानगढ़ में मिला।

शिवाजी से पुर्तगालियों के सम्बन्धों के विषय में देखिए, पिसुरलेंकर १.४ (पुर्तगाल के राजा को वाइसराय का पत्र दिनांक १५ मई, १६५८); १६ अगस्त, १६५९ ई० का पत्र भी। जेधे करीना अविश्वसनीय है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कल्याण पर अधिकार करने के बाद आबाजी सोनदेव को पूरे जिले का प्रबन्ध सौंपा गया। उसने एक सुन्दर मुस्लिम लड़की पकड़कर शिवाजी को भेंट की। परन्तु राजा ने लड़की से कहा, "यदि मेरी माता जीजाबाई तुम्हारी भाँति सुन्दर होतीं, तो मैं भी तुम्हारी तरह रूपवान देख पड़ता।" इस प्रकार उन्होंने बड़ी चतुराई से उसे अपनी माँ की श्रेणी में रखकर उसके मन से अपमान का भय दूर कर दिया, उसको आभूषण और वस्त्र प्रदान किये और अपने ५०० घुड़सवारों के संरक्षण में उसको अपने स्वजनों के पास बीजापुर को भेज दिया। कहा जाता है कि वह कल्याण के पूर्व बीजापुरी सूबेदार मुल्ला अहमद नवायत की पुत्रवधू थी। कट्टर मुस्लिम इतिहासकार खाफीखाँ ने स्त्रियों के सम्मान के प्रति शिवाजी की वीरता और स्त्रियों के प्रति उनकी अत्यन्त सतर्क श्रद्धा की प्रशंसा की है। (९१ क० व० परिच्छेद ३०; खाफीखाँ २, २७२) चितनिस बखर में गलती से मुल्ला यहिआ के स्थान पर मौलाना हायाती लिखा हुआ है; यह मुल्ला अहमद का छोटा भाई था।

परन्तु उसने अपने इस अभियान में महाद पर अथवा उसके दक्षिण के देश पर अधिकार नहीं किया। उत्तरी कोंकण में इस प्रकार जीते हुए सूबे का वाइसराय आबाजी सोनदेव नियुक्त किया गया, जिसमें थाना और कोलाबा जिलों का पूर्वी भाग भी सम्मिलित था। इस सूबे में जंजीरा के सिद्दियों और मराठों के संघर्ष का वर्णन ग्यारहवें अध्याय में किया जायगा।

अच्छा होगा कि हम यहाँ पर रुकें और शिशु मराठा-राज्य के सही विस्तार को आँकें। अपने स्वतन्त्र जीवन (१६४७-४८) के सावधान आरम्भ में, शिवाजी का राज्य उनके पिता की पश्चिमी जागीर के अधिकांश भाग और बीजापुर से स्वयं के जीते हुए भागों तक सीमित था। ये दोनों मिलकर पूना जिले के दक्षिणी आधे भाग में फैले हुए थे और उनकी उत्तरी सीमा पुरानी मुगल सीमा थी—एक रेखा जो उस जिले के उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व के कोने तक कर्णवत चली गयी थी और जिसके मार्ग में जुन्नार, वीसापुर और पार्नेर के मुगल किले नहीं पड़ते थे; अर्थात कुछ दूरी तक उत्तर में घोद नदी दोनों राज्यों की सीमा को विभाजित करती थी; जुन्नार और चमारगुण्डा मुगलों के अधिकार में थे और चाकन शिवाजी की अधीनता में था। उनकी दक्षिणी सीमा पर इन्दापुर और बारामती की बाहरी चौकियाँ और राजगढ़ व तोर्ना के किले थे (कोन्दाना १६४९ ई० में बीजापुर को वापस दे दिया गया)।

१६४८ ई० में उनकी स्थिति उपरलिखित थी। परन्तु १६५९ ई० तक उन्होंने अपने राज्य को अधित्यका या 'देश' में सतारा जिले की दक्षिणी सीमा

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तक और कोंकण में माहूली से लगभग महाद तक बढ़ा लिया था। इस प्रकार वह अब पूरे उत्तरी कोंकण के स्वामी हो गये थे, सिवाय पश्चिमी तट पर स्थित बन्दरगाहों और निकटवर्ती भूमि के (जो बीजापुर, सिद्दियों और पुर्तगालियों के अधिकार में थीं), और थाना जिले के धुर उत्तर के, परन्तु महाद से दक्षिण की ओर का देश और जीतने के लिए शेष था।

अधिक फैले हुए मराठा राज्य को अब बहुत शक्तिशाली और अधिक विस्तृत योजना के अनुसार व्यवस्थित करना था : मोरो त्रिम्बक पिंगले अयोग्य श्यामराज नीलकंठ के स्थान पर 'पेशवा' नियुक्त किया गया, नीलो सोनदेव 'मजमुआदार' (अर्थात् महालेखाकार) बालकृष्ण पन्त के स्थान पर, और नेताजी पालकर 'सरे-नौबत' (घोड़ों का स्वामी) नियुक्त किये गये। दो नये पद और बनाये गये : 'सुरनिस' (पत्र-व्यवहार अधीक्षक) और 'वाकनिस' (समाचार लेखक), और वे क्रमशः आबाजी सोनदेव और गंगाजी मंगाजी को दिये गये।[५] रिसाले की संख्या अब १०,००० थी जिसमें ७,००० सरकारी घोड़े थे और शेष सैनिकों के निजी थे। मावली पैदल सेना १०,००० थी और उनका सेनानायक येशाजी कंक था। १६५९ ई० में शिवाजी के किलों की संख्या, पुराने तथा नये प्राप्त किये हुए, चालीस थी। १४ मई, १६५७ ई० को नव-संस्थापित राज्य को सिंहासन के लिए उत्तराधिकारी प्राप्त होने का सुख मिला—अर्थात् भाग्यहीन शम्भूजी।

६. **बीजापुर की शिवाजी को अधीन करने की योजना और अफजलखाँ का भेजा जाना**—१६५७ ई० का मुगल आक्रमण जब समाप्त हो गया था और औरंगजेब उत्तरी भारत की ओर चल दिया था, बीजापुर सरकार को विश्राम मिला और उसमें कुछ सजीवता आयी। हाँ अवश्य, पिछले युद्ध में औरंगजेब के साथ कपटपूर्ण रीति से मिल जाने के झूठे संदेह पर पुराने प्रधानमन्त्री खान मुहम्मद की हत्या कर दी गयी (११ नवम्बर, १६५७); परन्तु उसका उत्तराधिकारी खवासखाँ योग्य प्रशासक था। राजमाता बड़ी साहिबा, जो अपनी मक्का की तीर्थयात्रा (१६६०) तक राज्य पर वास्तविक शासन करती

---

५ सभासद की महाद पांडुलिपि (७ एन) का वर्णन यहाँ स्वीकार किया गया है। जेधे शा० में लिखा है कि नरहरि आनन्दराव २१ अगस्त, १६६१ ई० को पेशवा नियुक्त किया गया (९१ क० ब० २९), और मोरोपन्त जनवरी, १६६१ ई० में 'मजमुआदार' तथा ३ अप्रैल, १६६२ ई० को 'पेशवा' हुआ जबकि नीलो उसके स्थान पर 'मजमुआदार' बनाया गया। (सभासद बी ७-८, आ० ना० ५७६)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

थी, आत्माभिमानी दृढ़ स्त्री थी और व्यवहार-कुशल थी। मुगलों के निरन्तर आतंक से इस समय मुक्त होकर, बीजापुर सरकार ने अपने विभ्रान्त जागीरदारों की खबर लेने का विचार किया। शाहजी से कहा गया कि वह शिवाजी को सजा दे, परन्तु उसने स्पष्ट रूप से कह दिया कि अपने अवज्ञाकारी पुत्र के व्यवहार का उत्तरदायित्व मैं बिलकुल नहीं ले सकता और मेरी भावनाओं का विचार किये बिना सरकार उसे दण्ड दे सकती है। इसलिए, शिवाजी को बल-पूर्वक दबाने के लिए उपाय सोचे गये।

परन्तु यह आसान काम न था। शिवाजी की सैनिक शक्ति दुर्बल न थी; और बीजापुरी सरदार पश्चिमी घाट की पहाड़ियों और जंगलों में युद्ध करने से हिचकते थे। बीजापुर के दरबार में इस अभियान का नेतृत्व करने के लिए सबसे पूछा गया, परन्तु कोई राजी न हुआ, अन्त में अफजलखाँ ने इसे स्वीकार किया। (सभासद ९-१०; जेधे शकावली; ९१ क० ब० ३१)

अब्दुल्ला भटारी, जिसका उपनाम अफजलखाँ था, प्रथम श्रेणी का दरबारी था और उसने स्वर्गीय सुल्तान की अधीनता में शक्ति और सम्मान प्राप्त किये थे। वह राज्य में सबसे अच्छा सेनानायक माना जाता था, बहलोल लोदी और रन्दौलाखाँ का वह श्रेष्ठी था और मुगलों से लड़े हुए हाल के युद्ध में उसने विशेष वीरता और प्रवीणता का प्रदर्शन किया था। परन्तु उस युद्ध के कारण बीजापुर के साधन मन्द हो गये थे, और राज्य में अव्यवस्था व गरीबी का बोलबाला था, जो पर्दानशीन स्त्री की राजपता में स्वाभाविक है। अफजल के साथ केवल १०,००० घुड़सवारों का रिसाला[६] ही भेजा जा सका जबकि लोकमत के अनुसार शिवाजी की मावली पैदल सेना जावली की विजय के फलस्वरूप ६०,००० थी और उन्होंने बीजापुर की विच्छिन्न सेना में से पठान सेना का भी एक शक्तिशाली सेना-दल बना लिया था। अतएव अफजलखाँ शिवा से खुले युद्ध से बचना चाहता था। वास्तव में, विधवा रानी ने आदेश दिया था कि शिवाजी से 'मित्रता का व्यवहार दिखाकर'

---

६ समकालीनों ने अफजल की सेना की शक्ति यही बतायी है, अर्थात् तारीखे-अली और अंग्रेजी पत्र में जिसका हवाला आगे की टिप्पणी में दिया गया है। मराठों के वर्णनों के अनुसार जो सब बाद के हैं, उनकी सेना-शक्ति पैदल-सेना के अतिरिक्त १२,००० घुड़सवार थी। ९१ क० ब० ३२; सभा० ९, आ० ना० ५७७ में भूल से 'दो हजार' के स्थान पर 'दस हजार' छप गया मालूम होता है। 'शेद० बखर' २५ में दिया गया पत्र जाली है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और आदिलशाह से क्षमा दिलवाने का वचन देकर उसे पकड़ा जाय अथवा मार डाला जाय।[७]

बीजापुरी सेनापति ने सेना की अध्यक्षता एक वीर की भावना से सम्भाली, और खुले दरबार में उसने गर्व के साथ कहा कि वह शिवा को, अपने घोड़े पर से उतरे बिना ही, पकड़कर हथकड़ी पहनाकर ले आयेगा। परन्तु उसका मन कार्य की गुरुता के कारण अवश्य उत्पीड़ित रहा होगा। उसने अपना कार्य यथासम्भव कूटनीति द्वारा और मावली सरदारों को शिवाजी के विरुद्ध भड़का कर पूरा करने की योजना बनायी।

अप्रैल में ही बीजापुर सरकार ने मावल के समस्त देशमुखों को एक परि-पत्र भेजा, और उनसे अफजलखाँ को अपनी-अपनी सेना की टुकड़ियों के साथ शामिल होने और शिवाजी पर विजय प्राप्त करने को लिखा। आदिलशाह के अधीन-सरदार होने के कारण, वे कानूनन उसकी आज्ञा मानने के लिए बाध्य थे; इससे उनके 'वतन' (अनुवंशिक भूमि) और पद के जब्त होने से रक्षा हो सकती थी। पत्र का कुछ प्रभाव पड़ा। खांडोजी खोपड़े, जो उत्रोली का देश-मुख था और जो रोहिड़खोड़े की देशमुखी के लिए (भोर के) कान्होजी जेधे का प्रतिद्वन्द्वी था, वाई स्थान पर अफजल की शरण में उपस्थित हो गया और उसे लिखित वचन दिया कि यदि मुझे वांछित देशमुखी दे दी जायगी तो मैं शिवा को बन्दी बनाने का वचन देता हूँ। उसे बलशाली मावली सेना-दल की कमान में अफजल की सेना के अग्रदल में स्थान दिया गया। अन्य मावल देश-मुख भयभीत हो गये और वे किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गये। परन्तु शिवाजी ने उनको रक्षा और पारितोषिक का गम्भीर वचन देकर अपनी ओर मिला लिया। (राज० १७. ३१, १.३६५ ३ और ३१७; जेधे शाकावली, ६१; क० ब० ३२)

७. अफजलखाँ की युद्ध-योजना और शिवाजी के प्रति नीति—अफजलखाँ

---

७ "इस वर्ष शिवाजी के विरोध में रानी ने अब्दुल्लाखाँ को १०,००० घुड़-सवार और पैदल सेना के साथ भेजा, और क्योंकि वह जानती थी कि शिवाजी का मुकाबला करने के लिए यह शक्ति पर्याप्त न थी, उसने उसे वैसे 'मित्रता का दिखावा करने' की सलाह दी 'जो उसने किया'। और दूसरे ने (अर्थात् शिवाजी ने), यह नहीं मालूम कि ज्ञात करने के बाद अथवा सन्देह के कारण अपने प्रेम को छिपाया, इत्यादि।" (राजापुर से रेविंगटन का कम्पनी को पत्र, १० दिसम्बर, १६५६ ई०, कोठी अभिलेख, राजापुर।) बीजापुर के बर्खास्त किये हुए आदमी भर्ती किये गये। (६१ क० ब० २६)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

का पहला कार्य था अपने अभियान के लिए धन इकट्ठा करना। उसके १०,००० घुड़सवारों के रिसाले का खर्च प्रति महीने ढाई लाख रुपया था जिसमें सेनानियों का वेतन और चारे का भत्ता सम्मिलित थे, परन्तु अधिकारियों का वेतन इसके अतिरिक्त था। और उस सेनापति के लिए धन प्राप्त करना बहुत सुगम था जिसके हृदय में अन्तःकरण की पुकार या दया के लिए स्थान न था। प्रसिद्ध हिन्दू मन्दिरों में उनकी निजी सम्पत्ति अतुल थी, और इसके अतिरिक्त मन्दिरों के निकट धनी व्यापारी और महाजन बसे हुए थे। अफजल ने निश्चय किया कि युद्ध का व्यय युद्ध से ही पूरा किया जाय। अतएव उसने पहले इन पवित्र नगरों पर तीव्रगामी छापे मारे, मन्दिरों को लूटा, मूर्तियों को नष्ट किया, और मुख्य पुजारियों से निस्तार-धन माँगा।

सितम्बर, १६५९ के आरम्भ में उसने बीजापुर से कूच किया क्योंकि वर्षा ऋतु के बाद अब सूखा मौसम आरम्भ हो गया था; अफजलखाँ पहले बीजापुर के लगभग ६५ मील उत्तर में भीमा नदी के तट पर स्थित पंढारपुर के प्रसिद्ध विनोबा के मन्दिर पर जा धमका। यहाँ उसने मन्दिर को लूटा और मूर्तियों को नष्ट किया। फिर, भीमा और नीरा नदियों के दक्षिण में किनारे-किनारे चलकर, पश्चिम की ओर बढ़कर उसने फाल्टन जिले में प्रवेश किया; वहाँ वह फाल्टन से वाई को जाने वाली सड़क पर, फाल्टन नगर से बारह मील दक्षिण-पश्चिम में स्थित मलवदी गाँव (सर्वे नकशे के अनुसार 'मलावड़ी') में जा धमका। यह वाई अफजल की सरकार का प्रधान नगर था, और यहाँ उसके मित्र और पुराने अधिकारी थे। मलवदी में वह रुका और यहाँ उसने मुहिम और धन एकत्र करने की योजना पूरी की। यहाँ उसने फाल्टन के देशमुख बाजाजी नायक निम्बाल्कर को पकड़ा, और उसे धमकी दी कि शिवाजी से मेल करने के कारण वह हाथियों के पैरों के नीचे कुचलवाकर मार डाला जायगा। निम्बाल्कर ने दो लाख रुपये जुर्माना देकर अपनी जान बचायी।[८]

---

[८] यह धन-राशि अर्थात् ६०,००० होन उसने फाल्टन की देशमुखी मालगुजारी दो महाजनों के यहाँ गिरवी रखकर दी, और यह धन १६७५ में वापस कर दिया गया। कुछ वर्ष हुए बाजाजी को बलात मुसलमान बना लिया गया था, परन्तु शिवाजी ने १६५७ में उसे नये धर्म से हटाकर फिर हिन्दू बना लिया—जैसा कि आगे चलकर नेताजी पाल्कर के साथ १६७७ में हुआ था। शिवाजी ने बाजाजी नायक के पुत्र महादजी के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर दिया। (शिव-पत्र-सार-संग्रह, सं० ७९६ और १७९७)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मलवदी में डेरा डालकर अफजलखाँ ने अपनी आतंक की नीति जारी रखी जिससे शिवाजी भयभीत होकर उसकी अधीनता स्वीकार कर लें। उसने आसपास के प्रदेश में प्रसिद्ध हिन्दू मन्दिरों को लूटने और नष्ट करने के लिए अपने रिसाले के मजबूत दल भेजे। इस प्रकार जेजूरी, तुल्जापुर और अन्य पवित्र नगर लूट लिये गये, और उनके निवासियों से बलात द्रव्य वसूल किया गया। साथ ही साथ अफजलखाँ की क्रूरता और धार्मिक कट्टरता की कहानी चारों ओर फैल गयी। जैसा कि आदिलशाही दरबार के इतिहासकार ने लिखा है, "थोड़े से समय में खान ने शिवाजी द्वारा प्राप्त किये हुए प्रदेश को अपनी सेना की 'जौलान-गाह' (घुड़सवारों की भूमि) बना दिया।" "हमारे वीरों के घोड़ों के सुमों से उड़ने वाली धूल ने दुश्मन की आँखों को अन्धा कर दिया।·····उनमें बहुत से मारे गये और शेष भागकर बिलों में घुस गये।" परन्तु इन अत्याचारों ने मराठा विरोध को उस मनुष्य के प्रति और भी पक्का कर दिया जो मनुष्य और देवताओं दोनों का एक समान वैरी था। उनकी राजनीतिक मुक्ति का युद्ध धर्म-युद्ध में परिणत हो गया।

अफजल का पहला इरादा उत्तर की ओर पूना पहुँचकर शिवाजी पर उनके घर में ही आक्रमण करने का था, और यह कि साथ ही उसके मोरे मित्र और हितैषी मावली मुखिया दक्षिणी मावल प्रदेश को शिवाजी के आदमियों से छीन लेते जिससे कि मराठा विद्रोही पूना की समवर्ती भूमि से हट न पाते और आसानी से पराजित किये जा सकते। परन्तु अफजल की गतिविधियों के विषय में मालूम करके शिवाजी शीघ्र ही पूना के अलाभदायक प्रदेश से हट गये और जावली जिले के ऊबड़-खाबड़ और वनैले भाग में मोर्चा लेने के लिए पहुँच गये जहाँ उनकी समस्त सेना अब केन्द्रित हो गयी। यहाँ पर वे मावले मुखिये भी उनके साथ हो लिये जिनकी मित्रता उन्होंने अपनी विवेकशील राजनयिकता से प्राप्त की थी। शिवाजी की इस अप्रत्याशित युद्ध-नीति के कारण अफजल ने भी अपनी सैनिक योजना को बदल दिया। जब शिवाजी ने जावली को जीता तो उस छोटे राज्य के पुराने शासक वंश के अनेक सदस्य बीजापुर की शरण में आ गये और ये मनुष्य अफजल के अभियान में शामिल हो गये थे तथा उन्होंने वचन दिया था कि वे अपनी स्थानीय जानकारी और प्रभाव से उस जिले को शिवाजी के हाथों से छीन लेने में सहायता करेंगे। इस प्रकार अफजलखाँ को आशा थी कि वह शिवाजी के मावल प्रदेश में सुगमता से घुस जायगा, और अन्य राजभक्त मावली मुखियों की सहायता से उत्तर में चलकर पूना के आसपास के खुले प्रदेश में पहुँच जायगा।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

परन्तु अब निकट ही पूरे बल से शिवाजी के सामने ही आने पर अफजल ने विचार किया कि भारी रिसाला जो उसकी सेना का अग्र भाग था, जावली की पहाड़ियों और जंगलों में अपनी विशिष्टता को खो देगा,[९] परन्तु शिवाजी की पैदल सेना आड़ में बढ़ती हुई अथवा घात लगाकर एकदम झपटती हुई अपने आक्रामकों की अधिक संख्या को शक्तिहीन और बेकार कर देगी। संख्या में भी शिवा की सेना अधिक थी।

इसलिए इस ऊबड़-खाबड़ प्रदेश में घुसकर शिवाजी को बलपूर्वक हटाने की चेष्टा न करने में अफजल ने बुद्धिमानी से काम किया। उसने अब कूट-नीति से काम लेने का विचार किया और यह निश्चय किया कि शिवाजी को जाल में फाँसा जाय और फिर उसे पकड़ा जाय अथवा मार डाला जाय। (सभा० १४)

उसने अपना निवास-स्थान प्रतापगढ़ में कुछ दिन पूर्व बना लिया था। अफजल ने अपने भूमि-प्रबन्धकर्ता कृष्णाजी भास्कर को शिवाजी के पास अति आकर्षक संदेशा लेकर भेजा, जो इस प्रकार था : "तुम्हारे पिता बहुत काल तक मेरे परम मित्र[१०] रहे हैं, और इसलिए तुम मेरे लिए अजनबी नहीं हो। यहाँ आकर मुझसे मिलो, और मैं अपने प्रभाव से आदिलशाह से कोंकण पर और तुम्हारे अधीन किलों पर तुम्हारे अधिकार की पुष्टि करा दूँगा। मैं अपनी सरकार द्वारा तुमको अधिक मान और सैनिक सामान दिला दूँगा। यदि तुम दरबार में आना चाहो तो तुम्हारा स्वागत है। या, यदि तुम स्वयं न उपस्थित होना चाहो तो इससे भी छूट मिल जायगी।" (सभा० १०)

८. **शिवाजी के लिए खतरा और परेशानी**—इस बीच में अफजल के आने के समाचार ने शिवाजी के अनुगामियों में बहुत आतंक और खलबली पैदा कर दी थी। अब तक उन्होंने अप्रसिद्ध किलों का घेरा डाला था, एकल सैनिक दस्तों को लूटा था अथवा मामूली जागीरदारों की छोटी सेनाओं से भिड़न्त की थी। किन्तु अब उनका पहला मुकाबला बीजापुर की नियमित फौजों से था

---

९ उस अत्यन्त कठिन और ऊबड़-खाबड़ भूमि का वर्णन, जिसे अफजल को प्रतापगढ़ के अंचल में भेंट के स्थान पर पहुँचने के लिए पार करना था, नूरुल्ला ने किया है। देखिए मेरी पाण्डुलिपि का पृष्ठ ८०

१० यह दावा गलत था क्योंकि आदिलशाही दरबार में शिवाजी सिद्दी रहमान (खान मुहम्मद) के दल के थे, और हम जानते हैं कि अफजलखाँ उस मन्त्री का जानी दुश्मन था। (हैदराबाद, 'चुने हुए दस्तावेज', शाहजहाँ का राज्य-काल, पृष्ठ १२५ और १२६)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जिनका नेता एक प्रसिद्ध सेनापति था और सेना की संख्या १०,००० घुड़सवार थी जिसके साथ तोपें परिवहन और उस युग की सुसज्जित सेनाओं के अन्य उपकरण भी थे। इसके अतिरिक्त बीजापुर से वाई तक अफजल का प्रस्थान पूर्णतया सफल रहा था; मराठों को खुले मैदान में उसका विरोध करने की हिम्मत न थी, और उसने शिवा की भूमि को स्वतन्त्रतापूर्वक लूटा था तथा जहाँ वह पहुँचा था नष्ट किया था। उसकी दुर्निवार शक्ति और निर्दयता की खबरें मराठा शिविर में पहुँच चुकी थीं। युद्ध की प्रथम परिषद की बैठक ने, जो उन्होंने बुलाई थी, उससे सुलह करने के लिए कहा, क्योंकि वैरी बहुत शक्तिशाली था और युद्ध से उनकी ओर बहुत-सी जानें खो जाने की सम्भावना थी। (सभा० १०)

परन्तु क्या विनम्र आत्मसमर्पण से उनको वास्तव में शान्ति और सुरक्षा प्राप्त हो सकती थी? अफजलखाँ के पूर्व जीवन के कारण उससे लोग दानव की भाँति भयभीत थे—एक बहादुर खराब आदमी जो किसी भी अत्याचार तथा धोखे के काम से नहीं झिझकता था। १६३९ में उसने विश्वासघात करके सीरा के राजा कस्तूरी रंगा को मार डाला था जिसको उसने अपने शिविर में अधीनता के लिए बुलाया था और सुरक्षा का वचन दिया था।[११] फिर नवम्बर, १६५७ में इस अफजलखाँ ने बीजापुरी वजीर खान मुहम्मद की हत्या करने की योजना बनायी थी। औरंगजेब द्वारा बीजापुर के आक्रमण की समाप्ति पर (१६५६-५७), अफजलखाँ अकस्मात ही आदिलशाही शिविर को छोड़कर राजधानी पहुँचा और महारानी राजप 'बड़ी साहिबा' से झूठी शिकायत की

---

११ मुहम्मदनामा, पृष्ठ १६३, "भेंट के समय कस्तूरी रंगा ने अनुपयुक्त आचरण का प्रदर्शन किया जो अशान्ति का सूचक था, और अफजलखाँ ने उसे तुरन्त मार डाला।" ठीक ऐसी ही परिस्थिति में उड़ीसा के मुगल गवर्नर खाने दौरान ने कृष्ण भांजा (मयूरभंज के राजा) को मार डाला था (१६६०) जो उससे भेंट करने के लिए और सुलह की शर्तें तय करने के लिए आया था, और उस समय वाइसराय ने यह प्रसिद्ध कर दिया था कि राजा ने खान पर अपनी तलवार चलाने की चेष्टा की। परन्तु बालासोर के डच व्यापारियों ने रिपोर्ट दी कि यह कथन गलत था और खान के स्वयं के धोखे की हत्या पर आवरण डालने के लिए ऐसा किया गया था। एक पराजित और अधीन सरदार जो अपनी सेना से दूर है, अपने वैरी के ही घर में पहुँचकर उसकी हत्या नहीं करता; वह तो विनयपूर्ण ढंग से अपनी शक्ति के अनुसार हर साधन से शांति प्राप्त करने का प्रयत्न करता है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कि खान मुहम्मद मुगलों की सेवा में राजद्रोही है। उसने प्रधान मन्त्री को वापस बुला लिया और जैसे कि वह उससे भेंट करने जा रहा था रास्ते में ही राजधानी की सड़क पर मार डाला गया। उसके हत्यारे को सजा नहीं दी गयी। अफजलखाँ इस बेगम के दल में था और उसका प्रिय सेनापति था। जाने हुए तथ्यों से यह उचित परिणाम निकाला जा सकता है कि खान मुहम्मद की हत्या के मामले में उसकी पहल थी।

क्या कोई समझदार आदमी ऐसे धोखेबाज हत्यारे द्वारा दिये गये सांत्वना-पूर्ण आश्वासन में विश्वास कर सकता है? यही कारण था कि शिवाजी ने अफजलखाँ के गोपनीय इरादों के विषय में प्रत्येक स्रोत से मालूम करने की कोशिश की, और कपट के विरुद्ध प्रत्येक सम्भावित सावधानी ली।

शिवाजी के जीवन में यह अत्यन्त संकट का समय था। यदि वह अफजल-खाँ को आत्मसमर्पण कर देते, तो उनकी स्वतन्त्रता और भविष्य की उन्नति की सारी आशाएँ धूल में मिल जातीं, और यदि वे अपने नये स्वामी के बदले से बच भी जाते तो भी उनको बीजापुर के नम्र व अधीन एक छोटे-से जागीर-दार की भाँति अपना शेष जीवन व्यतीत करना पड़ता। परन्तु यह भी ठीक था कि इस समय बीजापुर की सत्ता के प्रति खुले रूप से विरोध करने पर उस राज्य से मैत्री का द्वार सदा के लिए बन्द हो जाता, और इसके बाद सदा के लिए, इस विस्तृत संसार में बिना एक भी मित्र या संरक्षक के, उस राज्य की शक्ति और मुगलों तथा दूसरे वैरियों की शक्ति के विरुद्ध अपने जीवन और स्वतन्त्रता की रक्षा करनी पड़ती। उसके मन्त्रियों और सेनानायकों ने अधिक हीन नीति का समर्थन किया। शिवाजी स्वयं बहुत बड़े असमंजस में पड़ गये। एक रात उन्होंने इस पर विचार करने में व्यतीत की कि किस प्रकार का जीवन उचित रहेगा और फिर उन्होंने अधिक वीरतापूर्ण भूमिका पसन्द की। उनके जीवन काल से ही एक दन्तकथा चली आती है कि अति-चिन्तित सरदार की नींद यकायक टूट गयी और उनको देवी भवानी ने दर्शन दिये जिन्होंने उनको अफजल का वीरता से सामना करने के लिए प्रोत्साहित किया तथा उनको विजय का वचन दिया और अपना पूरा संरक्षण प्रदान करने के लिए कहा। (सभा० ११)

उन्होंने अपना निश्चय पूरा कर लिया। दूसरे दिन परिषद की बैठक फिर बुलायी गयी। शिवाजी के वीरतापूर्ण शब्दों से, उनके सम्मान की भावना के प्रति अभ्यर्थना से, और देवी के आशीर्वाद की सूचना से प्रेरित होकर उन्होंने युद्ध करने का निश्चय किया। अब उन्होंने अत्यन्त दूर-दृष्टि, और प्रवीणता

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

से युद्ध की तैयारी की। उन्होंने अपनी माँ से सलाह ली; उन्होंने आशीर्वाद दिया और उनकी सफलता की भविष्यवाणी की, और तत्पश्चात् उन्होंने अपनी मृत्यु हो जाने की दशा में सरकार चलाने के लिए ब्यौरेवार निर्देश दिये। मोरो त्रिम्बक पिंगले और नेताजी पालकर क्रमशः कोंकण और घाट से बुला लिये गये और उनको प्रतापगढ़ के निकट ही स्थान लेने के लिए आदेश दिया गया। (सभा० १२)

९. **षड्यन्त्र और प्रतिषडय्न्त्र**—फिर अफजल का दूत कृष्णाजी भास्कर, आया जो वार्ता के लिए निमन्त्रण लाया था। शिवा ने उसका सत्कार किया और एक रात उससे एकान्त में वार्ता की और एक हिन्दू तथा धर्माचार्य होने के नाते उससे खान के वास्तविक इरादों को बताने के लिए कहा। कृष्णाजी ने थोड़ा संकेत कर दिया कि खान के मन में दुष्टता है। तब शिवाजी ने अपने स्वयं के प्रतिनिधि पंताजी गोपीनाथ के साथ दूत को वापस भेज दिया और अफजल से भेंट की स्वीकृति दी, इस शर्त पर कि वह उसकी सुरक्षा के लिए गम्भीर आश्वासन दे दे। गोपीनाथ का वास्तविक उद्देश्य यह था कि वह अफजल की सेना की शक्ति और उसके विषय में अन्य सूचना प्राप्त करे, और स्वयं ज्ञात करे कि खान का वास्तविक उद्देश्य क्या है। गोपीनाथ के द्वारा शिवा ने वचन दिया कि भेंट के समय अफजल को कोई हानि नहीं पहुँचाई जायगी और अफजल ने भी अपनी ओर से उसी प्रकार अपनी नेकनीयती का विश्वास दिलाया। परन्तु गोपीनाथ ने उदारतापूर्वक घूस देकर ज्ञात किया कि अफजल के अधिकारियों की धारणा है कि "उसने ऐसी योजना बनायी है कि शिवा को भेंट के समय बन्दी बना लिया जाय, क्योंकि वह इतना चालाक है कि खुली लड़ाई में हाथ नहीं आ सकता।" लौटकर गोपीनाथ ने शिवा को यह सब बता दिया और उनसे अनुरोध किया कि उनके ऊपर आक्रमण होने से पहले वह अफजल को एकान्त भेंट में मार डालें और फिर उसकी सेना को घेर लें। (सभा० १२-१५)

शिवा ने गोपीनाथ से संकेत पाकर भय का बहाना किया और वाई को जाने से मना कर दिया, परन्तु यह अवश्य कह दिया कि यदि खान उसके घर के निकट किसी स्थान पर मिलना स्वीकार कर ले और उनकी सुरक्षा और भविष्य की रक्षा के लिए खान स्वयं जिम्मेदारी ले ले तो वह मिलने के लिए तैयार हैं। अफजल यह रिआयत देने को तैयार हो गया। शिवा की आज्ञा से वाई से प्रतापगढ़ तक घने जंगल को काटकर मार्ग बनाया गया और उस पर विभिन्न स्थानों पर अफजल की सेना के लिए भोजन और पानी का प्रबन्ध

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कर दिया। रटोंडी दर्रे में होकर (महाबलेश्वर पठार के 'बम्बई पौइंट' से नीचे) अफजलखाँ पार में पहुँचा, जो दक्षिण में प्रतापगढ़ के नीचे एक मील दूर पर एक गाँव था, और उसके आदमियों ने कोइनर नदी के उद्गम के निकट घाटी की गहराई में जल के प्रत्येक कुंड के पास बिखरे हुए समूहों में डेरा डाला।

खान के आगमन के विषय में सूचना देने के लिए गोपीनाथ पहाड़ी पर भेजा गया। भेंट दूसरे ही दिन होने वाली थी। भेंट के लिए स्थान एक कूट के ऊपरी भाग पर चुना गया था जो प्रतापगढ़ किले से नीचे था और जहाँ से कोइना नदी नीचे की ओर दिखाई देती थी। पहाड़ी के पार्श्व को जाने वाले वन-मार्ग के दोनों ओर शिवाजी ने थोड़ी-थोड़ी दूर पर चुने हुए सैनिक छिपा रखे थे। यहाँ उन्होंने तम्बू खड़े किये और एक अत्यन्त सुसज्जित मंडप खड़ा किया जिसमें भड़कीले कालीन और गद्दे बिछाये—यह समस्त वातावरण एक शाही अतिथि के स्वागत के अनुकूल था।

तब वह भेंट के लिए तैयार हुए। अपने चोगे के भीतर उन्होंने जंजीरों का एक कवच पहना और अपने साफे के भीतर उन्होंने अपने कपाल की रक्षा के लिए इस्पात की टोपी धारण की। उनकी रक्षा के हथियार किसी को दिखाई न पड़ते थे; परन्तु बायें हाथ में छिपा हुआ 'बाघनख' (लोहे का पंजा) था जो दो छल्लों से उन्होंने उँगलियों में पहन रखा था और उनकी दायीं आस्तीन में 'बिछवा' (बिच्छू) नाम का एक पतला तेज छुरा छिपा हुआ था। उनके साथ केवल दो मनुष्य थे जो दोनों असाधारण हिम्मत और फुर्ती वाले थे—जीव महाला, जो तलवार चलाने में बड़ा पटु था, और शम्भूजी कावजी, जिसने हनुमन्तराव मोरे का वध किया था। प्रत्येक के पास दो तलवारें और एक ढाल थी।

जैसे ही ये लोग किले से नीचे उतरने वाले थे कि एक भव्य पुण्यात्मा महिला की आकृति दृष्टिगोचर हुई। यह जीजाबाई थीं। शिवा ने अपनी माता को आदरपूर्वक प्रणाम किया। उन्होंने उन्हें यह कहकर आशीर्वाद दिया, "तेरी विजय हो!" और उनके साथियों को उनकी सुरक्षा के लिए कड़ा आदेश दिया; उन्होंने झुककर आज्ञा-पालन का वचन दिया। तब वह किले के अंचल तक चले और रुक गये।

१०. शिवा और अफजल की भेंट—उधर अफजलखाँ अपने पार नामक गाँव के शिविर से चल पड़ा था और उसके साथ एक हजार से अधिक बन्दूकचियों का अनुरक्षक दल था। गोपीनाथ ने इस पर आपत्ति की और कहा कि शिवाजी ऐसी भेंट में हरगिज सम्मिलित न होंगे, और इसलिए खान

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

को अपने साथ केवल दो अंगरक्षक लेकर चलना चाहिए, ठीक जैसा कि शिवाजी ने किया है। अतएव उसने अपनी सेना को कुछ दूर पीछे छोड़ दिया और पहाड़ी मार्ग पर पालकी में बैठकर दो सैनिक और एक प्रसिद्ध तलवार-बाज सैयद बाँदा को लेकर चला, साथ में दो ब्राह्मण दूत गोपीनाथ और कृष्णाजी भी थे। शामियाने में पहुँचकर अफजलखाँ ने कुछ आवेश में आकर शिवाजी के राजसी सामान और सजावट पर कटाक्ष किया और कहा कि ये एक जागीरदार के पुत्र के लिए शोभनीय नहीं हैं। परन्तु गोपीनाथ ने यह कहकर उसे शान्त कर दिया कि साज-सज्जा के ये सब उपकरण शिवाजी की अधीनता के प्रथम फल के प्रतीक के रूप में शीघ्र ही बीजापुर के महल में भेज दिये जायँगे।

शिवाजी को जल्दी भेजने के लिए संदेशवाहक भेजे गये जो किले की दीवारों के प्रांगण में बाट देख रहे थे। वह धीरे-धीरे आगे बढ़े, फिर सैयद बाँदा को देखकर रुक गये, और यह माँग भेज दी कि उसे शामियाने से हटा दिया जाय। यह कर दिया गया और अन्त में शिवाजी ने शामियाने में प्रवेश किया। दोनों ओर से प्रत्येक पक्ष के चार आदमी थे—अधिपति, दो हथियारबन्द अनुचर, और एक राजदूत। बाह्य रूप से शिवाजी निहत्थे थे;[१२] वह अधीनता के लिए आये हुए एक विद्रोही की भाँति दिखाई पड़ते थे, परन्तुअफजल ने अपनी कमर पर तलवार और कटार बाँध रखे थे।

अनुचर नीचे ही खड़े रहे। शिवाजी ऊँचे मंच पर चढ़े और अफजल को प्रणाम किया। खान अपने स्थान से उठा, कुछ कदम आगे बढ़ा, और शिवाजी से गले मिलने के लिए अपनी भुजाएँ फैलायीं। नाटे दुबले मराठा का सिर अपने विरोधी के केवल कंधे तक आया। अचानक ही अफजल ने अपने आलिंगन को कड़ा किया और शिवाजी की गरदन को अपनी बाँह में कसकर जकड़ लिया और दायें हाथ से अपनी सीधी लम्बी कटार को निकाला और शिवाजी के बगल में भोंक दिया। परन्तु भीतर के कवच के कारण वार खाली गया। शिवाजी दुख में कराहे क्योंकि उन्हें यह महसूस हो रहा था कि उनका गला घोंटा जा रहा था। परन्तु एक क्षण में ही उन्होंने आकस्मिक आक्रमण से होश पा लिया, खान की कमर के दूसरी ओर अपनी बाँह डाली और फौलादी

---

[१२] खाफीखाँ (२. ११६) ने कहा है कि अफजल और शिवाजी दोनों ही भेंट के समय निहत्थे आये थे। परन्तु 'कमर वा कर्दा' (तलवार रहित कमर) हारे हुए मनुष्य की प्रथागत मुद्रा होती है जिसका संकेत फारसी इतिहासों में प्रायः किया गया है, और अफजल उस अभिभूत दशा में नहीं था।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पंजों से उसकी आँतें चीर डालीं। फिर दायें हाथ से उन्होंने अफजल की बगल में 'विछवा' भोंक दिया। घायल मनुष्य ने अपनी पकड़ ढीली कर दी और शिवाजी ने अपने को बन्धनमुक्त कर लिया, मंच से नीचे उतरे, और बाहर अपने आदमियों की ओर भागे।

खान ने शोर मचाया, "गद्दारी ! कत्ल ! मदद करो ! मदद करो !" दोनों ओर से अनुचर दौड़े। सैयद बाँदा ने शिवाजी पर अपनी लम्बी सीधी तलवार से वार किया और उनके साफे के दो टुकड़े कर दिये और नीचे फौलाद की टोपी में गहरा निशान कर दिया। शिवाजी ने जीव महाला से एक कटार ली और प्रत्याक्रमण किया। परन्तु जीव महाला तलवार लेकर घूमकर दूसरी तरफ आ गया और सैयद की दायीं बाँह काट डाली, और फिर उसे मार डाला (१० नवम्बर, १६५९)।

इस बीच में अनुचरों ने घायल खान को पालकी में लिटा दिया और अपने शिविर की ओर चल दिये। परन्तु शम्भूजी कावजी ने अनुचरों के पैरों को काट दिया, पालकी उनके हाथ से छूट पड़ी, और फिर अफजल का सिर धड़ से अलग कर दिया जिसे वह शिवाजी के सामने जयघोष करते हुए ले आये।[13]

११. **अफजल की सेना का नाश और उसकी लूट**—संकट से मुक्त होकर शिवाजी और उनके दो साथी प्रतापगढ़ के शिखर पर पहुँचे और उन्होंने एक तोप दागी। यह उनकी सेनाओं के लिए संकेत था जिसके लिए वे नीचे की घाटियों में छिपी हुई थीं। तुरन्त ही मोरो त्रिम्बक और नेताजी पाल्कर की सेनाएँ और हजारों मावली चारों ओर से बीजापुरी शिविर पर टूट पड़े। अफजल के अधिकारी और सैनिक दोनों ही पर, अपने नेता की मृत्यु का हाल जानने पर और इस अप्रत्याशित आक्रमण के कारण, आतंक छा गया था विशेषकर उस अपरिचित प्रदेश में जहाँ प्रत्येक झाड़ी वैरी का अड्डा देख पड़ती थी। परन्तु भागने का मार्ग बन्द था और उन्हें मजबूर होकर लड़ना पड़ा। तीन घंटे तक घिरे हुए सैनिकों ने अपनी निराशापूर्ण रक्षा की, ये निश्चय ही बिखरे हुए समूहों में थे जिनकी न कोई सामान्य योजना थी और जिन्हें न कोई उच्च निर्देशन प्राप्त था। मराठे अपनी ही भूमि पर लड़ रहे

---

[13] नीचे के किले के दक्षिण-पूर्व पार्श्व में स्थित प्राचीर के निकट अब्दुल्ला बुर्ज नाम की मीनार के अंचल में सिर दफन कर दिया गया। उससे थोड़ी ही दूर पर शिवाजी द्वारा निर्मित भवानी का मन्दिर है। (बम्बई गजेटियर, १९, ५४६-५४७) चित्रों के लिए देखिए पारसनिस का महाबलेश्वर (१४३ और १४४)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

थे, अपनी प्रारम्भिक विजय से हर्षोन्मत्त थे, बहुत निकट से ही उनको सहायता प्राप्त हो सकती थी और उन्हें प्रसिद्ध सेनानायकों का नेतृत्व प्राप्त था। बीजापुरी सेना में संहार बहुत भीषण हुआ। "जिन्होंने अपने दाँतों में घास दबाकर (दीनता के प्रतीक के रूप में) आश्रय माँगा वे सब क्षमा कर दिये गये और शेष तलवार के घाट उतार दिये गये।" कुछ दिन बाद राजापुर की अंग्रेजी कोठी में पहुँची रिपोर्ट के अनुसार ३००० आदमी खेत रहे। मावली पैदल सेना ने भागते हुए हाथियों पर हमला किया, "उनकी पूँछें काट डालीं, उनके दाँत तोड़ दिये अथवा उनके पैर काट डाले।" ऊँट भी मार डाले गये, जैसे ही वे आक्रामकों के मार्ग में आये।

लूटा हुआ माल प्रचुर मात्रा में था—एक पूरी सेना की समस्त तोपें, गाड़ियाँ, गोला-बारूद, खजाना, डेरे और सम्भार, भारवाहन पशु और यात्रा-सामग्री विजेताओं के हाथ में आयीं। इनमें निम्न भी थे—६५ हाथी, ४००० घोड़े, १२०० ऊँट, वस्त्रों के दो सहस्र बंडल और १० लाख रुपये नगद तथा रत्नराशि के रूप में।

कैदियों में एक सरदार उच्च पद का था, अफजल के दो बेटे थे और दो मराठा सरदार, लम्वाजी भोंसले व जुझारराव घाट्गे थे। सब बन्दी की गयीं स्त्रियाँ, बच्चे, ब्राह्मण और शिविर-अनुचर तुरन्त मुक्त कर दिये गये। पराजित सेना का एक खंड, जिसमें अफजलखाँ की बेगमें और सबसे बड़ा पुत्र फजलखाँ था, खाँडोजी खोपड़े और उसके मावली मित्रों के सेना-दल के निर्देशन में कोइना नदी के उद्गम का चक्कर काटकर भाग निकले।[१४]

प्रतापगढ़ के किले से नीचे शिवाजी ने सेना का विशाल प्रदर्शन किया।

---

[१४] अफजलखाँ से भेंट : सभा० १७-१९; जेधे शा०; ९१ क० ब०, ३४ आ० ना० ५७७; 'दिलकशा' १९; खाफीखाँ २, ११६-११८; राजापुर कोठी अभिलेख; फ्रायर, २. ६१; 'पोवाड़ा' १२-१८. उसकी सेना की लूट : सभा० २०-२१; ९१ क० ब० अनुच्छेद ३५; पोवाड़ा, १९-२० फजल खाँ का पलायन : सभा० २१. तारीखे-अली आदिलशाह द्वितीय, ७६-८१ में शब्दों और अलंकारों की भरमार है, तथा तथ्य बहुत ही कम हैं। वसातिन-उस-सलातीन ३७० में ब्यौरा और भी कम है, परन्तु संक्षिप्त है। जेधे० और ९१ क० ब० ३५ में लिखा है कि खाँडोजी खोपड़े पकड़ा गया और शिवाजी ने उसका सिर काट दिया; परन्तु 'जेधे करीना' (जो बाद का है) में लिखा है कि उसकी केवल एक बाँह और एक टाँग (शिवाजी की आज्ञा से) काट दी गयी थी। 'अखबारात' ने सबूत दिये हैं कि उसका सर काट डाला गया। खान का तोपखाना वाई में रह गया और दूसरे दिन उस पर अधिकार कर लिया गया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पकड़े गये वैरी, अधिकारी और सैनिक, दोनों मुक्त कर दिये गये और अपने घरों को धन, भोजन और अन्य उपहारों सहित भेज दिये गये। मराठे सिपाही जो इतनी वीरता से लड़े थे पुरस्कृत किये गये; जिन मारे गये वीरों के बड़े लड़के थे उनको अपने पिताओं के स्थानों पर भर्ती कर लिया गया; जिनके पुत्र न थे उनकी विधवाओं को पेंशनें दे दी गयीं जो उनके वेतन की आधी थीं। आहतों को, उनकी चोटों की कठोरता के अनुसार, २५ से २०० होन पुरस्कार दिये गये। अधिकारियों को हाथी, घोड़े, परिधान, रत्न और भूमि के अनुदान दिये गये। (सभा ०२१)

१२. **अफजलखाँ के विषय में दन्तकथाएँ**—अफजलखाँ के दारुण भाग्य ने अपने देश में तथा वैरियों के देश में जन-मन को गहराई से स्पंदित कर दिया। बीजापुर नगर के निकट उसके गाँव अफजलपुरा में दुखद दन्तकथा चल पड़ी कि प्राणघाती अभियान में जाने से पहले उसे अपने जीवन के अन्त का पूर्व-बोध हो गया था और उसने अपनी समस्त ६३ पत्नियों को दफन करवा दिया था जिससे वे उसकी मृत्यु के पश्चात अन्य मनुष्यों के हाथ न पड़ जायँ। किसान उस उच्च भूमि को अब भी बताते हैं जहाँ से मनुष्य की ईर्ष्या के ये अभागे शिकार नीचे जल-कुण्ड में फेंक दिये गये, वह जलाशय जिसमें से डूबी हुई लाशें अंकुड़ियों की सहायता से निकाली गयीं, वे स्थान जहाँ वे एकत्र की गयीं और ६३ कब्रें एक ही रूप, आकार और एक ही समय की जो उसी ऊँचे स्थान पर व्यवस्थित कतारों में एक-दूसरी के निकट बनायी गयीं जिनमें वे दफन की गयीं। उस स्थान पर नितान्त निर्जनता छा गयी है। जहाँ एक समय उसका महल अपने बहुल जनों सहित खड़ा था, वहाँ अब यात्री लम्बी घास, काँटेदार झाड़ियाँ और टूटे-फूटे भवन के एकाकी सूनेपन को देखता है, जो नष्ट महानता के उपयुक्त प्रतीक हैं। केवल एक ही प्रकार का जीवन देख पड़ता है और वह है कोई एकाकी पक्षी, जो असामान्य मानवीय आगन्तुक की उपस्थिति से सहसा चौंक पड़ता है।[१५] अन्य दन्तकथाओं के अनुसार अपशकुन शिवाजी के विरुद्ध अभियान में उसके पीछे-पीछे चले। (पोवाड़ा, ७, ११)

---

[१५] अफजलपुरा की यह छवि थी जब मैं वहाँ अक्तूबर, १९१६ में गया। फ्रेंच यात्री आबे केरी (Abbe Carre), जो इस स्थान पर १६७३ में गया, लिखता है कि उसने यहाँ अनेक कारीगरों को पत्थर काटते हुए देखा जो अफजलखाँ की कब्र में लगने को थे और उसे (यह देखकर) "आश्चर्य हुआ कि समाधि-लेख में उसके हरम की उन (२००) स्त्रियों का भी उल्लेख था जिनके सिर उसने कटवा डाले थे।" ('वोयेज' २. ७६ और ११)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अफजल के विनाश पर मराठों में अति हर्षोल्लास मनाया गया; यह उनकी राष्ट्रीय स्वतन्त्रता का प्रारम्भ था। बीजापुर की पराजय पूर्ण हो गयी—सेनापति मारा गया, उसकी सेना का नाश हो गया और नरमेध तथा लूट का माल दोनों की दृष्टि से विजय पूर्ण हो गयी। महाराष्ट्र के जन-मानस ने इस घटना को अपने इतिहास की अत्यन्त जाज्वल्यमान घटना माना। भ्रमणशील चारणों (गोंधाली) ने लोक-इच्छा के अनुसार विजय के उपलक्ष में गीतों की रचना की। उनमें से सबसे पहला तथा सबसे अधिक मूल्यवान खो गया है (केवल दो पंक्तियाँ शेष बची हैं)। दूसरी कविता, जो बहुत बाद की है और नितान्त अविश्वसनीय है, सुरक्षित है, परन्तु उसमें संघर्ष का रूप होमर के युद्ध से मिलता-जुलता है और उसमें अलौकिक साधनों और ब्यौरों का समावेश है। मराठों का प्रत्येक वर्ग, शम्भूजी के दरबार के अधिकारियों से लेकर उनके शिविरों के सैनिकों और खेड़ी के किसानों तक हर एक मनुष्य इन चारणों का स्वागत करता था और वे अपने राष्ट्रीय वीर पुरुष की अथवा महान विजय की इस कहानी को सुनने के लिए एकत्र हो जाते थे, जो सजीव ब्यौरे से भरपूर थी और जिसके द्वारा पूरा दृश्य उनकी आँखों के सामने फिर मूर्तिमान हो उठता था। गीत (पोवाड़ा) की छोटी स्वरमय पंक्तियाँ पूरे दृश्य का सजीव रूप सामने खड़ा कर देती थीं—सैनिकों का प्रस्थान, प्रतिपक्षी सरदारों की यात्राएँ, अपशब्दों का आदान-प्रदान (महाभारत की शैली में), मृत्यु-संघर्ष, पार गाँव की लड़ाई, और मराठा सेना की विजय। जैसे-जैसे चारण की गाथा में पूरे संघर्ष का वर्णन शीघ्रतापूर्वक एक स्तर से दूसरे स्तर पर आगे बढ़ता था, श्रोतागण दत्तचित्त होकर उसको सुनते थे; उनका रक्त-संचालन गीत की पंक्तियों के अनुरूप होता था और ज्यों-ज्यों वास्तविक कूच अथवा युद्ध की भावना से वे प्रभावित होते थे उनमें आवेश की मात्रा बढ़ती जाती थी।

मराठों की दृष्टि में अफजल से युद्ध सदा ही राष्ट्रीय मुक्ति और मंदिरों के विरुद्ध धर्म-युद्ध के रूप में प्रतीत होता है। उनकी निगाह में अफजलखाँ एक निर्भीक दुष्ट मनुष्य का प्रतीक है, जिसमें कपट और दुष्टता दोनों का समावेश है, और जो ईश्वर और मनुष्य दोनों का एक समान वैरी है। उनके इतिहासकारों ने आरम्भ से ही इस घटना में हत्या का कोई तत्त्व नहीं देखा है, परन्तु सदैव इसे बुद्धिमत्ता, साहस और स्फूर्ति का उदाहरण बताया है जिनके द्वारा उनके राष्ट्रीय वीर पुरुष ने अपने जीवन के प्रति एक कपटपूर्ण षड्यन्त्र का निराकरण किया, कपट को उल्टे षड्यन्त्रकारी के सिर पर मढ़ा और उनके देवताओं के मंदिरों की तोड़फोड़ का बदला लिया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अफजलखाँ पर विजय (१० नवम्बर, १६५९) और उनकी सेना के विनाश के उल्लास में मराठे दक्षिण कोंकण और कोल्हापुर जिलों में घुस पड़े, पन्हाला किले पर अधिकार किया, बीजापुर की एक अन्य सेना को पराजित किया और बहुत-से स्थानों को जीता (दिसम्बर, १६५९—फरवरी १६६०)[१६] जिनका वर्णन अध्याय १० में किया जायगा। परन्तु अगले मार्च में ही उनके वैरियों की अति शक्तिशाली संयुक्त सेनाओं ने शिवाजी के राज्य पर भयानक आक्रमण किया।

परिशिष्ट

अफजलखाँ कांड

अफजलखाँ का मारा जाना कपटपूर्ण हत्या था, अथवा शिवाजी की ओर से आत्मरक्षा का कार्य था? ऐतिहासिक स्रोतों का कोई सावधान विद्यार्थी इस बात से इनकार नहीं कर सकता कि अफजलखाँ भेंट के समय शिवाजी को बन्दी बनाना अथवा मार डालना चाहता था। नितान्त समसामयिक और पक्षपात-रहित अंग्रेजी कोठी के अभिलेख (राजापुर पत्र, दिसम्बर १०, १६५९) में लिखा है कि अफजलखाँ को उसकी सरकार ने आदेश दिया कि "उसके प्रति मित्रता के बहाने बनाकर" शिवाजी को पकड़ लिया जाय, क्योंकि वह हथियारबन्द सेना के बल से नहीं रोका जा सकता था, और शिवाजी ने खान के विश्वासघात की योजना की पूर्व-सूचना पाकर विचार किया कि यह छल और धोखा उल्टे खान के ही सिर पर पड़े। यह बात मराठी इतिहासों से बिलकुल मेल रखती है कि अफजल के अधिकारियों से शिवाजी के गुप्तचरों को यह मालूम हुआ कि आयोजित भेंट के समय अफजल का विचार उन्हें कपट से गिरफ्तार करना है और यह कि अफजल के दूत कृष्णाजी भास्कर को अपने स्वामी के गुप्त इरादे का भंडाफोड़ करने के लिए प्रवृत्त किया गया।

भेंट के समय पहला वार किसने किया? पुराने मराठा जाति के इतिहासकार (जिनका वर्णन अंग्रेजी शिक्षा-प्राप्त बीसवीं शताब्दी के राष्ट्रीय वीर के पक्षपोषकों से भिन्न है) सब कहते हैं कि वह अफजल था। ये वास्तविक पुराने इतिहासकार, जब कभी उन्हें यह मालूम होता है कि शिवाजी वास्तव में अपराधी था, सदा ही उस पर हत्या और छल का आरोप लगाने से नहीं झिझकते।

---

१६ 'शिवा भारत' में इन कार्रवाइयों का तथा अफजलखाँ के विरुद्ध युद्ध का विस्तृत और रोमांचकारी वर्णन किया गया है जिसे, उस कविता के स्वरूप के कारण, मैं ऐतिहासिक मानने को तैयार नहीं हूँ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

एक आमन्त्रित अतिथि की शिवाजी द्वारा कथित हत्या के विरुद्ध ग्रांट डफ की पुस्तक में सार्वजनिक रोष उत्पन्न होने से बहुत पहले ही उन्होंने लिखा था। अतएव यह हठ करना असंगत होगा कि अफजल द्वारा पहले आक्रमण करने की कथा वर्तमान मराठों की सूझ है जबकि अंग्रेजी शिक्षा ने उनके अन्तःकरण को पूर्व-नियोजित राजनीतिक हत्या के विरुद्ध जागरूक कर दिया। कम से कम सभासद (१६९७) और वाकनिस (?१६८५) पर यह सन्देह नहीं किया जा सकता कि उन्होंने इतिहास को गलत करके अपने वीर के चरित्र की लीपापोती की हो। यह कहकर कि अफजल ने पहले आक्रमण किया, वे पुरानी परम्परा का वास्तविक रूप उपस्थित कर रहे हैं न कि आधुनिक राष्ट्रीय मनगढ़न्त कथा का अभिलेखन।

भेंट में जाने से पूर्व शिवाजी की अपने तन की पूर्ण रक्षा करना तथा अफजल की सेनाओं के चारों ओर अपनी सेना को ताक में लगाना इस बात के सबूत नहीं माने जा सकते कि उसका उद्देश्य धोखा देना था। गुप्त हत्या पतनोन्मुख और क्षीण राजघरानों का प्रिय हथियार है और इस समय से पूर्व दिल्ली के सुल्तानों में इस प्रकार की अनेक हत्याएँ हो चुकी थीं जैसा कि मैंने 'माडर्न रिव्यू' (Modern Review) खंड १, १९०७, पृष्ठ ४४१ में दिखाया था। शिवाजी को पूरा विश्वास था—और इसका प्रबल कारण था, जैसा हम जानते हैं—कि अफजल छल और कपट का सहारा लेना चाहता था। उनमें सामान्य बुद्धि न मानी जाती यदि वह अपनी जान बचाने के लिए इन सतर्कताओं से काम न लेते।

एक मित्र (प्रोफेसर ए० रहमान) ने मुझसे पूछा है, "यदि अफजल कपट से काम लेना चाहता था तो उसने अपनी सेना को आक्रमण करने के लिए अथवा अपनी रक्षा करने के लिए तैयार क्यों नहीं रखा?" मेरा उत्तर यह है कि अफजल को विश्वास था कि शिवाजी की मृत्यु उसकी नवीन प्राप्त की हुई शक्ति का तुरन्त अन्त कर देती और उसकी नेताविहीन सेना पर आक्रमण करने की आवश्यकता ही न रह जाती। इसके अतिरिक्त वह वैरी की स्थिति और शक्ति के विषय में नहीं जानता था और वह नहीं जानता था कि दो बड़ी मराठा सेनाएँ नेताजी और मोरोपन्त के नेतृत्व में बहुत शीघ्र चलकर उसके अति निकट ही मौजूद थीं। वह अपनी सीरा के राजा कस्तूरी रंगा के विरुद्ध अपने दुष्ट विप्लव को उसी सफलता के साथ दुहराना चाहता था। अली आदिलशाह द्वितीय के अधिकारिक इतिहास के लेखक नूरुल्ला ने बीजापुर सरकार द्वारा अफजलखाँ को दी गयी हिदायतों को इस प्रकार वर्णित किया

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

है। अली आदिलशाह ने यह देखकर कि जब तक कि विधर्म की झाड़ी वैरी की नष्ट करने वाली तलवार की अग्नि में न भस्म कर दी जायगी इस्लाम मजहब का पनपना मुश्किल है, उसने अफजखाँ को १०,००० घुड़सवारों सहित नियुक्त किया कि वह उस दुष्ट मनुष्य शिवाजी को सजा दे और उसे नष्ट कर दे (तम्बीह व इस्तिसाले आन शकी)·····साथ ही अफजलखाँ को विदा करते समय आदिलशाह ने उसको हिदायत की कि यदि बीजापुरी सेनाओं से दबकर शिवाजी अपनी कपटपूर्ण प्रथा के अनुसार शान्तिपूर्ण अधीनता स्वीकार करे तो खान को उसकी बात नहीं माननी चाहिए, केवल एक नीति अपनानी चाहिए कि उसके 'जीवन' की फसल पर 'मृत्यु' की आग फेंक दे। (मेरी फारसी पाण्डुलिपि, पृष्ठ ७५-८०)

इसको उस फरमान से भी बल मिलता है जिसे आदिलशाह ने १६ जून, १६५६ को कान्होजी जेधे को भेजा था और उसे आज्ञा दी थी कि एक राज-भक्त अधीन व्यक्ति के रूप में वह निजामशाही कोंकण के नये सूबेदार अफजल खाँ की सहायता, शिवाजी को हराने और नष्ट करने में, करे, और शिवाजी के अनुगामियों को शरण न दे वरन उन्हें तुरन्त मार डाले। (शिवाकालीन पत्र सार, १. संख्या ७७४)

निजाम-उल-मुल्क के प्रसिद्ध मन्त्री और इतिहासकार मीर आलम ने इस घातक भेंट का निम्न वर्णन किया है :

जैसे ही अब्दुल्लाखाँ शामियाने में घुसा शिवाजी उससे मिलने के लिए आया और उसने 'सलाम' की। अब्दुल्ला ने, जो उसे नहीं जानता था, अपने दीवान कृष्णाजी से पूछा, "क्या यही आदमी शिवाजी है ?" यह मालूम करके कि वही था, उसने पूछा, "तुमने देश को क्यों उजाड़ दिया और हमारे किलों पर क्यों अधिकार कर लिया ?" शिवाजी ने उत्तर दिया, "इससे पूर्व देश और किलों पर उच्छृङ्खल मनुष्य और लुटेरों का अधिकार था, परन्तु मैंने समस्त अव्यवस्था को ठीक कर दिया है और मेरी अच्छी सेवा व परिश्रम से वे समृद्ध-शाली हो गये हैं। इस अच्छी सेवा के लिए मुझे प्रशंसा मिलनी चाहिए न कि निन्दा और दंड।" खान ने उत्तर दिया, "बहुत अच्छा, जो कुछ हो गया वह हो गया। तुम अपने अधिकृत सब किलों को मुझे सौंप दो और बादशाह से भेंट के लिए मेरे साथ चलो।" शिवा ने उत्तर दिया, "यदि इस आशय का एक शाही पत्र ('फरमान') मेरे नाम से मिल जायगा तो मैं उसे सिर पर रखूँगा और आज्ञा का पालन करूँगा।"

इस पर दीवान कृष्णाजी तुरन्त बोला, "तुम अब खाँ साहब की रक्षा में

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हो; अतएव, पहले अपने अपराधों के लिए उनसे क्षमा माँगो और इसके पश्चात् अपने नाम से शाही फरमान (राजाज्ञा) की आशा करो।" शिवा ने उत्तर दिया, "खान और मैं दोनों बादशाह सलामत के नौकर हैं। खान किस प्रकार मेरे अपराधों को क्षमा कर सकता है ? परन्तु क्योंकि मैं आपकी सलाह की अवहेलना नहीं कर सकता हूँ इसलिए मैं उनकी गोद में अपना सिर रख दूँगा।" ऐसा कहकर उन्होंने खान का आलिंगन किया। परन्तु खान बड़ा हृष्टपुष्ट था और चूँकि उसे वीर होने का गर्व था (निशा-ए-बहादुरी दर सर दाश्त), उसने शिवाजी को गले मिलते समय 'जोर से दबाया' और 'अपनी कमर में बँधी हुई कटार से उस पर आक्रमण कर दिया।' परन्तु चूँकि शिवाजी जंजीर का कवच पहने हुए था, वह चोट खाने से साफ बच गया। शिवाजी ने पैंतरा बदला और अपने बिछुआ (मुड़ी हुई कटार) से अब्दुल्ला की आँतें फाड़ डालीं और उसकी जकड़ से अपने को मुक्त कर लिया। खान ने पेट पर अपना दुशाला लपेट लिया और शिवा के सर पर अपनी तलवार का जोर से प्रहार किया जिससे उसके शिरस्त्राण के दो टुकड़े हो गये और उसके कपाल पर थोड़ी चोट भी आयी। शिवा ने अपनी लम्बी तलवार (पट्टा) से खान के दो टुकड़े कर दिये। यह देखकर कृष्णाजी ने शिवाजी के सिर पर अपनी तलवार से वार किया; इस पर शिवा के साथी येशाजी ने दीवान को मार गिराया। इस गुत्थमगुत्था में दो-तीन प्रहार गोपीनाथ के शरीर पर भी पड़े, परन्तु उसे हानि नहीं हुई। (हदीके-आलम, लिथो, २, २२७)

लिखित अभिलेखों और घटना की सम्भावनाओं से इस बात की पुष्टि होती है कि अफजलखाँ ने पहले वार किया, और शिवाजी ने, बर्क के शब्दों में, 'निवारक हत्या' की। जैसा मैंने 'माडर्न रिव्यू' १९०७ में लिखा था, "यह हीरे से हीरे को काटने का कांड था।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय ४

कठोर युद्ध

(१६६०-६४)

१. शाइस्ताखाँ को शिवाजी के विरुद्ध भेजा जाना।
२. शिवाजी का पन्हाला किले में घिरना।
३. शाइस्ताखाँ का पूना पर अधिकार।
४. शाइस्ताखाँ का चाकन पर कब्जा (१६६०)।
५. शिवाजी की रत्नागिरि जिले पर विजय (१६६१)।
६. शाइस्ताखाँ पर रात्रि में आक्रमण (१६६३)।
७. सूरत का वर्णन।
८. सूरत की अंग्रेजों द्वारा वीरता-पूर्वक रक्षा।
९. सूरत की पहली लूट (१६६४)।
१०. शिवाजी को मारने का प्रयत्न ।
११. धन किस प्रकार वसूल किया गया।
१२. १६६४ में शिवाजी के कारनामे।

परिशिष्ट–सूरत निवासियों की यातनाएँ

१. शाइस्ताखाँ को शिवाजी के विरुद्ध भेजा जाना—जुलाई, १६५९ में औरंगजेब ने अपनी दूसरी ताजपोशी के अवसर पर जो प्रशासकीय परिवर्तन किये उनमें एक शहजादे मुअज्जम की जगह शाइस्ताखाँ को दकन का वाइसराय बनाना भी था। यह योग्य और उत्साही सेनापति मालवा और दक्षिण पर पहले भी शासन कर चुका था और कुछ ही समय पहले उसने औरंगजेब द्वारा गोलकुण्डा के आक्रमण में नाम कमाया था। जो काम उसे सौंपे गये उनमें प्रमुख शिवाजी का दमन करना था। इस कार्य को पूरा करने के लिए उसको सौभाग्य से बीजापुर का हार्दिक सहयोग प्राप्त हुआ। इससे शिवाजी को अपनी सेना दो हिस्सों में विभाजित करनी पड़ी जिसके कारण युद्ध के दोनों ही क्षेत्रों में उन्हें पराजय उठानी पड़ी।

जब शिवाजी ने अफजलखाँ की नायकहीन सेना पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् रुस्तमे-जमाँ और फजलखाँ की सम्मिलित सेना को हरा दिया तथा कोल्हापुर जिले में पन्हाला और रत्नागिरि में बहुत-से स्थानों को अपने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अधिकार में ले लिया, तो अली आदिलशाह द्वितीय ने इस बहादुर विद्रोही का स्वयं ही सामना करना आवश्यक समझा। परन्तु ठीक इसी समय सिद्दी जौहर ने, जो कि एक अबीसीनियाई दास था, बीजापुर को एक पत्र लिखा कि वह शिवाजी को सुल्तान के अधीन कर देगा। सिद्दी जौहर ने कर्नूल की जागीर को हड़प लिया था और वह शाही आधिपत्य को स्वीकार नहीं करता था। उसने यह काम इस शर्त पर किया कि बीजापुर उसकी वर्तमान स्थिति को मान्यता प्रदान कर दे। सुल्तान इसके लिए रजामन्द हो गया और उसने सिद्दी जौहर को सलाबतखाँ की पदवी देकर एक सेना के साथ शिवाजी का दमन करने के लिए भेजा। जौहर ने बड़ी आसानी से मराठों को पन्हाला के किले में खदेड़ दिया (२ मार्च, १६६०) और १५,००० सैनिक शक्ति से किले का घेरा डाल दिया।

२. **शिवाजी का पन्हाला किले में घिरना**—लगभग पाँच महीने तक किले का घेरा चलता रहा। दुर्ग के अन्दर की सेना के लिए आने-जाने के सब रास्ते घिरे हुए थे। शिवाजी ने जब अपने आप को घातक जाल में पाया तो उन्होंने जौहर को एक गुप्त पत्र लिखा जिसमें उन्होंने अपनी रक्षा की याचना की और उसके साथ मेल करने का धोखा किया। इस सम्बन्ध में आवश्यक शर्तों पर निर्णय करने के लिए उन्होंने दुर्ग से बाहर आने की अनुमति माँगी। जौहर, "जो कि मूर्ख और देशद्रोही दोनों ही था," इस चाल को न समझ पाया और जाल में फँस गया; उसने शिवाजी को उनकी रक्षा का वचन दिया तथा उन्हें निरापद मार्ग-यात्रा का विश्वास दिलाया और मन की मन प्रसन्न हुआ कि वह शिवाजी के सहयोग से आदिलशाह से स्वतन्त्र होकर अपने एक निजी राज्य की स्थापना कर सकेगा। अगले दिन अर्धरात्रि के समय शिवाजी अपने दो या तीन साथियों के साथ जौहर से दरबार में मिले। जब दोनों ओर से सहयोग की शपथ ग्रहण करली गयी, तो शिवाजी तुरन्त ही दुर्ग में वापस आ गये और दुर्ग के घिरे रहने का बहाना चलता रहा।

परन्तु बीजापुर की सेना में शिवाजी का एक कटु शत्रु था। अफजल के पुत्र फजलखाँ और उसके एक मुख्य सेवक सिद्दी हलाल ने दुर्ग के घेरे के दबाव को दृढ़ करने का भरसक प्रयत्न किया। परन्तु पन्हाला जैसे बड़े दुर्ग को विजय करना १५,००० सैनिकों के बस की बात न थी, भले ही वे पूरे मनोयोग से कार्य करते। शिवाजी ने अपने आक्रमणों से उनके मोर्चों को तोड़ दिया जिनमें बीजापुर के बहुत-से सैनिकों की जानें गयीं। इसलिए उन्होंने अपनी सेना को दुर्ग से दूर एक सुरक्षित दूरी पर हटा लिया। परन्तु इस प्रकार के रात्रिकालीन आक्रमण निर्णयकारी न बन सके; उनका केवल यह परिणाम हुआ कि घेरा

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अब केवल सामयिक नाकाबन्दी के रूप में हो गया। बीजापुर की सेना घबड़ा गयी और फजलखाँ ने अब शिवाजी का स्वयं सामना करना छोड़ दिया और पास ही में पवनगढ़ के एक दुर्ग पर आक्रमण की कार्यवाही का नियन्त्रण किया। एक निकटवर्ती पहाड़ी टीले पर अपनी तोपें लगाकर कुछ अंग्रेजों की सहायता से वह दुर्ग पर गोलाबारी करने लगा। पवनगढ़ दुर्ग के मराठा अधिकारी ने अपनी रक्षा के लिए शिवाजी पर सहायता के लिए दबाव डाला।

शिवाजी ने देखा कि अधिक विलम्ब करने से उनका इस घातक जाल से बचना असम्भव हो जायगा। पवनगढ़ दुर्ग के हाथ से निकल जाने पर पन्हाला की रसद बन्द करके शत्रु आसानी से उसे अपने अधिकार में ले सकता है। इसलिए एक अँधेरी रात में (१३ जुलाई) वह अपने शेष साथियों को लेकर दुर्ग से बाहर निकल गये। अपनी शेष सेना को दुर्ग में ही छोड़ दिया जिससे कि वह जब तक सम्भव हो उसकी रक्षा करती रहे। दुर्ग से निकलते ही उन्होंने पवनगढ़ दुर्ग के नीचे पड़ी बीजापुर की सेना की खाइयों पर धावा बोल दिया और उसी गड़बड़ के मध्य पश्चिम में स्थित २७ मील दूर स्थित विशालगढ़ के रास्ते पर हो लिये।

उनके छिपकर निकल जाने का पता जल्दी ही लग गया। फजलखाँ और सिद्दी हलाल एक शक्तिशाली सेना लेकर उनका पीछा करने चल पड़े। दिन निकल आया परन्तु भागे हुए व्यक्ति गजापुर तक ही पहुँच पाये, जो गन्तव्य स्थान से अभी आठ मील इधर था, और महताबों की रोशनी की सहायता से बीजापुरी सेना भी उनका पीछा करती रही। शिवाजी के सैनिकों की संख्या उनसे कहीं कम थी, और वे बहुत थक चुके थे। परन्तु सौभाग्य से अब उनका रास्ता एक तंग घाटी से होकर गुजरता था जहाँ से थोड़े-से साहसी सैनिक भी एक बड़ी सेना का मुकाबला कर सकते थे। हरिदास मावल का देशपाण्डे, बाजीप्रभु, उस घाटी के मुख पर आधी सेना लेकर आक्रमणकारियों का मुकाबला करने के लिए रुक गया और शेष सेना को शिवाजी के साथ विशालगढ़ भेजने और शिवाजी के सुरक्षित पहुँचने पर बन्दूक की ध्वनि द्वारा सूचित करने का निश्चय किया गया। बीजापुर की सेना ने बाजीप्रभु पर तीन बार कठोर आक्रमण किये, परन्तु उसने उसे मार भगाया। सूर्योदय से लेकर पाँच घण्टे तक संघर्ष चलता रहा और इसमें बचाव पक्ष के ७०० सैनिक काम आये। तब बन्दूक दागने की आवाज द्वारा शिवाजी के सुरक्षित पहुँचने का संकेत मिला। परन्तु बाजीप्रभु घातक घावों के कारण मृत्यु-शैया पर पड़ा था। उस स्वामिभक्त सेवक ने अपनी जान गँवाकर अपना काम पूरा कर दिखाया था;

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी के सुरक्षित पहुँचने के समाचार से उसको अपने अन्तिम क्षणों में प्रसन्नता प्राप्त हुई। कहा जाता है कि कर्नाटक के बन्दूकचियों ने गोली चलाकर उस रास्ते को अन्त में साफ कर दिया था और बचे हुए मावली सैनिक अपने सरदार के शव को लेकर पहाड़ियों में भाग गये। बीजापुरी सैनिक विशालगढ़ की तरफ भी गये, परन्तु उन्होंने उस भयंकर क्षेत्र में फौजी घेरा डालने के विचार को त्यागने की बुद्धिमानी की। उन्होंने लौटकर पन्हाला पर आक्रमण किया और वहाँ से बीजापुर वापस आ गये।[1]

जब सिद्दी जौहर के विश्वासघात की सूचना अली आदिलशाह के कानों तक पहुँची तो उसके क्रोध का ठिकाना न रहा। वह राजधानी से पन्हाला जिले की ओर "दोनों विद्रोहियों को सजा देने के लिए" चल पड़ा (५ अगस्त)। वह मिराज में ठहरा और अपनी सेना के अग्रभाग को पन्हाला की ओर रवाना किया। जौहर को अब निश्चय हो गया कि वह अपने स्वामी को और अधिक समय तक मूर्ख नहीं बना सकता था। इसलिए उसने मराठों को पन्हाला त्यागने को (२२ सितम्बर) मजबूर किया। इसके शीघ्र पश्चात ही जौहर ने आदिलशाह के प्रतिनिधियों को वह दुर्ग सौंप दिया।

---

[1] पन्हाला का घेरा, फोस्टर, १०. २५१, ३७०-३८७; तीरीखे-अली द्वितीय ८२-९३; ब० स० ३७१-३७६; ९१ क० ब० ३७-३९; जेधे ने तारीखें इस प्रकार दी हैं: "२ मार्च, शिवाजी एक बार फिर पन्हाला में आये और सिद्दी जौहर ने उन्हें घेर लिया। १३ जुलाई, शिवाजी पन्हाला से उतरकर खेलना को गये, जौहर की सेना ने उनका पीछा किया, बाजी-प्रभु का वध कर दिया गया; २२ सितम्बर, शिवाजी ने पन्हाला को जौहर को अर्पण कर दिया और उसके साथ सुलह कर ली।"

मैं अंग्रेजी कोठी की दी हुई संख्या को स्वीकार करता हूँ जिसके अनुसार १५,००० घेरा डालने वाले थे और पाँच या छह हजार आदमी घिरे हुए थे। परन्तु मराठों ने ८०,००० बीजापुरी और ६०,००० मावली बताकर अतिशयोक्ति की है। दिलकशा, १३७ के अनुसार शिवाजी के पास घेरे जाने के समय केवल ३००० घुड़सवार और ५००० पैदल सैनिक थे। उस समय जौहर ने अपना मुख्य कार्यालय कोल्हापुर में स्थापित किया था। अंग्रेज व्यापारी रेविंगटन ने उसको कुछ तोपें और गोला-बारूद बेचने का प्रयत्न किया और अप्रैल मास के पूर्व में जौहर के डेरे में कुछ एक छोटी तोप (मॉर्टर) और कुछ गोले लेकर स्वयं गया। उसने बतलाया कि "ये गोली आदि घेरे को तोड़ने में सबसे अधिक मुख्य काम करेंगी।" परन्तु प्रयोग करने पर तोप का वांछित प्रभाव न पड़ा, और यद्यपि अंग्रेज अक्तूबर, १६६० तक पन्हाला और कोल्हापुर में ठहरे रहे, परन्तु जौहर ने गोलों आदि का पैसा देने से मना कर दिया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अपने राज्य के धुर दक्षिण भाग में पन्हाला के हाथ से निकल जाने के एक महीने बाद शिवाजी को उत्तरी भाग में संकट का सामना करना पड़ा। १५ अगस्त को मुगलों ने उनके चाकन के दुर्ग पर, जो पूना से १८ मील दूर उत्तर में था, अपना अधिकार जमा लिया। इसको समझने के लिए हमको उस क्षेत्र में आरम्भ से ही लड़ाई के सिलसिले को समझना पड़ेगा।

३. **शाइस्ताखाँ का पूना पर अधिकार**—१६६० के शुरू में शाइस्ताखाँ ने शिवाजी के विरुद्ध उत्तर से आक्रमण की शुरूआत की और इसी समय पर दक्षिण में मराठा राज्य पर बीजापुर से आक्रमण की व्यवस्था कर दी। २५ फरवरी को एक शक्तिशाली सेना लेकर शाइस्ताखाँ पूना जिले के पूर्वी भाग की सीमा के किनारे-किनारे दक्षिण की ओर बढ़ा, और दक्षिण तथा उत्तर में उन सब मुख्य स्थानों पर व्यवस्थित रूप से कब्जा करता आया जहाँ से पूना जाने वाले रास्तों की रक्षा की जाती थी।

पहले तो उसके सामने मराठे बिना लड़े ही पीछे हटते गये। सोनवादी (धोंद रेलवे स्टेशन के निकट) और सूपा (धोंद के दक्षिण-पश्चिम में १६ मील दूर) के रास्ते होता हुआ वह ५ अप्रैल को बारामती (सूपा से दक्षिण-पूर्व में १८ मील दूर) पहुँचा। अन्त के दो स्थानों पर कच्ची मिट्टी के बने दो दुर्ग थे जिनको दुश्मन ने खाली कर दिया था। इसके पश्चात् वह होल होता हुआ नीरा नदी की घाटी से पश्चिम की ओर बढ़ा और १८ अप्रैल को पूना के दक्षिण में स्थित २६ मील दूर शीरवाल में पहुँचा। शाइस्ताखाँ ने एक योग्य सेनापति की भाँति इन सब बाहरी चौकियों पर अपनी सेना की टुकड़ियाँ तैनात कर दीं जिनका काम उसकी संचार-व्यवस्था बनाये रखना और दुर्गों पर अधिकार जमाये रखना था। शीरवाल से कुछ सैनिक भेजकर राजगढ़ (पश्चिम में २२ मील) के आसपास के गाँवों पर भी उसने अपना कब्जा कर लिया।

शीरवाल से मुगल सेना नीरा नदी के किनारे-किनारे १६ मील उत्तर की ओर शिवापुर (खेद के पास) पहुँची और वहाँ से ठीक पूर्व की ओर गरारा होती हुई १ मई को सासवाद पहुँची (जो शिवापुर से १३ मील पूर्व में और पूना से १८ मील दूर दक्षिण-पूर्व में है)।

मुगलों के यहाँ तक बढ़ने का किसी ने विरोध न किया और मराठे केवल दूर रहकर शत्रु की सेना और घोड़ों आदि के लिए रसद की प्राप्ति में ही बाधा डालते रहे। उन्होंने मुगलों का पहला सामना शिवापुर से गरारा जाने वाले मार्ग के निकट किया। ३० अप्रैल को ३००० मराठा घुड़सवारों ने राव भावसिंह के नेतृत्व में मुगल सेना के पिछले भाग पर आक्रमण करने की ठानी। परन्तु

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मुगलों ने उन पर प्रत्याक्रमण कर दिया और एक लम्बे युद्ध के बाद उनको पराजित कर दिया ।

सासवाड़ से मुगलों की एक छोटी-सी टुकड़ी ने पुरन्दर दुर्ग के पास बसे गाँवों पर धावा बोल दिया । शत्रु के ३००० सैनिकों ने उन पर हमला किया । परन्तु अपने पक्ष के ५० आदमियों के मारे जाने पर भी उन्होंने डटकर मुकाबला किया । उनकी मदद के लिए और सेना आ गयी और दुश्मन को हराकर उस दर्रे तक खदेड़ दिया जहाँ पर पुरन्दर की तोपें लगी थीं । इस विजय से मुगलों का उत्साह बढ़ा और दुर्ग की दीवारों से बरसने वाली गोलियों के सामने भी उन्होंने एक ही धावे में मार्ग को निर्विरोध बना दिया, और इससे हटकर शत्रु की एकत्रित सेना को तितर-बितर कर दिया । विजयी मुगल शाम को लौटकर सासवाड़ में अपने डेरों में आ गये । वहाँ से चलकर राजवा में चार दिन ठहरकर उन्होंने ९ मई को पूना में प्रवेश किया ।

४. शाइस्ताखाँ का चाकन पर कब्जा (१६६०)—अपनी सेना सहित शाइस्ताखाँ ने सारी वर्षा ऋतु पूना में ही रहकर व्यतीत करने का निश्चय किया था । उस समय पूना केवल एक छोटा-सा खेड़ा था । परन्तु उसके वहाँ आने से पहले ही शत्रु ने पूना और चाकन के आसपास अनाज और चारे को बिलकुल नष्ट कर दिया था एवं निवास-स्थानों को भी मिटा दिया था । और अब पूना और मुगल सीमा के बीच बहने वाली नदियों में बाढ़ आ गयी थी, इसलिए उसके शिविर पर कोई रसद न पहुँच सकी । अतएव अनाज और चारे की कमी के कारण उसकी सेना को बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ा । इसलिए उसने अपने शिविर को पूना से चाकन ले जाने का निश्चय किया । चाकन १८ मील उत्तर की ओर था और अहमदनगर और मुगल राज्य के निकट होने के कारण अब उसको रसद आसानी से प्राप्त हो सकती थी । (आ० ना० ५८४–'५)

चाकन युद्धनीतिक दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण स्थान है । पूरब की ओर भीमा और घोद नदियाँ इसको शाही क्षेत्र से अलग करती हैं, और पार करने के लिए कोई दुर्गम पहाड़ी मार्ग नहीं हैं । इसके अधिकार में आने से शाइस्ताखाँ अहमदनगर के निकट आ गया जहाँ से उसके आने-जाने और रसद पहुँचाने का काम अधिक सुविधाजनक हो गया और अब उत्तर की ओर से उसके शिविर पर आक्रमण का भय न रहा । इसके अलावा चाकन भोरघाट मार्ग से केवल ३१ मील दूर पूरब में है और अहमदनगर से कोंकण जाने का सबसे छोटा रास्ता यहीं से होकर गुजरता है ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१९ जून को पूना से चलकर शाइस्ताखाँ २१ तारीख को चाकन के समीप आ गया। वहाँ उसने दुर्ग का निरीक्षण किया और घेरे की दशा में अधिकारियों के काम में बँटवारा किया। चाकन का दुर्ग एक वर्गाकार अहाते के रूप में है जिसके सामने का भाग आगे की ओर निकला हुआ है और चारों कोनों पर बुर्जियाँ हैं। उसकी दीवारें ऊँची हैं और किले के चारों तरफ ३० फुट गहरी और १५ फुट चौड़ी खाई है। उसका एक ही प्रवेश-द्वार है जो पूरब की तरफ है और अन्दर जाने का मार्ग ५ या ६ फाटकों में से होकर है। दीवारों के परे किसी बहुत पुराने मिट्टी के किले के खण्डहर हैं जिसके चारों ओर खाई है। (बम्बई गजेटियर १८, भाग ३, पृष्ठ १२१; इण्डियन एण्टीक्वेरिटी, २. ४३, ४. ३५२)

शाइस्ताखाँ ने अपनी सेना के चारों प्रभागों (डिवीजनों) की रक्षाबन्दी करने के पश्चात दुर्ग की दीवारों की तरफ खाइयाँ बनायीं, स्थान-स्थान पर चबूतरे बनाये और दक्षिण में स्थित मुगल दुर्गों से लायी गयी भारी तोपें उन पर जमा दीं। यद्यपि वर्षा-ऋतु की घोर वर्षा ने उसके इस कार्य में बाधा डाली और रक्षा करने वाले उन पर गोले बरसाते रहे, तथापि वह घेरा डालने के काम को अधिक तेज करता रहा। ५४ दिन तक कठिन परिश्रम करने के पश्चात् अपने स्थान से दुर्ग के उत्तर-पूर्वी कोने की बुर्ज तक एक सुरंग तैयार कर दी और १४ अगस्त, १६६० ई० को शाम के ३ बजे उसमें बारूद से विस्फोट कर दिया। वहाँ का काम और रक्षा-पुरुष खत्म हो गये; तुरन्त ही मुगलों ने आक्रमण भी कर दिया। परन्तु मुगलों को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि वहाँ पर शत्रु ने मिट्टी का एक ऊँचा पुश्ता बना दिया था; जिसकी वे रक्षा कर रहे थे और जिसके पीछे छेद से उन्होंने मुगलों पर रॉकट, बन्दूक की गोलियाँ, और पत्थरों से प्रहार किये। यद्यपि आक्रामकों के बहुत-से सैनिक खेत रहे तो भी वे रात भर रक्त-रंजित भूमि पर जमे रहे।

अगली सुबह (१५ अगस्त) को उन्होंने फिर आक्रमण किया और दीवार पार करके मुख्य किले पर कब्जा कर लिया, बहुतों को मौत के घाट उतार दिया और बहुत-से रक्षा के लिए छिप गये। थोड़ी ही देर में किले का शेष भाग भी समर्पित हो गया। परन्तु साम्राज्यवादियों को अपनी विजय की भारी कीमत चुकानी पड़ी। उनके २६८ आदमी मारे गये और ६०० घायल हुए (आ० ना०, ५८५-५८८; टेवरनियर, १. ४०९ संदिग्ध)

शिवाजी ने फिरंगजी नरसाला को, जो कि शाहजी के समय का एक पुराना अधिकारी था, चाकन की रक्षा करने के लिए छोड़ दिया था और उसको आदेश

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दिया गया कि जब तक सम्भव हो वह सामना करता रहे और केवल अत्यन्त कठिनाई के समय में ही हथियार डाले, क्योंकि शिवाजी पन्हाला के निकट बीजापुर से युद्ध कर रहे थे और १४० मील दूर उत्तर में चाकन के लिए कोई सहायता पहुँचाना उनके लिए सम्भव न था। करीब दो महीने तक फिरंगजी ने वहाँ की रक्षा की और इस बीच में घेरा डालने वालों पर "लगातार गोला, पत्थर आदि की वर्षा करता रहा।" आक्रमण के दोनों दिन वह जमीन के एक-एक इंच भाग की रक्षा करता रहा, परन्तु अब सहायता से निराशा हो जाने से उसने सम्मानपूर्वक अपने शत्रु की अधीनता स्वीकार कर ली। शाइस्ताखाँ ने वीर किलेदार की बड़ी प्रशंसा की और उसको मुगल राज्य की सेवा में एक अच्छे वेतन पर नौकरी करने के लिए आग्रह किया। परन्तु फिरंगजी ने नमकहरामी करने से इनकार कर दिया और उसको अपनी सेना सहित अपने स्वामी के पास जाने की इजाजत मिल गयी।

५. १६६१-६३ की लड़ाइयाँ और शिवाजी की रत्नागिरि जिले की विजय— शिवाजी की पन्हाला और चाकन में हार होने के पश्चात १६६० ई० के अन्तिम तीन महीनों में कोई लड़ाई नहीं हुई। यह समय उन्होंने शान्ति से राजगढ़ में व्यतीत किया। इस समय में वह यह योजना बनाने में व्यस्त रहे कि युद्धक्षेत्र को बीजापुरी क्षेत्र के कोंकण नामक एक अन्य भाग में अथवा सह्याद्रि श्रेणी के पश्चिमी भाग में अन्तरित कर दें क्योंकि वहाँ अनेक छोटे-छोटे राजा और बीजापुर के नगर गवर्नर राज करते थे और उनका शासन बहुत कमजोर था। उस प्रदेश में एक भी शक्तिशाली वायसराय नहीं था जिसकी अपनी सेना हो और जो वहाँ के स्थानीय जागीरदारों में एकता करके सफलतापूर्वक शिवाजी जैसे आक्रमणकारी का मुकाबला कर सके। इसके विपरीत, शिवाजी को स्वयं पर अधिकार था और आदेश तथा नीति के सहारे अपने सब साधनों को किसी भी दिशा में लगा सकते थे।

चाकन के हाथ में आने के पश्चात शाइस्ताखाँ ने पूना लौटकर (१६६० में अगस्त के अन्तिम दिनों में) वर्षा ऋतु का समय क्रियाहीनता में बिताया और न वह और अधिक मराठा किले जीतने का इच्छुक ही था क्योंकि चाकन के छोटे-से और अपेक्षाकृत कमजोर किले को लेने के लिए, जो कि मैदान पर बना हुआ था, उसे अपने लगभग ६०० आदमियों को गँवाना पड़ा। उसने अपना समय परेन्दा के बीजापुरी सेनापति गालिब को इस बात के मानने पर अधिक लाभपूर्वक बिताया कि वह उस दुर्ग को एक बड़ी कीमत पर औरंगजेब को दे दे। शहंशाह ने शर्तों को स्वीकृति दे दी और मुगल सेना को बड़ी संख्या

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

में पूना से हटाकर परेन्दा के किले का अधिकार सँभालने के लिए भेजा (२० नवम्बर), तथा आदेश दिया कि सम्भावित विरोध को समाप्त कर दिया जाय, और आसपास के क्षेत्र पर अधिकार कर लिया जाय।

अगले वर्ष (१६६१) के आरम्भ में शाइस्ताखाँ ने अपना ध्यान कल्याण जिले या उत्तरी कोंकण की ओर दिया। यहाँ पर स्माइल के अधीन ३००० सैनिकों की एक सेना गत अप्रैल से कार्यरत थी और इसने देश के एक भाग पर अपना अधिकार जमा लिया था, यद्यपि मुख्य शहर और दुर्ग (जैसे कल्याण) पर अभी विजय नहीं प्राप्त की थी। यह भाग सलाबतखाँ दकनी नामक एक फौजदार के अधीन कर दिया गया था। उसके पास मित्र मराठों की भी एक सैनिक टुकड़ी थी जिसमें बाबाजी भोंसले, रघूजी, शम्भूजी कावजी तथा बाबाजी राम (अथवा राणा) होनप—पूना का एक भूतपूर्व देशपाण्डे—थे। (आ० ना० ५९४; ९१ क० ब० ४२)

परन्तु स्थानीय सैनिक अधिक काम न कर सके। कोंकण की मुगल विजय को पूरा करने और शिवाजी की शक्ति को बिलकुल नष्ट करने के लिए एक बड़े सेनापति के अधीन देश में साम्राज्य की बड़ी सेनाएँ भेजने की आवश्यकता थी। इस काम के लिए कारतलबखाँ नामक एक ऊजबक को चुना गया जो धरमात की लड़ाई (१६५८) में ही 'चार-हजारी' के पद पर पहुँच चुका था और जिसने हाल ही में परेन्दा जिले की लड़ाई में एक सैनिक प्रभाग की कमान सम्भाली थी। शाइस्ताखाँ ने उसके साथ अपने बहुत-से राजपूत और मुसलमान मातहत और स्थानीय मित्र भेजे (जैसे, राय बाघिनी, जो बरार में माहुर के जागीरदार ऊदाजी राम की वीरांगना विधवा थी)।

पूना से लोहगढ़ होकर उम्बर्खिड (पेन के ठीक १५ मील पूर्व में) से कूच करता हुआ कारतलबखाँ कोंकण में एक दर्रे से आया जो भोरघाट से कुछ दक्षिण में था। जबकि उसके सिपाही तोपें और अन्य सामान लेकर कष्ट और भय सहित घने जंगलों, खड़ी चट्टानों; तंग और टूटी-फूटी सड़कों से गुजरने की कोशिश कर रहे थे तो शिवाजी गुप्त रूप से और तेजीसे चलकर उन तक आ गये और उनके आगे बढ़ने और पीछे हटने के रास्तों को रोक दिया। कारतलबखाँ को इन कठिन परिस्थितियों में लड़ाई लड़नी पड़ी और उसने भारी हानि उठाई। उसकी फौज प्यास से नष्ट होने वाली थी और उसमें चलने की शक्ति नहीं रह गयी थी। निराश होकर उसने शिविर का अपना सारा साज-सामान छोड़ दिया और शिवाजी को बहुत-सा निस्तार धन देने के बाद वह अपनी फौज को सुरक्षित वापस ले आया (३ फरवरी, १६६१)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

विजेता शिवाजी ने अब अपनी फौज को दो भागों में विभाजित किया। एक सेना को नेताजी के अधीन मुगलों का मुकाबला करने के लिए छोड़ा, और दूसरी सेना को स्वयं लेकर उन्होंने कोंकण में बीजापुरी क्षेत्र पर "पन्हाला की हानि का बदला लेने के लिए" आक्रमण किया। इस प्रकार कल्याणी जिले को नये वैरियों से स्वतन्त्र करने के पश्चात शिवाजी इसे छोड़कर दक्षिण की तरफ बढ़े और आसानी से एक शहर के बाद दूसरे शहर पर कब्जा करते चले गये। इस प्रकार उनका अधिकार दाँदा-राजपुरी से लेकर खारेपत्तन तक सारी तटीय पट्टी पर हो गया। दक्षिण में आगे की ओर गोआ तक सारा देश उनकी दया पर निर्भर था, परन्तु उन्होंने इसको अगले वर्षाहीन मौसम के लिए छोड़ दिया। उनकी गति इतनी तीव्र थी और स्थानीय अधिकारी आपस में इतने एकतारहित और रक्षा के लिए इतने अनुद्यत थे कि उनका कोई विरोध न हुआ। इतना ही नहीं, राजा और नगरों के गवर्नर मराठों के आक्रमण से भयभीत होकर भाग गये। उनमें से समझदार व्यक्तियों ने यह सोचकर कि उनसे लड़ना अहितकर है और बीजापुर से सहायता मिलने की आशा नहीं है, उनसे सुलह कर ली और उनकी अधीनता स्वीकार कर ली तथा उनको कर देना मान लिया।

निजामपुर (जंजीरा के ठीक पूरब में २२ मील दूर) पर हमला हुआ और दाभोल के बन्दरगाह को वहाँ के सरदार दालवे से छीनकर शिवाजी ने अपने एक प्रतिनिधि के अधिकार में दे दिया (फरवरी, १६६१)। पल्लीवाना के राजा यशवन्तराव ने पन्हाला की लड़ाई में जौहर की मदद की थी। उसने अब प्रभावली (इसका मुख्य कस्बा शृंगारपुर है)[२] के राजा सूर्यराव के पास शरण ले ली। संगमेश्वर का मुस्लिम गवर्नर और वहाँ के सब निवासी भी

---

[२] मेरे विचार में 'पल्लीवाना' शब्द पलावन शब्द का संस्कृत रूप है। पलावन एक कस्बा है (जिसके नाम से ही जिला है) जो दपोली से १२ मील दूर उत्तर में बसा है जबकि मदनगढ़ पलावन के ५ मील दूर उत्तर में है। पालगढ़ का किला (जिसे शिवाजी ने बनवाया था) खेद के ६ मील उत्तर की ओर खेद उप जिले में है। संगमेश्वर एक प्रसिद्ध धार्मिक नगर है जो देवरुख के १० मील उत्तर-पश्चिम में है। शृंगारपुर संगमेश्वर के ८ मील उत्तर-पूर्व में है और परीक्षितगढ़ से दिखाई देता है जो कि दो मील इसके पूरब में है। तिवारा दर्रा इसके ४ मील दक्षिण में है (अंश-शीट ४७ जी)। दक्षिण-पश्चिम की ओर प्रभावली अथवा प्रवणवल्ली विशालगढ़ के बिलकुल नीचे दक्षिण-पश्चिम में है। पुराने अभिलेखों में दाभोल और प्रभावली बिलकुल मिले हुए दिखाये गये हैं यद्यपि दोनों एक-दूसरे से बिलकुल पृथक हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जिनके पास कुछ भी सामान था, भाग गये। कस्बे में आतंक छा गया और वहाँ की सब व्यवस्था बिगड़ गयी। इसलिए शिवाजी ने पीलाजी नीलकण्ठ और तानाजी मालूसरे को एक छोटी-सी सेना लेकर उस पर अधिकार करने के लिए भेज दिया और सूर्यराव को इस सेना की मदद करने का आदेश दिया। वह स्वयं चिपलूण के रास्ते देवरुख को बढ़े (चिपलूण में उन्होंने परशुराम के तीर्थस्थान की यात्रा की और ब्राह्मणों को बहुत दान दिया)। उनकी विजय-कूच राजापुर तक जारी रही, जिस पर अब उन्होंने दूसरी बार विजय प्राप्त करके अन्तिम रूप से ३ मार्च को अधिकार जमा लिया और इससे आगे दक्षिण में खारेपत्तन (वाघोतन नदी पर, १६°३३′ उत्तर) तक बढ़ गये। रत्नागिरि के अधिकतर शहरों ने उनको चौथ देकर अपने को लुटने से बचा लिया।

इसी बीच में आदिलशाह के दबाव में आकर शृंगारपुर के राजा ने संगमेश्वर में शिवाजी की सेना पर रात को आक्रमण कर दिया, परन्तु बहादुर तानाजी मालूसरे ने उसको पराजित कर दिया। शिवाजी अब उत्तर की तरफ वापस गये और पल्लीवाना राज्य को विजय करके वहाँ की भागी हुई जनता को व्यापार और कृषि आदि में लगा दिया। अपनी विजय को सुरक्षित रखने के लिए उन्होंने चिरदुर्ग की किलेबन्दी की और उसका नाम मदनगढ़ रखा, और पालगढ़ नाम का दूसरा दुर्ग बनाया।

अब वह शृंगारपुर के राजा सूर्यराव से निबटने के लिए स्वतन्त्र थे। सूर्यराव ने जावली (१६५६) के अधिकार में आने से ही अपने आप को बचाने के लिए शिवाजी की शरण में आने का वायदा किया था, परन्तु अपने बीजापुरी स्वामी के डर से वह अपने वायदे को बार-बार तोड़ता रहा। किन्तु उसको अपनी दुरंगी चाल की फौरन ही सजा मिल गयी। पल्लीवाना से शिवाजी ने सूर्यराव पर बहुत शीघ्रता से अप्रत्याशित हमला किया। उसे हमले की आशा न थी और इसलिए उसने अपने बचाव की तैयारी नहीं की थी; उसकी सेना के कप्तान अपने घरों में छुट्टियाँ मना रहे थे। राजा को अपनी जान बचाकर भागने का अवसर न मिला, और शिवाजी ने विजय के साथ शहर में प्रवेश किया (२९ अप्रैल)। उन्होंने उस छोटे से राज्य के शेष भाग पर आसानी से कब्जा कर लिया और त्रिम्बक भास्कर को वहाँ का गवर्नर नियुक्त किया। प्रतीतगढ़ (परीक्षितगढ़) के निकटवर्ती पहाड़ी किले की शहर[3] की रक्षा के लिए मरम्मत करायी।

---

[3] रत्नागिरि जिले में हुए इस अभियान के बहुत-से विवरण को 'सूर्यवंशम्' से लिया गया है। तारीख जेधे शकावली से ली गयी है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मराठा फौज की कठोरता और लालच, उनकी शूरवीरता और तीव्र-गामिता का आतंक उन सब लोगों पर छा गया था जिन पर उन्होंने आक्रमण किया था और इसलिए अधिकांश मनुष्य वहाँ से भाग गये थे। शिवाजी ने अब श्रृंगारपुर के मंत्री और एक प्रकार से वास्तविक शासक शिरके को बड़ी बुद्धि-मानीपूर्वक अपनी ओर करके अपनी सेवा में रख दिया और उसके कुटुम्ब में विवाह कर लिया—स्थानीय ब्राह्मणों को खूब दान दिया और इस प्रकार वहाँ के निवासियों को घर वापस लौटने, अपने काम-काज करने और नयी सरकार की अधीनता स्वीकार करने के लिए राजी किया।

परन्तु इन सफलताओं के होते हुए भी एक बड़ी हार हो गयी। मई,१६६१ में मुगलों ने मराठों से कल्याण छीन लिया, और यद्यपि शिवाजी ने महाद में एक सेना द्वारा इसे वापस लेने का प्रयत्न भी किया, परन्तु उसमें उसको कोई सफलता नहीं प्राप्त हुई और यह बड़ा नगर आगे नौ वर्ष के लिए मुगलों के हाथ में रहा आया। इसलिए जून के अन्तिम दिनों में शिवाजी ने अपने वर्धनगढ़ दुर्ग में रहकर सारी गर्मियों के दिन शान्ति से बिताये। पैन उप-जिले में दीरी के किले को बुलाकी नामक एक मुसलिम सेनापति ने घेर लिया, परन्तु कावजी कोधाल्कर के अधीन मराठा फौज ने उसके ४०० आदमियों को मारकर उसे भगा दिया (२१ अगस्त, १६६१)।

१६६२ के शुरू में मराठों ने अपनी क्रियाशीलता फिर शुरू कर दी। शिवाजी ने नामदारखाँ पर मीरा डोंगर (पैन के ६ मील दक्षिण-पूर्व) में आक्रमण किया। फिर पैन के धनी शहर पर धावा बोला। मुगलों ने नगर की डटकर रक्षा की और शिवा की सेना के बहुत-से आदमी मारे गये और घायल हुए।

कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि १६६२ और १६६३ की पहली तिमाही के दौरान में कुछ मुगल सेनापति (विशेषकर नामदारखाँ) बहुत सक्रिय रहे और उन्होंने मराठों को हराकर उनके क्षेत्र में प्रवेश किया, और जहाँ भी उनका प्रत्याक्रमण हुआ उसको असफल किया। हम देखते हैं कि मार्च, १६६३ में मुगल रिसालों के दो सचल डिवीजन थे, जिनमें १२,००० और ७००० घोड़े थे और जिनको क्रमशः ऊपरी चौल और रहमतपुर में तैनात किया गया था जबकि कल्याण में एक बड़ी स्थायी सेना थी जिस पर आक्रमण करना आसान काम न था।

इन दो वर्षों के अभियान का यह परिणाम हुआ कि विवादास्पद पैन सब-डिवीजन में यदा-कदा आक्रमणों को छोड़कर मुगलों ने कोंकण के उत्तरी भाग पर अपना कब्जा बनाये रखा, जिसमें कल्याण का नगर और जिला भी सम्मि-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लित था और शिवाजी कोलाबा नगर के दक्षिण-पूर्व कोने और रत्नागिरि जिले के सारे भाग के स्वामी रहे, अर्थात लगभग १८° से १६°३०′ उत्तर अक्षांश तक।

मार्च, १६६३ में मुगलों ने शिवाजी की सेना में रिसाले के सरदार नेताजी का बहुत दूर तक पीछा किया। उसने अपने रिसाले से शाही क्षेत्र से आक्रमण किया, परन्तु ७००० मुगलई घोड़ों ने उसका इतना पीछा किया कि "वह प्रतिदिन ४५ या ५० मील भागने के लिए मजबूर हो गया, फिर भी लूट का जो थोड़ा-सा सामान उसके हाथ पड़ गया था उसके लिए अपनी तारीफ लूटता फिरा। जब तक वे बीजापुर से १५ मील दूर पर रह गये तब तक उन्होंने उसका पीछा किया।" परन्तु रुस्तमे-जमाँ मुगलों से मिला और उसने यह कहकर उसका पीछा न करने को राजी कर लिया कि "देश इतना खतरनाक है कि एक अजनबी सेना के लिए यह ठीक न होगा कि वह भीतर जाय, और यह भी वचन दिया कि वह स्वयं उसका पीछा करेगा; इस धोके से नेताजी दूर निकल गया परन्तु उसके ३०० घोड़े मारे गये और खुद भी घायल हो गया।" (कोठी अभिलेख, सूरत, भाग १०३; गाइफर्ड से सूरत, ३० मार्च और ८ अप्रैल, १६६३)

परन्तु अपनी सेना की इस हार के एक महीने के भीतर ही शिवाजी ने मुगलों पर एक चमत्कारपूर्ण प्रहार किया—ऐसा प्रहार जिसकी योजना की चतुराई, सम्पादन की सफाई और सफलता की पूर्णता ने मुगल दरबार और सेना में शिवाजी की शूरवीरता और जादू की शक्ति होने के विश्वास ने उनको इतना ही आतंकित कर दिया जितना कि अफजलखाँ के विरुद्ध उनके षड्यन्त्र ने बीजापुर वालों को किया था। उन्होंने अचानक ही चलकर दक्षिण के मुगल वायसराय को उसके शिविर के शयन-कक्ष में और उसके अंगरक्षकों और दासियों[४] के बीच ही घायल किया।

६. **शिवाजी का शाइस्ताखाँ पर रात्रि में आक्रमण**—जैसा कि हम देख

---

४ शाइस्ताखाँ पर रात में हमला : सबसे पूर्व के अभिलेख हैं गाइफर्ड से सूरत, १२ अप्रैल, २४ मई १६६३ (कोठी अभि० सूरत, खण्ड १०३) जिसमें स्वयं शिवाजी का कथन है; बर्नियर, १८७; आ० ना० ८१९ (केवल एक वाक्य.!); स्टोरिया २. १०४-१०६; सभा० ३५-३७; दिल० ४४-४६। खाफीखाँ (२. १७२-५,) अपने पिता का कथन बताता है जो शाइस्ताखाँ का एक नौकर था, परन्तु उसने १७३० के बाद लिखा था। जेधे०, ९१ क० ब० ४६-४७

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चुके हैं शाइस्ताखाँ ने पूना पर मई, १६६० में कब्जा कर लिया था और अगले अगस्त में चाकन के हाथ में आने पर वहाँ चला गया था। उसने भविष्य में बनने वाली मराठा राजधानी के सबसे अच्छे घर को अपना निवास-स्थान बनाया जो शिवाजी के शिशुकाल का बहुत मामूली घर था। उसका जनान-खाना भी उसके साथ था। उसके महल के चारों तरफ कार्यालय और रक्षकों तथा सेवकों के निवास-स्थल थे। इसके आगे सिंहगढ़ के दक्षिण की तरफ जाने वाली सड़क पर उसके सहायक महाराजा यशवन्तसिंह और उसके १०,००० आदमियों का शिविर पड़ा था।

वहाँ पर शाइस्ताखाँ पर अचानक आक्रमण करने के लिए वीरता और शीघ्रता के अलावा चालाकी और फुर्ती की भी कम आवश्यकता न थी। शिवाजी अपने सैनिकों में से सबसे अधिक निपुण और बहादुर १००० सैनिक लेकर चले। नेताजी पालकर और पेशवा मोरोपन्त के अधीन १००० संख्या की दो सहायक डिवीजनों (जिससे रिसाला और मावली शामिल थे) को मुगल शिविर के एक मील दूर फासले पर दोनों तरफ मोर्चा लेने का आदेश दिया गया। खैद के बाबाजी बापूजी और चिमनाजी बापूजी इस साहसी काम को पूरा करने के लिए शिवाजी के साथ अंगरक्षक और उसके दाहिने हाथ के रूप में आये।

मराठों के पास भारी सामान न था और उन्होंने सिंहगढ़ से चलकर अगले ११ मील का रास्ता शीघ्र दिन में ही पूरा कर लिया और सूर्यास्त के पश्चात पूना में आये (रविवार, ५ अप्रैल १६६३)। ४०० चुने हुए आदमियों को लेकर शिवाजी ने शिविर की सीमा में प्रवेश किया और मुगल रक्षकों के पूछने पर उनको बताया कि वे शाही सेना के दक्षिणी सैनिक हैं और अपना नियुक्त स्थान ग्रहण करने के लिए वहाँ आये हैं। कुछ घण्टों तक किले के एक अँधेरे भाग में विश्राम करने के बाद वह आधी रात के समय शाइस्ताखाँ के निवास-स्थान के पास आये। शिवाजी शहर की गली-गली और मकान के कोने-कोने से परिचित थे, क्योंकि वह बचपन और युवावस्था में वहीं रहे थे।

यह रमजान का छठा दिन था जो मुसलमानों के उपवास रखने का महीना होता है। सारे दिन भूखे रहकर और रात को भारी खाना खाने के कारण नवाब के घर के लोग गहरी नींद में सोये हुए थे। कुछ रसोइये सूर्योदय से पहले भोजन तैयार करने के लिए उठ गये थे क्योंकि रमजान में सूरज निकलने से थोड़ी देर पहले खाना खाया जाता है। परन्तु मराठा सैनिकों ने बिनी किसी कोलाहल के उनको समाप्त कर दिया। हरम में नौकरों के कमरे और बाहरी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रसोईघर को विभाजित करने वाली दीवार में कभी पहले एक छोटा-सा दरवाजा हुआ करता था। परन्तु हरम के एकांतवास के लिए इस दरवाजे को ईंट और मिट्टी से बन्द कर दिया गया था। मराठों ने उसमें से ईंट निकाल-कर एक सूराख करना शुरू किया। उनकी कुल्हाड़ियों और मारे गयों की चीत्कार ने कुछ नौकरों को जगा दिया, जिन्होंने इसकी सूचना शाइस्ताखाँ को दे दी परन्तु उस सेनापति ने उनको अपनी निद्रा में छोटी-सी बात पर बाधा डालने पर डाँट दिया।

शीघ्र ही दीवार में इतना बड़ा सूराख हो गया जिसमें होकर एक आदमी निकल सकता था। अपने विश्वसनीय सिपहसालार चिमनाजी बापूजी के साथ शिवाजी ने हरम में सबसे पहले प्रवेश किया और उनके पीछे उनके २०० सैनिक घुसे। एक के बाद दूसरा पर्दा और घेरे के भीतर घेरा होने के कारण यह स्थान भूलभुलैयाँ हो रहा था। अपनी तलवार से उनमें मार्ग बनाकर शिवाजी शाइस्ताखाँ के शयन-कक्ष में ही पहुँच गये। भयभीत औरतों ने नवाब को जगा दिया, परन्तु उसके अस्त्र-शस्त्र प्रयोग करने से पूर्व ही शिवाजी ने अपनी तलवार से उस पर प्रहार कर दिया जिससे उसका अँगूठा कट गया। ठीक इसी समय किसी चतुर स्त्री ने दीपक बुझा दिये। अँधेरे में दो मराठे पानी के हौज में गिर गये। इस गड़बड़ी में शाइस्ताखाँ की दो दासी लड़कियाँ उसको उठाकर किसी सुरक्षित स्थान पर ले गयीं। अँधेरे में कुछ देर तक मराठे लोग हरम की स्त्रियों को, बिना यह पहचाने कि वे स्त्रियाँ थीं, मारते-काटते रहे।

इतने ही में शिवाजी के दल के बाकी आधे २०० सैनिकों ने, स्पष्टतः जो बाबाजी बापूजी के अधीन थे, मुख्य रक्षकों पर आक्रमण किया। सोये हुए तथा जगे हुए सभी लोगों को उन्होंने कत्ल किया और वे उपहास में यह कह-कर चिल्लाने लगे—"क्या तुम लोग इसी तरह रखवाली करते हो ?" उसके बाद वे युद्ध के बाजे वालों के कमरे में घुस गये और उनसे कहा कि शाइस्ताखाँ का आदेश है कि वे बाजे बजाएँ। बाजों की जोर की ध्वनि और दुश्मन की चीत्कार ने गड़बड़ को और भी बढ़ा दिया। हरम में कोलाहल इतना अधिक हो गया कि अब मुगल सैनिकों को यह ज्ञात हो गया कि उनके सेनापति पर आक्रमण हो रहा है। "दुश्मन हम पर हमला कर रहे हैं"—यह कहते हुए वे अपने हथियार सँभालने लगे।

शाइस्ताखाँ का पुत्र अबुल फतह सबसे पहला आदमी था जो बिना औरों का इन्तजार किये अपने पिता को बचाने के लिए दौड़ पड़ा। परन्तु उसके दो या तीन मराठों को मारने के बाद ही उस बहादुर युवक का कत्ल कर दिया

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

गया। एक अन्य मुगल कप्तान ने, जो हरम के ठीक पीछे रहता था, यह देखकर कि मराठों ने उसके दरवाजे भीतर से बन्द कर दिये थे, एक रस्सी के द्वारा नीचे उतरने का प्रयत्न किया ; परन्तु उस पर तुरन्त आक्रमण करके मराठों ने उसका वध कर दिया।

शिवाजी ने यह देखकर कि अब मुगलों को उनके आक्रमण का पूरी तरह पता चल गया है और अब वे हथियार सँभाल रहे हैं, बिना विलम्ब के अपने सैनिकों को एकत्र किया और तुरन्त ही शिविर को छोड़कर सीधे रास्ते से वापस चले गये। मुगलों को अपने शत्रु के स्थान का पता न था इसलिए व्यर्थ ही उन्होंने अपने समस्त शिविर की छानबीन की।

यह रात्रिकालीन आक्रमण पूर्णतः सफल रहा। शिविर से वापस आते वक्त मराठों पर किसी ने आक्रमण न किया और न उनका पीछा ही किया। इस अचानक हमले में मराठों के ६ आदमी मरे और ४० घायल हुए, जबकि उन्होंने शाइस्ताखाँ के एक कप्तान, उसके एक पुत्र, ४० नौकर और ६ पत्नियों तथा दासी-लड़कियों को मौत के घाट उतारा। इसके अलावा ८ अन्य स्त्रियों और स्वयं शाइस्ताखाँ को घायल किया।[५]

शिवाजी की इस चतुराई और बहादुरी से उनकी प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गयी। लोग उनको दैत्य-अवतार मानने लगे। ऐसा विश्वास होने लगा कि उनके लिए कोई स्थान अगम्य नहीं है और न कोई चतुराई का आश्चर्य-कार्य असम्भव।

---

५ राजपुर से गाइफर्ड ने १२ अप्रैल, १६६३ को सूरत को इस प्रकार लिखा : कल स्वयं राजा का लिखा पत्र रावजी (पंडित) के पास आया जिसमें उन्होंने अपने ४०० आदमियों के साथ शाइस्ताखाँ के शिविर पर जाने के विषय में लिखा था। वहाँ पर किसी बहाने से·····वह शिविर में सलाम करने के लिए घुस गये, और शीघ्र ही सब पहरेदारों को मार दिया····· स्वयं अपने हाथ से शाइस्ताखाँ को घायल किया (एक पुत्र को मार डाला, दो को घायल किया, ६ औरतें मारी गयीं, ८ और को घायल किया, और अपने सेनापति की सेवा करने वाले ४० आदमियों को तलवार के घाट उतार दिया), इसके पश्चात शिवाजी लौटे, उनके केवल ६ आदमी मारे गये और ४० घायल हुए। राजा जसवन्तसिंह के अधीन १०,००० घुड़-सवार चुपचाप खड़े रहे और उन्होंने उनका पीछा न किया ; अतः सामान्यतः ऐसा विश्वास किया जाता है कि यह सब कुछ उसकी सलाह से किया गया, यद्यपि शिवाजी का कहना है कि उनके परमेश्वर ने उन्हें ऐसा करने को कहा था। गाइफर्ड के २४ मई के पत्र के संशोधन के अनुसार, इस पत्र में दिये गये शाइस्ताखाँ की हानि के अंक ऊपर कोष्ठकों में बदलकर दिये गये हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सारा देश उनके अपौरुषेय कामों से चकित और भयभीत हो गया। बादशाह के दरबार और कुटुम्ब में, उसके मामा और उसके साम्राज्य के "मुख्य श्रेष्ठी" (अमीर-उल-उमरा) के इस दुर्घटना में ग्रस्त होने से बड़ा खेद और अपमान प्रतीत हुआ।

यह आक्रमण ५ अप्रैल, १६६३ को हुआ था। साम्राज्य के सभी अधिकारी सुबह होते ही शाइस्ताखाँ की इस भारी क्षति पर संवेदना प्रकट करने आये। उनमें महाराजा जसवन्तसिंह भी था जिसने आक्रमणकारियों पर एक उँगली तक न उठाई थी यद्यपि उसके १०,००० घुड़सवार उसी रास्ते में थे जिससे कि शिवाजी निकलकर गये थे। शाइस्ताखाँ ने एक उच्चकुलीन मुगल दरबारी की तरह जसवन्तसिंह की ओर मुड़कर व्यंग में केवल इतना ही कहा कि, "जब शत्रु ने मुझ पर आक्रमण किया था तो मैंने यह कल्पना कर ली थी कि तुम शत्रु से लड़ते-लड़ते पहले ही मर चुके होगे।" वास्तव में मुगल डेरे और दक्षिण की सारी जनता का विचार था कि जसवन्त की ही उपेक्षा से यह सब कुछ हुआ है। परन्तु शिवाजी का कहना था कि यह आश्चर्य कार्य उन्होंने किसी मानव सलाहकार की प्रेरणा से नहीं बल्कि ईश्वर की प्रेरणा से किया था। वहाँ से लौटने के तुरन्त ही बाद शिवाजी ने अपने राजापुर के प्रतिनिधि रावजी पंडित को गर्व के साथ लिखा कि इस कार्य के स्वयं वही मुख्य कर्ता थे और उन्होंने स्वयं ही शाइस्ताखाँ को घायल किया था।

मुगल वायसराय पर लज्जा और शोक छा गया और अब वह अपनी अधिक सुरक्षा के लिए औरंगाबाद चला गया। बादशाह को इस दुर्घटना का पता मई के आरम्भ में चला जब वह कश्मीर जा रहा था और उसने इसका कारण वायसराय की लापरवाही और अयोग्यता बतलाया। अपनी अप्रसन्नता प्रकट करने के लिए उसने शाइस्ताखाँ की बदली बंगाल सरकार में कर दी (१ दिसम्बर, १६६३)। बंगाल उस समय दांडिक बस्ती समझा जाता था, अथवा औरंगजेब के ही शब्दों में वह "भोजन से परिपूर्ण एक नरक था।" उसको नया कार्यभार सँभालने के लिए जाते समय रास्ते में बादशाह से भी मिलने की अनुमति न मिली। शहजादा मुअज्जम द्वारा कार्यभार सँभालने पर शाइस्ताखाँ ने १६६४ के जनवरी महीने के मध्य में दक्षिण छोड़ दिया।

७. **सूरत का वर्णन**—जिस समय औरंगाबाद में गवर्नरों की यह अदला-बदली हो रही थी, उसी समय शिवाजी ने एक अभूतपूर्व काम किया। ६ से १० जनवरी तक उन्होंने सूरत शहर को लूटा जो पश्चिमी तट का सबसे अधिक धनी पत्तन था, और भारत के मुसलमानों के लिए, जो मक्का की हज्ज करने जाते थे, यह "अरब के धार्मिक स्थानों का द्वार था।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सूरत का किला समुद्र से १२ मील दूर ताप्ती के दक्षिणी किनारे पर स्थित था। शिवाजी के सामान्य शस्त्रास्त्र सज्जित सैनिक दस्तों के लिए यह किला अभेद्य था। परन्तु किले के निकट नगर में रक्षा के साधन बहुत कम थे। उस समय उसकी रक्षा के लिए कोई दीवार न थी। उसमें धन अपरिमित था। साम्राज्य के ही सीमा-शुल्कों से प्रति वर्ष १२ लाख रुपये के राजस्व की प्राप्ति होती थी (थेवनॉट, ५. ८१ के अनुसार १६६६ में)।

सूरत का शहर लगभग ४ वर्ग मील में बसा था जिसमें बाग और खुले स्थान भी थे, और उसमें २,००,००० प्राणी रहते थे। गलियाँ तंग और टेढ़ी-मेढ़ी थीं। धनी लोगों के मकान नदी के तट पर थे और अच्छे बने थे। परन्तु शहर में अधिकतर निर्धन लोगों की कुटियाएँ थीं जिनमें लकड़ी के खम्भे, बाँस की दीवारें और मिट्टी के फर्श थे। "शहर के अधिकतर भाग में मुश्किल से एक गली में ईंटों के २ या ३ मकान दिखाई पड़ते थे···कुछ भागों···में तो कई-कई गलियों में मिलाकर एक भी पक्का मकान न था। मनुष्य अथवा प्रकृति द्वारा सारे शहर के चारों ओर रक्षा के लिए कोई चहारदीवारी या खाई आदि न थी और उसके चारों ओर मीलों दूर तक समतल मैदान था। शहर की मुख्य सड़कों के सिरों पर कुछ कमजोर और खराब बने हुए फाटक थे (रक्षा की अपेक्षा अधिक दिखावे के लिए)। कुछ भागों में सूखी खाई थी जिसके भीतरी भाग में कोई दीवार न थी और जिसे बड़ी आसानी से पैदल पार किया जा सकता था। शेष भाग इतना खुला पड़ा था कि वहाँ खाई का कोई चिह्न नजर नहीं आता था।" (बम्बई गजेटियर, २. ३०१, ९०-९१; अंग्रेज पादरी एस्कोलियट का पत्र सर टी० ब्राउन को)

५ जनवरी १६६४ को प्रातःकाल ही सूरत के निवासी यह सूचना पाकर भयभीत हो गये कि शिवाजी दक्षिण की ओर २८ मील की दूरी पर गन्दवी में फौज लेकर आ पहुँचे हैं और अब शहर की लूटमार के लिए आगे बढ़ रहे हैं।[६]

---

[६] सूरत की पहली लूट : सबसे अधिक विस्तृत वर्णन कोठी के अभिलेखों में मिलता है : लौग ऑव द लॉयल मरचेंट (और्म पांडुलिपि, खण्ड २६३, पृष्ठ २३-२४) : को० अभि० सूरत २ (सूरत कंसल्टेशन्स ६ जनवरी, १६६४), खण्ड ८६ (सूरत से फारस : सूरत से कम्पनी को पत्र १८ और २८ जनवरी, और ४ अप्रैल) : डच अभिलेख, खण्ड २७ संख्या ७११ और ७१९। एस्केलियट का पत्र बहुत मूल्यवान है। बरनियर १८८-१९०; स्टोरिया, २. २९, ११२, १२०, १३२, ४. ४२८, ईश्वरदास ५२ ए. (आ० ना०, खाफीखाँ और टेवर्नियर ने कुछ नहीं लिखा है।) नगर और किले के अच्छे वर्णन के लिए, कैपेलिन ५२ एन०, और कैरी, १. १६-४९

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सारे शहर में आतंक छा गया और लोग अपनी पत्नियों तथा बच्चों सहित अपनी जान बचाने के लिए दूर, अधिकतर नदी के दूसरी पार, भागने लगे। धनी लोगों ने किले के अधिकारी को रिश्वत देकर किले में शरण ली। बाद में दिन में एक संदेशवाहक ने भेद दिया कि शिवाजी और अधिक निकट आ गये हैं और रात्रि में यह मालूम हुआ कि वह सूरत से केवल ५ मील दूर पर ठहरे हुए हैं। शहर के गवर्नर इनायतखाँ ने—जो दुर्ग के अधिकारी से पृथक था—अपना एक प्रतिनिधि शिवाजी के पास यह फैसला करने के लिए भेजा कि वह धन लेकर उसकी जान बख्श दें। परन्तु जब उसको इस बात का पता चला कि शिवाजी ने उसके प्रतिनिधि को अपने पास रोक लिया है और वह तीव्र गति से शहर की ओर बढ़ रहे हैं तो सारे नगर को शत्रु की दया पर छोड़कर वह स्वयं किले में चला गया। वह खजाने से ५०० सैनिकों का वेतन लिया करता था परन्तु किसी प्रकार की सेना न रखकर वह उस धन को स्वयं हड़प लिया करता था। अपनी कायरता के कारण वह न तो रक्षा की कोई व्यवस्था कर सका अथवा न स्वयं अपने पद पर ही जमा रहा।

शहर के लोग अपने नेता के ही समान कायर थे। वहाँ अधिकतर धन के प्रेमी व्यापारी, गरीब दस्तकार, अतिशिष्टाचारी अग्निपूजक पारसी, और नम्र हृदय जैन लोग रहते थे जो आत्मरक्षा के लिए भी लड़ाई के लिए उद्यत न थे। अति धनी व्यापारियों में भी, यद्यपि उनके पास करोड़ों की सम्पत्ति थी, अपनी दौलत को बचाने के लिए चौकीदार रखने की समझ न थी, यद्यपि वे उस धन की रक्षा उसका बीसवाँ भाग ही व्यय करके कर सकते थे जिसको वे शीघ्र ही लूट में खोने वाले थे।

८. **सूरत की अंग्रेजों द्वारा वीरतापूर्वक रक्षा**—इस कायरता की शर्म, उच्च और निम्न सब लोगों में, थोड़े-से विदेशियों की बहादुरी से और भी अधिक बढ़ गयी। अंग्रेज और डच व्यापारियों ने अपनी कोठियों को किसी भी कीमत पर बचाने का पक्का निश्चय किया, यद्यपि ये खुले मकानों की भाँति थीं और आक्रमण का सामना करने के लिए नहीं बनायी गयी थीं। वे समुद्र के किनारे सूरत से १० मील पश्चिम में स्वाली बन्दरगाह में अपने जहाजों पर जाकर अपनी रक्षा कर सकते थे, "परन्तु जैसी अंग्रेजों से आशा की जा सकती है, हमने अपने सामान को बचाने का भरसक प्रयत्न करना अपने मकान, सामान और धन को खोने से अधिक अच्छा समझा।"

अंग्रेज प्रेसीडेण्ट, सर जार्ज आक्सेंडन और उसकी काउंसिल सूरत में अपने-अपने पदों पर जमे रहे, और उन्होंने कोठी को बचाने के कुछ साधन जुटाये।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उन्होंने दो पीतल की तोपें शहर के एक व्यापारी से और चार अपने जहाजों से प्राप्त कीं। स्वाली से अंग्रेजी जहाजों से शस्त्रधारी नाविक भेजकर उन्होंने कोठी में २१० रक्षकों का दल इकट्ठा कर लिया, जिसमें १५० अंग्रेज और ६० चपरासी थे। दो चौड़ी गलियों और हाजी सैयद बेग के विशाल और ऊँचे मकान की, जो बगल में ही था, रक्षा के लिए ४ तोपों को छत पर जमा दिया गया। दो तोप सामने वाले दरवाजे के पीछे रखी गयीं और कोठी को अपने आने वाले रास्ते की तरफ गोली चलाने के लिए दीवार में सूराख किये गये। भोजन, पानी और बारूद आदि की जो भी व्यवस्था हो सकी वह बहुत शीघ्र की गयी। "कुछ लोगों को सीसा पिघलाने और गोली बनाने के लिए लगाया गया, तो दूसरों को सीसा गलाकर छैनी से छोटी गोलियाँ बनाने का काम दिया गया। कोई भी आदमी खाली न था, बल्कि सबको प्रत्येक स्थान को मजबूत बनाने के लिए नियुक्त किया गया। कप्तान नियुक्त कर दिये गये और हर आदमी को आवश्यकता पड़ने पर दूसरे का स्थान ग्रहण करने का आदेश दिया गया। कोठी के रास्तों की रक्षा के लिए अंग्रेजों ने बाहर जाकर ठीक अपने मकान के नीचे एक मन्दिर को अपने कब्जे में किया, और उसमें शरण लेने वालों को बाहर निकाल दिया, और दूसरी ओर एक मस्जिद को भी बन्द कर दिया जिसकी खिड़कियाँ कोठी के अन्दर के आँगन की ओर खुलती थीं। प्रेसीडेण्ट ऑक्सेनडन की कमान में २०० सिपाहियों के समूह ने सामान्य सैनिकों की भाँति कतारों में ढोल और दुंदुभियों के सहित तारीख ६ को सवेरे शहर के बीच से होकर मार्च किया और उसने घोषणा की कि वह अपने उन मुट्ठीभर आदमियों से शिवाजी का मुकाबला करेगा।"

डच लोगों ने भी अपने घर का बचाव किया, यद्यपि, उनका घर अंग्रेजी कोठी से एक मील दूर होने के कारण, परस्पर सहायता मिलना असम्भव था। यूरोपियनों के इस उदाहरण से कुछ तुर्की और आर्मीनियाई व्यापारियों को भी अपनी सराय में, जो अंग्रेजी कोठी के निकट थी, अपनी सम्पत्ति बचाने के लिए प्रोत्साहित किया।

९. **सूरत की पहली लूट (१६६४)**—केवल ९ दिन पहले, बम्बई से २४ मील दूर उत्तर में, बेसीन में शिवाजी का होना सुना गया था। परन्तु छँटे हुए घोड़ों पर ४००० सवारों को लेकर शिवाजी इतनी तेजी और गुप्त रूप से आये कि उनका पता लगने के एक दिन बाद ही वह सूरत में आ धमके। उनके मार्ग में थाना जिले के उत्तरी भाग की जमींदारियाँ—नारदुर्ग (मुरबाद से ६ मील दक्षिण-उत्तर में), माहुली और कोहज के दुर्ग और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जव्हार, रामगनर, लकदर (?)—पड़ती थीं। लूट के माल में हिस्सा बटाने की आशा से उनके रास्ते में दो राजा अपनी फौज लेकर उनके साथ शामिल हो गये थे और अब उनकी सेना की शक्ति १०,००० थी।

६ जनवरी, १६६४ मंगलवार की सुबह के ११ बजे शिवाजी सूरत में आ गये और बुरहानपुर अथवा पूर्वी द्वार से चौथाई मील दूर पर एक बाग में अपना डेरा डाला। पिछली रात को ही उन्होंने अपने आदमियों को एक पत्र देकर भेजा था जिसमें गवर्नर और शहर के सबसे अधिक धनवान तीन व्यापारियों—हाजी सैयद बेग, बहरजी बोरा और हाजी कासिम—को फौरन ही खुद आकर मिलने के लिए तथा फैसला करने के लिए लिखा था अन्यथा सारे शहर को तलवार और अग्नि से नष्ट कर देने की धमकी दी थी। इस माँग का कोई जवाब न मिलने पर ६ तारीख को आने के बाद तुरन्त ही मराठों ने रक्षाहीन और अधिकतर निर्जन शहर में घुसकर वहाँ के मकानों को लूटना और उनमें आग लगाना शुरू कर दिया। शिवाजी के कुछ बन्दूकची "किले पर आक्रमण करने गये; उनकी नीयत उस पर कब्जा करने की न थी बल्कि गवर्नर और वहाँ के सब लोगों को डराने की थी जिससे कि वे लोग लूटमार करते हुए और आग लगाते हुए मराठों के काम में बाधा न डालें।" किले की सेना लगातार गोलों की वर्षा करती रही परन्तु किले की तोपों ने आक्रमण-कारियों की अपेक्षा नगर को ही अधिक हानि पहुँचाई। बुधवार, बृहस्पतिवार, शुकवार और शनिवार को लगातार विध्वंस का यह काम चलता रहा। नित नयी आग लगाई जाती थी जिससे हजारों घर जलकर राख हो गये और दो-तिहाई शहर बरबाद कर दिया गया। जैसा अंग्रेज पादरी ने लिखा था, "बृहस्पतिवार और शुक्रवार की रातें सबसे अधिक भयंकर अग्नि की रातें थीं। अग्नि ने रात को दिन बना दिया जिस प्रकार कि घने धुएँ ने दिन को रात बना दिया था क्योंकि घने धुएँ ने एक बड़े बादल की भाँति सूरज को ढक लिया था और वह काला देख पड़ता था।"

डच कोठी के पास बहरजी बोरा की आलीशान हवेली थी। "वह उस समय दुनिया में सबसे अधिक धनवान व्यापारी माना जाता था," और उसके पास ८० लाख रुपये की सम्पत्ति का अनुमान किया जाता था। मराठों ने आराम से शुक्रवार की शाम तक इसको रात-दिन लूटा। सारा धन लूटने के बाद उन्होंने उसका फर्श खोद डाला, और फिर उसमें आग लगा दी। इस हवेली से उन्होंने "अट्ठाईस सेर बड़े मोती, बहुत-से अन्य जवाहरात, मानक, पन्ना और धन की अविश्वसनीय राशि ली।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अंग्रेजी कोठी के पास ही एक दूसरे धनी व्यापारी का एक ऊँचा और विस्तृत गोदाम था। उसके स्वामी हाजी सैयदबेग ने भी अपनी सम्पत्ति को छोड़कर किले में शरण ले ली थी। बुधवार के दोपहर बाद से लेकर बृहस्पतिवार के दोपहर तक मराठे उसके दरवाजों और सन्दूकों को तोड़ते रहे और जितना माल हो सका ले लिया। उसके एक गोदाम में उन्होंने पारे के कुछ पीपों को तोड़ डाला जिससे बहुत-सा पारा फर्श पर बिखर गया। परन्तु बृहस्पतिवार के तीसरे पहर लुटेरे जल्दी से भाग गये, क्योंकि वे अंग्रेजों के उस जवाबी हमले से डर गये जो उन्होंने पच्चीस मराठे घुड़सवारों पर किया था जो अंग्रेजी कोठी के निकट ही एक अन्य मकान में आग लगाने पर उतारू थे और जिसमें आग लग जाने से उनकी कोठी को बहुत खतरा था। इस मुठभेड़ में एक मराठा सैनिक गोली से घायल हुआ और अंग्रेजों के दो आदमी तीर और तलवार से मामूली तौर पर घायल हुए।

अंग्रेज व्यापारियों ने दूसरे दिन सैयद बेग के मकान में अपने पहरेदार नियुक्त कर दिये और इसलिए उसे आगे कोई हानि न हुई। शिवाजी अंग्रेजों से नाराज थे क्योंकि उन्होंने शिकार में बाधा डाली थी, और शुक्रवार को तीसरे पहर उन्होंने उनके पास समाचार भेजा कि अंग्रेज या तो उनको तीन लाख रुपये दें अथवा उन्हें हाजी का मकान निर्विरोध लूटने दें और यह भी धमकी दी कि यदि दोनों में से कोई बात वे न मानेंगे तो वह स्वयं आकर अंग्रेजी कोठी के प्रत्येक मनुष्य को जान से मार डालेंगे और मकान को तोड़ देंगे। प्रेसीडेण्ट ऑक्सेनडन ने इस प्रस्ताव पर अगली सुबह (शनिवार) तक विचार करने के लिए समय लिया और उसने शिवाजी की दोनों माँगों को अस्वीकार कर दिया, और इस प्रकार उसने मराठा सरदार को आने के लिए और विध्वंस करने के लिए चुनौती दी, और कहला भेजा, "हम तुम्हारे लिए तैयार हैं और हमने यहाँ से न जाने का निश्चय कर लिया है। परन्तु जब आना चाहते हो तो खुशी से आओ; किन्तु जैसा तुम कहते हो कि तुमने यहाँ आने का पक्का इरादा कर लिया है तो मैं तुमसे कहूँगा कि अपने निर्णीत समय से एक पहर पहले ही आओ।" इस चुनौती का शिवाजी ने कोई उत्तर नहीं दिया। उनके पास लूट का माल अत्यधिक हो गया था, और कुछ अधिक लाख रुपयों का धन प्राप्त करने के लालच में उन्होंने रक्षा-पंक्ति के पीछे छिपे हुए तोपखाने का और दृढ़ तथा अनुशासित मनुष्यों का व्यर्थ ही सामना न करने में बड़ी बुद्धिमानी से काम लिया।

१०. **शिवाजी की हत्या का प्रयत्न**—डरपोक गवर्नर इनायतखाँ मंगल-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वार की रात को भागकर किले के अन्दर चला गया था और उस सुरक्षित स्थान से ही उसने एक घृणित षड्यंत्र रचा। गुरुवार को उसने अपने एक युवा अनुगामी को शिवाजी के पास शांति की झूठी संधि की बातचीत के लिए भेजा। शर्तें स्पष्टतः इतनी बेतुकी थीं कि शिवाजी ने उस अनुगामी से व्यंग-पूर्वक पूछा, "तुम्हारा स्वामी स्त्री की भाँति किले के कमरे में छिपकर बैठा हुआ है। क्या उसने मुझे भी औरत ही समझ रखा है कि इस प्रकार की शर्तें मैं स्वीकार कर लूँगा ?" उस युवक ने तुरन्त उत्तर दिया, "हम स्त्रियाँ नहीं हैं; मुझे आपसे कुछ और भी कहना है," और यह कहकर उसने छिपा हुआ छुरा निकाला और शिवाजी के सीने की ओर पूरे बल से झपटा। एक मराठी अंग-रक्षक ने जो नंगी तलवार लेकर राजा के सामने खड़ा हुआ था, एक ही वार में आक्रमणकारी का हाथ काट गिराया। किन्तु आक्रमणकारी इतना उद्धत था और वह इतने वेग से झपटा था कि उसने कटी हुई बाँह के रक्तरंजित ठूँठ से ही शिवाजी को धक्का दिया और दोनों गुत्थमगुत्था होकर जमीन पर लोटने लगे। शिवाजी के वस्त्र रक्तरंजित देखकर उनके अनुगामियों ने अनुमान लगाया कि उनकी हत्या कर दी गयी है और शिविर में शोर मच गया कि बंदियों को कत्ल कर दिया जाय। किन्तु उसी अंगरक्षक ने आक्रमणकारी के सिर पर प्रहार करके उसके दो टुकड़े कर दिये। शिवाजी जमीन से उठकर खड़े हो गये और बंदियों की हत्या करने का निषेध कर दिया। इसके पश्चात उन्होंने धुन में आकर आज्ञा दी कि मेरे सामने बंदियों को लाकर उनमें से चार के सिर धड़ से अलग कर दिये जायँ और २४ बंदियों के हाथ काट दिये जायँ। शेष सब बन्दियों के प्राण छोड़ दिये गये।

अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के एक कर्मचारी एंथोनी स्मिथ को डच जेटी (घाट) पर उतरने पर बंदी बना लिया गया और तीन दिन तक मराठा शिविर में रखा गया। अन्य बन्दियों के साथ यह कर्मचारी अपना दाहिना हाथ काटे जाने के आदेश पर हिन्दुस्तानी में चिल्ला उठा कि अच्छा हो यदि हाथ के बजाय उसका सिर काट दिया जाय। जब उसका टोप उतारा गया तो मालूम हुआ कि वह अंग्रेज है, और फिर उसे छोड़ दिया गया। शुक्रवार को तीसरे पहर उसे शिवाजी के सन्देश के साथ अंग्रेजी कोठी में भेजा गया जहाँ प्रेसीडेण्ट आक्सेनडन ने उसे रोक लिया। बाद में ३५० रुपये छुड़ाई लेकर उसे मुक्त किया गया।

११. **धन किस प्रकार वसूल किया गया**—सूरत की लूट में शिवाजी को एक करोड़ रुपये से अधिक हाथ लगे; सूरत नगर इतना समृद्ध पहले कभी नहीं था। इस लूट का किसी ने प्रतिरोध नहीं किया। लूटपाट पूरे चार दिन

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और रात बराबर जारी रही और शिवाजी ने सोना, चाँदी, हीरे, मोती और बहुमूल्य पात्रों के अतिरिक्त अन्य किसी भी वस्तु को ले जाने में रुचि नहीं ली। (लॉग ऑव द लॉयल मर्चेण्ट)

सूरत पहुँचने पर शिवाजी ने इस आशय की सार्वजनिक घोषणा कर दी थी कि वह अंग्रेज अथवा अन्य व्यापारियों को किसी प्रकार की व्यक्तिगत हानि पहुँचाने नहीं आये हैं, किन्तु उनका अभिप्राय केवल औरंगजेब से बदला लेना है क्योंकि मुगल सम्राट ने उनके प्रदेश पर आक्रमण कर उनके कुछ सम्बन्धियों की हत्या कर दी थी। किन्तु वास्तव में शिवाजी का एकमात्र उद्देश्य धन की लूट था।[७] उन्होंने सूरत में चार दिन तक लगातार स्वच्छन्दता-पूर्वक लूट-खसोट जारी रखी, और कम से कम समय में रुपये खसोटने के लिए वह किसी भी प्रकार की निर्दयता करने से नहीं चूके। अंग्रेज चैपलेन (पादरी) ने लिखा है, "रुपया लूटने की उनकी (शिवाजी की) इच्छा इतनी बलवती है कि कैदियों से (धन के विषय में) जानकारी पाने के लिए उन्होंने पशुसदृश बर्बरता का व्यवहार करने में कोई कसर बाकी नहीं रखी, उन्होंने कैदियों को अत्यन्त निर्दयतापूर्वक कोड़े लगवाये, उन्हें मार डालने की धमकी दी और कई को मृत्यु के घाट उतार दिया गया। जिन्होंने शिवाजी की प्रत्याशित अथवा इच्छानुसार धन जुटाने में असमर्थता प्रकट की, तो ऐसे कैदियों का एक हाथ काट दिया गया और अनेक मनुष्यों के दोनों हाथ काट दिये गये।"

रविवार, १० तारीख को सवेरे दस बजे जब शिवाजी को यह समाचार

---

७ एक बुड्ढा व्यापारी आगरे के निकट से ४० बैलों पर लादकर कपड़ा बेचने आया आया था, परन्तु बिलकुल न बेच पाया था; उसने शिवाजी को कुल कपड़ा देकर तुष्ट करना चाहा। परन्तु यह उत्तर पाकर कि उसके पास नगद रुपया न था, शिवाजी की आज्ञा से उसका दायाँ हाथ काट डाला गया, वह भगा दिया गया, और मराठों ने उसका कपड़ा जला दिया (एसकेलिअट का पत्र)। शिवाजी द्वारा धन छीनने के लिए एक यहूदी माणिक-व्यापारी को मृत्यु की धमकी दी गयी जिससे वह बाल-बाल बचा (देखिए बर्नियर, १६०)। "मिस्टर स्मिथ मौजूद था जब उसने एक दिन में २६ हाथ और इतने ही सिर काट डाले; जो कोई भी पकड़कर उसके सामने लाया गया जो छुटकारा पाने के लिए रुपया नहीं दे सकता था, उसे या तो अपने हाथ अथवा अपने सिर को खो देना आवश्यक था; और उसका तरीका यह था कि पहले लूटता, और मकान के स्वामी से यह कहे कि तुम्हारे घर को मैं आग नहीं लगाता इसके लिए कुछ और दो, और फिर भी वचन दे चुकने पर वह विश्वासघाती दुष्ट बाद को उस मकान में आग लगा देता। (सूरत से कम्पनी को पत्र, २८ जनवरी)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मिला कि नगर की सहायता के लिए मुगल सेना आ रही है तो वह अपनी सेना को लेकर तुरन्त वहाँ से चल दिये। उस रात को उन्होंने दस मील की दूरी पर अपना पड़ाव डाला और फिर शीघ्रतापूर्वक कोंकण की ओर लौट गये।

शिवाजी के लौट आने की आशंका से कई दिन लोग अपने नष्ट घरों को वापस नहीं आये। परन्तु शाही सेना १७ तारीख को सूरत पहुँची और तभी डरपोक गवर्नर किले से बाहर निकला। लोगों ने उसका तिरस्कार किया और उस पर धूल फेंकी और इस अपमान के लिए उसके लड़के ने आवेश में आकर एक निरपराध हिन्दू व्यापारी को गोली से मार दिया। लोगों ने अंग्रेज प्रेसीडेण्ट सर जार्ज आक्सेनडन की सराहना और प्रशंसा की कि वह बड़ी बहादुरी से सामना करने के लिए तैयार रहा और उसने न केवल कम्पनी के माल की रक्षा की, वरन नगर के उस भाग को भी बचा लिया जो अंग्रेजी कोठी के आसपास बसा हुआ था।[८]

बादशाह ने पीड़ित नागरिकों के प्रति सहानुभूति दिखाई; उसने सूरत के सभी व्यापारियों से एक वर्ष के लिए सीमा-शुल्क माफ कर दिया, और अंग्रेज तथा डच व्यापारियों को इस प्रकार पुरस्कृत किया कि उनको भविष्य में उनके माल पर सामान्य आयात-करों में ½ प्रतिशत छूट दे दी।

१२. **शिवाजी के कार्य (१६६४)**—१६६४ में मुगलों को कोई उल्लेख-

---

८ जैसा उसने कम्पनी को २८ जनवरी, १६६४ को लिखा (कोठी अभिलेख, सूरत, ८६)—"नगर के हजारों लोग कह रहे हैं कि राजा की ओर से अंग्रेजों को पुरस्कार मिलना चाहिए जिन्होंने साहसपूर्वक उनके जानमाल की रक्षा की। हम सेना के उच्च पुरुषों के साथ थे जो हमारी रक्षा के लिए आये और उन्होंने हमारी उस सेवा की बहुत सराहना की जो हमने राजा और देश के लिए की थी। इस पर आपके प्रेसीडेण्ट ने अपने पिस्तौल को मुख्य सेनाध्यक्ष के सामने रख दिया और उसने यह कहा कि 'मैं अब हथियार उठाना छोड़ता हूँ और नगर की भविष्य की रक्षा को सेना के सुपुर्द करता हूँ।' इस बात को बहुत ही पसन्द किया गया, और सेनानायक ने प्रेसीडेण्ट से कहा कि वह उसे स्वीकार करता है और उसे प्रेसीडेण्ट को एक परिधान, एक घोड़ा और कमर पर बाँधने के लिए तलवार दे देनी चाहिए। परन्तु आपके प्रेसीडेण्ट ने उत्तर दिया कि ये वस्तुएँ सैनिकों को शोभा देती हैं, परन्तु हम तो व्यापारी हैं और बादशाह से अपने व्यापार में कुछ रिआयत चाहते हैं।"

अंग्रेजों और डचों के लिए आयात-शुल्क में कमी नवम्बर, १६७९ में वापस ले ली गयी थी। ('औरंगजेब' ५, अध्याय ६०, अनुच्छेद ५)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नीय सफलता न मिली; यह वह वर्ष था जो शाइस्ताखाँ के प्रस्थान और जयसिंह के आगमन के बीच का था। नया वाइसराय शहजादा मुअज्जम औरंगाबाद में रहता था जो अपना समय आमोद-प्रमोद और शिकार में व्यतीत करता था। उसके प्रिय सेनापति जसवन्तसिंह की नियुक्ति पूना में की गयी थी। इस स्थान से उसने कूच की और कोन्दाना का घेरा डाला (नवम्बर, १६६३)। सर्वविदित है कि राजपूत घेरा डालने में अयोग्य साबित हुए हैं, और जसवन्त ने किले के सामने छह महीने नष्ट करने के पश्चात विवेकरहित और असफल आक्रमण कर दिया जिसमें उसके सैकड़ों सैनिक खेत रहे; इसका मुख्य कारण था बारूद में विस्फोट होना। फिर वह अपने निकट सम्बन्धी भाऊसिंह हाड़ा से झगड़ पड़ा जिसका मुख्य विषय था असफलता का उत्तर-दायित्व, और दोनों अधिकारियों ने घेरा छोड़ दिया (२८ मई, १६६४)। अब वे वर्षा ऋतु व्यतीत करने के लिए औरंगाबाद चले गये। इस अभियान से तनिक भी लाभ न हुआ। (दिल० ४७; आ० ना० ८६७; जेधे)

मैदान साफ हो गया, और वर्षा ऋतु का पूरा जोर होते हुए भी शिवाजी स्वतन्त्रतापूर्वक घूमते रहे, और उन्होंने अहमदनगर को लूटा। (कारवार से सूरत, ८ अगस्त, १६६४, कोठी अभिलेख सूरत, खंड १०४)

२६ जून को अंग्रेज गुमाश्तों ने लिखा, "शिवाजी अपनी कुख्यात चोरियों के लिए इतना अधिक बदनाम है कि लोकचर्चा के अनुसार उसका शरीर हवा का बना हुआ है और उसने अपने शरीर में पंख लगा लिये हैं, अन्यथा यह कैसे सम्भव था कि वह, जैसा कहा जाता है, इतने स्थानों पर उसी समय देख पड़ता·····। लोग कहते हैं कि वह अति-दुष्कर कार्य भी कर लेता है और इसलिए वह सभी वर्ग के लोगों की चर्चा का विषय है·····। हम इस पर विश्वास नहीं करते कि वह गोआ का घेरा डालेगा, क्योंकि वह ऐसे स्थान का घेरा कभी नहीं डालता जिसको भलीभाँति सुरक्षित कर लिया गया है, इससे उसे कोई लाभ न होगा। वह तो सदा ही तैयार दावत को पसन्द करता है और उन नगरों को लूटता व जलाता है, जो अरक्षित हैं, जहाँ न सुरक्षा है और न प्रहरी।" (सूरत से कारवार को, कोठी अभिलेख सूरत, ८६)

और फिर २६ नवम्बर को यह लिखा गया, "दकन (अर्थात् बीजापुर) और समस्त दक्षिणी तट (अर्थात् कनारा) सब गृहयुद्ध में उलझे हुए हैं।··· और शिवाजी विजयपूर्ण और अनियंत्रित ढंग से शासन कर रहा है, वह आस-पास के सभी राजाओं और शासकों के लिए आतंक है और उसकी शक्ति दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है·····वह बहुत द्रुतगामी और कार्यशील है,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अपने ऊपर विचित्र बोझ ले लेता है जिससे कि उसे कष्ट झेलने की आदत पड़ जाय और अपने प्रमुख साथियों से कठिन श्रम लेता है, और इस प्रकार वह अविश्वसनीय प्रवीणता से इधर-उधर भागा फिरता है।" (सूरत से कम्पनी को कोठी० अभि० सूरत, ८६) मानसून के अन्त में अर्थात् अक्तूबर में वह कनारा (कन्नड़?) पर चढ़ दौड़ा। (देखिए अध्याय १०)

२३, जनवरी १६६४ को बासवपत्तन जिले में तुंगभद्रा के तट पर शिकार की एक दुर्घटना के कारण शाहजी की मृत्यु हो गयी। उसका छोटा पुत्र व्यंकोजी उसकी समस्त निजी सम्पत्ति तथा मैसूर और पूर्वी कर्नाटक के इलाके का स्वामी हुआ।

परिशिष्ट

मुस्लिम द्वारा शिवाजी को धोखे से मारने के प्रयत्न के पश्चात उनके शिविर में खूनी प्रतिहिंसा का चश्मदीद गवाह एन्थनी स्मिथ था जो एक अंग्रेज व्यापारी था और वहाँ छुड़ाई के लिए बन्दी बना लिया गया था। (वह भूल से आर्मीनियाई या तुर्क समझा गया था।) एक आधुनिक लेखक ने स्मिथ के साक्ष्य को इस आधार पर अविश्वसनीय बताया है कि सूरत की अंग्रेजी कोठी के प्रेसीडेण्ट ने लंदन में कम्पनी को रिपोर्ट की कि अपनी कैद की अवधि में स्मिथ ने मराठों से कुछ झूठ बातें कहकर कम्पनी को हानि पहुँचायी। परन्तु यह दोषारोपण गलत साबित हुआ, क्योंकि इस तारीख के तीन वर्ष बाद भी स्मिथ कम्पनी की सेवा में था। (यह तथ्य मेरी प्रार्थना पर सर डबल्यू० फोरेस्टर ने इंडिया आफिस के अभिलेखों से मालूम किया।) अतएव इस विषय में स्मिथ के साक्ष्य पर सन्देह नहीं किया जा सकता कि शिवाजी ने अपने शिविर में उस समय क्या किया। नगरों की लूट के दौरान ऐसे अत्याचार अनिवार्य हैं।

स्मिथ के साक्ष्य की संपुष्टि रुस्तम मानकनी ने भी की है जिसका जे० कैकुद रचित फारसी जीवन ('किस्सा') प्रकाशित हो गया है (डाक्टर जे० जे० मोदी अपने 'एशियाटिक पेपर्स' में, भाग ४, पृष्ठ २८१-३०९)। यह मानकनी लूट के समय सूरत में था और उसने नगर के पीड़ित पारसियों की सहायता की थी जिन्हें लूट लिया गया था और जिनके घर जला दिये गये थे, और मराठों ने जिन पारसियों को छुड़ाई के हेतु रोक लिया था उनके छुटकारे के लिए १०,००० रुपये भी दिये थे। सूरत के पारसी निस्सहाय, निहत्थे और निरापद

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लोग थे, और फिर भी जैसा 'किस्सा' में दिया गया है (पृष्ठ २९०), "शिवाजी की सेना के दोनों सरदार सभी अग्निपूजकों (पारसी) के वैरी थे। उन्होंने समस्त 'मौजा' और देश को लूटमार से ध्वस्त और जनहीन कर दिया था। प्रत्येक घर से उन्होंने सोना, आभूषण, वस्त्र और अनाज ले लिया, और उनके मकानों में आग लगा दी। उनमें उन्होंने कुछ आदमियों को मार डाला, और कुछ को हथकड़ी-बेड़ी डालकर अपराधी कैदियों की भाँति उनके हाथ पीछे बाँधकर ले गये।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय ५

शिवाजी और जयसिंह

१. जयसिंह की शिवाजी के विरुद्ध नियुक्ति ।
२. जयसिंह का चरित्र ।
३. जयसिंह की व्यग्रताएँ और सुनियोजित तैयारियाँ ।
४. शिवाजी के वैरियों का सहमित्रण ।
५. युद्धक्षेत्र का विवरण ।
६. मुगलों द्वारा वाहरी चौकियों की स्थापना ।
७. जयसिंह द्वारा अभियान आरम्भ ।
८. पुरन्दर का वर्णन ।
९. घेरा आरम्भ ।
१०. वज्रगढ़ का पतन ।
११. द्रुतगामी दस्तों द्वारा शिवाजी के गाँवों की लूट ।
१२. मराठों द्वारा घेरा तोड़ने के प्रयत्न ।
१३. पुरन्दर की बाह्य सुरक्षा पर आक्रमण ।
१४. मुरारजी बाजी की मृत्यु ।
१५. शिवाजी द्वारा आत्मसमर्पण की चर्चा ।
१६. शिवाजी की जयसिंह से भेंट ।
१७. पुरन्दर की सन्धि (१६६५) ।
१८. शिवाजी को मुगलों से सम्मान-प्राप्ति ।
१९. बीजापुर के आक्रमण में शिवाजी द्वारा मुगलों की सहायता ।
२०. शिवाजी का पन्हाला का आक्रमण विफल ।

१. **जयसिंह की शिवाजी के विरुद्ध नियुक्ति**—शाइस्ताखाँ की असफलता और सूरत की लूट से औरंगजेब और उसके दरबार को अत्यन्त लज्जा और क्लेश का अनुभव हुआ और उसने दक्षिण में अपने योग्यतम हिन्दू तथा मुसलमान सेनाध्यक्षों को भेजने का निश्चय किया । अपने जन्म-दिवस (३० सितम्बर, १६६४) पर सम्राट ने बहुतों को तरक्कियाँ दीं और कुछ का स्थानान्तरण किया; जिनमें प्रमुख था शिवाजी को अधीन करने के लिए मिर्जा राजा जयसिंह की नियुक्ति । उसके अधीन जो अन्य नियुक्तियाँ हुईं, वे इस प्रकार थीं—दिलेरखाँ, दाऊदखाँ कुरैशी, राजा रायसिंह सिसोदिया, इहतिशामखाँ शेखजादा,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कुबादखाँ, राजा सुजानसिंह बुन्देला, कीरतसिंह (जयसिंह का लड़का), मुल्ला यहिया नवायत (एक बीजापुरी दरबारी जो मुगलों की ओर आ गया था), और बहुत-से अन्य अधिकारी। इनके साथ १४,००० सैनिक भेजे गये। (अकबर-नामा, ८६८; स्टोरिया, २. १२०)

आवश्यक तैयारियाँ करने के पश्चात और अपने अधीनस्थों को इकट्ठा करके जयसिंह उत्तरी भारत से चल दिया और ९ जनवरी, १६६५ को हाँडिया पर उसने नर्मदा नदी को पार किया। वह अति शीघ्रता से बढ़ता रहा, और अत्यधिक आवश्यकता के सिवाय उसने कभी एक दिन भी नष्ट नहीं किया। १० फरवरी को वह औरंगाबाद आ गया जहाँ शहजादा मुअज्जम दक्षिण के वाइसराय के रूप में दरबार कर रहा था। तीन दिन तक उसने शहजादे से विचार-विमर्श किया, स्थानीय अधिकारियों और दरबारियों से भेंट की और अपने अभियान से सम्बन्धित अनेक बातों को तय किया। १३ फरवरी को वह औरंगाबाद से चलकर ३ मार्च को पूना पहुँचा, जहाँ उसने महाराजा जसवन्तसिंह से चार्ज सँभाला, जो ७ तारीख को सम्राट् की आज्ञा के अनुसार दिल्ली को रवाना हो गया।(हल्फ अंजुमन पेरिस पांडुलिपि, ११० बी, ११२ ए, ११४ बी, ११६ ए)

२. **जयसिंह का चरित्र**—जब से (१६१७) जयसिंह की प्रथम नियुक्ति मुगल सेना में ८ वर्ष की अवस्था में अनाथ के रूप में हुई, उसका जीवन बड़ा शानदार रहा और कभी भी उसमें मन्दता नहीं आयी। आमेर के सिंहासन पर वह १६२२ में बैठा जबकि वह १३ वर्ष का था। उस समय से ही साम्राज्य के प्रत्येक भाग में वह शाही झंडे के नीचे बराबर लड़ा—मध्य भारत में बलख से दक्षिण में बीजापुर तक, और पश्चिम में कन्धार से पूर्व में मुंगेर तक। शाहजहाँ के लम्बे राज्यकाल में शायद ही कोई वर्ष ऐसा हुआ होगा जबकि इस राजपूत सेनाध्यक्ष ने कहीं न कहीं सक्रिय सेवा न की हो और विशिष्ट योग्यता के लिए तरक्की न पायी हो। उसकी विशेष योग्यता के कारण ही उसे यह मान्यता दी गयी कि उसको भारत की सीमा के पार के अभियानों में शहजादों की अधीनता में सेना के एक पक्ष अथवा मध्य के पक्ष की कमान सौंपी गयी। बाद को वह सेना का मुख्य सेनापति बना दिया गया। युद्ध-क्षेत्र में विजयों से भी कहीं अधिक वह राजनय (अर्थात कूटनीति) में सफल रहा। जब कभी कोई कठिन अथवा नाजुक कार्य करने के लिए होता था, सम्राट सदा उसे जयसिंह को ही सौंपता था। उसमें असीम व्यवहार-कुशलता और धैर्य था, वह मुस्लिमों के व्यावहारिक शिष्टाचार में बहुत निपुण था, तुर्की और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

फारसी भाषाओं पर उसका पूरा अधिकार था, उर्दू और राजपूत बोली में वह सिद्धहस्त था, वह अफगान और तुर्क, राजपूत और हिन्दुस्तानियों की संयुक्त सेना का आदर्श नेता था जो दिल्ली के नवचन्द्र की पताका के नीचे लड़ती थीं। वृद्धावस्था और अनुभव ने उसकी युवावस्था के उत्कट उत्साह को ठंडा कर दिया था—उसने अपने जीवन में एक बार मऊ पर विजय प्राप्त करने का दुस्साहस किया था—और अब वह शक्ति की अपेक्षा कूटनीति को और युद्ध करने की अपेक्षा रिश्वत देना अधिक पसन्द करता था। दूरदर्शिता और राजनयिक चतुराई, बोली की मधुरता और शान्त नियोजित नीति उसके सहज स्वभाव के अंग थे; परन्तु ये गुण राजपूत चरित्र में पाये जाने वाली इस प्रकार की बातों से बिलकुल विपरीत थे, जैसे संवेगशील उदारता, अटल निर्भीकता, खरी स्पष्टवादिता और अदूरदर्शी शूरवीरता।

और अब इस अनेक रणों के योद्धा ने छप्पन वर्ष की अवस्था में एक छोटे-से सरदार को दबाने के लिए अपना कवच पुनः धारण किया, जो दस वर्ष से कम समय में ही इतना बढ़ गया था कि उसने बीजापुर के समस्त साधनों को निष्फल कर दिया और दिल्ली साम्राज्य की प्रतिष्ठा को चुनौती दी।

३. **जयसिंह की व्यग्रताएँ और सुनियोजित तैयारियाँ**—परन्तु जयसिंह[1] शिवाजी को अधीन करने का काम चिन्तारहित मन से करने के लिए नहीं बढ़ा, जिसके विरुद्ध बीजापुरियों और प्रतिद्वन्द्वी मराठा सरदारों, शाइस्ताखाँ और जसवन्तसिंह ने व्यर्थ ही कठोर परिश्रम किया था। दक्षिण में पहुँचकर बहुत-से मनुष्यों की प्रतिष्ठा धूल में मिल गयी, और उनके अपने पूर्वगामियों की असफलता स्पष्ट दिखाई पड़ती थी। शिवाजी ने युद्ध-नीति में नाम कमाया था, और उनके मावली सैनिकों ने अनेक बार सर्वोत्तम तथा संख्या में अधिक

---

[1] इस युद्ध का मेरा वर्णन निम्नांकित पर आधारित है—जयसिंह के विस्तृत पत्र ('हल्फ अंजुमन' बनारस और पेरिस की पांडुलिपियाँ तथा 'फय्याजुल-कवानीन' में कुछ अतिरिक्त पत्र), औरंगजेब के पत्र (जो पेरिस पांडुलिपि के संपूरक ४७६ में दिये गये हैं, तथा विविध दिल्ली पांडुलिपि में दो बिछुड़े हुए पत्र), तथा 'खलूते-शिवाजी' में दिये गये कुछ पत्र (रा० ए० सु० पांडुलिपि)। इनमें से कुछ मैंने 'माडर्न रिव्यू' के लिए अनुवाद किये हैं। उपर्युक्त सामग्री के प्रयोग के पश्चात अकबरनामा (८८७-९०७) का कोई स्वतन्त्र महत्त्व नहीं रह जाता यद्यपि यह समसामयिक और विश्वसनीय है। 'स्टोरिया' (२. १२०-१२५, १३२-१३७) ने मनुक्की (Manucci) के युद्ध विषयक निजी अनुभव दिये हैं। मराठी इतिहास के सभासद (३६-४४ और ९१ क० ४९) ने बाद का तथा कुछ हद तक का काल्पनिक वर्णन दिया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नियमित सेनाओं से सफलतापूर्वक लोहा लिया था। फिर, यह भी सम्भावना थी कि दक्षिण में बड़ी मुगल सेना के आगमन से बीजापुर और गोलकुण्डा भयभीत हो जायँ और उत्तर के आक्रमण के विरुद्ध शिवाजी से मिल जायँ। अतएव जयसिंह अपना पूरा ध्यान मराठों की ओर नहीं दे सका; उसे बीजापुर पर भी निगाह रखना आवश्यक था। उसके सामने समस्या आसान न थी। जैसा उसने सम्राट को लिखा, "जिस काम के लिए मैं भेजा गया हूँ उससे मैं दिन या रात में एक मिनट भी आराम नहीं लेता हूँ।" हम उसके पत्रों से देखते हैं कि वैरी से निपटने के लिए उसने हर प्रकार की युक्ति का प्रयोग किया, वह बहुत जागरूक रहा और बहुपक्षीय क्रियाओं में संलग्न रहा। वह बहुत आगे की बात सोचता था, और उसने अपनी सेना का संचालन इस प्रकार किया कि वैरी को परेशानी हो अथवा किसी विशेष अवसर पर उसे बहुत हानि उठानी पड़े।

अपने दो वैरियों को निगाह में रखते हुए जयसिंह ने बहुत बुद्धिमानीपूर्वक दोनों के बीच में अपना स्थान रखने का निश्चय किया, अर्थात शिवाजी के राज्य-क्षेत्र के पूर्वी भाग में, जहाँ से वह आसानी से बीजापुर पर आक्रमण कर सके, और उसने यह नहीं पसन्द किया कि वह पश्चिमी घाट को अथवा उसके पश्चिम में कोंकण को युद्ध-क्षेत्र बनाये। वह इस योजना की उत्तमता पर इतना विश्वास करता था कि जब औरंगजेब ने उससे कोंकण में उतरने का आग्रह किया, तो उसने इसका घोर विरोध किया और अन्त में अपनी ही बात रखने में सफल हुआ। वह जानता था कि यदि वह मराठा राज्य के केन्द्र पर घातक प्रहार कर सकेगा, तो उसके दूर के भाग अपने आप ही अधीन हो जायँगे।

४. **शिवाजी के समस्त वैरियों का सहमित्रण**—इसके अतिरिक्त उसने बीजापुर के सुल्तान की आशाओं और आशंकाओं से बड़ी चतुराई से लाभ उठाया—उसने आदिलशाह को प्रलोभन दिया कि यदि वह मुगलों की सहायता करे और इस प्रकार शिवाजी से अपना सम्बन्ध छोड़ देने का सबूत दे दे तो उससे लिया जाने वाला कर कम कर दिया जायगा और सम्राट की अप्रसन्नता दूर हो जायगी। तीसरे, उसने शिवाजी के विरुद्ध उसके सब वैरियों के संयुक्त हो जाने की व्यवस्था की जिससे सभी सम्भावित क्षेत्रों से उस पर आक्रमण किया जाय और उसका ध्यान बट जाय। जनवरी में ही उसने अपने अधीनस्थ दो पुर्तगाली कप्तानों—फ्रांसिस्को और डिप्रोगी डि मेलो[२] को पश्चिमी तट

---

[२] दमन (गोआ) में दो हत्याएँ करने के कारण निर्वासित मेलो-परिवार मुगल राज्य में रहता था। मनुक्की (२. १४४)। पिसुरलेंकर १, अनुक्रमणिका वाइकर ४. १२६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पर भेजा; वे गोआ की पुर्तगाली वस्ती के मुख्य अधिकारी के पास पत्र लेकर गये जिनमें शिवाजी पर आक्रमण करने में शाही सेनाओं के साथ सहयोग करने के लिए अनुरोध किया गया, क्योंकि शिवाजी के पास समुद्र पर अपना निजी जहाजी वेड़ा भी था। मई में उन्होंने सम्राट् को लिखा, "अव शिवाजी पश्चिमी तट के सम्बन्ध में विलकुल वेसुध और चिन्तारहित है, इसलिए यदि हमारे जहाज गुजरात से उसके समुद्री अधिकृत क्षेत्रों पर अकस्मात आक्रमण कर दें तो वहुत-सा लूट का माल मिल सकता है।" उसने जंजीरा के सिद्धियों को भी उनकी मित्रता प्राप्त करने के लिए लिखा। (हल्फ अंजुमन, पेरिस पांडुलिपि ११४; वनारस, ७८ ए)

शिवाजी के विरुद्ध उकसाने के लिए उसने जनवरी में अपने ब्राह्मण प्रतिनिधि दक्षिण के विभिन्न सरदारों के पास भेजे। कर्नाटक के जमींदारों से कहा गया कि वे दक्षिण से वीजापुर पर आक्रमण करें और इस प्रकार मुगलों की सहायता करें; और दो ऐसे सरदारों के प्रतिनिधि, शिवप्पा नायक और वासवपत्तन का जमींदार अप्रैल में जयसिंह के शिविर में पहुँचे और उन्होंने अपनी सेवाएँ अर्पित कीं।[3] जनवरी के अन्त में जव्हार के राजा का दूत आया जो जयसिंह से वुरहानपुर में मिला और उसने प्रस्ताव रखा कि राजा मुगलों के पक्ष में आना चाहता है; उससे समझौता कर लिया गया कि वह अपने लड़के या भाई को एक सेना की टुकड़ी के साथ भेज दे और उसे 'मनसव' देने का वचन दिया गया। मुगल सेनापति के गुप्तचरों ने प्रत्येक ऐसे मनुष्य से सम्पर्क स्थापित किया जो शिवाजी से वैमनस्य रखता था अथवा भोंसलों के आकस्मिक उत्थान के प्रति द्वेष रखता था। जयसिंह के आमन्त्रण के फल-स्वरूप वाजी चन्द्रराव और उसके सम्वन्धी अम्वाजी गोविन्दराव मोरे ने—जिनके परिवार से शिवाजी ने जावली छीन लिया था—मूधा नामक एक ब्राह्मण को भेजा जिसने सुरक्षादान और आर्थिक सहायता माँगी (फरवरी का मध्य)। ये प्रदान किये गये, और वे मानकोजी धंगर के साथ उनके शिविर पर पहुँच गये और मुगल सेना में भर्ती कर लिये गये (मार्च का चौथा सप्ताह)। इसी प्रकार, अफजलखाँ के पुत्र फज्लखाँ ने जयसिंह की सेना में कमान के लिए तथा अपने पिता के वध का वदला लेने के लिए अवसर की प्रार्थना की। कल्याण के उत्तर में कोली प्रदेश के छोटे राजाओं की मित्रता

---

[3] वेदनूर का शिवप्पा नामक राजा १६६० में मर गया और इस समय उसका लड़का सोम शेखर सिंहासनारूढ़ था, परन्तु राज्य को अव भी महान विजेता शिवप्पा का प्रदेश कहते थे। (पेरिस पांडुलिपि, १३२ ए)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

निकोलाओ मनुक्की के द्वारा प्राप्त की गयी जो उस समय जयसिंह के यूरोपीय रिसाले का मुख्य नायक था। (हल्फ अंजुमन पेरिस, ११३, ११३, १२० वी; स्टोरिया, २. १३२–१३३)

शिवाजी के अधिकारियों को तोड़ने के लिए उनको मुगल सेवा में धन और उच्च पद उदारतापूर्वक देने के वचन दिये गये, और इसमें कुछ सफलता भी मिली; फरवरी में अत्माजी और कहर कोली तथा पहले के अन्य दो भाइयों ने, जो ३००० घुड़सवारों की कमान में थे और जिनकी नियुक्ति शिवाजी द्वारा पुरन्दर के किले के अंचल में की गयी थी, अपने प्रतिनिधि को जयसिंह के पास भेजा और वे उन्हें छोड़ने के लिए रजामन्द हो गये। रामा और हनुमन्त नामक दो कप्तान जो सूपा उप-विभाग के प्राचीन जागीरदारों के वंशज थे, चाँदा के राजा की सेवा से बुला लिये गये और वे जयसिंह के अधीनस्थ रखे गये क्योंकि वे युद्ध-क्षेत्र से अवगत थे और उनका स्थानीय प्रभाव भी था। (बनारस ४४; पेरिस, ११३, १२२ ए)

सर्वोपरि, जयसिंह ने समस्त अधिकार अपने हाथ में ही रखे थे, क्योंकि युद्ध में विजय प्राप्त करने की यह अत्यावश्यक शर्त थी। पहले तो बादशाह ने उसे केवल रणक्षेत्र की व्यवस्था का कार्य दिया, और समस्त प्रशासनीय कार्य औरंगाबाद के वाइसराय के हाथ में छोड़ दिया, जैसे अधिकारियों की पदोन्नति, दण्ड और स्थानान्तरण, सेना को वेतन-वितरण, तथा जागीरों की व्यवस्था। जयसिंह ने ठीक ही आग्रह किया था कि युद्ध में केवल एक ही नायक होना चाहिए और यह कि जो मनुष्य 'स्थान पर' है उसी को पूरा अधिकार मिलना चाहिए अन्यथा कार्य में बाधा पड़ेगी। सम्राट इस तर्क को मान गया और जयसिंह को पूर्ण असैनिक तथा सैनिक अधिकार दे दिये गये। अहमदनगर और परेंदा के कमाडेंट भी उसके अधीनस्थ कर दिये गये।

पश्चिमी महाराष्ट्र में जहाँ भारी वर्षा होती है, बरसात के दिनों में कोई सैनिक कार्रवाई असम्भव है। ३ मार्च को जयसिंह पूना पहुँचा था और यदि कुछ करना था तो वह अगले तीन महीनों में हो जाना आवश्यक था। उसके प्रेषित पत्रों द्वारा हमको पता लगता है कि वह किस प्रकार प्रत्येक दिन का उपयोग करता था, किस प्रकार वह शीघ्रता से तथा जोर का आक्रमण करता था और किस प्रकार पूर्ण विजय प्राप्त करने तक आक्रमण करता रहता था। जितनी चिन्ता इस सेनापति को मानसून के आगमन की थी—जो उसके समस्त कार्यों को बीच में ही रोक देती और उसकी छावनियों में निष्क्रियता पैदा कर देती—उतनी चिन्ता मल्लाह को भी आकाश में तूफानी बादल देखने पर न थी।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

५. **युद्धक्षेत्र का विवरण**—दक्षिण के पश्चिमी किनारे पर पश्चिमी घाट उत्तर से दक्षिण तक बहुत ऊँची दीवार की भाँति चले गये हैं। इनसे पूर्व की ओर कई छोटे प्रक्षेप गये हैं, जिनमें प्रत्येक दो के बीच में एक घाटी है और जिनमें कई छोटी नदी पूर्व की ओर अवश्य बहती हैं जो आपस में मिल जाती हैं और फिर वे दक्षिण की गोदावरी व कृष्णा नाम की विशाल नदियों के रूप में हो जाती हैं। पूर्व में आगे चलकर प्रक्षेप समाप्त हो जाते हैं, घाटियाँ चौड़ी हो जाती हैं और वे बीजापुर राज्य के विस्तृत मैदान में समाविष्ट हो जाती हैं। यह भूमि जो पहाड़ियों से लगभग घिरी है, मराठा राज्य की पोषक है। यह भूमि पूर्व में खुली है और वहाँ भेद्य है, परन्तु पश्चिम की ओर पहाड़ियों और जंगलों के कारण यह लगभग अभेद्य है। और पश्चिम में ही शिवाजी के ऐतिहासिक किले स्थित थे और लगभग प्रत्येक पहाड़ी की चोटी पर मराठों की किलेबन्दी थी।

जुन्नार से (अहमदनगर से ५५ मील पश्चिम की ओर) दक्षिण की तरफ चलकर और मुगल सीमा को पार करके, हमको पहले इन्द्रायनी की घाटी मिलती है जिसके पश्चिम में ऊँचाई पर लोहगढ़ और तिकोना के पहाड़ी किले हैं और बीच में चाकन है। इसके बाद भीमा की घाटी आती है जिसमें पूना स्थित है। इससे भी दक्षिण में एक लम्बी श्रेणी के बराबर करहा नामक एक लघु सरिता की घाटी है, जहाँ मैदान में सासवाड़ और सूपा के नगर हैं और पश्चिमी पहाड़ियों पर सिंहगढ़ का किला है तथा उसके दक्षिणी चटियल अवरोध पर पुरन्दर का गढ़ है। इन पहाड़ियों से आगे नीरा की घाटी है जिसके किनारे पर शीरवाल नगर बसा हुआ है, पश्चिम में राजगढ़ और तोर्ना के किले हैं और दक्षिण-पश्चिम में रोहिरा है।

उत्तर-पश्चिम में लोहगढ़ और दक्षिण में राजगढ़ दोनों पूना से लगभग बराबर दूरी पर हैं, अर्थात २८ मील। सासवाड़ की स्थिति निम्न स्थानों पर आक्रमण करने के लिए बहुत अच्छी थी—पुरन्दर (उससे ६ मील दक्षिण-पश्चिम में), सिंहगढ़ (१८ और २४ मील पश्चिम में), और पूना (उससे १८ मील उत्तर-पश्चिम में)—और उसके पूर्व में क्रमशः चौड़ा होते हुए मैदान से बीजापुर राज्य पर सरल और तीव्र आक्रमण करना सुगम है, अथवा उस ओर से शिवाजी की सहायक सेना के मार्ग को रोका जा सकता है। आज भी सासवाड़ में पाँच मुख्य सड़कें मिलती हैं।

६. **मुगलों द्वारा बाह्य चौकियों की स्थापना**—इसलिए जयसिंह ने एक योग्य सेनापति की भाँति जाँच-पड़ताल के पश्चात सासवाड़ को अपना मुख्य

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अड्डा बनाया। पूना में पर्याप्त सेना एकत्र की गयी। लोहगढ़ के सामने एक बाहरी चौकी स्थापित की गयी जो उसकी देखभाल कर सके और मार्ग को रोक सके और उस मार्ग की रक्षा कर सके जो जुन्नार के निकट मुगल सीमा के लिए उत्तर की ओर जाता था। सासवाड़ के पश्चिम और दक्षिण-पश्चिम में पहाड़ियों के बीच में स्थित मराठा गाँवों को लूटने के लिए एक उड़न दस्ता व्यवस्थित किया गया। अपने पूर्व की ओर वह आक्रमण से बिलकुल सुरक्षित था; इसके कारण थे—भूमि की बनावट, शिवाजी के राज्य और बीजापुर के मध्य सीमा-पंक्ति के निकट सासवाड़ की स्थिति, और सूपा पर मुगलों की अग्रिम चौकी की मौजूदगी।

पूना में पहुँचने (३ मार्च) के बाद जयसिंह ने आसपास के प्रदेश की आकृति समझने में और बाह्य चौकियों के स्थापित करने में कुछ दिन व्यतीत किये, जिनको वह 'इस अभियान के अवलम्ब के लिए प्रथम स्तम्भ' मानता था। कुतुबुद्दीनखाँ की कमान में ७००० घुड़सवारों का रिसाला भेजा गया और उसको आदेश दिया गया कि वह उत्तर में जुन्नार से लोहगढ़ के सामने कोंकण की निचली भूमि (पेनघाट) तक के प्रदेश की देखभाल करे, लोहगढ़ के सामने एक स्थायी बाह्य चौकी स्थापित करे (जिसमें ३००० सेनानी हों), अन्य चौकियाँ वैरी द्वारा प्रायः प्रयोग में आने वाले मार्गों के रोकने के लिए स्थापित करे, और अपने अधिक्षेत्र में बराबर दौरा करता रहे तथा अपनी बाह्य चौकियों का निरीक्षण करता रहे। इहतशामखाँ को ४००० घुड़सवारों की कमान में पूना और उसके निकटवर्ती जिले की रक्षा सुपुर्द की गयी। पूना और लोहगढ़ के बीच में, जो एक-दूसरे से लगभग २८ मील दूर हैं एक कठिन दर्रा है और वहाँ २००० घुड़सवारों का एक रिसाला नियुक्त किया गया। शीरवाल के थाने पर नियन्त्रण के लिए तथा पुरन्दर की सहायता मिलने से रोकने के लिए सैयद अब्दुल अजीज ३००० घुड़सवारों की कमान में भेजा गया। उसके साथ बाजी चन्द्रराव, अम्बाजी गोविन्दराव (जावली के जमींदार) और मांकोजी धंगर भी थे जो मुगलों के साथ हो लिये थे।

सूपा में पहले से ही एक और थाना था जो बाढ़ के सईद मुनव्वरखाँ और कुछ अन्य मुसलमान और हिन्दू अधिकारियों के नियन्त्रण में था।

७. जयसिंह द्वारा अभियान आरम्भ—उपर्युक्त कारणों से सासवाड़ में मोर्चा लगाने और पुरन्दर का घेरा डालने का निर्णय करके जयसिंह ने १४ मार्च को पूना से कूच किया।

परन्तु जैसे ही जयसिंह को यह खबर मिली कि कुतुबुद्दीन खजाने को लिवाने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के लिए जुन्नार को गया है और शिवाजी जयसिंह के पूना से बाहर जाते ही शाही राज्य में आक्रमण करने के लिए लोहारगढ़ आ गये हैं तो उसको पूना के पास ही लम्बे समय के लिए रुक जाना पड़ा। शिवाजी की हरकतों को देखने के लिए जयसिंह ने जल्द ही कुतुबुद्दीन को लोहारगढ़ के समक्ष अपने पद पर बुला लिया और स्वयं २३ तारीख को फिर रवाना हो गया। पूना से कोई १२ मील दूर पूरब की ओर वह लोनी में पहुँचा; यहाँ पर सेना को ठहराने के लिए तीन दिन में एक बाड़े का निर्माण किया और रामा तथा हनुमन्त के अधीन एक थाना स्थापित किया। वहाँ पूना के साथ संचार-सेवा और शाही क्षेत्र के आगे वाली दो सड़कों की रक्षा के लिए ३०० घोड़ों का रिसाला और ३०० पैदल बन्दूकची रखे गये।

२९ मार्च को एक ऐसे स्थान पर पहुँचने पर, जहाँ से सासवाड़ का रास्ता एक दिन का था, उसने दिलेरखाँ को अग्रिम सैनिकों और तोपखाने के साथ आगे मार्ग में एक दर्रे को पार करके और चार मील आगे चलकर रुक जाने का आदेश देकर रवाना किया।

अगले दिन राजा ने पहाड़ी पार की और दिलेरखाँ के डेरे की ओर बढ़ा, और दाऊदखाँ को दर्रे के नीचे छोड़ दिया ताकि दोपहर तक पूरी सुरक्षा के साथ सेना पार कर सके। पीछे वाले रक्षकों का काम बिछुड़े हुए लोगों को ऊपर लाना था।

इसी दिन (३० मार्च को) सुबह दिलेरखाँ गाड़ी लेकर डेरा डालने का स्थान चुनने के लिए सासवाड़ को रवाना हुआ। इस खोज में वह पुरन्दर किले पर पहुँच गया। एक बहुत बड़ी संख्या में मराठा बन्दूकचियों ने जिनका पहाड़ी के मध्य में एक चौबन्दी गाँव पर अधिकार था, जिसको वहाँ की स्थानीय भाषा में 'माची' कहते थे, अब नीचे आकर शाही सेना पर आक्रमण कर दिया। परन्तु शाही सेना ने उनको पराजित करके माची पर कब्जा कर लिया। वहाँ के मकान जला दिये गये और मुगलों ने फौरन ही अधिक से अधिक पुरन्दर के निकट आगे बढ़कर और किले की तोपों के बिलकुल सामने मोर्चे लगाकर अपनी विजय को और भी बढ़ा लिया।

यह सुनकर जयसिंह ने तुरन्त ही रामसिंह, कीरतसिंह, कुबादखाँ, मित्रसेन, इन्द्रामन बुन्देला और अन्य अधिकारियों के अधीन ३००० सैनिकों को भेजा। उसने शीघ्र ही दाऊदखाँ के पास यह आदेश भेजा कि वह तुरन्त ही उसके पास आकर शिविर का कार्यभार सँभाले जिससे कि राजा वहाँ से जाकर घेरे के काम की देखभाल कर सके। परन्तु यह खबर पाते ही दाऊदखाँ जयसिंह के पास न आकर दिलेरखाँ के साथ शामिल हो गया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दिन बहुत चढ़ गया था; शिविर की देखभाल के लिए वहाँ कोई भी उच्च अधिकारी न रहा, अतः जयसिंह को वहाँ विवश होकर ठहरना पड़ा। उसने पहले ही अगुओं का एक दल और भिश्ती, गोली, बारूद, अन्य युद्ध-सामग्री, मोर्चे के यन्त्र आदि दिलेरखाँ के इस्तैमाल के लिए भेज दिये थे।

अगले दिन (३१ मार्च को) सुबह जयसिंह बड़ी होशियारी से स्थायी डेरे को सामान लिवाकर गया जो सासवाड़ और पुरन्दर के बीच और पुरन्दर से चार मील दूरी पर एक अड्डे का काम करता था। तब उसने दाऊदखाँ और कीरतसिंह की स्थिति से किले का निरीक्षण किया। यह एक ही किला न था बल्कि बहुत-सी पहाड़ियों की एक किलेबन्दी थी; अतः इसका घेरा डालना और इसका रास्ता बन्द करना असम्भव था। (पेरिस पांडुलिपि, १२५ बी)

८. **पुरन्दर का वर्णन**—सासवाड़ के दक्षिण-पश्चिम में ६ मील की दूरी पर पुरन्दर का विशाल पर्वत-पुंज है जिसका सबसे ऊँचा भाग समुद्रतल से ४५६४ फुट ऊँचा और उसके नीचे मैदानों से २५०० फुट ऊँचा है। यह वास्तव में एक दुहरा किला है जिसके साथ एक स्वाधीन और बहुत मजबूत घेरा है जिसको वज्रगढ़ कहते हैं और जो पूर्व की ओर निकलते हुए एक कूट पर बसा है। पुरन्दर में एक ऊपरी किला है जिसके चारों ओर पातुक ढाल है और उसके ३०० फुट या अधिक नीचे निचला किला या 'माची' है। पिछला किला पर्वत के चारों ओर एक तंग कोर में बना है जो चार मील के घुमावदार रास्ते का एक भाग है। इस कोर की उत्तर दिशा में एक चौड़ी वेदिका है जिसमें सेना के कार्यालय तथा बैरकें हैं। इसके पूरब में भैरवखिंड नाम का एक ऊँचा कूट है। यह किले के ऊपरी भाग की उत्तर-पूर्वी मीनार के (जिसे खडकला अथवा गगनचुम्बी[४] कहते हैं) नीचे से शुरू होकर एक तंग कूट के रूप में लगभग एक मील पूरब की ओर जाता है और अन्त में एक छोटे पठार के रूप में (समुद्रतल से ३६१८ फुट ऊपर) समाप्त हो जाता है, जिस पर रुद्रमाल किले (अब वज्रगढ़ कहलाता है) का मुकुट है।

यह वज्रगढ़ माची अथवा पुरन्दर के निचले किले के उत्तरी और सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण सम्मुख भाग के सामने ऊँचाई पर स्थित है, क्योंकि यहाँ सेना रहती है। वज्रगढ़ पर अधिकार करने से ही १६६५ ई० में जयसिंह ने और १८१७ ई० में अंग्रेजों ने मराठों के लिए पुरन्दर अजेय बना दिया था। एक

---

[४] मोल्जवर्थ (द्वितीय संस्करण, १९२) ने खडकला को 'चटियल पठार' बताया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कुशल सेनापति की भाँति जयसिंह ने पहले वज्रगढ़ पर आक्रमण करने का निर्णय किया। (बम्बई गजेटियर १८, भाग ३, पृष्ठ ४२८-४३५)

९. **घेरा आरम्भ**—दिलेरखाँ ने अपने भतीजों और अफगान सैनिकों तथा हरीभान व उदयभान गौड़ ने पुरन्दर और रुद्रमाल के बीच में अपने मोर्चे लगाये। उसके सामने तोपखाने का मुख्य अधिकारी, तुर्कताजखाँ और जयसिंह की भेजी गयी टुकड़ी थी। कीरतसिंह ने राजा के ३००० सैनिकों और कुछ मनसबदारों सहित पुरन्दर के उत्तरी फाटक के सामने बाड़े के आकार में जमाव लगा दिया। दायीं ओर राजा नरसिंह गौड़, कर्ण राठौर, नरवर का जगतसिंह और सईद मकबूल आलम के मोर्चे थे। पुरन्दर के पीछे और उसकी पीछे की खिड़की के सामने दाऊदखाँ, राजा रायसिंह, मुहम्मद सालिह तर्कखाँ, रामसिंह राठौर, शेरसिंह राठौर, राजसिंह गौड़ तथा अन्यों की स्थिति थी। इस स्थिति के दायीं ओर रसूलबेग रोजभानी तथा उसके अधीनस्थ लोग थे। रुद्रमल के सम्मुख दिलेरखाँ के अनुगामियों के एक दल के साथ चतुर्भुज चौहान का मोर्चा था, और उनके पीछे मित्रसेन, इन्द्रमन बुन्देला तथा कुछ अन्य अधिकारी थे।

घिरे हुए किले के निकट आने के लिए जयसिंह शिविर को छोड़कर पहाड़ी की तलैटी पर आ गया और सैनिकों ने पहाड़ी के पार्श्व में अपने तम्बू लगा लिये। वह प्रतिदिन मोर्चों को देखता, अपने आदमियों को उत्साहित करता तथा घेरे की प्रगति की देखभाल किया करता। सर्वप्रथम उसने अपना सारा उद्यम उस पातुक और कठिन पहाड़ी पर तोपें चढ़ाने में लगाया। 'अबदुल्लाखाँ' नाम की तोप को रुद्रमाल के समक्ष ऊपर चढ़ाने में तीन दिन लगे। और ३½ दिनों में 'फतह लश्कर' नामक तोप को वहाँ ले जाया गया। 'हहेली' नामक एक तीसरी तोप का ऊपर पहुँचना कठिन हो रहा था। मुगलों की लगातार गोला-बारी ने सामने की मीनार के आधारों को नष्ट कर दिया और अग्रिम दल के लोगों को उसके नीचे एक सूराख करने का आदेश दिया गया।

१०. **वज्रगढ़ का पतन**—१३ अप्रैल को दोपहर के समय दिलेरखाँ की सेना ने मीनार पर आक्रमण किया और दुश्मन को पीछे एक बाड़े में खदेड़ दिया। इसमें दुश्मन के सात आदमी मारे गये और चार घायल हुए। जयसिंह ने अपने राजपूत सैनिकों की एक टुकड़ी को दिलेरखाँ की मदद के लिए भेज दिया। अगले दिन विजयी मुगलों ने भीतर के घेरे पर जोर का हमला करके उसे लेने का प्रयत्न किया। उनकी गोलाबारी से परेशान होकर गढ़-सेना ने अगले दिन शाम को (१४ अप्रैल) कुछ शर्तों के साथ हथियार डाल दिये, वे किले से निकल गये और उनको शस्त्रहीन कर दिया गया। परन्तु जयसिंह ने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बड़ी बुद्धिमानीपूर्वक उनको अपने घर वापस चला जाने दिया जिससे कि पुरन्दर की सेना पर उसकी दयालुता का प्रभाव पड़े और वह अन्त तक लड़े बिना ही हथियार डाल दे। बचाव पक्ष के नायकों को दिलेरखाँ तथा जयसिंह दोनों ने ही सम्मान के परिधान प्रदान किये। इस विजय में शाही सेना के ८० व्यक्ति मारे गये तथा १०९ घायल हुए। (पेरिस पांडुलिपि, १२६ बी)

११. **द्रुतगामी दस्तों द्वारा शिवाजी के गाँवों की लूट**—वज्रगढ़ के हाथ में आने से पुरन्दर पर अधिकार करना आसान हो गया, अथवा स्वयं जयसिंह के शब्दों में यह "पुरन्दर के ताले की चाभी थी।" अब दिलेरखाँ पुरन्दर के किले की ओर बढ़ा, और जयसिंह ने मराठा प्रदेश में आक्रमण आरम्भ किये। जैसा कि उसने बादशाह को लिखे पत्र में बताया उसने ऐसा इसलिए किया कि शिवाजी और बीजापुर के सुल्तान को यह विश्वास हो जाय कि मुगल सेना इतनी विशाल है कि उसको घेरे के बावजूद चारों तरफ फैलाया जा सकता है और शिवाजी की सेना को इकट्ठा होने से रोका जा सकता है जिससे कि वे राज्य के विभिन्न भागों में आतंक और उपद्रव न मचायें। (पेरिस पांडुलिपि, १३३ ए)

घेरे के शिविर से इस प्रकार कुछ सेनापतियों को भेजने का एक गुप्त कारण भी था। उसके अधीनस्थ कुछ अविश्वासी सेनापति थे जिनका वहाँ रहना बेकार ही नहीं बल्कि खतरनाक भी था। दाऊदखाँ कुरैशी किले की पिछली खिड़की के रास्ते की देखभाल के लिए नियुक्त किया गया था; परन्तु कुछ दिनों के बाद यह मालूम हुआ कि मराठों का एक दल उस रास्ते से बिना उसके विरोध के किले में प्रवेश कर गया था। दिलेरखाँ ने दाऊदखाँ को इस असावधानी के लिए बुरी तरह धिक्कारा और इस मामले को लेकर उन दोनों में बहुत झगड़ा हो गया। तब जयसिंह ने दाऊदखाँ को अपने स्वयं की डिवीजन के लिए अन्तरित कर दिया और उसकी जगह खिड़की के सामने पुरदिलखाँ और शुभकर्ण बुन्देला को लगा दिया। परन्तु इससे भी कोई लाभ न हुआ। "शुभकर्ण का इस काम में मन नहीं लगा, और वह शिवाजी का पक्ष करना अत्यधिक पसन्द करता था।" उधर दाऊदखाँ भी अपने नये पद पर शरारत करता था। वह निरन्तर कहता रहता कि पुरन्दर पर अधिकार करना सम्भव नहीं है और उसका घेरा डालना केवल जन और धन का ही नाश करना है। जैसा कि जयसिंह को बाद को पता लगा उसका इस प्रकार घोषणा करने का यह तात्पर्य था कि मुख्य सेनापति का घेरा डालने का उत्साह जाता रहे और दिलेरखाँ असफलता तथा बदनामी सहित वापस लौटे। परन्तु जयसिंह ने उस

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शरारती को शिविर से हटा दिया, और एक स्वतन्त्र शीघ्रगामी सेना तैयार करके उसको उसका नायक बना दिया। अब उसका काम था प्रतिदिन अथवा एक दिन छोड़कर जिले के विभिन्न स्थानों पर आक्रमण करना। (बनारस पांडु-लिपि, १६१ बी; फैयाज, ५६२)

२५ अप्रैल को छह हजार सैनिकों की उस शीघ्रगामी सेना ने जिसमें राजा रायसिंह, शर्जाखाँ (एक बीजापुरी सेनापति), अमरसिंह चन्दावत, अचलसिंह कछवा (जयसिंह के घरेलू सैनिकों का एक मुख्य अधिकारी) और स्वयं जयसिंह के ४०० सैनिक थे, इस आदेश के साथ कूच किया कि वे राजगढ़, सिंहगढ़ तथा रोहिरा के प्रदेशों में दो दिशाओं से प्रवेश करें और "कृषि तथा बस्ती का कोई नामोनिशान न छोड़ें और सब कुछ नष्ट कर दें।" साथ ही साथ कुतुबुद्दीनखाँ और लोदीखाँ को उत्तर दिशा से जिले पर आक्रमण करने और लूटकर शिवाजी को परेशान करने और उनकी शक्ति को नष्ट करने का आदेश दिया गया। (पेरिस पांडुलिपि, १३३ बी)

२७ तारीख को रोहिरा किले के निकट आकर दाऊदखाँ की सेना ने लग-भग ५० गाँवों को जला दिया और बिलकुल नष्ट कर दिया। कुछ मुगल आक्रमण सेना की टुकड़ी ने बहुजन संख्या वाले चार गाँवों में प्रवेश किया। ये गाँव पहाड़ियों के बीच में छिपे थे और इससे पहले कभी वहाँ आक्रमण नहीं हुआ था। आक्रमणकारियों की मदद के लिए और सैनिक आ गये और उन्होंने विरोधियों को हरा दिया, गाँवों पर अधिकार कर लिया, उनको नष्ट कर दिया, और बहुत-से किसान, उनके पशु तथा अन्य माल आदि को साथ लेकर वे लौटे। वहाँ एक दिन ठहरने के बाद, ३० तारीख को मुगल राजगढ़ की तरफ बढ़े और मार्ग में गाँवों को जलाते गये। किले का घेरा डालने के लिए ठहरने के बजाय (जिसके लिए वे तैयार न थे) उन्होंने उसके चारों ओर के गाँवों की लूट की। किले की तोपों की शरण में वहाँ की सेना विध्वंस का यह कार्य देखती रही, परन्तु उन पर प्रत्याक्रमण करने की हिम्मत न की।

आसपास की भूमि पहाड़ी तथा ऊबड़-खाबड़ थी। इसलिए आक्रमणकारी सेना वहाँ से चार मील पीछे हटी और उसने समतल मैदान में गुंजनखोरा दर्रे के पास डेरा लगाकर रात बिताई। अगले दिन (१ मई को) वे शिवापुर पहुँचे। वहाँ से दाऊदखाँ सिंहगढ़ की ओर चला और उसके निकटवर्ती गाँवों को लूटा, परन्तु जयसिंह के आदेश पर ३ मई को पूना लौट गया।

इतने में कुतुबुद्दीनखाँ को, जो पुरखोरा और (कुमारी किले के निकट) तासीखोरा के दर्रों में आक्रमण कर रहा था, शीघ्र ही पूना में वापस बुला

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लिया गया जहाँ वह दाऊदखाँ के साथ शामिल हो गया। ऐसा इसलिए किया गया था कि जयसिंह को यह पता लग गया था कि शिवाजी ने लोहगढ़ के पास एक बड़ी शक्तिशाली सेना इकट्ठी कर ली है जिसको तुरन्त ही छिन्न-भिन्न करना आवश्यक था।

अत: दोनों मुगल सेनाओं को इसी ओर (उत्तर-पश्चिम) भेजा गया। ये पूना से चलकर ४ तारीख को चिंचवाद (१० या १२ मील उत्तर) में ठहरकर ५ तारीख को लोहगढ़ पहुँच गयीं। जब मुगल आक्रमणकारी किले के समीप आ गये तो ५०० मराठों के रिसाले और १००० की पैदल सेना ने आगे बढ़कर उन पर आक्रमण किया। परन्तु साम्राज्यवादी मुगल पीछे न हटे और उन्होंने बाद में आये सैनिकों की सहायता से कठोर संग्राम के बाद मराठों को खदेड़ दिया, जिसमें उनकी बहुत हानि हुई। तब आक्रमणकारियों ने पहाड़ी के चारों ओर बने मकानों को जला दिया और वे बहुत-से कैदियों और पशुओं को ले गये। उन्होंने लोहगढ़, बिसापुर, टिकोना तथा टंगाई किलों से घिरे हुए गाँवों को विध्वंस कर दिया और बालाघाट (ऊँची भूमि) तथा पैन घाट (नीची भूमि) का बहुत-सा भाग बर्बाद कर दिया। इसके पश्चात वे वापस लौट आये। कुतुबुद्दीन और उसके साथी पूना की एक बाहरी चौकी पर ठहर गये और दाऊदखाँ तथा उसके साथी १६ मई को आकर मुख्य सेना में मिल गये।

१२. मराठों द्वारा घेरा तोड़ने के प्रयत्न—इस बीच में मराठे सेनापति भी खामोश न थे। उन्होंने मुगलों को परेशान करके घेरा तोड़ने का प्रयत्न किया। अप्रैल मास के आरम्भ में नेताजी पालकर, जो शिवाजी का एक सम्बन्धी और रिसाले का नायक था, परेंदा की ओर बढ़ा, परन्तु सूपा से मुगलों की एक सेना ने उसका पीछा किया, यह सुनते ही मराठा सेना भाग गयी और उसने युद्ध करने का विचार छोड़ दिया। मई मास के मध्य में कुतुबुद्दीनखाँ को उर्वदा[५] किले की ओर शत्रु के एक एकत्रित दल को तोड़ने के लिए कूच करना पड़ा जिसके विषय में उसे समाचार मिल चुका था। रास्ते के गाँवों को लूटा गया और जहाँ भी शत्रु के आदमी अपने किलों के चारों ओर इकट्ठे होते थे उनको तितर-बितर कर दिया गया। दाऊदखाँ लोहगढ़ पहाड़ी के ऊपर पहुँच गया और वहाँ उसने मराठे सैनिकों को कत्ल किया अथवा भगा दिया। वह ३०० बंदियों और ३००० पशुओं के साथ वहाँ से लौटा। फिर नरकोट में शरण ले रहे ३०० मराठों के रिसाले को हटाने के लिए कुबादखाँ

---

[५] आलमगीरनामा (८६७) में पूना से ११ मील पश्चिम में स्थित उर्वदा को भूल से उर-द्रुग कहा है। (वाई० आर० गुप्ते)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

ने, जो (मृत इहतशामखां की जगह) पूना का नया थानेदार था, एक सेना भेजी जो विजय प्राप्त करने के बाद बन्दी बनाये किसानों और पशुओं को साथ लेकर लौटी। (आलमगीरनामा, ८९७-९९)

परन्तु मराठे हर एक मोर्चे पर असफल न रहे। जयसिंह ने स्वीकार किया है कि, "कभी-कभी हम शत्रु को अपने विरोधी मन्तव्य को पूरा करने से रोकने में असफल रहे।" खाफीखाँ ने और भी स्पष्ट कहा है, "शत्रु के आकस्मिक आक्रमण, उनकी वीरतापूर्ण सफलताएँ, अँधेरी रातों में आक्रमण, कठिन मार्गों तथा सड़कों को रोकना, जंगलों को जलाना—इन सभी ने साम्राज्यवादियों के इधर-उधर चलने को कठिन बना दिया था। मुगलों के बहुत-से मनुष्य और पशु नष्ट हुए।" (२. १८० ब०)

अप्रैल के मध्य में वज्रगढ़ पर कब्जा करने के बाद दिलेरखाँ जोड़ने वाले कूट पर आगे बढ़ा और माची अथवा पुरन्दर के किले के निचले भाग पर घेरा डाल दिया। किले के उत्तर-पूर्वी कोने पर स्थित खडकला की मीनार तक उसने मोर्चे लगाये। पहले तो किले की सेना ने उनको भगा देने के लिए उन पर आक्रमण किये। एक रात को उन्होंने कीरतसिंह पर आक्रमण किया; वह पहले ही तैयार था और बहुत मार-काट के बाद उसने उनको हरा दिया। एक अँधेरी रात में एक और हमला रसूलबेग रोजभानी के मोर्चे पर किया गया; वह सोता हुआ मिल गया, उसकी तोपें बेकार कर दी गयीं और उसके १५ सिपाही घायल हुए। परन्तु लड़ाई का शोर सुनकर निकटवर्ती मोर्चों से मदद आ गयी और शत्रु को बड़े नुकसान के साथ पीछे हटा दिया गया। अगले दिन लाशों के हटाने में भी मुठभेड़ हुई जिसमें मुगलों के आठ आदमी मारे गये।

परन्तु दिलेरखाँ पुरंदर के सामने भयानक मृत्यु की भाँति डटा रहा और उसके आदमी "एक दिन में इतना काम करते थे जितना कि अन्य स्थान पर एक महीने में भी न होता था।"

१३. पुरंदर की बाह्य सुरक्षा पर आक्रमण—जब मई में मुगलों के मोर्चे गोले बारूद से विध्वंस दोनों श्वेत मीनारों के निकट पहुँच गये तो किले की सेना ने जलता हुआ नैफ्था तेल, बारूद से भरी चमड़े की बोरियाँ, बम और भारी पत्थर फेंकने शुरू कर दिये। इसने मुगलों को आगे बढ़ने से रोक दिया। जयसिंह ने आदेश दिया कि लकड़ी के लट्ठों और तख्तों का एक ऊँचा चबूतरा बनाकर उस पर शत्रु का मुकाबला करने के लिए तोपों को चढ़ाया जाय तथा तोपचियों को नियुक्त किया जाय जिससे वे वैरी का मुकाबला कर सकें। उसके पहले दो प्रयत्न असफल रहे; पहली बार लट्ठों को सीधा गाड़ा ही गया था और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दूसरी बार वे लकड़ियों से पाटे ही जा रहे थे कि शत्रु ने उनको जला दिया। परन्तु २० मई को मुगलों ने एक तीसरी मीनार के भागों को पीछे हटकर जोड़ा और सफेद मीनार के सामने निश्चित स्थान पर भेज दिया और यह आदेश दिया कि सर्वप्रथम रक्षा के हेतु सामने एक दीवार बना दी जाय और तब उसके पीछे दो चबूतरे खड़े किये जायँ, जिसका कार्यभार रूपसिंह राठौर तथा गिरिधर पुरोहित पर था। इसके बाद कुछ निशानेबाज चतुर राजपूतों को ऊपर चोटी पर चढ़ा दिया गया जिनका काम अपने तीरों और बन्दूकों से चबूतरे बनाने की अवधि में शत्रु को नीचे रखना था। यह काम सूर्यास्त से दो घंटे पहले समाप्त हो गया।

तब सेनापति को उसके आदमियों की उतावली ने विवश कर दिया। तोपों को चबूतरे पर चढ़ाने से पहले ही और सामने बिना शत्रु को कुचले ही, जब दो घंटे की ही दिन की रोशनी बाकी रह गयी थी, तो कुछ रोहिला सिपाहियों ने दिलेरखाँ को सूचना दिये बगैर श्वेत मीनार पर धावा बोल दिया। शत्रु दीवार की आड़ में बड़ी संख्या में एकत्र हो गये और उन्होंने मुगलों को वहीं पर रोक दिया। परन्तु शीघ्र ही पीछे से अधिक मदद मिल गयी और मोर्चों से निकलकर सैनिकों ने दीवार पर दोनों हाथों से सीढ़ियों द्वारा चढ़कर शत्रु पर धावा बोल दिया। जयसिंह का एक अफसर भूपतसिंह पुआर, जो ५०० सैनिकों की कमान में था, बहुत-से दूसरे राजपूतों के साथ छोटे श्वेत बुर्ज के दायीं ओर कत्ल कर दिया गया। बायीं ओर बालकृष्ण शेखावत और दिलेरखाँ के कुछ अफगान युद्ध करते रहे। ठीक उसी समय अचलसिंह और कीरतसिंह के सहायक सैनिक लकड़ी के ढाँचे के पीछे सुरक्षित स्थान से निकलकर युद्ध-स्थल पर आ गये। आमने-सामने करारी भिड़न्त हुई और मराठे भारी हानि के पश्चात श्वेत बुर्ज को खाली करके काले बुर्ज (जिसे पहले शाह बुर्ज कहते थे) के पीछे हट गये और वहाँ से नीचे मुगलों पर गोले, पत्थर, बारूद से भरे डिब्बे आदि फेंकने लगे। यह देखकर कि अब आगे बढ़ना असम्भव है जयसिंह उस दिन प्राप्त किये हुए किले की चहार-दीवारी के तीन अग्रभागों (बुर्जों) पर ही सन्तुष्ट रहा और उसने अपने आदमियों को आदेश दिया कि वे जहाँ हैं वहीं पर अपने मोर्चे लगायें और काले बुर्ज की ओर बढ़ने की अपेक्षा श्वेत बुर्ज पर ही अपना आधिपत्य जमाये रहें।

अगले दो दिनों में लकड़ी का चबूतरा बनकर तैयार हो गया और उस पर दो छोटी तोपें जमा दी गयीं। शत्रु इतनी ऊँचाई से इस गोलाबारी का

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सामना नहीं कर सकता था, अतः उसने काले बुर्ज तथा उसके निकट किले का एक और आगे का उभरा भाग खाली कर दिया और बुर्ज की दीवार से सटे हुए एक बाड़े में शरण ली। परन्तु वहाँ से उनकी चोटियाँ नहीं देख पड़ती थीं। बाड़ा अरक्षित था, इसलिए वे इसके पीछे मोर्चों में चले गये। इस प्रकार नीचे के किले के पाँच बुर्ज तथा एक बाड़ा मुगलों के हाथ में आ गये।

अब पुरंदर का विध्वंस निश्चित मालूम होने लगा और मानो उस विध्वंस को पूरा करने के लिए जयसिंह की प्रार्थना पर बादशाह ने भारी मात्रा में बड़ी तोपें किले की ओर रवाना कीं। दो महीने की लगातार लड़ाई[६] से किले की सेना की बहुत हानि हुई थी। घेरा डालने के शुरू में उनका एक वीर सरदार मुरार बाजी प्रभु मारा गया था।

१४. मुरार बाजी की मृत्यु—अपने साथ ७०० चुने हुए आदमियों को लेकर मुरारबाजी ने दिलेरखाँ पर आक्रमण किया जो ५,००० अफगान और कुछ अन्य जातियों के सैनिकों के साथ पहाड़ी पर चढ़ने का प्रयत्न कर रहा था। मराठे शीघ्रता से आगे बढ़े, चारों तरफ से शत्रु-सेना में मिल गये और घमासान युद्ध हुआ। मुरार बाजी ने अपने मावल सैनिकों की सहायता से 'बहलिया' पैदल सिपाहियों के अतिरिक्त ५०० पठानों को कत्ल किया। और अपने साथ ६० बहादुर सैनिकों को लेकर दिलेरखाँ के शिविर के रास्ते को रोक दिया।

मुगलों की विशाल सेना ने उसके साथियों को मार डाला; परन्तु मुरार बाजी सीधा दिलेरखाँ की ओर दौड़ा। उसके अद्वितीय साहस से प्रभावित होकर दिलेरखाँ ने उससे आत्म-समर्पण करने के लिए कहा और उसको अभय-दान देकर अपने अधीन एक ऊँचा पद भी देने का वचन दिया। परन्तु मुरार ने क्रोधित होकर इसको अस्वीकार कर दिया और वह दिलेरखाँ पर प्रहार करने ही वाला था कि दिलेरखाँ ने उसको बाण से समाप्त कर दिया। ३०० मावली उसके साथ मारे गये, और शेष किले में चले गये। परन्तु अपने नायक के मरने पर किले के सैनिकों ने, स्पार्टा निवासी ब्रासीदास की माँ की भाँति, हिम्मत न हारी और यह कहते रहे, "क्या हुआ यदि एक आदमी मुरार बाजी मारा गया? हम उतने ही वीर हैं जितना कि वह था और हम उतनी ही वीरता से लड़ेंगे!" (सभासद, ४१; ९१ क० ब०, परिच्छेद ५१)

---

६ आलमगीरनामा (९०३) के अनुसार किले के अधिकार में आने के समय ४००० सैनिक बचे थे। इसलिए सभासद द्वारा किले में बताये गये २००० मूल सैनिकों की संख्या गलत है। (बनारस पांडुलिपि, १८७ ए, १८९ ए)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१५. शिवाजी द्वारा आत्मसमर्पण की चर्चा—अन्त में जयसिंह का लगातार दबाव सफल हुआ। पुरन्दर चारों तरफ से घिरा था। किले के सिपाही भी दो महीने के युद्ध से संख्या में कम हो गये थे और किले के नीचे के पाँच बाहरी भागों के हाथ से निकल जाने से किले की रक्षा करना सम्भव न रह गया था। उनका आत्मसमर्पण करना केवल कुछ समय की ही बात रह गयी थी। शिवाजी ने देखा कि अब और विरोध करना बेकार है। मराठा अधिकारियों के परिवार पुरन्दर में शरण लिये हुए थे और किले के हाथ से निकल जाने का अर्थ था उनकी कैद और अपमान। मुगलों की शीघ्रगामी सेना के आक्रमणों से भी वह अपने देश की रक्षा न कर सके थे। जिधर भी वह देखते पराजय और विनाश ही उनको दिखाई पड़ने लगे।

अपनी सामान्य दूरदर्शिता के अनुसार पिछले कुछ दिनों से वह जयसिंह के पास सन्धि करने के लिए राजदूत भेज रहे थे, परन्तु चतुर राजपूत ने उनकी बात पर गम्भीरता[७] से विचार नहीं किया। जैसे-जैसे मुगलों की सफलता स्पष्ट प्रतीत होने लगी, शिवाजी ने अधिक कर तथा किले देने का वादा करके शान्ति कायम रखने का मूल्य भी बढ़ा दिया। परन्तु सैनिक सफलता के अनुपात में उनकी शर्तें जयसिंह के लिए अधिक लाभदायक न थीं; इसलिए जयसिंह उनको बराबर अस्वीकार करता रहा।

२ जून की मुगल विजय तथा निचले किले पर से जल्दी ही अधिकार हट जाने की आशंका के कारण शिवाजी ने निर्णय कर लिया। उन्होंने जयसिंह से मिलने और बादशाह को सन्धि की नयी शर्तें पेश करने का निश्चय किया कि यदि उसने इनको अस्वीकार कर दिया तो वह कोंकण को वापस देकर आदिलशाह से सन्धि कर लेंगे और तब अधिक जोर से मुगलों के विरुद्ध

---

७ "शाही सेना के पावल के निकट पहुँचने के पश्चात शिवाजी के एजेण्ट मुझसे आकर मिलने लगे, और मेरे पूना पहुँचने के समय तक वे मेरे पास उसके दो पत्र ला चुके थे। परन्तु मैंने उनका कोई उत्तर न देकर उनको निराश वापस कर दिया। तब उसने अपने एक विश्वसनीय सेवक कर्माजी के हाथ हिन्दी में लिखकर एक लम्बा पत्र भेजा, जिसमें मुझसे बार-बार याचना की कि मैं उस पत्र को केवल एक बार तो पढ़ ही लूँ। उसमें शिवाजी ने स्वामिभक्त रहने तथा बीजापुर के युद्ध में, जहाँ कि सफलता की सम्भावना उसके पहाड़ी और कठिन देश की अपेक्षा अधिक थी, हमारी मदद करने का वचन दिया·····उत्तर में मैंने उनसे कहा कि यदि उनको अपने जीवन तथा सुरक्षा की इच्छा है तो वह बादशाह की नौकरी कर लें।" (बनारस पांडुलिपि, ५४ ए)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लड़ाई लड़ेंगे। लगभग २० मई को उन्होंने अपने मन्त्री रघुनाथ वल्लाल अत्रे (पंडितराव) को गुप्त रूप से भेजकर जयसिंह की शर्तों का पता लगाने भेजा। जयसिंह की शर्त थी कि शिवाजी स्वयं आकर बिना किसी शर्त के आत्म-समर्पण करे, उसके पश्चात् उसको शाही दया दिखायी जायगी।[८]

इसके बाद शिवाजी ने जयसिंह से यह आश्वासन प्राप्त कर लिया और शपथ द्वारा पुष्टि कर ली कि उन्हें जयसिंह से मिलने और, चाहे उनकी शर्तें स्वीकार हों या न हों, उन्हें सुरक्षित घर वापस आने दिया जायेगा। यह मिलाप नितान्त गुप्त रूप से होना था क्योंकि "बादशाह ने जयसिंह को शिवाजी से किसी प्रकार की सन्धि की चर्चा करने को मना कर दिया था।"

१६. शिवाजी की जयसिंह से भेंट—रघुनाथ वल्लाल ९ जून को लौटकर शिवाजी के पास आया। १० तारीख को उसने जयसिंह को सूचना भेज दी कि शिवाजी अगले दिन आयेंगे। ११ तारीख को प्रातःकाल ९ बजे जबकि जयसिंह पुरन्दर की तलहटी में शिविर में दरबार लगा रहा था रघुनाथ ने आकर उसको बताया कि शिवाजी पालकी में आ गये हैं और उनके साथ केवल ६ ब्राह्मण हैं। जयसिंह ने तुरन्त ही अपने सचिव उदयराज और उग्रसेन कछवा को बुलाया और कहा कि रास्ते में ही मिलकर शिवाजी से यह कह दें कि यदि वह अपने सारे किलों को सौंप देने को राजी हों तो जाकर मिलें वरना इस स्थान से वह वापस चले जायँ। शिवाजी ने सामान्यतः इन शर्तों को स्वीकार कर लिया और इन दोनों अधिकारियों के साथ वह आगे बढ़े। शिविर के द्वार पर जयसिंह के वेतन अधिकारी ने उनका स्वागत किया और उन्हें अन्दर ले गया। राजा जयसिंह ने कुछ कदम आगे बढ़कर उन्हें गले लगाया तथा अपने पास बिठाया, जबकि सशस्त्र राजपूत लोग चारों ओर खड़े थे जिससे कि अफजलखाँ का वध करने वाला किसी प्रकार की अनुचित घटना न घटा दे!

शिवाजी की शेष हिचकिचाहट को दूर करने के लिए जयसिंह ने एक दृश्य खड़ा कर दिया। मराठा सरदार के आगमन की प्रत्याशा में जयसिंह ने दिलेरखाँ और कीरतसिंह को, जिनके मोर्चे सबसे आगे थे, पुरन्दर पर आक्रमण के लिए सचेत कर दिया था। शिवाजी के आने के बाद जयसिंह के संकेत

---

८ शिवाजी का अगला काम था पंडितराव को वापस भेजकर अपने पुत्र द्वारा आत्मसमर्पण कराने का। जयसिंह ने यह अस्वीकार कर दिया। (बनारस पांडुलिपि, ५५ ए)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पर मुगलों ने आक्रमण करके खडकला के सुरक्षा के स्थानों को अपने अधीन कर लिया। किले की सेना ने उनको रोकने के लिए प्रत्याक्रमण किया, परन्तु उनको पीछे हटा दिया गया। इसमें उनके ८० आदमी मारे गये तथा बहुत-से घायल हुए। राजा के शिविर के भीतर से युद्ध स्पष्ट दिखाई देता था। अपने आदमियों को व्यर्थ में मारे जाते देखकर शिवाजी ने लड़ाई समाप्त करने के लिए किले को सौंप देने का वादा किया। इसलिए जयसिंह ने अपने मीर तुजुक, गाजी बेग को दिलेरखाँ और कीरतसिंह के पास संग्राम समाप्त करने और किले की सेना को बिना परेशान किये निकल जाने देने का आदेश देकर भेजा। शिवाजी का एक अधिकारी गाजीबेग के साथ भेजा गया जो किले के सैनिकों को अधीन होने के लिए सूचना दे। उन्होंने रात में किले में ही आराम करने की प्रार्थना की। (आलमगीरनामा, ९०३)

१७. पुरन्दर की संधि (१६६५)—शिवाजी अपने साथ कोई सामान या अनुचर नहीं ले गये थे, इसलिए जयसिंह ने उनको अपने शिविर कार्यालय में अपना अतिथि बनाकर रखा। आधी रात तक दोनों पक्ष स्थायी शान्ति की शर्तों के विषय में बातचीत करते रहे।[९] परन्तु जयसिंह अपनी स्थिति को भली प्रकार समझता था। उसने बादशाह को भेजे गये अपने पत्रों में यह लिखा : "मैंने एक किला भी कम करने से मना कर दिया। धीरे-धीरे बहुत विवाद के बाद हम इस बात पर सहमत हो गये कि—(क) उनके किलों में से २३ किले जिनकी भूमि से प्रति वर्ष चार लाख होन का राजस्व मिलता है साम्राज्य में मिला दिये जायँ, और (ख) राजगढ़ के सहित १२ किले जिनसे प्रतिवर्ष एक लाख होन प्राप्त होते हैं शिवाजी के अधिकार में इस शर्त पर छोड़ दिये जायँ कि वह बादशाह को सेवा प्रदान करेंगे तथा उनके प्रति स्वामिभक्ति रखेंगे।"

परन्तु शिवाजी ने अन्य दरबारियों और राजाओं की भाँति बादशाह के दरबार में हाजिरी देना अस्वीकार कर दिया किन्तु इसके बदले में उन्होंने अपने पुत्र को अपने प्रतिनिधि के रूप में ५००० घुड़सवारों के साथ (जिनका वेतन और खर्च एक जागीर द्वारा दिया जाय) बादशाह अथवा दक्षिण के मुगल गवर्नर के अधीन नियमित उपस्थिति और सेवा के लिए भेजने का प्रस्ताव रखा। ठीक यही उदयपुर के महाराणा के प्रति अनुग्रह किया गया था। उन्होंने जयसिंह से इस प्रकार कहा—"मैं अपने पिछले कुछ दिनों के

---

[९] बनारस पांडुलिपि, ५६ ए, ६६ बी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बुद्धिहीन और अनिष्ठावान कार्यों के कारण बादशाह के सामने मुँह दिखाने लायक नहीं हूँ। मैं अपने पुत्र को बादशाह का सेवक और दास बनाकर भेजूँगा और उसको उचित जागीर देकर एक पंचहजारी बनाया जायेगा·····। जहाँ तक मुझ अपराधी का प्रश्न है मुझे मुगल सेना में सेवा करने अथवा कोई मनसब देने से छूट दे दें। परन्तु जब कभी भी दक्षिण में आपकी लड़ाइयों में मुझे कोई काम सौंपा जायगा तो मैं उसे तुरन्त ही करूँगा।"

इन शर्तों के अलावा शिवाजी ने एक और समझौता निम्न शर्त के साथ किया : "यदि कोंकण की नीची भूमि जिससे प्रतिवर्ष ४ लाख होन की प्राप्ति होती है और उच्च भूमि (बालाघाट बीजापुरी) जिससे प्रतिवर्ष ५ लाख होन की आमदनी होती है मुझे बादशाह से मिल जायँ, और एक शाही फरमान के द्वारा मुझे यह विश्वास दिया जाय कि ये भूमि मुझको बीजापुर की प्रत्याशित मुगल विजय के पश्चात स्थायी रूप से प्राप्त हो जायगी तो मैं बादशाह को १३ वार्षिक किश्तों में ४० लाख होन देने की स्वीकृति देता हूँ।" इन भूमियों को उन्हें बीजापुरी अधिकारियों से अपनी ही सेना द्वारा प्राप्त करना था।

यहाँ हमें जयसिंह की नीति में शिवाजी और बीजापुर के सुल्तान में स्थाई रूप से अनबन पैदा कराने की चतुराई दिखाई पड़ती है। जैसा कि उसने बादशाह को लिखा—"इस नीति से तीन लाभ होंगे : पहला यह कि हमको ४० लाख होन अर्थात दो करोड़ रुपये मिलेंगे, दूसरे शिवाजी का बीजापुर से विरोध हो जायगा, तीसरे शाही सेना को इन वियुक्त और वनैले क्षेत्रों में लड़ना न पड़ेगा क्योंकि वहाँ से बीजापुरी सेना को निकाल भगाने का काम शिवाजी का होगा।" इसके बदले में बीजापुर के आक्रमण में शिवाजी ने अपने पुत्र शम्भूजी की २००० रिसाले की मनसब तथा स्वयं अपने अधीन ७००० विशेष पैदल सनिकों के साथ मुगलों की सहायता करने की स्वीकृति दी। (बनारस पांडुलिपि, ७०)

१८. शिवाजी को मुगलों से सम्मान-प्राप्ति—किले का घेरा समाप्त करने वाले इस शान्तिपूर्ण समझौते पर दिलेरखाँ बड़ा क्रोधित हुआ, क्योंकि एक तो इससे उसको मिलने वाले सैनिक सम्मान का अवसर छिन गया, और दूसरे शिवाजी ने बादशाह से क्षमा दिलवाने के मामले में उसे मध्यस्थ नहीं बनाया था। इसलिए उसने अपने मोर्चों से हटने अथवा युद्ध-विराम संधि की स्वीकृति देने से मना कर दिया। चतुर जयसिंह ने अब उसको समझाया। १२ तारीख को, जबकि जनता को शिवाजी के आने का पता भी न था,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उनको राजा रायसिंह के साथ दिलेरखाँ से भेंट करने के लिए हाथी पर बैठा कर भेजा। दिलेरखाँ ने इससे प्रभावित होकर उनको दो घोड़े, एक तलवार, एक जड़ाऊ कटार और बहुमूल्य कपड़े के दो टुकड़े भेंट किये। इसके बाद दिलेरखाँ शिवाजी को अपने साथ जयसिंह के पास वापस ले गया और उनका हाथ पकड़कर राजा को सौंप दिया। राजा ने शिवा को एक सम्मान-परिधान, एक घोड़ा, एक हाथी, और साफे के लिए एक 'जीघा' भेंट किया। शिवाजी ने कहा, "मैं उनके एक निष्ठावान परन्तु शस्त्रहीन सेवक की भाँति बादशाह की सेवा करूँगा।"

उस दिन (१२ जून) समझौते के अनुसार ७००० आदमियों और औरतों ने (जिनमें से ४००० लड़ाकू थे) पुरन्दर के किले को छोड़ दिया और मुगलों ने उस पर अधिकार कर लिया; सारे भण्डार, हथियार, तोपें और अन्य सामान जो वहाँ मिले थे सरकार ने ले लिये। शिवाजी के आदमियों के साथ अन्य ५ किलों पर अधिकार प्राप्त करने के लिए मुगल अधिकारियों को भेजा गया, जिनको कि मराठों को खाली करना था।

इससे कुछ दिन पहले जबकि शिवाजी अपने ब्राह्मण संदेश-वाहकों को जयसिंह के पास भेज रहे थे, जयसिंह ने अपनी सामान्य दूरदर्शिता से बादशाह को लिख भेजा था जिसमें उसने याचना की थी कि एक शाही फरमान शिवाजी के नाम भेज दिया जाय। यह फरमान शिवाजी को अधीनता स्वीकार करते समय दिया जाने को था। संयोगवश ऐसा हुआ कि बादशाह का भेजा फरमान और एक सम्मान-परिधान हथियार डालने के अगले ही दिन आ गये। राजा की सलाह से दरबार के शिष्टाचार के नाते शिवाजी फरमान का स्वागत करने के लिए ६ मील दूर से पैदल चलकर आये, और उन्होंने सम्मान-परिधान धारण किये। (आलमगीरनामा, ६०४)

१४ तारीख को जयसिंह ने शिवाजी को एक हाथी और दो घोड़े भेंट करके कीरतसिंह के साथ, दाऊदखाँ से औपचारिक भेंट करने के बाद राजगढ़ को भेज दिया।

१४ तारीख के मध्याह्न में कोन्दाना पहुँचकर शिवाजी कीरतसिंह को किला सौंपकर राजगढ़ चले गये जहाँ वह १५ तारीख को पहुँच गये। १७ तारीख को उग्रसेन कछवा के अधीन शम्भूजी को राजगढ़ से भेज दिया और वे १८ तारीख को जयसिंह के शिविर में पहुँच गये। (बनारस पांडुलिपि, ५७ ए)

पुरन्दर की संधि के अनुसार मराठों ने बादशाह को निम्नलिखित किले

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

समर्पण कर दिये (आलमगीरनामा, ६०५) : दकन में (१) रुद्रमाल अथवा वज्रगढ़, (२) पुरन्दर, (३) कोंदाना, (४) रोहिड़ा, (५) लोहगढ़, (६) ईसागढ़, (७) टंकी, (८) कोंदाना के निकट खडकला, (९) टिकोना, कोंकण में, (१०) माहुली, (११) मुरंजन, (१२) खीरदुर्ग, (१३) भण्डार-दुर्ग, (१४) तुलसी-खुल, (१५) नरदुर्ग, (१६) खैगढ़ अथवा अंकोला, (१७) मार्गगढ़ अथवा अत्र, (१८) कोहज, (१९) बसंत, (२०) नंग, (२१) करनाल, (२२) सोनगढ़, और (२३) मानगढ़।

इन शर्तों को पुष्टीकरण के लिए बादशाह के पास भेजा गया; इनके साथ ही शिवाजी की ओर से अधीनता स्वीकार करने का क्षमा-याचना का एक पत्र भी था (परन्तु इसका मसौदा जयसिंह के सचिव उदयराज ने बनाया था); साथ ही में जयसिंह का सिफारशी पत्र भी था जिसमें शर्तों को स्वीकार करने और शिवाजी को एक सम्मान-परिधान भेंट करने की सिफारिश की गयी थी। ये सब पत्र आदि औरंगजेब बादशाह के पास दिल्ली में २३ जून को पहुँचे, और बादशाह ने प्रसन्नतापूर्वक वे सब शर्तें स्वीकार कर लीं। (हल्फ अंजुमन बनारस पाण्डुलिपि २०७ ए; आलमगीरनामा ६०७; पारसनिस पाण्डुलिपि संख्या ८)

इस प्रकार सैनिक कार्रवाई शुरू करने के तीन महीने से भी कम अवधि में जयसिंह शिवाजी को पराजित करने में सफल हुआ; उसने इस उद्दण्ड सरदार को अपने राज्य का बहुत-सा भाग छोड़ देने और बादशाह के अधीन रहने पर मजबूर कर दिया। यह एक शानदार विजय थी। शिवाजी ने अपने वचनों को वफादारी से निभाया; बीजापुर की लड़ाई में उन्होंने मुगलों की ध्वजा के नीचे विशिष्ट सेवा की जिसका सरकारी पत्रों में जिक्र किया गया।

१९. बीजापुर के आक्रमण में शिवाजी द्वारा मुगलों की सहायता—शिवाजी के साथ इस प्रकार सन्तोषपूर्वक लड़ाई खत्म हो जाने और संधि की सब शर्तें ईमानदारी से पूरी हो जाने के बाद जयसिंह ने अब बीजापुर पर आक्रमण करने की तैयारियाँ शुरू कीं जिससे कि महाराष्ट्र में विजय के पश्चात उसकी सेना आलस्य में न पड़ी रहे। सितम्बर में जयसिंह को बादशाह का पत्र मिला जिसमें उसने शिवाजी के विषय में उसकी सभी सिफारिशों को स्वीकार कर लिया था। साथ में एक फरमान (जिस पर बादशाह की हथेली का निशान था) और शिवाजी के लिए सम्मान-परिधान भी भेजे। जयसिंह ने शिवाजी को निमन्त्रण दिया कि वह आकर सम्मानपूर्वक शाही भेंट को स्वीकार करें। "यह मालूम करके शिवाजी, जो उस समय आदिलशाही कोंकण में थे, शीघ्र ही

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चलकर २७ सितम्बर, १६६५ को मेरे शिविर पर आये । ३० तारीख को मैंने उन्हें अपने पुत्र कीरतसिंह और वेतन-अधिकारी जानीखाँ के साथ आगे बढ़कर बादशाह के पत्र का रास्ते में ही स्वागत करने के लिए भेजा ।"

मुगल दरबार के शिष्टाचार के अनुसार इस अवसर पर कुछ रस्म अदा की गयी, "क्योंकि जब से शिवाजी राजा के पास अपराधी बनकर आये थे उस दिन से आज तक शिवाजी ने अपने साथ कोई अस्त्र नहीं रखा था, इसलिए जयसिंह ने अब उनको एक जड़ित तलवार और एक कटार दिये और उनको धारण करने के लिए उनसे अनुरोध किया ।" इस समारोह से शिवाजी को बादशाह की अनुकम्पा फिर प्राप्त हो गयी । (आलमगीरनामा, ९०७)

इसके बाद जयसिंह ने शिवाजी को शाही खजाने से दो लाख रुपये देकर भेज दिया जिससे कि वह अपने ९००० आदमियों को इकट्ठा करके आने वाली लड़ाई की तैयारी करे । शिवाजी ने जयसिंह को वचन दिया कि कूच करने से एक दिन पहले वह आकर उसके साथ शामिल हो जायँगे ।

अन्त में २० नवम्बर, १६६५ को जयसिंह पुरन्दर के किले से बीजापुर[१०] के आक्रमण के लिए रवाना हो गया । शिवाजी और उनके सम्बन्धी नेताजी पालकर—"जिसको दक्षिण के लोग दूसरा शिवाजी कहते थे"—के अधीन ९००० मराठों की सेना ने मुगल सेना में बायें केन्द्र का स्थान प्राप्त किया ।

सैनिक कार्रवाई के प्रथम मास में जयसिंह की विजय के मार्ग में कोई रुकावट न आयी । पुरन्दर से बीजापुर के उत्तर में ५२ मील दूरी पर स्थित मंगलवीर किले तक आक्रामक बिना किसी विरोध के आगे बढ़ते रहे; मार्ग में बीजापुर के किलों को लोगों ने या तो भय से छोड़ दिया या शिवाजी की सेना के आदेश पर वे अधीन हो गये; शिवाजी को सबसे आगे इसीलिए भेजा गया था । पुरन्दर से लगभग ४० मील दूर दक्षिण-पूर्व में फल्टन में सेनाओं ने

---

[१०] जयसिंह और शिवाजी द्वारा बीजापुर पर आक्रमण : हल्फ अंजुमन बनारस पांडुलिपि, ७८ए-९४ ए, १३८ बी, १७२ बी, १७३ बी, १९० बी, १९२ ए-१९३ बी, २०१ बी-२०२ ए, २१४ ए-२१५ ए, २३१ ए-२३३ बी); स्टोरिया (२.१४१-१४२); आलमगीरनामा (९८८-१०२१); बसातिन-उस-सलातीन (४०६-४२७); तारीखे-अली द्वितीय में वर्णन व्यर्थ है क्योंकि उसमें भाव को अलंकृत भाषा ने बिलकुल दबा दिया है । मराठे लेखक इस सम्बन्ध में बिलकुल मौन हैं । युद्ध के विवरण के लिए मेरी पुस्तक 'औरंगजेब का इतिहास' देखिए, खण्ड ४, अध्याय ४१ । नवम्बर, १६६५ में शहजादा मुअज्जम दक्षिण के वाइसराय के पद का कार्यभार जयसिंह को सौंपकर दरबार के लिए चला गया । (आलमगीरनामा, ९२४)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

७ दिसम्बर को प्रवेश किया; फल्टन के दक्षिण-पश्चिम में १४ मील दूर थाथ-वाड़ा में ८ तारीख को; खाटव (फल्टन के २५ मील दक्षिण) में लगभग एक सप्ताह बाद और स्वयं मंगलवीर में १८ तारीख को प्रवेश किया। इन सेवाओं के लिए शिवाजी को बादशाह की ओर से एक प्रशंसापत्र, एक सम्मान-परिधान और एक जड़ित कटार मिले। (पारसनिस पांडुलिपि, पत्र-संख्या ६)

आक्रमणकारी बढ़ते गये। २४ दिसम्बर को वे पहली बार शत्रु के सम्पर्क में आये। अगले दिन दिलेरखाँ और शिवाजी के अधीन एक मुगल सैनिक टुकड़ी ने अपने शिविर से १० मील दूर कूच किया और बीजापुर के १२,००० सैनिकों के दल से युद्ध किया; बीजापुरी सेना प्रसिद्ध सेनानायक शरजाखाँ और खवासखाँ की कमान में थी और उनकी मराठा सेनाएँ कल्याणी के जादवराव (घोरपड़े ?) तथा शिवाजी के सौतेले भाई व्यंकोजी के आधिपत्य में थीं। दक्षिणी सेना दिल्ली के रिसालों के मुकाबले में आने से बचती रहीं, परन्तु इन्होंने जहाँ-तहाँ युद्ध करके अपनी सैन्य चालों से उनको परेशान कर दिया। लम्बी लड़ाई के बाद दिलेरखाँ की अथक शक्ति और उत्साह ने शत्रु पर बार-बार आक्रमण करके बैरी के दल को ध्वंस कर दिया। अपराह्न के समय वे पीछे हट गये; इसमें उनका एक सेनापति (अबीसीनिया का याकूत) और १५ कप्तान मारे जाने के अलावा बहुत-से झण्डे, घोड़े और अस्त्र-शस्त्र मुगलों के हाथ लगे। परन्तु जैसे ही विजेता मुगल अपने शिविर को लौट रहे थे तो कपटी शत्रु ने अचानक ही उन पर दो पक्षों से और पीछे से राकटों द्वारा जोर का आक्रमण किया। नेताजी के अधीन मराठों पर जो दल के पीछे थे इसका सबसे अधिक प्रभाव पड़ा परन्तु उन्होंने भली प्रकार मुकाबला किया। किन्तु जब दक्षिण वालों ने नेता को चारों ओर से बुरी तरह से घेर लिया तो उसने कीरतसिंह और फतहखाँ से सहायता माँगी, और उनकी मदद से बैरी को पीछे खदेड़ दिया। कल्याणी के जादवराव को बन्दूक की गोली से चोट आयी जिससे वह पाँच-छह दिन में मर गया। शिवाजी और उनका भाई व्यंकोजी एक-दूसरे के विरोध में लड़े !

दो दिन रुकने के पश्चात जयसिंह ने फिर २७ मार्च को आगे कूच किया। दूसरे दिन संध्या को डेरा डालने की भूमि पर पहुँचकर, उसने थोड़ी-सी सेना पड़ोस के स्थानों से बीजापुरी सेना को भगा देने के लिए भेजी। युद्ध ने शीघ्र ही सामान्य रूप ले लिया, और जयसिंह स्वयं ने बैरी की सबसे बड़ी डिवीजन पर आक्रमण किया। शिवाजी और कुमार की रतसिंह दोनों ने एक ही हाथी पर बैठकर सेना का नेतृत्व किया और वे दक्षिण की सेनाओं पर टूट पड़े। घमा-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सान युद्ध के पश्चात वैरी मैदान छोड़कर भाग गया । उसके एक सहस्र आदमी खेत रहे और इससे भी अधिक घायल हुए ।

२९ दिसम्बर, १६६५ को जयसिंह मखनापुर[११] में आया, जो बीजापुर किले से दस मील उत्तर में है। यहाँ वह रोक दिया गया और एक सप्ताह ठहरने के बाद वह ५ जनवरी, १६६६ को पीछे हटने के लिए मजबूर हो गया, क्योंकि अचानक आक्रमण करके बीजापुर पर अधिकार कर लेने की उसकी समस्त आशाओं पर पानी फिर गया । वह नियमित घेरा डालने के लिए तैयार न था क्योंकि उसको यह आशा थी कि अरक्षित और घरेलू झगड़ों से अस्त-व्यस्त बीजापुर को लेने का 'स्वर्ण अवसर उसे प्राप्त' हो ही जायगा और इसलिए वह अपने साथ न तो बड़ी तोपें ही लाया था और न घेरा डालने का अन्य सामान । इसके विपरीत, आदिलशाह ने बीजापुर किले की सुरक्षा विशेष रूप से कर ली थी; उसकी दीवारों की मरम्मत कर ली गयी थी, खाने-पीने की सामग्री और अन्य सामान बड़ी मात्रा में इकट्ठा कर लिया गया था, कर्नाटक की पैदल सेना के आ जाने से उसकी किले के भीतर की सेना की संख्या बढ़कर ३०००० हो गयी थी, और सात मील के अर्धव्यास में चारों ओर का प्रदेश बर्बाद कर दिया था, उसमें पानी की पूर्ति खत्म कर दी गयी थी, और उसके वृक्ष काट डाले गये थे । साथ ही उसने शारजाखाँ और सिद्दी मसूद की अधीनता में सेना की टुकड़ी मुगल राज्य को लूटने के लिए भेज दी थी जिससे जयसिंह की सेना का पीछे का भाग उससे मुठभेड़ के लिए चला जाय और इस प्रकार उसकी सेना दो भागों में विभाजित हो जाय ।

२७ जनवरी को पीछे हटती हुई मुगल सेना परेंदा से १६ मील दूर एक स्थान पर पहुँच गयी और वहाँ २४ दिन ठहरी । इसकी गति-विधि का वर्णन हम यहीं पर छोड़ते हैं, क्योंकि शिवाजी के इतिहासकार को उसके आगे की कार्रवाई से कोई सरोकार नहीं है ।

२०. **शिवाजी की पन्हाला पर असफलता** (१६६६)—बीजापुर के सम्मुख अप्रत्याशित रोक हो जाने पर जयसिंह ने सेना को किसी दूसरी ओर ले जाने की बात सोची । जैसा उसने दरबार को एक पत्र में लिखा, "मेरी प्रार्थना पर बादशाह ने (२५ दिसम्बर को) शिवा के लिए एक सम्मान-परिधान और एक कटार भेजी और वह बीजापुर का घेरा डालने में सहयोग देने को तैयार

---

[११] फारसी पांडुलिपि में नाम दो तरह से पढ़ा जा सकता है, मखना अथवा नागथाना । पिछला बीजापुर के उत्तर-उत्तर-पूर्व से ८ मील दूरी पर एक गाँव है ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

थे, परन्तु·····मैंने इसे उचित नहीं समझा। शिवाजी ने मुझसे कहा—'यदि आप मुझ पर छोड़ दें तो मैं सम्राट् के लिए पन्हाला को ले लूँ जिसकी जटिलताओं को मैं भलीभाँति जानता हूँ; मैं आक्रमण उस समय करूँगा जब किले की सेना सावधान न होगी। मैं उस क्षेत्र में इतनी अव्यवस्था कर दूँगा कि मेरा विरोध करने के लिए वैरी बहुत-सी सेना भेजने के लिए मजबूर हो जायगा।' चूँकि उन्होंने इन शब्दों में कार्रवाई करने का वचन दिया था, मैंने उन्हें अपने आश्वस्त कार्य पर भेज दिया।" (हल्फ अंजुमन बनारस पांडुलिपि, ८४ बी)

परन्तु जैसा जयसिंह के गोपनीय पत्र-व्यवहार से मालूम होता है, इस कार्रवाई का कारण बहुत भीतरी था। बीजापुर के किले के सम्मुख अप्रत्याशित असफलता हो जाने से मुगल शिविर में मतभेद पैदा हो गये। जयसिंह के विरोधी दल ने, जिसका नेता दिलेरखाँ था,[१२] इस असफलता का कारण शिवाजी की ढील-ढाल या धोखाधड़ी बताया, और आग्रह किया कि दंड के रूप में शिवाजी को बन्दी बना लिया जाय। जयसिंह ने तुरन्त ही शिवाजी के लिए उस खतरे को ताड़ लिया जो उनके सामने पराजित व क्रोधित मुगल सैनिकों के कारण था। मराठा सरदार की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए और उनको उनके वैरियों से बहुत दूर कर देने के हेतु, उसने इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया कि मराठा सेना बीजापुर के पश्चिमी सूबों में मुख्य सेना से अलग करके भेज दी जाय। (हल्फ अंजुमन, १९५ ए, ८४ बी, १९२ ए; केवल संकेत)

११ जनवरी, १६६६ को शिवाजी ने जयसिंह को छोड़ा। पाँच दिन बाद वह पन्हाला के निकट पहुँच गये और सूर्योदय से तीन घंटे पहले उन्होंने किले पर आक्रमण किया। परन्तु किले की सेनाएँ चौकन्नी थीं और उन्होंने डटकर उसकी रक्षा की। शिवाजी के एक हजार आदमी हताहत हुए। जब सूर्योदय हुआ तो प्रकाश में शिवाजी ने देखा कि युद्ध जारी रखना पागलपन का काम

---

१२ मनुक्की बलपूर्वक कहता है कि दिलेरखाँ ने कई बार जयसिंह से कहा कि "शिवाजी की हत्या कर दी जाय; और कम से कम उसे (दिलेरखाँ) ऐसा करने का अवसर तो दिया जाय, इस कार्य का समस्त दायित्व वह अपने ऊपर लेगा, और राजा (जयसिंह) पर आँच न आने देगा।" (स्टोरिया २.१३७) अंग्रेजी कोठी के अभिलेखों के अनुसार "मुगलों और इस देश के युद्ध में शिवाजी भाग गये, क्योंकि उन्हें आशंका थी कि कहीं दिलेर उन्हें मार न डाले, परन्तु उन्होंने उस वजीर (दिलेर) से कहा था कि वह बीजापुर को दस दिन के भीतर ले लेंगे; इसी आश्वासन पर वह १०,००० रिसाले को लेकर आगे बढ़े, परन्तु वह असफल हुए और उन्हें बहुत शीघ्र पीछे हटना पड़ा।" (कोठी के अभिलेख, सूरत, खण्ड १०४ में दकन के समाचार)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

है और खिन्न होकर उन्होंने लगभग २७ मील पश्चिम की ओर स्थित स्वयं अपने किले खेलना (विशालगढ़) में शरण ली। परन्तु उनकी सेनाएँ उस क्षेत्र की लूटमार करती रहीं और सिद्दी मसूद तथा रुस्तमेजमाँ के अधीनस्थ ६००० बीजापुरी सेना को बाहर मैदान में लाने और रोके रहने में सफल हुईं। (हल्फ अंजुमन, ८४ बी-८५ ए; आलमगीरनामा, १००२)

पन्हाला पर शिवाजी की विफलता का समाचार जयसिंह को २० जनवरी को मिला। नेताजी के छोड़ जाने से और भी धक्का लगा। शिवाजी से नाराज हो जाने पर नेताजी बीजापुर से चार लाख होन लेकर आदिलशाह की सेवा में पहुँच गया, और उसने मुगल राज्य को बड़े उत्साह और प्रभावपूर्ण ढंग से लूटना आरम्भ कर दिया। भला जयसिंह ऐसे आदमी को कैसे खो सकता था! अतएव उसने फिर नेताजी को फुसला लिया (२० मार्च); उसको कई प्रलोभन पत्र भेजे गये और उसकी सभी ऊँची माँगों को स्वीकार कर लिया गया, जैसे मुगल श्रेष्ठी में पाँच हजार के कमांडर का मनसब, साम्राज्य के बसे हुए और लाभकर पुराने भाग में एक जागीर की स्वीकृति (जो दक्षिण में नये जीते हुए प्रदेश से भिन्न था जिस पर न तो पूरी विजय हो पायी थी, न जो ठीक ढंग से बस पाया था और जहाँ सदा लूटमार होती रहती थी), एवं ५०,००० रुपये नगद। (हल्फ अंजुमन, १९३)

जनवरी, १६६६ में नेताजी की शिवाजी से फूट का कारण स्पष्ट हो जायगा यदि हम दो सबसे पहले के मराठी स्रोतों में स्पष्ट भूल का निराकरण कर लें। सभासद (पृष्ठ ५७) में लिखा है कि नेताजी सरे-नौबत (घोड़ों के स्वामी) के पद से हटा दिया गया और उस पद पर कर्तोजी गूजर को (प्रताप-राव की पदवी देकर) नियुक्त किया; यह नेताजी को दण्ड दिया गया था क्योंकि वह अपने निर्दिष्ट स्थान पर अनुपस्थित था जब शिवाजी ने पन्हाला किले के सम्मुख सिद्दी जौहर के घेरे के स्थानों पर रात को आक्रमण किया था और जो इस असावधानी के कारण विफल रहा। ९१ कलमी बखर (परिच्छेद ३८) में भी यही बात लिखी गयी है; इसके वर्णन में अन्तर केवल इतना है कि इसमें नेता के निकट सम्बन्धी को दोषी बताया गया है, और यह कि शिवाजी ने रोष में आकर उसका एक महीने का वेतन कम कर दिया—इस आदेश के विरुद्ध नेताजी ने अशिष्ट रूप से घोर आपत्ति की, जिस पर शिवाजी ने नेताजी को तुरन्त बरखास्त कर दिया। इस प्रकार नेताजी की बरखास्तगी १६६० में हुई, यद्यपि सभासद ने यह घटना १६६६ की घटनाओं के साथ दी है। परन्तु यह निश्चित तथ्य है कि नेताजी जनवरी, १६६६ तक शिवाजी के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रिसाले की कमान में रहा; जयसिंह ने १६६५ में लगातार नेताजी को 'दूसरा शिवा' कहा है, और अंग्रेजी कोठी के एक पत्र में जनवरी, १६६६ तक 'सरे-लशकर' कहा है। अतएव, केवल एक संशोधन की आवश्यकता है, वह यह कि नेताजी जनवरी, १६६६ में बरखास्त किया गया और इसका कारण था १६ जनवरी १६६६ को पन्हाला के किले पर आक्रमण के समय उसका अपने नियुक्त स्थान पर मौजूद न रहना, और न कि छह वर्ष पहले उस किले के भीतर से रक्षा करने वाले आक्रमणकारियों के रूप में उसका होना। १६६६ का मराठा आक्रमण असफल रहा, इसका मुख्य कारण यह था कि शिवाजी को नेताजी के सेना-दल की अत्यधिक देर तक बाट देखनी पड़ी, और इसलिए आकस्मिक आक्रमण की बात खत्म हो गयी (क्योंकि इतने बड़े किले के विरुद्ध सफलता केवल इसी तत्त्व पर निर्भर रह सकती थी); भयानक आक्रमण होने से पूर्व ही घिरी हुई सेना सचेत हो गयी थी, किले की दीवार के पास से पहले ही हट गयी थी जिस पर आक्रमण करने के लिए अब कोई नेताजी न था, और अब उसने पूरे बल से शिवाजी के सेना-क्षेत्र से अपनी रक्षा की। मराठा अभिलेखों में १६६६ से पूर्व एक बार भी प्रतापराव का जिक्र नहीं है कि उसने नेताजी पाल्कर को ग्रस्त कर लिया था।[13] जनवरी, १६६६ के अन्त में नेताजी के पक्षत्याग ने, जो हाल की पराजय के पश्चात हुआ, जयसिंह को बहुत भय-भीत कर दिया। यदि शिवाजी ने भी ऐसा कर लिया होता तो पूरी मराठा सेना ही वैरी की सेना से मिल जाती और दोनों के बीच में मुगल आक्रमणकारी नष्ट हो जाते। जैसा उसने सम्राट को लिखा, "अब क्योंकि आदिलशाह और कुतुबशाह दोनों मिलकर शरारत करने पर उतारू हैं, यह आवश्यक है कि शिवा को सभी साधनों द्वारा अपनी ओर मिला लिया जाय और उसे आपसे भेंट करने के लिए उत्तरी भारत में भेज दिया जाय।" (९४ ए) जब सम्राट ने यह प्रस्ताव मान लिया तो जयसिंह शिवाजी को शाही दरबार में उपस्थित होने को राजी करने लगा।

---

[13] सभासद ने (पृष्ठ ४४) यह लिखने में भी भयानक भूल की है कि जब मार्च, १६६६ में शिवाजी आगरे के लिए रवाना हुए तो उन्होंने घर पर अपनी सेना का कार्यभार नेताजी को दे दिया था। हम निश्चित रूप से जानते हैं कि इस तारीख से दो महीने पहले नेताजी ने शिवाजी की सेवा छोड़ दी थी और वह बीजापुर चला गया था, जहाँ से उसे जयसिंह ने मुगल सेना (न कि शिवाजी की सेना) के लिए इसी मार्च के उत्तरार्ध में फुसला लिया था। (देखिए मेरी पुस्तक 'हाउस ऑव शिवाजी', अध्याय १०)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय ६

औरंगजेब से भेंट

(१६६६ ई०)

१. मुगल दरबार में पहुँचने पर शिवाजी की आशंकाएँ और आशाएँ।
२. शिवाजी की अनुपस्थिति में राज-प्रबन्ध की व्यवस्था।
३. आगरे के लिए शिवाजी की यात्रा।
४. आगरे में शिवाजी को नई जानकारी।
५. शिवाजी की औरंगजेब से भेंट क्यों असफल हुई ?
६. शिवाजी औरंगजेब के समक्ष।
७. शिवाजी जाल में और भी अधिक जकड़ दिये गये।
८. शिवाजी के आगरे में बन्दी होने की अवधि में मुगल नीति।
९. शिवाजी का आगरे से निकल भागना।
१०. शिवाजी का घर वापस लौटना।
११. जयसिंह की चिन्ताएँ और शिवाजी के विरुद्ध योजनाएँ।

परिशिष्ट—शिवाजी की आगरे से वापसी : तारीखें और मार्ग

१. मुगल दरबार में पहुँचने पर शिवाजी की आशंकाएँ और आशाएँ— जयसिंह वचनबद्ध था कि वह शिवाजी को मुगल दरबार में उपस्थित करेगा। परन्तु यह सरल काम न था। पुरन्दर की सन्धि में यह स्पष्ट कर दिया गया था कि न तो वह मुगल सैनिक सेवा (मनसब) में सम्मिलित होंगे और न शाही दरबार में उपस्थित होंगे। इसके प्रबल कारण थे। एक कारण तो यह था कि वह और उनके देशवासी औरंगजेब के वचन पर विश्वास नहीं करते थे और उनकी धारणा थी कि सम्राट् विश्वासघात और अत्याचार का कोई भी काम कर सकता है। फिर, मराठा सरदार को किसी मुस्लिम के आगे झुकाने से जन्मजात घृणा थी; उनका पालन-पोषण नगरों और दरबारों से दूर पहाड़ और जंगलों के स्वतन्त्र और एकान्तवास के वातावरण में हुआ था; उन्होंने अपनी माँ और अपने गुरु से, अपने बचपन के साथियों और सन्तों से, जिनका वह सम्मान करते थे, धर्मनिष्ठ हिन्दू भावनाएँ प्राप्त की थीं; और किसी ऊँचे अधिकारी की सेवा में छोटे पद पर कार्य करने के बिना ही वह स्वतन्त्र शासक बन गये थे। अतएव वह पहले शाही दरबार में उपस्थित होने के विरोध में थे।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

परन्तु जयसिंह ने उनको अच्छा पुरस्कार मिलने की आशा दिलायी। उसने उन्हें आगरा भेजने के लिए "अनेक युक्तियों" का प्रयोग किया (जैसा कि उसने अपने पत्रों में बार-बार लिखा)। मराठा इतिहासकारों का कथन है कि जयसिंह ने शिवाजी को यह आशा दिलायी कि सम्राट से भेंट करने के पश्चात वह सम्भवतः मुगल दक्षिण का वाइसराय बनाकर भेज दिये जायँगे, और बीजापुर तथा गोलकुण्डा पर विजय प्राप्त करने के लिए उन्हें यथेष्ट जन और धन की प्राप्ति होगी। बादशाह ने ऐसा कोई वादा कभी नहीं किया था, और फारसी इतिहास तथा जयसिंह के पत्र इस मामले में मौन हैं। परन्तु इसकी सम्भावना बहुत अधिक है कि चालाक राजपूत सेनापति ने शिवाजी को जो अस्पष्ट आशाएँ दिलायीं उनमें सम्भवतः यह भी थी कि वह दक्षिण के वाइसराय नियुक्त कर दिये जायेंगे, जहाँ पर कि जयसिंह और उससे पूर्व सभी शाही प्रतिनिधि असफल हो गये थे, और शिवाजी के समान जन्मजात सेनापति और प्रसिद्ध विजेता को ही सफलता मिलने की आशा की जा सकती थी। दक्षिण का कार्यभार बहुत गहन था और केवल सेनापतियों ने शाही साधनों को इतना नष्ट कर दिया था कि १६५६ और १६६६ में बादशाह ने स्वयं वहाँ जाकर और स्थानीय सुल्तानों के विरुद्ध मोर्चा लेने का विचार किया। शिवाजी की पूर्व कृतियाँ ऐसी थीं जिनसे आशा की जा सकती थी कि यदि दिल्ली के विपुल साधन उन जैसे प्रतिभाशाली सेनानायक को सुपुर्द कर दिये जायँ, तो उनसे अवश्य सफलता की आशा की जा सकती थी। यह अवश्य ही अधिक उचित मालूम होता था (जैसी कि सम्भावना है कि जयसिंह ने कहा हो) कि बादशाह शिवाजी से स्वयं मिलकर और उनकी योग्यता देखकर उन्हें दक्षिण का वाइसराय नियुक्त कर देगा जिससे कि उस पर विजय प्राप्त की जा सके और स्वयं वह परेशानी से बच जाय।[1]

दक्षिण के समस्यामूलक वाइसराय के पद के अतिरिक्त शिवाजी को एक छोटा-सा परन्तु निकट का ही काम था जो सम्राट से व्यक्तिगत भेंट द्वारा ही तय किया जा सकता था। उन्होंने सम्राट से प्रार्थना की थी कि वह सिद्दी को यह आदेश कर दे, जो अब शाही सेवा में था, कि जंजीरा द्वीप उन (शिवाजी)

---

[1] सभासद, ४४ व ४८, में लिखा है कि शिवाजी ने स्वयं प्रस्ताव रखा कि यदि उन्हें दक्षिण का प्रधान सेनापति नियुक्त कर दिया जाय और पूर्व निजामशाही राज्यों को जीतने की आज्ञा उन्हें मिल जाय, तो वह बादशाह के लिए बीजापुर और गोलकुण्डा राज्यों को जीत लेंगे, और यह कि जयसिंह ने इस प्रस्ताव को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

को दे दिया जाय। इस विषय में दिल्ली का उत्तर टाल मटोल का था; परन्तु भेंट और स्वयं तर्क पेश करने से अच्छे परिणाम की आशा की जा सकती थी। मराठा राज्य के पश्चिमी तट के उस कमजोर भाग की सुरक्षा के लिए उस अजेय समुद्री किले पर अधिकार मिलना परमावश्यक था।

इन प्रलोभनों के बावजूद, शिवाजी सम्राट से मिलने में बहुत दिनों तक हिचकिचाते रहे। परन्तु वह और उनके मित्र मुगल दरबार में जाने के विचार से उतने ही सशंक थे जितने वे छह वर्ष पूर्व अफजलखाँ से मिलने पर सशंकित थे। उन्हें खटका था कि औरंगजेब के पास जाना किसी दैत्य के चंगुल में फँस जाना है (रावण० सभा० ४४; ९१ कलमी बखर, ५२)। परन्तु जयसिंह ने अत्यन्त गम्भीर सौगन्धें खायीं कि भेंट के समय शिवाजी का बाल बाँका न होगा, और साथ ही दरबार में राजपूत राजा के पुत्र और उसके प्रतिनिधि कुमार रामसिंह ने वचन दिया है कि राजधानी में ठहरने के दिनों में वह बिलकुल सुरक्षित रहेंगे। मराठा मन्त्रियों की परिषद में बहुमत यात्रा के पक्ष में था।

२. **शिवाजी की अनुपस्थिति में राज-प्रबन्ध की व्यवस्था**—उत्तरी भारत में शिवाजी के सम्भावित प्रयास की अवधि में उन्होंने जो राज्य के प्रशासन का प्रबन्ध किया वह उनकी दूर-दृष्टि और व्यवस्था की अति-उत्कृष्ट कृति का नमूना था। उनकी योजना यह थी कि अपनी अनुपस्थिति में अपने स्थानीय प्रतिनिधियों को उनके आदेशों अथवा निर्देशन से बिलकुल मुक्त कर दिया जाय। यदि वह आगरे में बन्दी बना लिये जाते अथवा मारे जाते तो भी उनके राज्य और किलों का प्रशासन उतनी कुशलता से चलाया जाना था जितना कि पहले। उनकी माता जीजाबाई राजप (रीजेंट) नियुक्त की गयीं, मोरोपन्त पेशवा बनाया गया और नीलोजी सोनदेव मजमुआदार मनोनीत किया गया जिन्हें जीजाबाई की आज्ञा में चलना था। किलों के कमाण्डेण्टों को कड़ा आदेश दिया गया कि वे दिन और रात निरन्तर सतर्क रहें और उनके बनाये नियमों का पूर्णरूपेण पालन करें जिससे कि वे अचानक आक्रमण अथवा धोखे से बच सकें। असैनिक अधिकारियों को आदेश दिया गया कि सब मामलों में वे प्रचलित नियमों और परम्पराओं को मानें।

शिवाजी ने अपने छोटे राज्य का दौरा किया, कुछ किलों में अचानक पहुँच गये और अपने अधिकारियों को अन्तिम आदेश दिया, "मेरे पूर्व आदेशों के अनुसार काम किये जाओ।" इसके बाद शिवाजी ने राजगढ़ में अपने परिवार से विदा ली और ५ मार्च, १६६६ को उत्तरी भारत के लिए यात्रा आरम्भ की; उनके साथ उनका सबसे बड़ा लड़का शम्भूजी, पाँच उच्च अधिकारी और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

थोड़े-से चुने हुए अनुरक्षी थे। सम्राट की आज्ञा से दक्षिण के खजाने से उनको एक लाख रुपया उनके खर्च के लिए दिया गया और जयसिंह की सेना का एक अधिकारी जिसका नाम गाजीबेग था, उनका निर्देशक नियुक्त किया गया।

३. **आगरे के लिए शिवाजी की यात्रा**—मार्ग में शिवाजी को एक शाही पत्र मिला जो आगरे से ५ अप्रैल को लिखा गया था; उसमें लिखा था कि "आपका पत्र मिला कि आप मेरे दरबार के लिए चल दिये। मन की स्थिरता सहित बहुत शीघ्र आ जाइए, और मेरा अनुग्रह प्राप्त करके आपको अपने घर वापस जाने की आज्ञा मिल जायगी। मैं (इस पत्र के साथ) एक सम्मान-परिधान भेजता हूँ।" (पारसनिस पाण्डुलिपि, पत्र संख्या १०)

जब वे औरंगाबाद पहुँचे तो वहाँ उनकी प्रसिद्धि और उनके अनुरक्षकों की शानदार पोशाकों से आकर्षित होकर नगर के बहुत-से लोग उन्हें देखने आये। परन्तु उस नगर के गवर्नर साफशिकनखाँ ने उनको केवल एक जमींदार और मराठा की दृष्टि से उनसे घृणा की, अपने अधिकारियों के साथ वह अपने भेंट-कक्ष में ही रहा, और मार्ग में शिवाजी से मिलने के लिए उसने केवल अपने भतीजे को भेज दिया और उनसे कहलवा भेजा कि वह वहीं आकर उससे मिलें। गवर्नर के इस दुर्व्यवहार से शिवाजी ने अपने को बहुत अपमानित माना और वह अपने गौरव का मान रखकर गवर्नर की उपेक्षा करके नगर में सीधे अपने निश्चित स्थान पर पहुँच गये। फिर साफशिकनखाँ को अपनी भूल मालूम हुई और वह अन्य सब मुगल अधिकारियों के साथ शिवाजी से उनके निवास स्थान पर मिलने गया। दूसरे दिन शिष्टाचार के नाते शिवाजी उसके यहाँ गये और सबसे विनम्रता और सौजन्यतापूर्वक मिले। कुछ दिन यहाँ ठहरने के पश्चात उन्होंने अपनी यात्रा फिर आरम्भ की और रास्ते में जैसी बादशाह की आज्ञा थी उनको स्थानीय अधिकारियों से भोजन-सामग्री और भेंट मिलती गयी। ११ मई को वह आगरे के उपान्त में पहुँचे, आगरे में ही सम्राट अपना दरबार कर रहा था (दिल० ५७-५८ जयपुर अभिलेख)।

जयपुर के पत्रों से शिवाजी की इस यात्रा पर उनके अनुरक्षी और साज-सज्जा का ठीक-ठीक और पूरा विवरण ज्ञात होता है और इसके आधार पर हम सभासद, वाकनिस और बाद को मराठा लेखकों की अतिशयोक्तियों को अस्वीकार कर सकते हैं। रामसिंह के अधिकारी ने आगरे से लिखा कि "शिवाजी केवल १०० सेवक और २०० से २५० अनुरक्षियों के साथ आये हैं। पिछलों में १०० 'सिलहदार' और शेष 'पागा' हैं अर्थात वे मनुष्य जिनको राज्य द्वारा घोड़े और साज-सामान दिये गये। जब शिवाजी पालकी में बैठकर चलते थे

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तो 'खंडैतों' के समान लम्बे-चौड़े पैदल आदमी तुर्की टोपियाँ पहनकर उसके आगे-आगे चलते थे। उनके झण्डे का रंग नारंगी और केसरिया है जिस पर सुनहरी काम हो रहा है। उनके शिविर के पीछे सौ बंजारे चलते हैं जिनमें हर एक साथ के दो-दो बोझा ढोने वाले बैल हैं। उनके प्रत्येक उच्च अधिकारी के पास बैठने के लिए पालकियाँ है।···शिवाजी का सेना-दल छोटा है, परन्तु उसकी साज-सज्जा बड़ी ही शानदार है। एक बड़ा हाथी उनके आगे-आगे उनके ध्वज सहित चलता है। सेना का एक अग्रभाग भी उनके आगे चलता है। और घोड़ों की झूलों पर सुनहरी और रुपहरी काम हो रहा है। दक्षिणी पैदल सेना (अर्थात मावली लोग) उनके आगे चलते हैं।·····उनकी पालकी पर पूरे तौर पर चाँदी का पत्र चढ़ा हुआ हैं और उसके डंडों पर सोने का।···अब जबकि बादशाह के सामने आने पर भी उन्होंने इतनी निर्भयता प्रदर्शित की है और इतने कड़े तथा साहसपूर्ण उत्तर दिये हैं, जनसाधारण उनकी वीरता की प्रशंसा और भी अधिक करते हैं।

"शिवाजी बहुत चतुर हैं; वह उचित शब्दों का ही प्रयोग करते हैं जिसके बाद फिर उस विषय पर अधिक जानकारी की आवश्यकता नहीं रहती। वह अच्छे यथार्थ राजपूत हैं·····और उचित बातें ही करते हैं जिनमें एक राजपूत की भावना रहती है।" (जयपुर अभिलेख, 'हाउस ऑव शिवाजी' में अनूदित)

४. **आगरे में शिवाजी को नयी जानकारी**—इतिहासकार जो बड़ी घटनाओं पर गहराई से विचार करता है, अवश्य इस परिणाम पर पहुँच जायगा कि शिवाजी की औरंगजेब से भेंट का अन्त्य परिणाम हुआ मराठा जाति के भाग्य में क्रान्ति पैदा करना। अवश्य ही यह घटना भारत के इतिहास में समग्र से एक निश्चित मोड़ है। अत्यन्त समसामयिक अभिलेखों के आधार पर शाही दरबार की परिधि में उनकी भेंट का, षड्यन्त्रों और प्रति-षड्यन्त्रों का, और स्वयं औरंगजेब की प्रतिदिन बदलने वाली नीति का विवरण तैयार करना अब सम्भव है।

औरंगजेब के दरबार में कुमार रामसिंह अपने पिता जयसिंह का प्रतिनिधि था, और वही आगरे में मराठा राजा के प्रवास में उनकी देखभाल के लिए जिम्मेदार था। इस काल में वे पत्र, जो रामसिंह के अधिकारियों ने अपने शिविर से लिखे, जयपुर राज्य के अभिलेखागार (दफ्तरखाने) में सुरक्षित हैं। वे डिंगल बोली में अर्थात हिन्दी के राजस्थानी रूप में लिखे हुए हैं और उसके साथ ही पूरक के रूप में फारसी में अखबारात (अर्थात समाचार सम्बन्धी पत्र) हैं, जो जयपुर में सुरक्षित हैं। ये डिंगल के पत्र अति महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

ये आगरे के किले में शहंशाह के दरबार में उपस्थिति के पश्चात हर रात को घर वापस आने पर जो वार्तालाप हुए अथवा कछवा के राजा से शिवाजी की भेंट में जो कुछ हुआ उसका सही-सही वर्णन करते हैं। इनमें उन समाचारों का भी समावेश है जो आगरे के विभिन्न केन्द्रों में प्राप्त होते रहे, जो इस समय शाही राजधानी थी; इनमें उन पत्रों का सार भी मिलता है जो दक्षिण से जयसिंह ने अपने पुत्र रामसिंह को लिखे। कभी-कभी ये पत्र उसी रात को लिखे गये जिसको बातचीत की गयी और जो दूसरे दिन सवेरे ही राजधानी (आमेर) को ऊँट की डाक द्वारा भेज दिये गये; ये यहाँ पर शान्तिपूर्वक और मिलावट व जालसाजी के बिना सन १९३९ तक रहे आये जब हम इनको प्रकाश में लाये। इन पत्रों से शिवाजी के विषय में अमूल्य लेखनी-चित्र भी प्राप्त होते हैं—उनका व्यक्तिगत रूप और वेश-भूषा, बातचीत, कर्मचारी वर्ग, साज-सज्जा आदि; ये चित्र योग्य और आलोचनात्मक हिन्दुओं के आँखों देखे विवरण हैं।

प्रत्येक दृष्टि से शिवाजी के इतिहास से सम्बन्धित मूलस्रोतों की वर्तमान शताब्दी में यह सबसे अधिक मूल्यवान खोज है; इनके साथ ही समान महत्त्व वाले जयसिंह के फारसी प्रपत्र और निजी पत्र भी मूल्यवान हैं जो हल्फ अंजुमन में सम्मिलित हैं और जिनकी खोज मैंने १९०५ में की।

जो यथार्थ विवरण हमको अब उपलब्ध हुए हैं उनकी दृष्टि से शिवाजी की औरंगजेब से मुलाकात राजपूतों की अयोग्यता के कारण भ्रांतियों के नाटकीय प्रसंग में हुई; परन्तु जैसे-जैसे औरंगजेब के कलुषित हृदय की कुटिल नीति का विकास होता गया, राजनीतिक नाटक मानवीय अपराधों के फीके रंगों तथा दैवी प्रतिशोध के आधार पर खेला गया। शिवाजी की भूमिका इस नाटक में पूर्ण सफल रही और यह सफलता उन्होंने कल्पनातीत साधनों द्वारा प्राप्त की। उस विश्वासघाती अत्याचारी के पंजों से निकल भागने का श्रेय केवल शिवाजी को है; यदि हम इस पर विचार करते हैं कि किसी भी स्तर पर कोई दुर्घटना नहीं हुई तो हम केवल यही कहेंगे कि उस शेर-दिल कर्मठ मनुष्य का साथ भाग्य ने दिया।[२]

५. शिवाजी की औरंगजेब से भेंट क्यों असफल हुई?—वह पृष्ठभूमि का रंगमंच, जिस पर शिवाजी की औरंगजेब से भेंट का नाटक खेला गया, हमको यह समझने में सहायक होगा कि क्यों इस नाटक का विकास उस ढंग से हुआ जैसा हम जानते हैं।

---

[२] संस्कृत में, उद्योगिनम् पुरुषसिंघनम् उपैति लक्ष्मीः।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

औरंगजेब ने अपने पिता शाहजहां के राज सिंहासन को, उसे १६५८ में गद्दी से उतारकर तथा उसकी मृत्यु तक बन्दीगृह में उस पर कड़ा पहरा रखकर, प्राप्त किया था। जब तक बुड्ढा बाप जीवित था उसके योग्य पुत्र ने आगरे आने का कभी नाम भी न लिया, और अपनी ताजपोशी तथा जन्म-दिवस के आयोजन दिल्ली के महल में ही करता रहा। अन्त में शाहजहाँ २२ जनवरी, १६६६ को परलोक सिधारा, और इस घटना के बाद ही औरंगजेब पहली बार आगरे आया और वहाँ महल में उसने पहला दरबार लगाया। चन्द्रमास के अनुसार उसका पचासवाँ जन्म-दिवस उस वर्ष १२ मई को पड़ा। वंशानुगत विशाल कोष और शाही साज-सज्जा जो अब तक दिल्ली के किले में जमा थीं, १४०० गाड़ियों में भरकर आगरा लायी गयीं और आज्ञा दी गयी कि इनका प्रदर्शन महल में किया जाय जिससे उसके धन-दौलत और शान-शौकत को देखकर दुनिया की आँखें चकाचौंध में पड़ जायँ।" उच्च अधिकारी तथा अधीन शासक सब इस अवसर पर आमन्त्रित किये गये, जो अकबर महान की राजधानी में उसका प्रथम सरकारी आनन्दोत्सव था।

यही कारण था कि शिवाजी की भेंट के लिए पहले से ही १२ मई निश्चित की गयी थी, और मराठा राजा को सलाह दी गयी थी कि वह आगरे में एक दिन पहले आ जायँ जिससे कि वह भी प्रातःकाल की मांगलिक वेला में उसके जन्म-दिन के समारोह में सम्मिलित हो सकें। परन्तु शिवाजी को देर हो गयी और वह १२ तारीख को लगभग दोपहर को आगरे पहुँचे और क्योंकि उनको अविलम्ब किले में भेंट के लिए उपस्थित करना था इसलिए उनको दरबार के शिष्टाचार के सम्बन्ध में कुछ भी न बताया जा सका। यह आने वाली समस्त विपदाओं का वास्तविक मूल कारण था।

पहला दुर्भाग्य का कार्य यह था कि उनका पूर्व-स्वागत (इस्तकबाल) न किया जा सका। मुगल सरकार के नियमों के अनुसार यह पहली आवश्यक प्रथा थी, जो प्रत्येक उच्चपदीय आगन्तुक के लिए जरूरी समझी जाती थी; इस प्रकार के स्वागत के लिए प्रत्येक बड़े आदमी के लिए उसके पद के अनुसार वह दूरी निश्चित की जाती थी जहाँ पर उसका अभिनन्दन करना आवश्यक हो जाता था। आगन्तुक अपनी राजधानी के लिए यात्रा में एक दिन पहले ही उस स्थान पर ठहर जाता था, और वहाँ सम्राट् का प्रतिनिधि उससे मिलकर उसे भेंट देता था, उसकी यात्रा के क्रम को नियोजित करता था और स्वयं अपने साथ ही अगले दिन जलूस में नगर की सड़कों पर होकर ले जाता था

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और अन्त में दरबार के ज्योतिषियों द्वारा बताये गये शुभ समय सम्राट के सामने वह पेश किया जाता था।

शिवाजी ११ मई को तीसरे पहर आगरे से कुछ मील दूर पर सराय मानकचन्द में पहुँचे और दरबार में उनके मध्यस्थ कुमार रामसिंह को पहली बार यह मालूम हुआ कि अतिथि इतने निकट आ पहुँचा है। तब उसने सराय पर अपने अभिनन्दन सहित मुंशी गिरधरलाल को शिवाजी के पास भेजा और उसको आदेश दिया कि वह अगले दिन उनको आगरा शहर में ले आय। यह पहली अप्रत्याशित घटना थी—राजधानी के बाहर ठहरने के स्थान पर शिवाजी का स्वागत किसी उच्च अधिकारी ने नहीं किया केवल एक लिपिक (क्लर्क) ने ही किया।

दूसरी दुर्घटना भी अनायास ही हो गयी और इसका कारण था रामसिंह की ढीलढाल और उसके कर्मचारियों की अयोग्यता। शिवाजी को आगरे में १२ मई को सवेरे समारोह सहित लाना था, परन्तु वह दिन वह निकला जबकि रामसिंह को अपने निजी सेना-दल (हफ़-चौकी) के साथ शाही महल के चारों ओर साप्ताहिक गश्त लगानी थी; अतएव सवेरे ही सराय मानकचंद जाकर शिवाजी को स्वयं अपने साथ लाकर आगरा शहर में निर्देशन करने के लिए वह असमर्थ था। यह कार्य भी एक लिपिक (क्लर्क) को सौंप दिया गया।

जैसे ही किले में रामसिंह का रक्षा-कार्य समाप्त हो गया वह निस्संदेह शिवाजी के स्वागत के लिए आगरा नगर के द्वार पर गया। परन्तु उसके अधिकारियों की हड़बड़ी के कारण एक और विघ्न उपस्थित हो गया। रामसिंह ने नगर में होकर एक मार्ग अपनाया, जबकि कुमार का मुंशी शिवाजी को नगर में होकर दूसरे मार्ग से ले गया। इस प्रकार मेजबान और महमान बस्ती के मध्य में ही मिले जब लगभग सारी यात्रा समाप्त हो चुकी थी।

कुमार के मन्त्री ने समस्त घटना का वर्णन इस प्रकार लिखा है: "१२ मई को सवेरे, सम्राट् के महल की गश्त पूरी कर चुकने के बाद, शिवाजी के स्वागत के लिए रामसिंह स्वयं अपने शिविर की ओर बढ़ा। कुमार का प्रतिनिधि मुंशी गिरधरलाल शिवा को दहर-आरा बाग के मार्ग से आगरे में ला रहा था, जबकि कुमार और मुखलिसखाँ (मराठा राजा के स्वागत के लिए दो नियुक्त सरदार) ने हिजड़ा फिरोजा के बाग का मार्ग लिया। मार्ग में कुमार को इस गड़बड़ी का पता चला और उसने एक आदमी से कहलवा भेजा कि शिवाजी को मेरे निर्दिष्ट मार्ग से लाया जाय। दोनों दल केन्द्रीय बाजार से नूरगंज बाग के निकट मिले।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तेजसिंह कछवा ने, जिसे रामसिंह ने दक्षिण से शिवाजी के साथ कर दिया था, उनका रामसिंह से परिचय कराया। शिवाजी रुक गये, और रामसिंह स्वयं आगे बढ़ा और घोड़े पर सवार होने की दशा में ही शिवाजी से गले मिला। फिर मुखलिसखाँ पेश किया गया।

कुमार ने अपने अतिथि के लिए डेरे अपने ही निवास-स्थान के बगल में डलवा दिये थे, और वहीं शिवाजी ले जाये गये तथा शिवाजी का स्वागत बाजे-गाजे आदि से किया गया।

६. **शिवाजी औरंगजेब के समक्ष**—तब रामसिंह शिवाजी को शाही दरबार में पेश करने के लिए चले। परन्तु दिन इतना बीत गया था कि दीवाने-आम में सार्वजनिक स्वागत समाप्त हो चुका था, और शहंशाह ने आगरे के महल के भीतरी भाग में दीवाने-खास में स्थान ग्रहण कर लिया था। वहाँ सहायक मुख्य-वेतन अधिकारी आसदखाँ ने शिवाजी को सम्राट के सामने पेश किया। उनके उपहार (१००० मुहर और २००० रुपये 'नजर', तथा ५००० रुपये 'निसार' या अनुरंजनार्थक द्रव्य के रूप में) और उनके पुत्र द्वारा उपहार भी सम्राट के सामने प्रस्तुत किये गये।

स्वागत या मान्यता के रूप में औरंगजेब ने एक शब्द भी नहीं कहा, और सिंहासन से शिवाजी को वापस ले जाकर पंजहजारी मनसबदारों में खड़ा कर दिया गया, अर्थात सरदारों की तीसरी पंक्ति में। दरबार का कार्य आगे चला और ऐसा प्रतीत हुआ कि शिवाजी भुला दिये गये।

शिवाजी जयसिंह से अनेक बार बातचीत करने के पश्चात ऐसे स्वागत की स्वप्न में भी आशा न कर रहे थे। आगरे में पहुँचकर उनके मन में बड़ी खलबली मच रही थी। प्रथम तो उनका स्वागत राजधानी के बाहर नहीं हुआ वरन नगर के भीतर हुआ था, और यह भी रामसिंह और मुखलिसखाँ ने किया था, जो दोनों निम्न अधिकारियों में से थे और जिनको नाम के लिए क्रमशः २५०० तथा १५०० के पद ही मिले थे। सिंहासन को सिर झुकाने के पश्चात उनको न कोई मूल्यवान उपहार, न कोई ऊँची उपाधि और न कोई विनम्र शब्द कहे गये थे। वह सरदारों की कई पंक्तियों के पीछे खड़े किये गये जहाँ से सम्राट के दर्शन तक न हो सकते थे। रामसिंह से उन्होंने ज्ञात किया कि वह पंजहजारी सरदारों में खड़े किये गये थे। उन्होंने कहा, "ऐं! यह क्या! मेरा छोटा पुत्र यहाँ अनुपस्थित रहने पर भी पंजहजारी बना दिया गया; मेरा सेवक नेताजी भी पंजहजारी है। और इन सेवाओं के करने के पश्चात तथा इतनी दूर से दरबार में आने के बाद, मुझे

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भी वही नीचा पद दिया जायगा ?" तब उन्होंने पूछा कि मेरे आगे कौन सरदार खड़ा हुआ है। रामसिंह ने उत्तर दिया कि यह महाराजा जसवन्तसिंह हैं। इस पर शिवाजी भड़क उठे, "वह जसवन्तसिंह जिसको मेरे सिपाहियों ने पराजित किया था ! मैं उसके पीछे खड़ा किया जाऊँ ? इस सबका क्या तात्पर्य है ?"

फिर उस अवसर के अनुकूल 'खिलअत' (सम्मान-परिधान) शहजादों और प्रमुख वजीर जफरखाँ को प्रदान की गयी, और जसवन्तसिंह को दी गयी, परन्तु शिवाजी को कुछ नहीं दिया गया। इस पर उनके मन में बड़ा संताप हुआ और "उनकी आँखें क्रोध से सजल हो उठीं।" सम्राट ने यह अशान्ति देखी और उसने रामसिंह से कहा, "शिवाजी से पूछो कि उन्हें क्या तकलीफ है ?" कुमार २५०० पद के मनसबदारों की पंक्ति से शिवाजी के पास आया, और मराठा राजा ने क्रोधित होकर कहा, "तुमने देख लिया, तुम्हारे पिता ने देख लिया और तुम्हारे बादशाह ने देख लिया कि मैं किस तरह का आदमी हूँ, परन्तु फिर भी तुमने जानबूझकर मुझे इतनी देर से खड़ा कर रखा है। मुझे तुम्हारा मनसब नहीं चाहिए।" यह कहकर उन्होंने तुरन्त ही सिंहासन की ओर से अपनी पीठ फेर ली और असभ्यतापूर्वक चल दिये। रामसिंह ने उनका हाथ पकड़ा, परन्तु शिवाजी ने उसे छुड़ा लिया, वह एक ओर (खम्भों के पीछे) आ गये, और वहाँ बैठ गये। कुमार उनके पास पहुँच गया और उसने उनको समझाने-बुझाने की कोशिश की, परन्तु वह मराठा राजा को नहीं मना सका जो बोल उठे, "मेरी मृत्यु का निश्चित दिन आ पहुँचा है, या तो तुम मुझे मार डालो, अन्यथा मैं स्वयं अपनी हत्या कर लूँगा। भले ही तुम मेरा सिर काट डालो, परन्तु मैं सम्राट के सामने कदापि नहीं जाऊँगा।"

रामसिंह ने सम्राट से पूरी बात कह दी और उसने तीन अन्य सरदार भेजे; उनसे शिवा को शान्त करने के लिए, खिलअत देने के लिए तथा अपने सामने आने के लिए कहा। परन्तु शिवाजी अभी तक दुखी थे—जसवन्तसिंह के अधीन रखकर उनका अपमान किया गया था और उनको इतनी देर तक खड़ा रखा गया था—और उन्होंने खिलअत धारण करने को मना कर दिया। इस शान्ति कार्य की विफलता की रिपोर्ट औरंगजेब को बड़े राजनयिक ढंग से दी गयी—यह कि देहाती मराठा सरदार अकस्मात बीमार हो गया है क्योंकि वह शाही दरबार की गरमी को सहन नहीं कर सका। (यह ठीक भी था; शिवाजी आगरे की मध्य मई की गरमी में पाँच घण्टे तक घोड़े पर सवार रहे, और उन्हें आराम करने का पर्याप्त समय नहीं मिला था।) तब सम्राट ने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रामसिंह से कहा कि दरबार के अन्त तक तुमको रुकने की आवश्यकता नहीं है, शिवाजी को अपने निवास-स्थान पर ले जाओ और उन्हें ढाढस दो।

रामसिंह ने कहा कि शिवाजी पर दलीलों का कोई असर नहीं है; उन्होंने अब तक केवल एक बात मानी है कि अपने बेटे शम्भूजी को वह सम्राट के सामने पेश कर देंगे। अगले दिन जब रामसिंह दरबार में आया तो सम्राट् ने पूछा, "क्या शिवाजी आ रहे हैं ?" कुमार ने उत्तर दिया, "उनको ज्वर हो आया है और इसलिए वह आज नहीं उपस्थित हो सकते।" लड़का शम्भूजी दरबार में उपस्थित हो गया और उसे पूरी खिलअत (सरोपा) प्रदान की गयी। यहाँ यह कह देना अनुपयुक्त न होगा कि शिवाजी फिर कभी औरंगजेब के सामने नहीं आये।

७. **शिवाजी जाल में और भी अधिक जकड़ दिये गये**—शानदार दरबार कक्ष में इस विचित्र दृश्य के बाद, जो दरबारी जयसिंह के विरोधी थे और जिन्होंने स्वयं अथवा जिनके सम्बन्धियों ने शिवाजी के अभियानों में हानि उठायी थी उन सबने एक होकर मराठा वीर को हानि पहुँचाने का निश्चय किया क्योंकि वह अब जाल में फँस ही गये थे। जब ये गर्वीले राजपूत मुगल अधीनता की सुनहरी जंजीरों को खनखनाते हुए फूले नहीं समाते थे, शाही अनुकम्पा के लिए युगों पुरानी कछवा-राठौर स्पर्द्धा फिर जाग्रत हो उठी, जिसका कारण था १६६४ में शिवाजी के विरुद्ध जसवन्तसिंह की पूर्ण असफलता और दूसरे ही वर्ष पुरन्दर में जयसिंह की शानदार सफलता में विषमता। इसमें एक निजी वेदना ने भी योग दिया—वह थी जन्म-दिन के अवसर पर शिवाजी का आक्रन्दन, "जसवन्त, जिसकी पीठ मेरे सैनिकों ने देखी है !"[3] इस बात को बदनीयत दरबारियों ने दुहराया। यदि जयसिंह के आश्रितों को बदनाम कर दिया जाय तो उस आह्लादित कछवा सरदार को सुगमता से अपमानित किया जा सकता है और उसकी विजय की कान्ति को मन्द किया जा सकता है।

---

[3] १८१५ में जब फ्रांस पर अधिकार करने वाली संश्रित सेना के अध्यक्ष वेलिंगटन ने चौदहवें लूई के दरबार में प्रवेश किया तो फ्रांसीसी सेनापतियों ने जिनमें से प्रत्येक को उसने प्रायद्वीपीय युद्ध में हरा दिया था अपनी अप्रसन्नता दिखाने के लिए प्रत्येक ने उसकी ओर अपनी पीठ फेर ली और जब वह घुसा तो यह प्रदर्शित किया कि मानो वे उसे देख नहीं रहे हैं। जब लूई ने अपने सेनापतियों की धृष्टता के लिए वेलिंगटन से क्षमा माँगी तो ब्रिटिश वीर ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया, "महाराज, आप चिन्तित न हों। मैं प्रायः इनकी पीठ से ही इनको पहचानता रहा हूँ।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सम्राट की प्रतिष्ठा के प्रति भक्ति-भावना केआवरण में जयसिंह-विरोधी दल की निजी ईर्ष्या को दबा दिया गया। उन्होंने बार-बार औरंगजेब को यह कह कर शिवाजी के विरुद्ध उकसाया, "यह शिवा कौन है जो जहाँपनाह की उपस्थिति में ही इतना कटुभाषी और उद्धत हो गया, और फिर भी हुजूर सलामत ने उसके आचरण को क्षमा कर दिया ? यदि यही हालत रही तो हर एक छोटा जमींदार (भूमिया) यहाँ आ जायगा और उसके समान ही बिना दण्ड पाये अपनी कारगुजारी कर लेगा।" जसवन्तसिंह के प्रति दोषपूर्ण विद्वेष के साथ ही शाही हरम का प्रबल निनाद भी सम्मिलित हो गया। मुख्य वजीर जफरखाँ की बेगम शाइस्ताखाँ की बहन थी और उसने अपने पति को पूना में अपने भाई के घातक आक्रमण का बदला लेने को उकसाया विशेषकर ऐसे अवसर पर जब वह काफिर चंगुल में आ फँसा था। सम्राट की माननीय बहन जहाँनारा अपने पिता से प्राप्त उपहार के रूप में सूरत की माल-गुजारी पा रही थी और शिवाजी ने उस बन्दरगाह को लूट लिया था। क्या दरबार में इस खुली धृष्टता के लिए उसको ऊँचे मनसब और किसी सूबेदारी का पुरस्कार मिलना उचित था ?

इसलिए सम्राट के मन में यह बात आयी, और उसकी गुप्त परिषद में यह निश्चित किया गया कि या तो शिवाजी को मार डाला जाय अथवा उसे किले में नजरबन्द कर दिया जाय। उसने आगरा के पुलिस अध्यक्ष (फौलाद नामक एक कठोर अबीसीनियाई) को आज्ञा दी कि मराठा राजा को रदान्दाजखाँ के मकान में रखा जाय। यह रदान्दाज बहुत ही साधारण खानदान का था, परन्तु बहुत अत्याचारी और कठोर हठधर्मी था, जो औरंगजेब का कृपापात्र साधन बन गया था—जैसा कि उसने अलवर के सतनामी विद्रोह को भयानक रक्तपात करके दबाया था। अब वह आगरे के किले का अधिकारी था और सरकारी कैदी उसके ही तहखानों में डाल दिये जाते थे।

शिवाजी को अपने संरक्षण में से हटाने की आज्ञा को सुनकर रामसिंह मुख्य वेतन अधिकारी मुहम्मद अमीनखाँ के पास गया और उससे कहा, "शहंशाह ने शिवा को मार डालने का निश्चय किया है जो यहाँ पर मेरे पिता द्वारा दिये गये सुरक्षा के वचन को मानकर आये हैं। अतएव, यह उचित है कि शहंशाह पहले मुझे मार डालें और मेरी मृत्यु के बाद ही वह भले ही शिवाजी को मार डालें अथवा और जो कुछ चाहें उनके साथ करें।" इस याचना पर औरंगजेब ने रामसिंह से शिवा की ओर से जब तक वह आगरे में

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रहें एक जमानती बाण्ड पर हस्ताक्षर करने को कहा कि वह यह देखे कि शिवा कहीं भाग न जायँ अथवा कोई अन्य शरारत न कर बैठें।

जमानती बाण्ड तुरन्त भर दिया गया और तब औरंगजेब ने अपने हृदय की कुटिलता का आभास दिया। उसने रामसिंह को शिवा को लेकर अफगानिस्तान जाने की आज्ञा दी और वहाँ यूसुफजई तथा अफ्रीदी विद्रोहियों से लड़ने का आदेश दिया। काबुल की इस मुहिम में कुमार की आगे की सेना की कमान रदान्दाज के सुपुर्द की गयी---परन्तु इस मनुष्य के ज्ञात चरित्र से बिलकुल स्पष्ट था कि शिवाजी रास्ते में ही मार डाले जाते और इस घटना को रूप यह दिया जाता कि किसी दुर्घटनावश अथवा दुश्मन की कार्रवाई के कारण ऐसा हुआ है।

परन्तु इस योजना को तुरन्त ही कार्यान्वित करना सम्भव न था। जयसिंह शहंशाह से भेंट के दौरान में शिवाजी की सुरक्षा के लिए वचनबद्ध था, और औरंगजेब ने अपने सबसे बड़े हिन्दू सामन्त को खुले तौर पर अपमानित करना उचित न समझा। अतएव दक्षिण में जयसिंह को सम्राट ने पत्र लिखा और मिरजा राजा से पूछा कि उन्होंने शिवाजी को कौन-कौनसे वचन दिये हैं, क्योंकि आगरे में शिवा खुलमखुल्ला शाही सरकार द्वारा विश्वासघात की शिकायत कर रहे हैं। जयसिंह के उत्तर की बाट के हेतु काबुल के लिए निर्वासन के कार्य में कुछ सप्ताहों की देर कर दी गयी।

शिवाजी ने इस बीच में मन्त्रियों को घूस दी और उनसे अपने छुटकारे के लिए याचना करने के लिए कहा। २० मई को जफरखाँ ने शिवाजी का प्रार्थना-पत्र शहंशाह को पेश किया जिसमें उन्होंने अपने पिछले अपराधों के लिए क्षमा माँगी और प्रार्थना की कि उनकी जान बख्श दी जाय। उनको काबुल भेजे जाने का आदेश अब रद्द कर दिया गया। २९ मई को उन्होंने मुख्य बख्शी को अपना मध्यस्थ मानकर एक और अर्जी दी जिसमें उन्होंने यह लिखा कि यदि उनके द्वारा हाल में प्रदत्त समस्त किले उनको वापस कर दिये जायँ और उन्हें घर लौट जाने की अनुमति मिल जाय तो वह इसके बदले दो करोड़ रुपये देने को तैयार हैं। उन्होंने यह भी वचन दिया कि वहाँ रहकर वह सम्राट की ओर से बीजापुर से मृत्युपर्यन्त लड़ते रहेंगे। औरंगजेब ने इसके जवाब में शिवाजी का जाल और भी कड़ा कर दिया; उन्हें अपने शिविर से बाहर जाने तथा किसी से मिलने के लिए मनाही कर दी गयी और उनके निवास-स्थान पर बहुत कड़ा पहरा बैठा दिया गया।

औरंगजेब के आदेशों के अनुसार आगरे के मुख्य पुलिस अधिकारी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

फौलादखाँ ने शिवाजी के शिविर के बाहर एक बड़ी सेना तोपखाने सहित नियुक्त कर दी। इस घेरे के भीतर रामसिंह के राजपूत अनुगामियों ने शिवाजी की शैय्या पर रात को पहरा रखा तथा उनके डेरे के चारों ओर गश्त लगाते रहे। इसका वास्तविक मंतव्य था उनको मार डालने की किसी गुप्त योजना को रोकना।

शिवाजी अब कैदी बना दिये गये, बाहर से देखने में और वास्तव में भी। "इससे राजा का दिल टूट गया; वह उदास हो गये, और शम्भूजी को छाती से लगाकर बहुत देर तक दुखी होते रहे।" परन्तु वह निराशा का शिकार नहीं बन सकते थे। औरंगजेब की न्याय-भावना और किसी मन्त्री द्वारा हस्तक्षेप की आशा से निराश होकर, शिवाजी ने अब केवल अपने ही साधनों पर निर्भर रहने का निश्चय किया। सर्व प्रथम रामसिंह से वह जमानती बाण्ड रद्द करवाया जो उन्होंने सम्राट को शिवा को अपनी अभिरक्षा में रखने के लिए लिखा था। फिर उन्होंने अपने अधिकांश अधिकारियों और अपने समस्त अनुरक्षियों को पार वापस भेज दिया जिनको वह अपने साथ आगरे में लाये थे (७ जून)। औरंगजेब को इसमें कोई आपत्ति न थी क्योंकि इस दशा में उनको कम वैरियों की देखभाल करनी पड़ती और उनका कैदी मुगल राजधानी में बिना किसी मित्र के रह जाता।

इस तरह अकेले रह जाने पर शिवाजी ने सम्राट से याचना की कि उन्हें संसार छोड़ने की तथा संन्यासी के रूप में बनारस रहने की आज्ञा दी जाय। औरंगजेब ने तीखे व्यंग में उत्तर दिया, "उसे फकीर बन जाने दो और इलाहाबाद के किले में ही पड़ा रहने दो। उस स्थान का सूबेदार उसकी खबर-गीरी लेता रहेगा!" इलाहाबाद का मजबूत किला राजकीय कैदियों के रखने में ही प्रयोग में आता था, जैसे ग्वालियर, असीरगढ़ और दौलताबाद। तीन महीने इसी प्रकार व्यतीत हो गये।

८. **शिवाजी के आगरे में बन्दी होने की अवधि में मुगल नीति**—अब हम सामाजिक सरकार की नीति और इस बीच में जयसिंह के कार्य को देखेंगे। मराठा सरदार ने जब उससे यह शिकायत की कि मुगल सरकार की ओर से उसने जो वादे किये थे वे पूरे नहीं हुए, तो औरंगजेब ने जयसिंह से पूछा कि वह ठीक-ठीक बताये कि वे वादे कौन-कौन से थे। राजा ने पुरन्दर की सन्धि को दोहराया और उसकी शर्तों को समझा दिया, और गम्भीरतापूर्वक बताया कि इनके अतिरिक्त और कोई वादा नहीं किया गया। (औरंगजेबनामा, ६७०; परन्तु हल्फ अंजुमन में जयसिंह का उत्तर नहीं है।)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दरबार में शिवाजी के इस प्रयास के अप्रत्याशित फल से जयसिंह बड़े असमंजस में पड़ गया। निस्संदेह उसने 'अनेक युक्तियाँ' भिड़ाकर शिवाजी को उत्तरी भारत में भेज दिया था जिससे कि वह दक्षिण से बाहर हटा दिया जाय क्योंकि वहाँ सैनिक स्थिति मुगलों के विरुद्ध होती जा रही थी; परन्तु साथ ही उसने अपने संश्रित-मित्र की सुरक्षित वापसी का भी वचन दिया था; इसलिए उसने सम्राट को यह समझाने का प्रयत्न किया कि शिवा को कैद करने अथवा मार डालने से कुछ हाथ न लगेगा, क्योंकि मराठा सरदार ने अपनी सुन्दर व्यवस्था के द्वारा अपनी सरकार को अपने व्यक्तित्व से मुक्त कर दिया है; इसके विपरीत, उस क्षेत्र में शिवा को मित्र बना लेने से ही साम्राज्यिक उद्देश्य भलीभाँति पूरे हो सकेंगे और साथ-साथ जनसाधारण को यकीन दिलाया जा सकेगा कि साम्राज्य के अधिकारियों के वचन विश्वसनीय हैं। परन्तु साथ-साथ जयसिंह अपने दरबारी प्रतिनिधि रामसिंह को भी लिखता रहा कि वह ध्यान रखे कि शिवा का जीवन सुरक्षित रहे और वह और उसके पुत्र द्वारा दिये हुए आश्वासनों का पूरी तरह निर्वाह हो। (हल्फ अंजुमन, २३४ ए)

किन्तु यह आसान काम न था। जयसिंह के लिए औरंगजेब की कुटिल नीति को बदलना असम्भव था, और प्रायः उसका पहले से अनुमान भी नहीं लगाया जा सकता था। सम्राट पहले तो यह देखना चाहता था कि ऊँट किस करवट बैठता है—वह शिवा को कड़े पहरे में रखना चाहता था जिससे वह कहीं निकल न भागें और वह बीजापुर की मुक्ति में सफलता प्राप्त करने के पश्चात ही तय करना चाहता था कि उन्हें मुक्त किया जाय अथवा नहीं और यदि मुक्त किया जाय तो कब। कुछ दिनों के बाद औरंगजेब ने दक्षिण में जाकर स्वयं युद्ध-संचालन करने का निश्चय किया और शिवाजी को रामसिंह की देखरेख में आगरे में ही राज्य के बन्दी के रूप में छोड़ना तय किया। जयसिंह ने अपने पुत्र से अनुरोध किया कि वह इस अप्रिय कार्य को अपने हाथ में न ले, परन्तु सम्राट को सलाह दी कि वह शिवाजी को आगरे में ही छोड़ दे। उसने सम्राट को रामसिंह के द्वारा सलाह दी कि "प्रत्येक क्षण की अपनी विशेष आवश्यकता होती है। जिस समय मैंने सम्राट से शिवा को अपने घर वापस भेजने के लिए कहा था, उस समय स्थिति अब से भिन्न थी। परन्तु वर्तमान परिस्थितियों में यह उचित न होगा कि उन्हें इस तरफ भेजा जाय। सम्राट से यह भी कह दो कि शिवा को उचित सम्मान के साथ रखा जाय (अर्थात निकृष्ट बन्दीगृह में कैदी की भाँति नहीं), जिससे कि यहाँ उनके अधिकारी उनके वापस होने की

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आशा छोड़कर आदिलशाह से मिलकर हमारे विरुद्ध हंगामा न कर उठें; इस नीति द्वारा हमको दक्षिण में नयी सेना भेजने की आवश्यकता न रहेगी। शिवा से शान्तिपूर्ण व्यवहार करने की जरूरत है और उनको विश्वास दिलाने की आवश्यकता है कि सम्राट के दक्षिण में पहुँचने के बाद शिवा को वहाँ आगरे से बुला लिया जायगा। नीति यह होनी चाहिए कि उनका पुत्र सम्राट के पास रखा जाय जिससे (यहाँ) उनके अनुगामी हमको सच्चे मन से मदद करते रहें।" (हल्फ अंजुमन, १९४ ए, १७९ ए)

९. **शिवाजी का आगरे से निकल भागना**[४]—अपने अनुगामियों के बारे में चिन्ता से मुक्त होने के बाद शिवाजी अब अपने बचाव की युक्तियाँ सोचने लगे। उन्होंने बीमारी का बहाना किया और प्रत्येक शाम को अपने घर से बाहर ब्राह्मणों, साधु-संन्यासियों और दरबारियों को मिठाई भेजी जाने लगी। यह बड़े-बड़े डलों में भेजी जाती थी जो बँहगी के दोनों ओर लटकाये जाते थे और जिसे दो आदमी अपने कंधों पर ढोते थे। पहरेदारों ने कुछ दिनों तक तो डलों की तलाशी ली, परन्तु फिर बिना देखे हुए उन्हें निकल जाने देते थे। शिवाजी इसी मौके की बाट देख रहे थे। १९ अगस्त की तीसरे पहर उन्होंने अपने पहरेदारों से कहला भेजा कि वह बहुत बीमार हैं और चारपाई पर पड़ गये हैं और अब उन्हें उनके आराम में बाधक न होना चाहिए। उनका सौतेला भाई हीरोजी फर्जंद, जो देखने में कुछ-कुछ उनके समान मालूम होता था, उनकी चारपाई पर पड़ रहा; उसने अपने शरीर पर रजाई ओढ़ ली और केवल एक हाथ खुला रहने दिया जिस पर शिवाजी का सोने का कड़ा पहन लिया—और शिवाजी तथा उनका पुत्र दोनों डलों में दुबककर बैठ गये, जो सूर्यास्त के कुछ देर पीछे ही असंदेहयुक्त पहरेदारों के बीच में होकर निकल गये; इन दोनों डलों के आगे और पीछे वास्तविक मिठाई के डले भी थे।

नगर के बाहर एकान्त स्थान में डले रख दिये गये; भारवाहकों को अपने घर वापस जाने को कह दिया गया; और तब शिवाजी और उनका पुत्र निकल पड़े और आगरे से ६ मील दूर एक गाँव में जा पहुँचे जहाँ विश्वसनीय नीराजी रावजी अपने घोड़ों सहित उनकी बाट देख रहा था। जंगल में शीघ्र परामर्श

---

[४] शिवाजी का आगरे से पलायन : औरंगजेबनामा (केवल एक वाक्य !); बर्नियर, १९० (वही); स्टोरिया, २, १३९-१४०; सभा० ५२-५५ और खाफीखाँ २. १९८-२०१, २१७-२२० (सबसे अधिक विवरण); दिल० ५९-६१; ९१ क० ब०, ५५-५६; फ्रायर २. ६५; शिवाजी का वंश, अध्याय १०, जयपुर के अभिलेख (अत्यन्त पूर्ण)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के बाद दल दो भागों में बँट गया, शिवाजी उनके पुत्र और तीन अधिकारी नीराजी रावजी, दत्त त्रिम्बक और राघोमित्र ने हिन्दू साधुओं की भाँति अपने शरीर पर भभूत लगाई और मथुरा की ओर चल पड़े, और अन्य लोग घर की ओर दूसरे मार्ग पर चल दिये।

इधर आगरे में, उस पूरी रात भर और दूसरे दिन काफी सवेरे तक, हीरोजी शिवाजी की चारपाई पर पड़ा रहा। पहरेदारों ने जब सवेरे भीतर झाँककर देखा तो शिवाजी का सोने का कड़ा देखकर उन्हें सन्तोष हो गया, और उन्होंने यह भी देखा कि फर्श पर बैठा हुआ एक नौकर बीमार राजा के पैरों पर मालिश कर रहा है। सवेरे आठ बजे हीरोजी (नौकर सहित) मकान के बाहर निकल गया, और द्वार पर पहरेदारों को यह चेतावनी दे गया, "शोर कम करो, शिवाजी बीमार हैं और उनका इलाज हो रहा है।" कुछ समय के पश्चात पहरेदारों को सन्देह हो गया; घर सुनसान दिखाई दिया; प्रतिदिन की भाँति शिवाजी के पास मिलने वाले नहीं आये; मकान के भीतर न कोई आवाज सुनाई पड़ती थी और न कोई चहल-पहल थी। वे कमरे के भीतर घुसे और उन्होंने देखा कि चिड़िया उड़ गयी थी! अब सवेरे के दस बजे का समय था। वे तुरन्त इस रोमांचकारी समाचार को लेकर अपने सरदार फौलादखाँ के पास पहुँचे; उसने सम्राट् को सूचना दी कि शिवाजी मायाजाल रचकर निकल भागा है, और यह कहकर उसने स्वयं को दोष-मुक्त कर लिया। उसने कहा कि, "राजा शिवाजी अपने ही कमरे में था। हम उसमें नियमित रूप से आते-जाते रहते थे। परन्तु वह अकस्मात ही हमारी निगाह से ओझल हो गया। यह नहीं कहा जा सकता कि वह आकाश में उड़ गया अथवा धरती के भीतर समा गया अथवा उसने कोई जादू कर दिया।"

भला औरंगजेब इस उपाख्यान पर कैसे विश्वास कर सकता था! तुरन्त चिल्लपौं मचा दी गयी और मालवा व खानदेश में होते हुए दक्षिण जाने वाले मार्ग को देखने के लिए तेज संदेशवाहक तथा सशस्त्र उच्च सेनानी भेज दिये गये और उन्हें यह भी आदेश दिया गया कि वे स्थानीय अधिकारियों को सचेत कर दें कि वे भगोड़ों को देखते रहें। आगरा या उसके आसपास पाये जाने वाले मराठा ब्राह्मण अथवा शिवाजी के अनुगामी जहाँ-कहीं भी मिले, पकड़ लिये गये। परन्तु इस समय तक शिवाजी को अपने पीछा करने वालों की अपेक्षा चौदह घण्टे से अधिक समय मिल चुका था।

राजधानी में प्रबल पूछताछ के बाद इस रोमांचकारी पलायन का पूरा विवरण धीरे-धीरे मालूम हो गया। रामसिंह पर सन्देह होना स्वाभाविक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

ही था, क्योंकि कई बार उसने आगरे में शिवा की उपस्थिति का दायित्व लेने से इनकार कर दिया था, और यह उसी का दायित्व था कि वह मराठा सरदार को सुरक्षित रूप से घर वापस पहुँचा दे, जिसके लिए वह और उसके पिता वचन दे चुके थे। मराठे ब्राह्मण जो पकड़े गये थे उन्होंने घोर यन्त्रणाओं से बचने के लिए कह दिया कि उनके स्वामी के पलायन में रामसिंह का हाथ था। राजपूत राजा को दंड दिया गया; पहले तो उसे दरबार में आने को मना कर दिया गया, और बाद को उससे उसका पद और वेतन छीन लिये गये।[५]

१०. शिवाजी का घर वापस लौटना—शिवाजी ने अपनी पूर्ण चतुराई के द्वारा अपने पीछा करने वालों को अपना तनिक भी पता न लगने दिया, क्योंकि वह महाराष्ट्र को जाने वाले मार्ग से ठीक विपरीत मार्ग पर चले। आगरे से ठीक दक्षिण-पश्चिम में (मालवा और खानदेश या गुजरात से होते हुए) जाने के बजाय वह उत्तर की ओर मथुरा के लिए चल पड़े और तब पूर्व की ओर इलाहाबाद (प्रयाग) के लिए प्रस्थान किया, और अन्त में दक्षिण-पश्चिम की ओर बुन्देलखण्ड, गोंडवाना और गोलकुंडा होते हुए और इस प्रकार दक्षिण को जाने वाले राजमार्ग के पूर्व में एक वक्र बनाते हुए राजगढ़ का मार्ग लिया।

मथुरा पहुँचकर उन्होंने देखा कि लड़का शम्भूजी थकावट से चूर-चूर हो रहा था और आगे बढ़ने में असमर्थ था। इस पवित्र तीर्थ पर तीन दक्षिणी ब्राह्मण निवास करते थे—कृष्णाजी, काशी और बीसाजी (जो पेशवा मोरो त्रिम्बक के निकट सम्बन्धी थे) नीराजी उनको जानता था और उसने उनको शिवाजी के पलायन और उनकी वर्तमान दशा का ज्ञान कराया। उन्होंने अपने देश और धर्म के नाम पर बड़ी ईमानदारी से उस अभ्यर्थना का स्वागत किया,

---

५ शिवाजी का वंश, जयपुर के अभिलेख। हल्फ अंजुमन, २०१ ए। त्रिम्बक पंत ('दबीर') और रघुनाथ पंत कोर्डे २० अगस्त को बन्दी किये गये और अगले वर्ष ३ अप्रैल को आगरे से निकल भागे (जेधे शकावली)। शिवा की सेवा में से तीन प्रमुख ब्राह्मणों को बन्दी बनाकर फौलादखाँ ने उन्हें बहुत यन्त्रणाएँ दीं। उनका कथन था कि रामसिंह की सलाह के कारण ही शिवाजी का भाग जाना सम्भव हुआ, और देखरेख में उसी की असावधानी का यह परिणाम हुआ। ग्यारह महीने के बाद अपने पिता की मृत्यु हो जाने पर, रामसिंह को फिर सम्मान प्राप्त हो गया और उसे चार-हजारी बना दिया गया, परन्तु शीघ्र ही उसे आसाम में लड़ने वाली सेना के साथ शामिल होने के लिए आज्ञा दी गयी और वहाँ वह महामारी से मर गया। (आ० ना० १०५१)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और पकड़े जाने पर सम्राट से बदले की सम्भावित आशंका से न डरते हुए शम्भूजी[६] को उस समय तक जब शिवाजी सकुशल घर पहुँच जायँ और उसे भेजने के लिए लिखें, आश्रय दिया।

शिवाजी ने अपनी (संन्यासी की) लकुटी के मध्य भाग को रत्न और सुवर्ण मुद्राओं से ठूँस-ठूँसकर भर लिया था और कुछ द्रव्य अपने जूतों में छिपा रखा था तथा मोम लगाकर एक बहुमूल्य हीरा और कई लाल नौकरों के कपड़ों में सीं रखे थे अथवा उन्होंने उनको अपने मुँह में रख छोड़ा था।

आगरा छोड़ने के छह घंटे के भीतर ही वे मथुरा पहुँच गये, वहाँ उन्होंने अपनी दाढ़ी और मूँछें मुड़वायीं, अपने शरीर पर भभूत मली और संन्यासी का वेष धारण किया। तेज दक्षिणी सन्देशवाहकों के साथ "रात के अँधेरे में यात्रा करने के पश्चात, जो विभिन्न पोशाकों और रूपों में चलने-फिरने के आदी थे," शिवाजी बहुत शीघ्र राजधानी से आगे बढ़ गये।

दत्ताजी वाकनिस ने शिवाजी के घर आने के दृश्य का बड़ा हृदयग्राही वर्णन किया है। "वह राजगढ़ के द्वार पर पहुँचे जहाँ उनकी माता जीजाबाई रहती थीं, और उनके सामने उपस्थित होने की आज्ञा माँगी। पहरेदारों ने उनको सूचित किया कि कुछ अपरिचित संन्यासी किले के द्वार पर खड़े हैं और आपसे मिलना चाहते हैं। उन्होंने उनको भीतर आने की अनुमति दी। जब वे माता जीजाबाई के समक्ष आ गये तो नीराजी पंत ने उनको वैरागियों की भाँति आशीर्वाद दिया; परन्तु शिवाजी अधिक निकट पहुँच गये और उन्होंने माता के पैरों पर माथा टेक दिया। उन्होंने उनको नहीं पहचाना और वे आश्चर्य में पड़ गयीं·····कि एक संन्यासी उनके पैरों पर अपना सिर क्यों टेकता है··· शिवाजी ने तब अपना सिर उनकी गोद में रखा और अपनी टोपी उतार दी। उन्होंने तुरन्त उनके सिर पर एक चिह्न के द्वारा पहचान लिया कि यही मेरा खोया हुआ पुत्र है, और अपनी छाती से लगा लिया।" (९१ क० ब० ५६)

राजगढ़ लौटने पर उन्होंने एक झूठी खबर फैला दी कि उनका पुत्र शम्भूजी मार्ग में मर गया, और उसकी मृत्यु का शोक भी मनाया। फिर, जब दक्षिण के मार्ग पर मुगल अधिकारियों का संदेह इस प्रकार दूर हो गया और कुछ महीने बीत गये तब उन्होंने मथुरा अपने पुत्र को भेजने के लिए लिखा, और तीनों

---

[६] मराठा इतिहासकारों (तथा दिल० ६१ भी) के अनुसार शम्भूजी काशी पन्त और उनके भाइयों की देखरेख में छोड़ दिया गया। किन्तु खाफीखाँ (२.२०१ व २१८) ने गलत लिखा है कि वह इलाहाबाद में कवि कैलाश के सुपुर्द किया गया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भाई[७] जो उस लड़के के रक्षक थे, अपने पूरे परिवार के साथ महाराष्ट्र में आये और अपने साथ शम्भूजी को ब्राह्मण रिश्तेदार के भेस में ले आये।

मार्ग में किसी बाहरी चौकी पर मुगल अधिकारियों ने सन्देह किया कि शम्भूजी उनके परिवार या जाति का नहीं मालूम देता था; परन्तु ब्राह्मण संरक्षकों ने अपनी सजातीयता साबित करने के लिए उसके साथ भोजन किया, और खतरा दूर हो गया। शिवाजी ने तीनों राजभक्तों—कृष्णाजी, काशीराव और बीसाजी—को भरपूर पुरस्कार दिये, 'विश्वासराव' की पदवी दी और एक लाख सोने की मुद्राएँ दीं, और उनके लिए १०,००० होन की वार्षिक मालगुजारी निश्चित कर दी। उनके निकल भागने में सहायक साथी भी इसी प्रकार पुरस्कृत किये गये। (सभा० ५३-५५ ६१; क०व० ५७; दिल० ६१)

कैद से शिवाजी के पलायन के कारण औरंगजेब उम्रभर दुखी रहा। सम्राट ने अपने अन्तिम इच्छा-पत्र और वसीयत में लिखा है, "सरकार का सबसे बड़ा आधार-स्तम्भ है राज्य में जो कुछ हो रहा है उसके विषय में जानकारी रखना—किन्तु एक क्षण की असावधानी अनेक वर्षों के लिए लज्जा का कारण हो जाती है। देखो किस प्रकार उस अभागे शिवा का पलायन, जो असावधानी के कारण हुआ, मुझे मृत्युपर्यन्त परेशान करने वाली मुहिमों में उलझाये रहा।" (उपाख्यान, परिच्छेद १०)

११. जयसिंह की चिन्ताएँ और शिवाजी के विरुद्ध योजनाएँ—अब हम दक्षिण में शिवाजी की अनुपस्थिति के दौरान में जयसिंह की चिन्ताओं, योजनाओं और उपायों को देखेंगे जिनका अवलम्बन उसने दक्षिण में शिवाजी की अनुपस्थिति में किया। शिवाजी के तीन महीने की कैद की अवधि में सम्राट और कुमार रामसिंह से उसके पत्र-व्यवहार का विवरण पहले दिया जा चुका है।

आगरे से शिवाजी के पलायन (१९ अगस्त) के बाद जयसिंह की स्थिति अत्यन्त खराब हो गयी थी। बीजापुर के आक्रमण की विफलता के कारण सम्राट की निगाहों में वह बहुत गिर गया था। और अब उसके लड़के रामसिंह पर खुले तौर पर सन्देह किया जा रहा था कि उसने शिवाजी के निकल भागने में उपेक्षा की। जैसा कि उन्होंने कष्ट में लिखा है, "मैंने शिवा को दरबार में भेजने के लिए जितनी योजनाएँ और युक्तियाँ काम में लायीं वे सब बेकार गयीं, और मेरे भाग्य में बेहद परेशानी हो गयी है। परन्तु प्रारब्ध में और जो

---

७ तीन भाइयों में से एक कृष्णाजी त्रिमाल शिवाजी के पलायन में प्रदर्शक की भाँति उनके साथ रहा था। अन्य दो भाई अब शम्भूजी की अनुरक्षा में घर तक आये।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मनुष्य के माथे पर लिखा है उसके सामने किसी का वस नहीं है। दरवार के कुछ गुर्गों के पत्रों से मुझे ज्ञात हुआ है कि ऐसा प्रस्ताव है कि रामसिंह का मनसब और जागीर उससे छीन ली जायँ क्योंकि शिवा के ब्राह्मण अनुगामियों ने कुछ स्वार्थी आदमियों के उकसाने पर (जो दरबार में मेरे दुश्मन हैं) यह कह डाला है कि शिवाजी का पलायन रामसिंह की सलाह से हुआ और उसकी ठीक-ठीक निगरानी न रखने का ही यह परिणाम हुआ। भगवान उस मनुष्य को मौत दे जो अपने हृदय में विश्वासघात के इस कार्य को स्थान देता है ! परन्तु मेरे कहने के विरुद्ध अन्य मनुष्यों की बातें क्यों मान ली जायँ जबकि मैंने (युद्ध में) शिवा को घुटने टेकने को मजबूर कर दिया ?" (हल्फ अंजुमन २०१ ए)

जयसिंह की आशंकाएँ राजगढ़ में शिवाजी के प्रत्याशित वापस आ जाने से और भी बढ़ गयीं। जैसा उन्होंने ५ नवम्बर, १६६६ को लिखा—"मेरे दिन खराब आ गये हैं। मेरी चिन्ताएँ कम होने का नाम नहीं लेतीं। झूठे बीजापुरी (धोखे की वार्ताओं द्वारा) समय नष्ट कर रहे हैं। भगोड़े शिवाजी का कोई पता या खवर नहीं है। मेरे दिन परेशानी और फिक्र में बीत रहे हैं। मैंने शिवाजी के विषय में समाचार लाने के लिए अनेक वेष-भूषाओं में विश्वसनीय भेदिये भेजे हैं।" (हल्फ अंजुमन, १९९ वी, २०० ए)

इस समय के लगभग आगरा जाते समय शिवाजी द्वारा दक्षिण में छोड़े हुए अधिकारियों ने अमंगलसूचक क्रियाशीलता प्रदर्शित की। रोहिरा के किलेदार सैयद मसूद ने जयसिंह के वेतन अधिकारी को किले में खाद्य सामग्री आदि की कमी की शिकायत की, और यह भी लिखा कि कुछ आदमियों ने जो अपने को शिवाजी के अनुगामी वताते हैं पड़ोस में सीसा, बारूद, राकेट और पैदल सेना इकट्ठी कर ली है और वे यह कहते हैं कि वे बीजापुर राज्य पर आक्रमण करने वाले हैं। इस आतंककारी समाचार के मिलने पर जयसिंह ने सतर्कता की दृष्टि से किले में खाद्य सामग्री भेजने की आज्ञा दी और यह आदेश दिया कि (स्थायी किलेदार ?) उदयभान के आने तक किले की पूरी रक्षा की जाय। यह भी आज्ञा दी कि आवश्यकतानुसार सुखमन चौहान के अधीनस्थ ५०० पैदल सेना किले में भेज दी जाय। (हल्फ अंजुमन, २३४)

अन्त में (नवम्बर १६६६) राजगढ़ में शिवाजी के आगमन का निश्चित समाचार आ गया। जैसा कि जयसिंह के मन्त्री ने लिखा था, "विश्वसनीय गुप्तचरों से समाचार मिला है कि शिवाजी स्वयं लौट आया है परन्तु वह अपने लड़के के बारे में बहुत चिन्तित है जो उसके साथ वापस नहीं आया। वह

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कहता है कि साम्राज्यिक सरकार के प्रति वह अधीनता के लिए तैयार है। परन्तु कौन जानता है कि उसके मन में क्या है ? कुछ समय से फालटन का जमींदार और पिशाच शिवा के दामाद वाजाजी के पुत्र महादजी निम्बालकर ने पूना के आसपास तथा अन्य स्थानों पर उपद्रव मचा रखा है। मेरे स्वामी (अर्थात जयसिंह) ने उस क्षेत्र में ऐसे जागीरदारों की नियुक्ति की है, जैसे तानाजी (या वावाजी ?) भोंसले, अन्य लोग सूपा में, हलालखाँ इन्दापुर में, गालिबखाँ चमारगुंडा में, हसनखाँ अब्दुर्रसूल और दूसरे दक्षिणी भी उसी क्षेत्र में और त्रिम्बकजी भोंसले और अन्य लोग रायसीन में। अन्य लोगों के अपने पदों पर आने से पहले तानाजी भोंसले अपनी जागीर में पहुँच गया और मौका पाकर उसने महादजी पर आक्रमण कर दिया; उसके बहुत-से अनुगामियों को नरक भेज दिया; उसका झंडा, तोड़ा, १५० घोड़े, तीर आदि छीन लिये और लौटकर शान्तिपूर्वक जीवनयापन करने लगा। चूँकि दक्षिणी लोग झंडे और तोड़ा के लिए (रहस्यमय रूप से) इच्छुक रहते हैं, महादजी ने अधीनता और विनय का मार्ग अपनाया; परन्तु तानाजी ने (उनको वापस करने के लिए) मना कर दिया। अन्त में चार दिन के पश्चात उस दुरात्मा को बीजापुरियों से सहायता मिल गयी और उन्होंने अकस्मात तानाजी पर आक्रमण कर दिया। वह राजभक्त और सैनिक अधिकारी पैदल ही बहादुरी से लड़ा, और फिर वह सम्राट की सेवा में आ गया। और आनाजी (या दाताजी) देशमुख पंढारपुर के निकट नरक सिधार गया। यह समाचार मिला है कि महादाजी भी घायल हुआ है।·····जयसिंह पहले तो सेना लेकर स्वयं वहाँ जाना चाहता था (और विपत्ति का बदला लेना चाहता था), परन्तु लोगों ने उससे वहाँ जाने को मना कर दिया कि कहीं बीजापुरी लोग उसकी अनुपस्थिति से लाभ न उठा लें। इसलिए उसने उस क्षेत्र में अब्दुल हमीद को ५००० आदमियों सहित भेजने का निश्चय किया है।" (हल्फ अंजुमन, २११ बी)

फिर, प्रधानमन्त्री जफरखाँ को भेजे गये एक पत्र में हमको जयसिंह द्वारा हक्का-बक्का करने वाला यह प्रस्ताव मिलता है कि शिवाजी को उसकी पुत्री और जयसिंह के पुत्र के बीच विवाह के प्रस्ताव की गलत खबर भेजी जाय और राजपूत सेनापति के शिविर को जाते समय मार्ग में ही उसे मार डाला जाय :

"प्रत्येक सम्भव प्रकार से बीजापुर, गोलकुंडा और शिवाजी के विरुद्ध प्रयत्न करने में मैं असफल नहीं रहा और न भविष्य में रहूँगा·····मैं इस प्रकार की व्यवस्था कर रहा हूँ कि दुष्ट दुरात्मा शिवा मुझसे भेंट करने एक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बार आयेगा, और अपनी यात्रा के बीच में अथवा वापसी में (हमारे) चतुर आदमी अच्छा अवसर ढूँढ लेंगे जिससे किसी स्थान पर असावधानी की दशा में वह अभागा मनुष्य मार डाला जाय। दरबार स्वयं का यह गुलाम, सम्राट की खातिर यहाँ तक तैयार है कि दूसरे लोगों द्वारा प्रशंसा अथवा निन्दा का बिना विचार किये हुए ही, यदि सम्राट इस कार्य के लिए अपनी अनुमति दे दें तो मैं उसके परिवार के लिए विवाह सम्बन्धी प्रस्ताव रख दूँगा और अपने लड़के का विवाह उसकी लड़की से निश्चय कर दूँगा—मैं ऐसा करने को तैयार हूँ यद्यपि शिवाजी का वंश तथा जाति बहुत ही निम्न है और मुझ जैसे मनुष्य उसके हाथ का छुआ भोजन भी नहीं करते (उनके साथ वैवाहिक सम्बन्ध करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता), और यदि इस दुष्ट की लड़की हाथ लग गयी तो मैं उसे अपने रनिवास में रखने के लिए कदापि तैयार नहीं हूँ। चूँकि वह निम्न जाति का है, वह इस जाल में सम्भवतः फँस ही जायगा। परन्तु इस योजना को गुप्त रखने में बड़ी सावधानी बरतने की आवश्यकता है। मुझे तुरन्त उत्तर भेजा जाय मैं जिससे आवश्यक कार्रवाई कर सकूँ।" (हल्फ अंजुमन, १३९ ए)

इस पत्र से सत्रहवीं शताब्दी के राजनीतिक आचार पर भयंकर प्रकाश पड़ता है। जब लोग तर्क करते हैं कि अफजल ने भेंट में शिवाजी का बध करने का विचार नहीं किया होगा, तो उन्हें याद रखना चाहिए कि कुलीन जयसिंह अपने वंश के सम्मान को गिराकर और एक हिन्दू भाई शिवाजी के लिए घातक जाल डालकर अपनी राजभक्ति सिद्ध करने के लिए तैयार था।

शिवाजी के पलायन के तुरन्त बाद ही सम्राट ने जयसिंह को नेताजी पालकर (उस समय एक मनसबदार) को धोखा-धड़ी से पकड़कर बन्दी बना कर दिल्ली भेजने का आदेश दिया। यहाँ यह अभागा सेनापति—जिसे "दूसरा शिवाजी" कहकर पुकारा जाता था और जिससे लोग भयभीत थे—पुलिस सरदार को सौंप दिया गया जिसने तीन दिन के भीतर ही उससे लिखवा लिया कि यदि उसकी जान बख्श दी जाय तो उसे मुस्लिम होना स्वीकार है। दरबार के इतिहासों में उसको मौत के घाट उतारने के लिए अपराधी नहीं माना गया है! उसका खतना किया गया और उसका नाम मुहम्मद कुली रखा गया; उसकी स्त्री और बच्चे दक्षिण से बुलाये गये और वे भी मुसलमान बना लिये गये, और वह दस वर्ष के लिए अफगानिस्तान को भेजी गयी सेना में नौकरी करने के लिए भेज दिया गया (१६६७)। वह मई, १६७६ में शिवाजी के पास लौट आया और फिर हिन्दू बना लिया गया। (शिवाजी का वंश, अध्याय ९)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

परिशिष्ट

शिवाजी की आगरे से वापसी (१६६६)

तारीखें और मार्ग

औरंगाबाद से भेजे गये एक पत्र में, जो दिल्ली में १४ नवम्बर, १६६६ को मिला, एक गुप्तचर ने रिपोर्ट भेजी थी कि "आगरे से भागने के २५ दिन बाद" शिवाजी अपने घर पहुँच गया है। इससे राजगढ़ में उसके पहुँचने की तारीख १२ सितम्बर मालूम होती है। मैंने इस पत्र के मूल को बहुत सावधानी से पढ़वाया है और जैसा कुछ लोग सोच सकते हैं उसमें 'एक महीना और २५ दिन' नहीं दिया गया है। अब विचार करना चाहिए कि आगरे से राजगढ़ सीधी रेखा में ६७० मील है। परन्तु जब हम इस बात पर भी विचार करते हैं कि मार्ग में पहाड़ी दर्रे और पार करने के लिए नदियाँ थीं और शिवाजी ने सुरक्षा की दृष्टि से चक्करदार मार्ग चुना था तो हमको इस दूरी में ५० प्रतिशत और जोड़ देना चाहिए। दूसरे शब्दों में शिवाजी को मैदान पर लगभग एक हजार मील की यात्रा करनी पड़ी होगी। इससे प्रतिदिन यात्रा का औसत ४० मील आता है, जो उनकी जैसी क्षमता और आदतों वाले घुड़सवार के लिए असाधारण कार्य न था। उनकी अवस्था अभी ४० वर्ष भी न थी।

'अखबारात' में जो समाचार दिया हुआ है कि राजगढ़ में पहुँचने पर "वह कई दिनों तक बीमार रहे, फिर अच्छे हो गये और अब फिर बीमार पड़े हुए हैं," दो बातों की ओर इंगित करता है: (१) कि शिवाजी दिल्ली में इस पत्र के पहुँचने से पहले कम से कम दो महीने पूर्व घर पहुँच गये थे (लगभग २० दिन पहली बीमारी, ७ दिन दूसरी बीमारी, ५ दिन गुप्तचर की रिपोर्ट औरंगाबाद पहुँचने में और २१ दिन अखबारात को औरंगाबाद से दिल्ली पहुँचने में); (२) कि शिवाजी ने कहीं काफी देर तक आराम किये बिना या अच्छा भोजन किये बिना ही ऊबड़-खाबड़ जंगली मार्गों में अंधाधुंध गति से यात्रा की और लम्बी यात्रा के इन कष्टों तथा मोटे भोजन और पीने के लिए खराब पानी मिलने से उनका स्वास्थ्य एकदम बिगड़ गया और उनको फिर स्वस्थ होने के लिए दो बार इलाज कराना पड़ा तथा दो बार चारपाई पर पड़े रहे। अधिक सभ्यतापूर्ण सामान्य मार्गों द्वारा धीरे-धीरे चलकर वह ऐसी थकी हुई हालत में राजगढ़ कदापि नहीं जा सकते थे।

उपरलिखित तारीख की जेधे शकावली में निम्न लिखावट पायी जाती है:

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी आगरा पहुँचे और औरंगजेब से मिले, २५ मई, १६६६। (गलत तारीख, यह १२ मई होनी चाहिए)

वह आगरे से चले १७ अगस्त को। (१९ अगस्त होनी चाहिए)

वह 'शम्भूजी के साथ' आगरा पहुँचे। (गलत तथ्य)

यहाँ पहले और तीसरे कथनों में निश्चित अशुद्धियाँ हैं। ऐसे बिलकुल अशुद्ध स्रोत से कोई तर्कयुक्त मनुष्य किस प्रकार बाद की तारीख को स्वीकार कर सकता है ?

वे कारण जिनकी वजह से राजगढ़ लौटने के पश्चात शिवाजी दीर्घ समय के लिए खामोश रहे, स्पष्ट हैं—(१) उनका स्वास्थ्य एकदम गिर गया था, (२) वह उत्तरी भारत में छोड़े हुए अपने पुत्र शम्भूजी की निर्विघ्न वापसी के लिए चिन्तित थे, और (एक कथन के अनुसार) उन्होंने यह गलत खबर भी फैला दी थी कि शम्भूजी मार्ग में ही मर गया, (३) उन्होंने बुद्धिमानी की कि ऐसे समय में मुगल आक्रमण को नहीं उकसाया जबकि वह रण-क्षेत्र में जाने के लिए असमर्थ थे और पुनः विजय के अभियान के लिए उन्होंने अपने बिखरे हुए अधिकारियों और सेनाओं को अभी वापस नहीं बुलाया था। अतएव उनकी भेस बदली हुई दशा में घर पहुँचने के एक महीने बाद या अधिक समय के लिए मुगल जासूस उनकी वापसी के विषय में नहीं जान सका।

डले में आगरे से निकल भागने के पश्चात, अवश्य ही शिवाजी पहले मथुरा पहुँचे जो उनके घर से विपरीत दिशा में था जिससे उनके पीछा करने वालों को उनकी गंध भी न मिले। मेरा विश्वास है कि उनका अगला पड़ाव इलाहाबाद था जो सबसे बड़ा तीर्थ-स्थान था और भारत में साधु और हिन्दू संन्यासियों के जमघट का स्थान था और जहाँ से संन्यासियों के दल देश के विभिन्न भागों के लिए यात्रा के हेतु चलते रहते थे।

निस्सन्देह मराठा इतिहासकारों ने लिखा है कि शिवाजी अपनी वापसी यात्रा में बनारस गये और जगन्नाथपुरी भी गये; परन्तु उन्होंने घटना के एक पीढ़ी बाद लोकचर्चा को सुनकर लिखा था। यदि हम यह मान लें कि वह उत्तरी भारत के प्रत्येक प्रसिद्ध तीर्थ की यात्रा करते रहे जबकि उनका जीवन इस बात पर निर्भर था कि वह औरंगजेब के क्षेत्राधिकार के बाहर कम से कम समय में निकल जायँ जिससे मार्ग में दर्रों और नौघाटों पर उनके भागने के समाचार न पहुँच जायँ अथवा पीछा करने वाली सेनाएँ किसी स्थान पर उनके पहुँचने से पूर्व ही न उपस्थित हो जायँ, तो ऐसी मान्यता का अर्थ यह होगा कि हम शिवाजी की विचित्र व्यावहारिक सूझबूझ को नहीं मानते।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अतएव इतिहासकार का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह इलाहाबाद से आगे अन्य तीर्थों की यात्रा शिवाजी के कार्यक्रम से अलग कर दे। हमारे वीर के विषय में उस समय की साहसपूर्ण रोमांचकारी कथाएँ, जबकि वह बनारस तथा अन्य स्थानों में भेस बदले हुए थे, असत्य मालूम होती हैं; वे नीचे केवल पाठकों के मनोरंजन के लिए दी जाती हैं।

किसी नगर में फौजदार अलीकुली ने कुछ यात्री सन्देह में बन्दी कर लिये, जिसने शिवाजी के पलायन के विषय में सरकारी सूचना पाने से पहले ही अपने दरबार के प्रतिनिधि के पत्र से मालूम कर लिया था। कैदियों की पूरी तलाशी ली गयी। परन्तु आधी रात को शिवाजी फौजदार के पास गोपनीय ढंग से पहुँचे और अपनी मुक्ति के लिए उसको एक हीरा तथा एक लाल दिया जिनका मूल्य एक लाख रुपया था। फौजदार ने कर्तव्य की अपेक्षा घूस को अधिक पसन्द किया। (खाफीखाँ, २ : २१८)

इलाहाबाद में स्नान करने के बाद शिवाजी बनारस को गये। यहाँ वे ब्रह्ममुहूर्त में ही यात्री से सम्बन्धित पूजा-पाठ से निवृत्त हो गये और जैसे ही आगरे से एक सन्देशवाहक उनकी गिरफ्तारी की घोषणा लेकर आया और शोरगुल मच गया, शिवाजी नगर छोड़कर चल दिये।

इस सम्बन्ध में खाफीखाँ ने लिखा है—जब मैं सूरत के पत्तन पर पहुँचा नाभा (या बाभा) नाम के एक ब्राह्मण चिकित्सक से मैंने निम्न कथा सुनी : "मैं बनारस के एक ब्राह्मण की सेवा में उसके शिष्य के रूप में था, परन्तु वह मुझे भर पेट भोजन नहीं देता था। अन्त में एक दिन सवेरे जबकि अँधेरा ही था, मैं यथाक्रम नदी के किनारे गया; एक आदमी ने मेरा हाथ पकड़ा, उसमें कुछ रत्न, अशर्फियाँ और होन रखे, और कहा 'अपनी मुट्ठी मत खोलो और मेरे लिए बहुत जल्दी पाठ कर दो।' मैंने शीघ्र ही उनके बाल कटवाये और स्नान करवाया, परन्तु अभी उनकी सेवा नहीं कर पाया था कि एकदम गुल-गपाड़ा मच गया और यह समाचार फैल गया कि शिवा की खोज में (दरबार से) गदा सहित सार्जेण्ट आ गये हैं। जब मैंने ध्यान दिया तो क्या देखता हूँ कि जिस मनुष्य की मैं सेवा कर रहा था वह चुपचाप खिसक गया। मुझे (तब) मालूम हुआ कि वह शिवा थे। उन्होंने मुझे ९ रत्न, ९ अशर्फियाँ और ९ होन दिये थे। इसके बाद मैं गुरु के पास नहीं गया और अपने देश को लौट आया तथा सूरत पहुँच गया। जो मेरा आलीशान मकान यहाँ पर है वह इसी धन से बना है।" (२. २१९-२२०)

पूर्व की ओर और आगे चलकर वह गया के प्रसिद्ध हिन्दू मन्दिर में पहुँचे

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जहाँ उनको दो आदमी मिले जिन्हें उन्होंने पहले ही भेज दिया था। तब वे दक्षिण-पश्चिम की ओर मुड़े और गोंडवाना, हैदराबाद तथा बीजापुर राज्यों में होते हुए घर लौट आये। "प्रतिदिन लम्बी पैदल यात्राएँ करने के पश्चात वह थक गये थे और अब उन्होंने घोड़े पर चढ़ने की इच्छा प्रकट की। घोड़ा खरीदने के समय उनके पास काफी रुपये न थे। इसलिए अपनी सोने के सिक्कों की थैली खोलकर उन्होंने उनमें से कुछ घोड़ा बेचने वाले को दिये। शिवाजी के पलायन का समाचार चारों ओर पहले ही फैल चुका था, और वह आदमी बोला कि 'आप अवश्य ही शिवाजी हैं क्योंकि आपने एक छोटे-से टट्टू के लिए इतना अधिक मूल्य चुकाया है!' इस पर शिवाजी ने अपनी पूरी थैली (मौन-द्रव्य के रूप में) दे डाली और वहाँ से भाग गये।" (दिल० ६१)

उनकी यात्रा के दौरान एक घटना के विषय में एक विशेष कथा कही जाती है। कथा इस प्रकार बतायी जाती है कि छद्मवेषी संन्यासी एक शाम को गोदावरी के किनारे एक गाँव में किसी किसान के घर रुके। किसान की बूढ़ी माँ ने साधारण भोजन परसने के लिए संन्यासियों से क्षमा-याचना की और उसने यह कहा कि लुटेरे शिवाजी के सेनानियों ने हाल में गाँव को लूट लिया है। उसने उनको और उनके स्वामी को मन भर कोसा। शिवाजी ने किसान तथा गाँव के नाम सावधानी से याद रखे और घर लौटकर उन्होंने उस किसान के परिवार को बुलाया और जो कुछ उसने लूट द्वारा खोया था उससे कहीं अधिक उसको देकर विदा किया। (९१ क० ब० परिच्छेद ५६)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय ७

१६६७–१६७०

१. मुगल दक्षिण की दशा (१६६७)।
२. शिवाजी की मुगलों से सुलह (१६६८)।
३. मुगलों से पुनः युद्ध (१६७०)।
४. मुअज्जम व दिलेरखाँ में अनबन।
५. सूरत की दूसरी लूट (१६७०)।
६. दिन्दोरी का संग्राम।
७. बरार और बगलाना पर धावा।

१. मुगल दक्षिण की दशा (१६६७)—सितम्बर, १६६६ में आगरे से वापस आने पर शिवाजी ने दक्षिण में परिस्थिति एकदम बदली हुई पायी। मुगल वाइसराय जयसिंह मराठों पर अपनी पूर्व विजय के समान अब अधिक विजय प्राप्त करने में असमर्थ था। अवस्था, घोर परिश्रम, निराशा और घरेलू चिन्ताओं से क्लान्त, बीजापुर के आक्रमण में असफलता होने के कारण अपने स्वामी की निगाह में अपयश पाकर, और किसी भी दिन अपने पद से हटा दिये जाने के भय ने मिर्जा राजा के स्वास्थ्य को जर्जर कर दिया था और वह मौत के दिन गिन रहा था। मई, १६६७ में नया नियुक्त गवर्नर शहजादा मुअज्जम औरंगाबाद पहुँच गया और उसने जयसिंह से चार्ज सँभाल लिया। राजपूत योद्धा मन में अत्यन्त दुखी तथा लोकापवाद से परेशान अपने घर की ओर रवाना हुआ, और बुरहानपुर में २८ अगस्त को मर गया।

दक्षिण में कमजोर और काहिल मुअज्जम की वापसी और जसवन्त के मित्रवत व्यवहार (मई, १६६७) से मुगलों की ओर से शिवाजी को कोई डर न रहा। यह सही है कि बहुत शीघ्र ही एक योग्य और क्रियाशील सेनापति, जो मराठों से बहुत द्वेष रखता था, मुगल शिविर में आ पहुँचा। दिलेरखाँ गौंड प्रदेश से वापस होकर शहजादा मुअज्जम से अक्तूबर, १६६७ में मिल गया, परन्तु इस प्रसिद्ध योद्धा के आगमन से मुगलों की शक्ति नहीं बढ़ी। राजकुमार दिलेर के प्रभाव और अपने पिता के दरबार में उसके सम्मान के कारण उससे द्वेष रखता था, उसकी उद्धत भावना को नापसन्द करता था,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और उसे सम्राट का गुप्तचर समझता था। गर्वीला रुहेला सेनापति अपनी ओर से सार्वजनिक रूप से महाराजा जसवन्तसिंह को तिरस्कार की दृष्टि से देखता था, जो राजकुमार का दायाँ हाथ तथा विश्वासपात्र था। दक्षिण में मुगल सेना में फूट का केवल यही स्रोत नहीं था। बीकानेर का प्रमुख राव कर्ण राठौर दिलेर के सेना-दल में अधिकारी था। उसके राजपूत रात को शिविर में जत्थे बनाकर लूट-मार करते थे। दिलेरखाँ ने, सम्राट की दृष्टि में अपना नाम ऊँचा रखने के लिए, इस मामले की रिपोर्ट दरबार में कर दी, और सम्राट ने उत्तर में राव को गिरफ्तार करने की आज्ञा दी। दिलेर वैरी को दण्ड देने के लिए बीदर की ओर भेजा गया, परन्तु राजकुमार के आदेश से राव कर्ण औरंगाबाद में ही रहा आया। राजकुमार राव को उसके कष्ट और काहिली में धन से सहायता किया करता था। इस प्रकार दिलेर के वैरियों को मुअज्जम के यहाँ तुरन्त आश्रय मिल जाया करता था। (दिल० ६५-६८)

परन्तु यदि दक्षिण का वाइसराय अधिक उत्साह और साहस का आदमी होता तो भी इस समय से कुछ वर्ष बाद तक शिवाजी की शक्ति को नष्ट करने के लिए आवश्यक मनुष्य और धन जुटाना सम्भव न था। साम्राज्य के साधनों को अन्य स्थानों पर केन्द्रित करना आवश्यक था क्योंकि वहाँ अधिक बड़े खतरे उपस्थित हो गये थे। शिवाजी के आगरे से पलायन के एक पखवारे के भीतर ही फारस से सम्भावित आक्रमण को रोकने के लिए एक बड़ी सेना पंजाब को भेजी गयी और इस विषय में चिन्ता दिसम्बर से पूर्व दूर नहीं हुई। परन्तु इसके तुरन्त बाद ही मार्च, १६६७ में पेशावर में यूसुफजई लोगों ने उपद्रव कर दिया जिसमें बाद को एक वर्ष से अधिक समय के लिए साम्राज्य की पूरी शक्ति लग गयी।

इसलिए यह साम्राज्य के हित में ही था कि शिवाजी को ऐसे समय पर न छेड़ा जाय।

२. **शिवाजी की मुगलों से सुलह (१६६८)**—मराठा सरदार भी अपनी ओर से मुगलों से नहीं भिड़ना चाहता था। आगरे से वापसी के बाद वह तीन वर्ष तक बहुत चुपचाप घर पर ही रहे, और उन्होंने मुगलों से कोई छेड़छाड़ नहीं की। वह कुछ समय तक शान्ति चाहते थे जिससे अपनी सरकार की उचित व्यवस्था कर दें, अपने अन्तर्गत भूमि की मालगुजारी का बन्दोबस्त कर सकें, अपने किलों की मरम्मत कर दें तथा पश्चिमी तट पर बीजापुर और जंजीरा से भूमि छीनकर अपनी शक्ति का विस्तार करें। अप्रैल, १६६७ में ही उन्होंने सम्राट को एक पत्र लिखा जिसमें शाही सेना से डर प्रदर्शित किया

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जो उनके विरुद्ध भेजी जाने वाली थी, और यह भी लिखा कि वह पुनः अधीनता स्वीकार करने को तैयार हैं, तथा मुगल झण्डे के नीचे अपने लड़के को ५०० सैनिकों के साथ युद्ध के लिए भेजने को तैयार हैं।[1]

औरंगजेब ने इस पत्र पर कोई ध्यान नहीं दिया। परन्तु शिवाजी ने एक बार फिर प्रयत्न किया। उन्होंने साम्राज्य से सुलह करने में जसवन्तसिंह को मध्यस्थ बनने की प्रार्थना की। उन्होंने महाराजा को लिखा, "सम्राट ने मुझे तिलांजलि दे दी है। अन्यथा मैं अपने ही साधनों द्वारा कंधार को लेने के लिए उनसे प्रार्थना करता। मैं (आगरे से) अपने जीवन की रक्षा के लिए भागा। मेरे हितैषी मिर्जा राजा का देहान्त हो गया है। यदि आपकी मध्यस्थता द्वारा मुझे क्षमा प्रदान कर दी जाय तो मैं शम्भू को राजकुमार की सेवा में भेज दूँगा और उसे जहाँ जाने की आज्ञा दी जायगी वहीं वह मनसबदार के रूप में मेरे अनुगामियों को लेकर चला जायगा।" (दिल० ६९-७०)

जसवन्तसिंह और राजकुमार मुअज्जम इस प्रस्ताव को पाकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और सम्राट से शिवाजी की सिफारिश की, जिसने प्रस्ताव को मान लिया[2] और शिवा के राजा के पद को मान्यता दी गयी परन्तु, जैसा प्रतीत होता है, उनको कोई किले वापस नहीं किये गये। इस प्रकार संधि हो गयी जो लगभग दो वर्ष तक रही।

मुगलों के साथ अनुबन्ध की शर्तों के अनुसार शम्भूजी औरंगाबाद में वाइसराय के दरबार में भेज दिया गया। उसने राजकुमार से ४ नवम्बर, १६६७ को भेंट की और दूसरे दिन उसे घर वापस आने की आज्ञा मिल गयी। अगले वर्ष ५ अगस्त को प्रतापराव और नीराजी रावजी की अधीनता में एक सैन्य टुकड़ी औरंगाबाद भेज दी गयी (जेधे)। शम्भूजी को पाँच हजार की कमान फिर मिली, तथा उनको एक हाथी और रत्नजड़ित तलवार प्रदान

---

[1] अखबारात, १०-९. शिवाजी के मुगलों से सुलह के तीन वर्ष, १६६७-६९ और फूट के कारण; सभा० ५८-६१; ९१ क० ब० परि० ६२, जेधे शका०; दिल० ६९-७१। इस संधि की शर्तों का पूरा विवरण कहीं नहीं मिलता। (कोठी के अभिलेख, सूरत. १०५)

[2] मुअज्जम ने शिवाजी को लिखे दिनांक ९ मार्च, १६६८ के पत्र में उनको राजा की उपाधि प्रदान करने का समाचार भेजा और उसमें यह भी लिखा है कि उसकी अन्य माँगें विचाराधीन हैं। (पारसनिस पांडुलिपि, पत्र संख्या ११)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

की गयी। बरार में उन्हें जागीरें दी गयीं। उसके सेना-दल में से आधा औरंगाबाद में रहा और शेष आधा नयी जागीर की मालगुजारी वसूल करने में सहायता देने के लिए भेज दिया गया। डेढ़ वर्ष तक मराठा सेना जागीर में रही और जैसा, 'सभासद' में स्पष्ट रूप से लिखा है, "मुगल राज्य के बूते पर खाती रही।" (दिल० ७०; सभा० ६१)

१६६७, १६६८ और १६६९ में शिवाजी मुगल सरकार के साथ शान्ति-पूर्वक रहे। अंग्रेजी कोठी के पत्रों में उसको इस प्रकार बताया गया है— "बहुत शान्त" और "औरंगजेब का जागीरदार जो राजकुमार की आज्ञा के अनुसार सब कुछ करने को तैयार था।" "उसके सम्बन्ध बीजापुर से भी बहुत शान्तिपूर्ण थे।" "आसपास का प्रदेश (कारवार) इस समय बहुत शान्त है। शिवाजी राजगढ़ में ही रहता है, और यद्यपि अभी तक इस शासक (आदिलशाह) और उसमें कोई सन्धि नहीं हुई, परन्तु दोनों ही एक-दूसरे के प्रति कोई वैर का कार्य नहीं कर रहे हैं।" इसके बाद भी १७ जुलाई, १६६९ को हुबली के अंग्रेज व्यापारियों ने लिखा है, "शिवाजी बहुत शान्त है, और सम्राट के देश को किसी प्रकार हानि नहीं पहुँचाता है।" (कोठी के अभिलेख सूरत, खण्ड १०५; कारवार से सूरत, १६ सितम्बर १६६८)

वास्तव में इन तीन वर्षों में (१६६७-६९) उन्होंने बहुत-से उत्तम विनियम बनाये जिनसे उनकी सरकार की नींव विस्तृत और गहरी पड़ गयी और बाद की पीढ़ियों के लिए वे प्रशंसा की वस्तु हो गये हैं। (सभा० २४-३०, ५६)

परन्तु वास्तव में शान्ति दोनों ओर से केवल दिखावा मात्र विराम-सन्धि थी। ऐसा करने में शिवाजी का एकमात्र उद्देश्य यह था कि वह तीन बड़ी शक्तियों के सम्भावित सम्मिलित आक्रमण से बचना चाहते थे और युद्ध से इस अवकाश को अपनी शक्ति को पुनः बटोरने में लगाना चाहते थे। औरंगजेब, जो सदा अपने पुत्रों पर संदेह करता था, मुअज्जम और शिवा की मैत्री को अपने सिंहासन के लिए खतरा समझता था, और वह चुपके-चुपके शिवाजी को दुबारा जाल में फाँसने के लिए योजना बना रहा था, अथवा कम से कम यह तो चाहता ही था कि उसके लड़के व सेनापति को वह बंधक बना ले। (सभा० ६०)

सभासद से यह मालूम होता है कि औरंगजेब ने अपने लड़के को औरंगाबाद स्थित मराठा प्रतिनिधि प्रतापराव और नीराजी पंत को गिरफ्तार करने और उनकी सेनाओं के घोड़ों को कुर्क करने के लिए लिखा, और यह कि

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

राजकुमार को अपने दरवार के प्रतिनिधि से इस वात का पता पहले ही लग गया था, और उसने नीराजी को वता दिया और मराठों को भाग जाने का परामर्श दिया, जवकि शाही आदेश एक सप्ताह वाद आया और जिसके अनुसार अव कार्य करना सम्भव न रह गया था। (सभा० ६०-६१)

विगाड़, जो हर दशा में अवश्यम्भावी था, आर्थिक कारणों से शीघ्र ही हो गया। औरंगजेव के लिए खर्चे में कमी करना अति आवश्यक हो गया, और उसने दक्षिण में मुगल सेना की संख्या में वहुत कमी कर दी। इस प्रकार हटाये गये सैनिक शिवाजी की सेवा में चले गये, और उन्होंने उनको अपनी सेवा में रख लिया। शाही किफायत का दूसरा भूल का कार्य यह था कि १६६६ में दरवार की यात्रा के लिए शिवाजी को जो एक लाख रुपये दिये गये थे वे उनकी वरार की नयी जागीर का एक भाग कुर्क करके वसूल कर लिये गये। इसका समाचार शिवाजी को तव मिला जव उन्होंने अपनी सैनिक तैयारियाँ पूरी कर ली थीं।[3] उन्होंने प्रतापराव को गुप्त संदेशा भेजा कि वह अपने आदमियों को लेकर औरंगावाद से चुपचाप चल दे। सेना का दूसरा खण्ड भी वरार से उसी समय भाग गया और मार्ग में गाँवों को लूटता चला। (दिल० ७१)

३. **मुगलों से पुनः युद्ध (१६७०)**—मुगलों से यह विच्छेद जनवरी १६७० में अथवा इससे एक पखवाड़ा पहले आरम्भ हुआ। ११ दिसम्बर, १६६९ को सम्राट को दक्षिण से समाचार भेजा गया कि शिवा की 'विरादरी' के चार कप्तान शाही नौकरी छोड़कर चले गये। औरंगजेव ने तुरन्त ही दक्षिण में अपनी सेना को मजवूत किया। २६ जनवरी को दिलेर को आज्ञा दी गयी कि वह गोंड प्रदेश में देवगढ़ को छोड़कर औरंगावाद के लिए रवाना हो जाय। दाऊदखाँ को आदेश दिया गया कि वह अपने सूवे खानदेश की सुरक्षा का प्रवन्ध कर दे और इसके वाद राजकुमार मुअज्जम की सहायता को पहुँच जाय। अनेक अन्य अधिकारी उत्तरी भारत से दक्षिण में स्थानान्तरित कर दिये गये। (अखवारात, वर्ष १२)

शिवाजी ने आक्रमण जोर से किया और आरम्भ में सफलता भी प्राप्त

---

[3] इसका प्रमाण कोई नहीं है कि औरंगजेव द्वारा मन्दिरों को नष्ट करने के लिए सामान्य आज्ञा (९ अप्रैल, १६६९) के विरोध में शिवाजी ने सन्धि तोड़ दी (जनवरी, १६७०), यद्यपि ये दोनों घटनाएँ अंग्रेजी कोठी के एक पत्र में एक-दूसरी के तुरन्त वाद ही वतायी गयी हैं। (फोस्टर, १३. २५६, और जेधे)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

की।[४] उनके पर्यटक दलों ने मुगल राज्य को लूटा और उन्होंने उन किलों में से कई पर अधिकार कर लिया जो उन्होंने पुरन्दर की सन्धि की शर्तों के अनुसार औरंगजेब को अर्पित कर दिये थे। "इन किलों में से अधिकांश शाही अधिकारियों की कमान में बहादुरी से लड़ते हुए अधीन हुए। प्रतिदिन सम्राट को इन किलों के पतन का समाचार मिलता रहा। परन्तु मजबूत किलेबन्दी और युद्ध सामग्री की प्रचुरता के कारण कुछ किलों के पतन में विलम्ब हुआ।" (दिल० ६४)

उसकी सबसे महान सफलता राजपूत किलेदार उदयभान से कौन्दाना का किला छीन लेना था (४ फरवरी, १६७० ई०)। कुछ कोली निर्देशकों की सहायता से जो उस स्थान को भलीभाँति जानते थे, जाड़ों की उस अँधेरी रात में तानाजी मालूसरे ३०० मावल पैदल सैनिकों के लेकर रस्सी की सीढ़ियों की सहायता से कल्याण फाटक के निकट कम सीधे पहाड़ी ढाल पर चढ़ गया, और किले में घुसकर संतरियों को मार डाला। खतरे की सूचना दी गयी; अफीम के नशे में चूर राजपूतों को हथियार सँभालने और बाहर निकलने में कुछ समय लग गया; परन्तु इस बीच में मराठों ने अपने पैर जमा लिये। किले की सेना जी तोड़कर लड़ी। परन्तु मावलियों ने 'हर-हर-महादेव' के युद्धघोष के साथ उनकी सेना में मारकाट मचा दी। दोनों ओर के सरदारों ने एक-दूसरे को चुनौती दी और एक ही दाँव में दोनों धराशायी हो गये और मर गये। मराठे अपने नेता की मृत्यु से निराश हो गये, किन्तु उसके भाई सूर्याजी मालूसरे ने उनको एकत्र किया, पुनः आक्रमण किया, सहायक सेनाओं के प्रवेश के लिए कल्याण द्वार खोल दिया, और किले पर पूरा अधिकार कर लिया। फिर मारकाट शुरू की गयी। १२,००० राजपूत मौत के घाट उतार दिये गये और अन्य बहुत-से पहाड़ी के ढाल पर जान बचाने के लिए भागते हुए मारे गये। विजेताओं ने सेना-आवासों के झोंपड़ों में आग लगा दी, और नौ मील दूर दक्षिण में स्थित राजगढ़ में अग्नि-संकेत द्वारा शिवाजी को पता लग गया कि किले का पतन हो गया। उन्होंने तानाजी की मृत्यु पर शोक

---

[४] सभासद ५८ में लिखा है, "चार महीने में उसने वे २७ किले वापस ले लिये जो मुगलों को दे दिये गये थे।" परन्तु यह अत्योक्ति है और चार महीने केवल अस्पष्ट समय है। सिंहगढ़ के पतन के विषय में बड़ा उत्साह-पूर्ण तथा काल्पनिक गीत है (पोवाड़े)। १६७० के अभियान ऐतिहासिक वर्णन के लिए 'अखबारात' और 'दिलकशा' दोनों ही अत्यधिक सहायक हैं, केवल कुछ तारीखें जेधे से ली गयी हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मनाया और किले के लिए उन्होंने उसको बहुत बड़ी कीमत समझी, तथा किले का नाम उस सिंह के हृदय वाले के नाम पर सिंहगढ़ रख दिया जिसने उसे विजय किया था।

८ मार्च को नीलो पन्त ने पुरन्दर[५] वापस ले लिया और उसके किलेदार रजीउद्दीनखाँ को बन्दी कर लिया। कुछ दिन के बाद मराठों ने चन्दौर गाँव को लूटा और वहाँ एक हाथी, १२ घोड़े तथा शाही खजाने के ४०,००० रुपये लूट लिये, और फिर नगर में घुस गये तथा उसे लूटा, और साथ ही शाही किलेदार किले में बन्द कर दिया गया। परन्तु एक स्थान पर उनको पीछे हटना पड़ा। मनोहरदास गौड़ नामक एक वीर और योग्य राजपूत सम्राट की ओर से माहोली (उत्तरी कोंकण में बम्बई से ५० मील उत्तर-पूर्व) के किले का प्रबन्ध करता था; यह किलेदार शाहजहाँ के समय के राजा विट्ठलदास का भतीजा था। शिवा ने फरवरी, १६७० ई० में एक रात को किले पर अकस्मात आक्रमण कर दिया। उन्होंने किले की प्राचीर पर रस्सी की सीढ़ियों द्वारा ५०० आदमी भेज दिये। परन्तु मनोहरदास ने, जो "रात-दिन चौकन्ना रहता था," आक्रामक दल पर हमला कर दिया, बहुतों को मार डाला और शेष को खड़ी चट्टान से नीचे धकेल दिया। शिवाजी ने तब घेरा हटा लिया, और फिर कल्याण-भिवाँदी की ओर मुड़े तथा वहाँ के थानेदार ऊजबकखाँ को मारकर उस पर अधिकार कर लिया, और वहाँ की बाहरी मुगल चौकियों के सैनिकों को भगा दिया। कोंकण का फौजदार लोदीखाँ मराठा सेनाओं से युद्ध में घायल हुआ, और दूसरी मुठभेड़ में हार गया और उस जिले से निर्वासित कर दिया गया। नान्देर (?) का मुगल फौजदार अपने स्थान को छोड़कर भाग गया। (मसीरे-आलमगीरी, दिल० ६५, सूरत का पत्र)

दक्षिण में मुगलों के सम्मान की रक्षा करने वाला केवल एक ही अधिकारी था—यह था दाऊदखाँ कुरैशी जो १६६५ ई० के जयसिंह के मराठा अभियान में दिलेरखाँ की कमान के ठीक नीचे ही दूसरे नम्बर पर था। खानदेश के सूबे को अपने पुत्र के चार्ज में छोड़कर, दाऊदखाँ २८ मार्च, १६७० ई० को अहमदनगर में आया। छह दिन पीछे ७००० घुड़सवारों को लेकर वह शिवाजी के आदमियों को खदेड़ने गया जो पारनीर, जुन्नार और माहोली के आसपास घूम

---

५ इस किले को रामूसियों के एक दल द्वारा अकस्मात आक्रमण करके लेने का पहला प्रयत्न विफल रहा (इस प्रजाति की मौखिक किम्वदन्तियों के अनुसार)। मैकिंटोश कृत रामूसियों का विवरण (बम्बई, १८३३), पृष्ठ ५५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रहे थे। उन्होंने पारनीर और जुन्नार को खाली कर दिया और उसके पहुँचने पर वहाँ से चल दिये, फिर दाऊद ने इन दोनों चौकियों पर अधिकार कर लिया। इस बीच में शिवाजी ने उस प्रदेश में तीन मुगल किलों पर हमला कर दिया, और दाऊदखाँ ने उनकी सहायता करने के लिए जुन्नार को छोड़ दिया। परन्तु उसकी अग्रसेना के आने पर (उसके बहादुर लड़के हमीद और लोदीखाँ की कमान में) मराठों ने घेरा छोड़ दिया और भाग गये, और मुगलों का अग्र-डिवीजन उनके मुख्य दल पर टूट पड़ा।

थोड़े समय बाद ही ये दोनों अधिकारी सेना की टुकड़ी लेकर आगे बढ़े और माहोली से २० मील दूर, सीमा पर स्थित एक पुराने किले को नष्ट कर दिया, जिसकी मराठे मरम्मत कर रहे थे। अप्रैल के अन्त में दाऊदखाँ स्वयं माहोली के लिए चल पड़ा और वहाँ किले में खाद्य सामग्री देकर जुन्नार को लौट आया। सम्राट ने खुले दरबार में दाऊदखाँ के उत्साह की बहुत प्रशंसा की कि उसने अपने पास सेना कम होते हुए भी दुश्मन के देश पर हमला किया, और ऐसा करके शिवाजी का ध्यान दूसरी ओर लगा दिया। (अख-बारात, वर्ष १३)

१६ जून को माहोली भी सम्राट के हाथ से निकल गया। मनोहरदास ने अपने पद से त्याग-पत्र दे दिया, क्योंकि वह अधिक बड़ी मराठा सेना के दूसरे आक्रमण को अपने किले में सेना और सामान की कमी के कारण नहीं हटा सकता था और अतिरिक्त सेना के आने की आशा न थी। शिवाजी ने अवसर से लाभ उठाया, माहोली पर अधिकार कर लिया और उसके नये सेनाध्यक्ष अलावर्दी बेग और उसके २०० सैनिकों को मार डाला। अप्रैल १६७० ई०[६] के अन्त तक उन्होंने अहमदनगर, जुन्नार और परेंदा के ५१ गाँवों को लूट लिया।

४. **मुअज्जम और दिलेरखाँ में अनबन**—परन्तु दक्षिण में मुगल प्रशासन किसी भी दशा में शिवाजी का मुकाबला नहीं कर सकता था। १६७० ई० के आधे भाग तक उसमें अपना गृहयुद्ध होता रहा। सम्राट के बार-बार के

---

[६] यहाँ पर 'अखबारात' की भाषा संदिग्ध है। जेधे में लिखा है कि अगस्त में शिवाजी ने मुगल राज्य पर आक्रमण किया और जुन्नार का घेरा डाला। लोहगढ़ (१३ मई), हिन्दोला (१५ जून), कर्नाल (२२ जून), रोहिदा (२४ जून) पर उन्होंने अधिकार कर लिया। (दिल० ६५)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आवश्यक आदेशों के अनुसार दिलेरखाँ[७] ने गोंड प्रदेश को छोड़ दिया, जहाँ पर कि वह लाभपूर्वक स्थानीय सरदारों से धन बटोर रहा था, और वह दक्षिण की ओर चल पड़ा। २९ मार्च, १६७० ई० को नागपुर से चलकर, वह आशा करता था कि वह १२ अप्रैल को औरंगाबाद पहुँचेगा और राजकुमार की खिदमत में पेश होगा। परन्तु उसके निकट पहुँचने पर वाइसराय और उसके सेनापति के बीच का पुराना झगड़ा फिर आरम्भ हो गया। हम देख चुके हैं कि १६६७ ई० में उनमें आपस में कितना मतभेद था। इसलिए अब भी जब दिलेर कुछ वैरी आक्रामकों का पीछा करते हुए औरंगाबाद से पश्चिम में २६ मील दूर पर पथरी पहुँचा और राजकुमार से उसके दरबार में उपस्थित होने के लिए एक पत्र मिला, तो वह उससे भेंट करने से डरा कि कहीं राजकुमार उसे धोखे से कैद न कर ले अथवा मार न डाले। "दो या तीन बार वह राजकुमार की सेवा में उपस्थित होने के लिए घोड़े पर सवार होकर चला परन्तु मार्ग में से ही लौट आया, और कुछ दिनों तक बीमारी का बहाना करके टालता रहा।"

इस अवज्ञा के कार्य पर मुअज्जम और जसवन्त ने सम्राट को दिलेरखाँ के विद्रोह करने के विषय में लिख दिया। खान पहले ही राजकुमार की शिकायत कर चुका था कि वह शिवाजी से परोक्ष रूप से मिला हुआ है और उसने शाही राज्य की रक्षा के लिए कोई कदम नहीं उठाया है; उसने यह भी लिखा कि यदि मुझे (दिलेर को) काफी घुड़सवार और घेरे के लिए सामान देकर दक्षिण की सेना की कमान दो वर्ष के लिए सौंप दी जाय तो मैं मराठा सरदार को कुचल दूँगा।

इसलिए मार्च, १६७० ई० के अन्त में सम्राट ने अपने 'खाने-सामान' इफ्तिखारखाँ को मामले की जाँच करने के लिए औरंगाबाद भेजा—यह जानने के लिए कि मुअज्जम वास्तव में बलवा करने पर उतारू है अथवा नहीं, और शिवाजी से उसके सम्बन्ध कैसे हैं। इस अधिकारी को अब यह भी कार्य

---

[७] मुअज्जम और दिलेरखाँ के बीच अनबन, १६७० ई० : दिल० ७३-७५, ८०-८२ (मुख्य स्रोत); ईश्वरदास (आवश्यक) ५९ ए-६० ए; स्टोरिया २. १६१-१६६; परन्तु मसीरे-आलमगीरी १०२, अखबारात, वर्ष १३, और अंग्रेजी अभिलेखों ने तारीखें और कुछ विवरण दिये हैं। मूल पत्र-व्यवहार, कोठी अभिलेख सूरत, खण्ड ३, खण्ड १०५ (बम्बई से सूरत, ५ सितम्बर), इत्यादि। मीरते-अहमदी, बड़ौदा संस्करण १. २७४-२७६ ने केवल ईश्वरदास के लेख को दोहरा दिया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सुपुर्द किया गया कि वह दिलेरखाँ के विरुद्ध राजकुमारों के आरोपों की जाँच करे।

इफ्तखार ने, अच्छे विचारों से प्रेरित होकर, दोतरफा फैसला दिया। जैसा कि मुअज्जम की सेवा में एक अंग्रेज तोपची ने लिखा था, "उसने दोनों ओर से वाहवाही लूटी—राजकुमार से यह कहा कि दिलेरखाँ उसका वैरी है और दिलेरखाँ के पास जाकर उसे यह बताया कि यदि वह औरंगाबाद जायगा तो राजकुमार उसको पकड़ लेगा।" दिलेरखाँ को दी गयी उसकी गलत सलाह से तनाव अधिक दिनों तक रहा आया। (सूरत के प्रेसीडेण्ट को जॉन ट्रॉटर द्वारा पत्र, २० दिसम्बर, १६७० ई०, सूरत की कोठी के अभिलेख, खण्ड ५०१)

मुअज्जम ने सम्राट से शिकायत की कि दिलेरखाँ ने उसकी सत्ता का खुल्लमखुल्ला विरोध किया है और खान की अफगान सेनाएँ मार्ग में लोगों को लूटती तथा गाँवों को नष्ट करती चलती हैं, और समाचार-प्रेषक इस आरोप के साक्षी हैं। तब दिलेर ने, यह देखकर कि दक्षिण में उसकी स्थिति असहनीय है, बिना आदेश प्राप्त किये ही शाही दरबार में हाजिर होने का विचार किया, परन्तु राजकुमार ने इस तरीके को उत्तरी भारत में उपद्रव फैलाने का रूप दिया। उसके पास शाही आदेश पहुँच गये कि वह दिलेरखाँ को बलपूर्वक आज्ञा-पालन के मार्ग पर लाये। राजकुमार ने दिलेर से युद्ध करने के लिए एक सेना एकत्र की और आसपास की चौकियों से सेनाएँ बुलवा भेजीं।

दिलेरखाँ गोदावरी नदी के पार एक मराठा दल का पीछा कर रहा था जब उसे शाही दरबार से एक फरमान के आने का पता लगा; वह तुरन्त उसका उद्देश्य ताड़ गया। उसका पूर्व सन्देह और चिन्ता अब भय और परेशानी में बदल गयी। यद्यपि वर्षा ऋतु अपने पूरे जोर पर थी (अगस्त), नदियों में बाढ़ आ रही थी और सड़कों पर कीचड़ थी, परन्तु फिर भी उसने अपने डेरों और भण्डारों में आग लगा दी और अपनी सेना सहित उत्तर की ओर भाग-कर मालवा में पहुँच गया।

जैसे ही कि वह दक्षिण से चला समस्त उपलब्ध मुगल सेनाओं सहित राजकुमार मुअज्जम और जसवन्त ने ताप्ती के किनारे तक उसका पीछा किया और शिवाजी से सहायता की याचना की। दक्षिण में चारों ओर शाही अधि-कारियों में गृह-युद्ध की अफवाहें फैल गयीं जो इतनी "सम्भ्रान्त हैं कि (इनके विषय में) हम कोई विश्वसनीय तथ्य लिखने में असमर्थ हैं।" (मूल पत्र-व्यहार, बम्बई से सूरत, १ सितम्बर, १६७० ई०)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

किन्तु सम्राट से मुअज्जम को एक पत्र मिला जिसमें वह औरंगाबाद से वापस बुलाया गया था (सितम्बर)। राजकुमार के पीछे पड़ने वाला दुष्ट प्रेत जसवन्तसिंह उससे अलग कर दिया गया और उसकी नियुक्ति उस समय के लिए बुरहानपुर में कर दी गयी। मुअज्जम ने तुरन्त अपने पिता का आदेश माना और वह सितम्बर, १६७० ई० के अन्त में औरंगाबाद लौट आया। इन भीतरी विपत्तियों ने मुगल सेना को जर्जर कर दिया, और शिवाजी ने इस स्वर्ण अवसर से पूरा लाभ उठाया। हम देख चुके हैं कि वर्ष के आरम्भ में ही उसने किस प्रकार अपने कई किलों को वापस ले लिया था। उसके घुड़सवारों की टुकड़ियाँ समस्त प्रदेश पर चारों ओर लूटमार करती हुई घूमती थीं। मार्च में सूरत की अंग्रेजी कोठी वालों ने लिखा, "शिवाजी अब पहले की भाँति चोर के समान नहीं चलता है, वरन वह ३०,००० मनुष्यों को लेकर आगे बढ़ता है और जीतता जाता है और यद्यपि राजकुमार उसके निकट ही है परन्तु उसका उस पर कोई प्रभाव नहीं है।" (मूल पत्र-व्यवहार, ईस्ट इण्डिया कम्पनी, ३४१५)

५. सूरत की दूसरी लूट (१६७० ई०)—अप्रैल में बहादुरखाँ ५००० घोड़ों का रिसाला लेकर सूरत में आ गया क्योंकि नगर पर शिवा के आक्रमण की आशंका थी। अगस्त में गलत अफवाह उड़ गयी कि मुअज्जम, जो उस समय अपने पिता के विरुद्ध बलवई समझा जाता था, "इस नगर और किले पर कब्जा" करने के लिए सूरत आ रहा है। मुगलों ने बीजापुर के दरबार से शिवाजी के विरुद्ध अभियान के लिए १२,००० सवारों का रिसाला माँगा और कुवारी-दुर्ग (पूना से ४० मील पश्चिम) नामक गढ़ के लिए बम्बई के अंग्रेजों से कुछ गोला-बारूद माँगे। लोग यह सोच रहे थे कि वर्षा बन्द होने पर जब अभियान होना फिर सम्भव हो जायगा, तब मुगल क्या करेंगे। परन्तु जैसा सदा होता रहा, शिवाजी ने पहले आक्रमण कर दिया। ३ अक्तूबर को शिवाजी ने दूसरी बार सूरत को लूटा। (मूल पत्र-व्यवहार ३४५७, सूरत कन्सल्टेशन्स)

सितम्बर में बराबर वह कल्याण में एक बड़ा रिसाला जमा करते रहे थे, जिसका उद्देश्य स्पष्ट रूप से गुजरात पर आक्रमण करना था। यह मामला इतना कुख्यात हो रहा था कि १२ सितम्बर को सूरत के अंग्रेज अधिकर्ता इस नतीजे पर पहुँचे कि "शिवाजी सबसे पहले इसी नगर पर अधिकार करेगा," और "आने वाले ख़तरे को देखकर (हमने) सुविधानुसार सूरत की अपनी सभी कोठियाँ खाली कर दीं और जो सामान हटाया जा सकता था हटा दिया और उसको स्वाली भेज दिया"; अक्तूबर के आरम्भ में उनकी परिषद के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

समस्त सदस्य और प्रेसीडेण्ट (गिराल्ड औंगियर) स्वाली में पहुँच गये। परन्तु मुगल गवर्नर इतना दोषी और असावधान था कि उसने नगर की सुरक्षा के लिए केवल ३०० मनुष्य ही रख छोड़े थे। २ अक्तूबर को यह समाचार मिला कि शिवाजी सूरत से बीस मील के भीतर ही १५,००० घुड़सवार और पैदल सेना लेकर आ पहुँचे हैं। उस दिन और रात को नगर के सब भारतीय व्यापारी और सरकारी कर्मचारी भी भाग गये। ३ तारीख को शिवाजी ने नगर पर आक्रमण कर दिया जिसके चारों ओर औरंगजेब के आदेश से हाल में ही चहारदीवारी बना दी गयी थी। थोड़े ही मुकाबले के पश्चात रक्षक भागकर किले में घुस गये और मराठों ने अंग्रेज, डच और फ्रांसीसी कोठियों, फारसी और तुर्की सौदागरों की 'नयी सराय', फ्रांसीसी कोठी के सामने 'तातारी सराय' को छोड़कर समस्त नगर पर अधिकार कर लिया—तातारी सराय में काशगर का पूर्व-बादशाह अब्दुल्लाखाँ निवास करता था जो हाल में ही मक्का की तीर्थयात्रा से लौटा था। फ्रांसीसियों ने "मूल्यवान उपहार" देकर आक्रामकों से अपनी जान बचायी। यद्यपि अंग्रेजी कोठी खुले हुए मकान के रूप में थी, उसकी रक्षा स्ट्रेन्शम मास्टर ने ५० मल्लाहों की मदद से की और मराठों पर वहाँ से इतनी जोर की गोलाबारी की गयी कि उनके कई आदमी काम आये; फिर उन्होंने अंग्रेजों को छोड़कर काशगर के शासक की सराय को फ्रांसीसी कोठी के बगल में ही लाभप्रद स्थानों से लूटा जिन पर फ्रांसीसियों ने उन्हें अधिकार कर लेने दिया। तातारों ने सारे दिन जोर का मुकाबला किया, परन्तु जब उन्हें यह प्रतीत होने लगा कि अब प्रतिरोध असम्भव है तो वे रात को अपने बादशाह के साथ भागकर किले में पहुँच गये, और अपने मकान को लुट जाने दिया जिसमें मूल्यवान सामान था और उसमें औरंगजेब से उपहारस्वरूप प्राप्त एक सोने की पालकी तथा अन्य मूल्यवान वस्तुएँ भी थीं।[८]

'तातारी सराय' के सुरक्षित स्थानों से दूसरे दिन मराठों ने अंग्रेजी कोठी पर गोलाबारी करने की तैयारी की, परन्तु मुट्ठी भर अंग्रेजों की कठोर भावना ने उनको दबा दिया, और कुछ आवेशपूर्ण मंत्रणा के बाद उन्होंने समझौता कर

---

८ सूरत की दूसरी लूट : सूरत कन्सल्टेशन्स, १२ सितम्बर; सूरत परिपद् से कम्पनी को, २० नवम्बर, १६७० ई० (हैज की डायरी २. पृष्ठ २२६-९), कोठी के अभिलेख खण्ड ३ (कन्सल्टेशन्स, स्वाली मेरीन पर, अक्तूबर); डच अभिलेख, अनुवाद खण्ड २९, संख्या ७०३ मार्टिन मैमौयर्स, १. २९३। म० आ० १०६ (केवल संकेत है); सभा० ६२-६३; ९१ क० ब०, परि० ६३

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लिया और अंग्रेजों को न लूटने के लिए राजी हो गये। डच कोठी अछूती रही। उनके सूरत रेजीडेण्ट ने लिखा था, "आक्रामक की ओर से एक दूत आया जिसने कहा यदि तुम चुप रहोगे तो तुमको हानि नहीं पहुँचाई जायगी···और हमने उनको आश्वासन दे दिया कि हम न तो तुम्हारी ओर से और न तुम्हारे विरोध में कुछ करेंगे।" नयी सराय में तुर्कों ने सफलतापूर्वक अपनी रक्षा की और आक्रमणकारियों को कुछ हानि भी पहुँचाई। (डच अभिलेख, अनुवाद, खण्ड २६, सूरत से डायरेक्टरों को, १४ नवम्बर, १६७०)

मराठों ने बड़े मकानों को फुरसत में लूटा, अपने साथ अतुल धन-दौलत, कपड़ा और अन्य मूल्यवान वस्तुएँ ले गये, और अनेक स्थानों में आग लगा दी; यहाँ तक कि "लगभग आधा नगर" जलाकर भस्म कर दिया। फिर वे सूरत के किले पर पहुँचे और उन्होंने उस पर जोर की गोलाबारी की; परन्तु यह केवल दिखावा था क्योंकि वे घेरा डालने के लिए असमर्थ थे और उन्होंने दीवारों के पास जाने का साहस नहीं किया। तीसरे दिन (५ अक्तूबर को) वे फिर अंग्रेजी कोठी पर आये और उसे जला देने की धमकी दी। शिवाजी और उनके सैनिक इस मकान पर पहले आक्रमण में अपने कई आदमियों के मारे जाने पर बहुत नाराज थे और वे अब उसका बदला लेना चाहते थे। परन्तु उनके कुछ बुद्धिमान कप्तानों ने सलाह दी कि दूसरे आक्रमण से जन-हानि और अधिक होगी, और उनकी प्रार्थना पर दो अंग्रेज अभिकर्ता नगर के बाहर शिवाजी के शिविर पर उनके सामने प्रस्तुत हुए और उन्होंने उनको सिन्दूरी कपड़े, तलवारों के फल और चाकू भेंट किये। मराठा राजा ने "उनका कृपापूर्ण स्वागत किया, उनसे कहा कि अंग्रेज और वह दोनों अच्छे मित्र हैं और उनके हाथों में अपना हाथ रखकर उनसे कहा कि वह अंग्रेजों को कोई हानि न पहुँचायेंगे।" (सूरत से कम्पनी को, २० नवम्बर १६७०, हैज की डायरी)

५ अक्तूबर को दोपहर के समय शिवाजी यकायक नगर से लौट गये यद्यपि कोई मुगल सेना न नगर के निकट थी और न उसके आने की कोई सूचना ही थी। परन्तु उनको लूट का माल प्रचुर मात्रा में मिल गया था और उन्होंने अब सुरक्षित लौटना ही उचित समझा। वापस होने पर उन्होंने वहाँ के अधिकारियों और मुख्य व्यापारियों को पत्र लिखा कि यदि तुम मुझे बारह लाख रुपया वार्षिक कर के रूप में न दोगे तो मैं फिर अगले वर्ष आऊँगा और नगर के शेष भाग में भी आग लगा दूँगा। शिवाजी के जाने के तुरन्त बाद ही सूरत के गरीब आदमियों ने नगर में जो शेष बचा था उसे लूट लिया,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इतना कि कोई मकान बड़ा या छोटा लुटे बिना नहीं बचा सिवाय उन मकानों के जिनके निवासी सतर्क थे। एस० मास्टर के अधीनस्थ अंग्रेजी नाविकों ने भी लूट में भाग लिया।

उन तीन दिनों में जब सूरत की लूट हो रही थी दस मील पश्चिम की ओर ताप्ती के उस पार स्वाली के समुद्री बन्दरगाह के लोग भी भयभीत हो गये थे। वहाँ अंग्रेज, डच और फ्रांसीसियों ने अपने गोदाम और समुद्री जहाजों के घाट बनाये थे। उन दिनों में अंग्रेजी कोठी के सब सदस्य, उनका खजाना और यूरोप के लिए खरीदा हुआ बहुत-सा माल यहीं एकत्र थे। यहीं पर सूरत के 'शाहे-बन्दर' (पत्तन और कर-स्वामी), काजी और प्रमुख व्यापारियों (हिन्दू, मुस्लिम और आरमीनियाई) ने अंग्रेजों के साथ शरण ले ली थी। नगर के अनेक धनी मनुष्य नदी पार करके स्वाली के निकट सूरत के उत्तर के गाँवों में भाग गये थे। तीसरी तारीख को यह समाचार मिला कि नदी के उत्तर की ओर शिवाजी ५०० घुड़सवारों को भेजकर इन गाँवों को लूटना चाहते हैं और इन धनी मनुष्यों को बन्दी बनाना चाहते हैं और यह आशंका थी कि वह सूरत के शरणार्थियों को उसे सौंप देने तथा यूरोपीय सौदागरों से घूस का धन माँगने के लिए स्वाली भी आ सकते हैं। परन्तु वृहत ज्वार के आगमन से मराठे नदी को पार न कर सके और स्वाली सुरक्षित रहा। किन्तु आतंक इतना अधिक छा गया था कि तीसरी तारीख को अंग्रेज सदस्यों ने अपना खजाना तट से अपने एक जहाज में भेज दिया, और अपना समस्त बढ़िया ऊनी कपड़ा, पारा और मूँगा (?) आदि जहाजों पर भेज दिये, "जिससे शिवाजी के आक्रमण से उनकी रक्षा हो सके।" दो अन्य अंग्रेजी जहाज जो रवाना होने वाले थे स्वाली में ही १० अक्तूबर तक रोक लिये गये, क्योंकि उस तारीख़ तक आशा की जाती थी कि मराठे उस जिले से चले जायँगे। अंग्रेज व्यापारियों ने जहाज के बढ़इयों की मदद से समुद्री घाट पर एक लकड़ी का चबूतरा भी बना लिया और उस पर आठ तोपें जमा दीं जिससे "यथाशक्ति हम कम्पनी के धन और जायदाद की रक्षा कर सकें।"

मराठों की विशाल सेना को डराने में अंग्रेजों की सफलता और उनकी वीरतापूर्ण भावना का देश के लोगों पर बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा। इन व्यापारियों को १६६४ की लूट के समय अपनी कोठी की वीरतापूर्ण सुरक्षा के उपलक्ष में सम्राट ने वाणिज्य सम्बन्धी सुविधाएँ प्रदान की थीं। और अब सूरत के सबसे धनी व्यापारी हाजी सईद बेग के लड़के ने, जिसे स्वाली में शरण दे दी गयी थी, सार्वजनिक रूप से कहा कि वह अपने परिवार के साथ बम्बई चला जायगा।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सूरत की तीनों यूरोपीय कोठियाँ अछूती रहीं और समस्त अन्य दूकान और मकान लूट लिये गये—इस तथ्य ने स्वभावतः संदेह उत्पन्न कर दिया। सूरत और शाही दरबार में "चर्चा थी कि शिवाजी ने वहाँ पहुँचकर तीनों ईसाई जातियों के साथ मेल कर लिया था।" इसलिए अब की बार विदेशी व्यापारियों को सम्राट की ओर से कोई पुरस्कार नहीं प्राप्त हुआ। (कोठी के अभिलेख, सूरत, १०५)

एक सरकारी जाँच से पता चला कि शिवाजी ने सूरत से ६६ लाख रुपये का माल लूटा—अर्थात नगर से ही ५३ लाख की नगदी, मोती तथा अन्य वस्तुएँ और नवल साहू, हरि साहू तथा सूरत के निकट एक गाँव से १३ लाख का माल लूटा। (अखबारात, १३-१०)

परन्तु सूरत की वास्तविक हानि उस लूट के माल के द्वारा नहीं आँकी जा सकती है जिसे मराठे ले गये। इसका व्यापार, जो भारत का सबसे अधिक धनवान पत्तन था, लगभग नष्ट हो गया। शिवाजी के लौटने के बाद कई वर्ष तक नगर में जब-कभी खलबली मच जाती थी जबकि कोई मराठा सेना नगर से कुछ दूर कुछ दिनों की दौड़ के अन्तर्गत आ जाती थी और कभी-कभी उनके आगमन के झूठे समाचार से भी आतंक फैल जाता था। प्रत्येक ऐसे अवसर पर व्यापारी शीघ्र ही अपना माल जहाजों पर पहुँचा देते थे निवासी गाँवों को भाग जाते थे, और यूरोपीय लोग स्वाली जा पहुँचते थे। सूरत का बहुत-सा व्यापार लोप हो गया था और देश के भीतरी उत्पादकगण अपना बनाया हुआ माल पश्चिमी भारत के इस सबसे बड़े वाणिज्य-केन्द्र में भेजने से हिचकिचाते थे।

दूसरी लूट के एक महीने पश्चात "नगर में इतनी अस्तव्यस्तता थी कि वहाँ न कोई गवर्नर था और न प्रशासन ही" और लगभग प्रत्येक दिन वहाँ शिवा के आने की अफवाह फैला करती थी। "१२ तारीख को (अर्थात उनके जाने के केवल एक सप्ताह बाद) यह अफवाह फैल गयी कि वह ६००० सवार तथा १०,००० पैदल सेना लेकर वापस लौट रहे हैं और यह कि वह सूरत से लगभग ७५ मील दूर पीट (जिला नासिक) आ पहुँचे हैं। तुरन्त सामान्य निर्वासन आरम्भ हो गया और नगर एक चहल-पहल के बन्दरगाह के बजाय मृत्यु के समान शान्त रेगिस्तान-सा दिखाई पड़ने लगा। तुर्की, अंग्रेजी और फ्रांसीसी व्यापारियों ने अपनी कोठियाँ खाली कर दीं।" परन्तु डच लोग जो संख्या में कुल ५२ थे, अपने झण्डे फहराते हुए और ढोल बजाते हुए अपने जहाज से अपनी कोठी की ओर बढ़े। यह जनवरी, १६६४ के अंग्रेजी प्रदर्शन

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

की विलम्बित नकल थी, जबकि "अंग्रेज प्रेसीडेंट ने लगभग २०० आदमी लेकर नगर में गश्त लगाया और यह घोषणा की कि इन्हीं मुट्ठी भर आदमियों से हम शिवाजी का मुकाबला करेंगे !" (डच अभिलेख, अनुवाद, खण्ड २९, पत्र सं० ७६३ और खण्ड २७, संख्या ७१९)

नवम्बर के अन्त में और पुनः १० दिसम्बर, १६७० को संकट की फिर घोषणा की गयी; और यूरोपीय व्यापारी यह विचार करने के लिए मिले कि अपने हितों की किस प्रकार रक्षा की जाय। स्वाली की स्थलोन्मुख सुरक्षाओं को मजबूत किया गया और विश्राम-स्थान के उत्तर की ओर सुरक्षा के लिए कुछ फुट ऊँची दीवार बनायी गयी और बन्दरगाह के द्वार (या "होल") पर एक जहाज पहरे के लिए खड़ा कर दिया गया। प्रत्येक ऐसे खतरे के समय पर अंग्रेज अपना धन और माल सूरत से इस स्थान पर हटा लेते थे।

जून, १६७२ में, सूरत जाने के मार्ग पर रामनगर के कोली राज्य में मोरो-पन्त की अधीनता में मराठा सेनाओं की सफलताओं ने बहुत काल तक बराबर नगर को आतंक में रखा। मराठा सेनापति ने सूरत से खुल्लमखुल्ला चौथ माँगी और धमकी दी कि यदि गवर्नर ने यह न दी तो वह वहाँ आयेगा। ऐसा ही आतंक फिर फरवरी और अक्तूबर, १६७२, सितम्बर १६७३, अक्तूबर १६७४ और दिसम्बर १६७९ में फैला। संक्षेप में, सूरत के व्यापार और आर्थिक सम्पन्नता का नाश लगभग पूरा हो चुका था। (कोठी के अभिलेख)

६. दिन्दोरी का संग्राम (१७ अक्तूबर, १६७०)—सूरत के प्रति मराठों के व्यवहार की कहानी समाप्त करने के पश्चात अब हम दूसरे क्षेत्रों में शिवाजी के कार्यों को देखेंगे।

शहजादा मुअज्जम दिलेरखाँ को ताप्ती के तट तक खदेड़कर अभी-अभी वापस हुआ था, जब उसने सूरत की लूट का हाल सुना। उसने अविलम्ब दाऊदखाँ को बुरहानपुर बुलवा भेजा और उसे मराठा आक्रामकों पर हमला करने के लिए भेज दिया। इधर शिवाजी सूरत से चल चुके थे, वह बगलाना में पहुँच गये थे और वहाँ मुल्हीर किले की तलैटी में बसे हुए गाँवों को उन्होंने लूटा। दाऊदखाँ ने अपना सामान बैजपुर से औरंगाबाद वापस भेज दिया और थोड़ा-सा हलका सामान लेकर उसने चन्दौर को कूच कर दिया—इस नगर पर नासिक से बलगाना जाने वाली सड़क पर्वतश्रेणी को पार करती थी। गुप्तचर उसके पास समाचार लाये कि शिवाजी मुल्हीर से चल पड़े हैं और चन्दौर से १० मील पश्चिम में कांचणा-मांचणा दर्रे से चन्दौर श्रेणी को पार करने वाले हैं। (किले से नीचे) चन्दौर के खेड़े पर रात को नौ बजे पहुँचकर, दाऊदखाँ

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वैरी की गतिविधियों को जानने के लिए रुका। आधी रात के समय उसके गुप्तचरों ने रिपोर्ट दी कि शिवा पहले ही आधी सेना सहित दर्रा पार कर चुके हैं और शेष आधी सेना पीछे दर्रे की रक्षा के लिए छोड़ दी है जो बिछुड़े हुओं को ला सके। दाऊदखाँ तुरन्त आगे बढ़ा। परन्तु चन्द्रमा सवेरे तीन बजे अस्त हो चुका था. और अंधकार में मुगल सेनानी कुछ तितर-बितर हो गये।

इखलासखाँ मिआना (अब्दुल कादिर बिन बहलोलखाँ का लड़का जो पहले बीजापुर का पठान नेता था) मुगलों की अग्रसेना की कमान में था। बिलकुल सवेरे ही एक पहाड़ी टीले पर चढ़कर उसने नीचे वैरी को युद्ध के लिए तैयार देखा। जब उसके आदमी अपने कवच पहन रहे थे, जो ऊँटों पर लादकर लाये गये थे, तो उसने स्वयं मुट्ठीभर अनुगामियों को लेकर वैरी पर अचानक आक्रमण कर दिया। मराठी सेना के इस पृष्ठ भाग में १०,००० सैनिक थे और उसकी कमान में प्रतापराव गूजर अश्व-स्वामी, व्यंकोजी दत्तो और मकाजी आनन्द-राव (शाहजी भोंसले का पुत्र) थे। इखलासखाँ बहुत शीघ्र घायल हो गया और घोड़े से गिर गया। कुछ देर बाद दाऊद आ गया और उसने अग्रसेना की सहायता के लिए राय मकरन्द और कुछ अन्य अधिकारियों को भेजा, परन्तु वह अपने हाथी, झण्डे और ढोलों को टीले पर स्थित नाले से घिरे हुए एक ध्वस्त गाँव में छोड़ आया था कि वहाँ उसका शिविर तैयार किया जाय और रक्षी पृष्ठ-दस्ता आने पर वह वहीं ठहराया जाय।

कई घण्टे तक घोर संग्राम हुआ जिसमें बहुत रक्तपात हुआ। मुगलों की ओर संग्रामखाँ गोरी और उसके अनेक सम्बन्धी घायल हुए तथा अनेक मारे गये। मराठे "दक्षिण के बारगियों की भाँति शाही सेना को घेरकर लड़े।" परन्तु मुगलों की बुन्देला सेना, जिसके पास तोपों और बन्दूकों की बहुलता थी, वैरी को रोके रही। दाऊदखाँ स्वयं ने युद्ध में प्रवेश किया, और वैरी को तोपखाने सहित पीछे हटा दिया, और वह घायल इखलासखाँ को छुड़ा लाया।

किन्तु क्षेत्र के दूसरे भाग में विभागीय तोपखाने के दरोगा ने मीर अब्दुल मबूद पर हमला किया, जो धरती में एक बलन (शिकन) के कारण मुख्य सेना से अलग हो गया था। वह, उसका एक लड़का और कुछ अनुगामी घायल हो गये, और दूसरा लड़का और बहुत-से सैनिक मारे गये; तथा उसके झण्डों तथा घोड़ों को वैरी ले गये। दोपहर के समय लड़ाई शान्त हो गयी।

उस समय दाऊदखाँ के पास २००० से कम आदमी थे जबकि मराठों की संख्या उससे पाँचगुनी थी। शाम को उन्होंने फिर आक्रमण किया, परन्तु तोप-खाने की मार के कारण उन्हें पीछे हटना पड़ा। रात को मुगल शरत्कालीन

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आकाश के नीचे पड़ रहे, अपने शिविर के चारों ओर खाइयाँ खोदीं और मुर्दों को गाड़ने तथा घायलों की देखभाल करने में लग गये। मराठों ने फिर सामना नहीं किया और वे कोंकण की ओर चले गये। यह संग्राम १७ अक्तूबर, १६७० को दिन्दोरी के निकट लड़ा गया।[६] लगभग एक सप्ताह के बाद पेशवा ने त्रिम्बक (नासिक जिला) के किले पर अधिकार कर लिया।

दिन्दोरी की लड़ाई के फलस्वरूप एक महीने से अधिक समय तक मुगल शक्ति बहुत कमजोर हो गयी। युद्ध के एक दिन बाद दाऊदखाँ बची हुई सेना को लेकर नासिक की ओर चला और वहाँ एक महीने ठहरा जिसका उद्देश्य स्पष्ट ही अपनी शक्ति को मजबूत करना था और कोंकण के रास्ते की (ताल दर्रे ? होकर) निगरानी रखना था। घायल औरंगाबाद भेज दिये गये। नवम्बर के अन्त में वह अहमदनगर चला गया, परन्तु दिसम्बर के अन्त में चन्दौर श्रेणी में मराठों की सरगर्मी के कारण पिछले युद्ध के क्षेत्र में फिर बुला लिया गया। (दिल० ८७; ८६, ६२)

७. **बरार और बगलाना पर धावा**—हम इस अध्याय में शिवाजी के सूरत लौटने के बाद नवम्बर और दिसम्बर, १६७० में समुद्र पर और पश्चिमी समुद्र-तट पर उसकी क्रियाओं के विषय में इस अध्याय में नहीं पढ़ेंगे। दिसम्बर के आरम्भ में स्वयं शिवाजी के अधीनस्थ एक मराठा सेना ने खानदेश में छापा मारा, और इससे पहले मार्ग में अहिवन्त, मारकंडा, रावला और बगलाना में जावला किलों पर अधिकार जमा लिया। शीघ्र कूच करते हुए उन्होंने बुरहानपुर (खानदेश की राजधानी) से दो मील पूर्व स्थित एक गाँव को लूटा, परन्तु उस नगर के निकट नहीं आये क्योंकि जसवन्तसिंह ने आगाह कर दिया था जिसकी नियुक्ति वहाँ सितम्बर से हो गयी थी। बरार में जाते हुए, जब सबसे कम आशा की जा रही थी, उन्होंने कारिंजा नामक धनी और सम्पन्न गाँव को खूब लूटा। पाँच हजार बैल और गधे भी लूट के माल में शामिल थे, जिसमें एक करोड़ रुपये के मूल्य का कपड़ा, चाँदी और सोना था। नगर के सभी धनी मनुष्य निस्तार के हेतु पकड़ लिये गये। उनमें से केवल एक अति प्रसिद्ध आदमी स्त्री का वेश बदलकर भाग निकला। दूसरे नगरों से भी अपार

---

६ दिन्दोरी की लड़ाई : समस्त वर्णन दिलकशा, १. ८४-८८ पर आधारित। (भीमसेन ने इसे स्वयं देखा था); कुछ बातें सभासद ६३ से ली गयी हैं। तारीख जेधे श० दिन्दोरी से ली गयी है; दिन्दोरी चकोर से २८ मील दक्षिण-पश्चिम में और नासिक से १५ मील उत्तर में है। जेधे में लिखा है कि दिन्दोरी से शिवाजी कुंजरगढ़ गये और वहाँ ठहरे।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

धन मिला। इस धनी प्रदेश ने आधी शताब्दी की शान्ति और सम्पन्नता के काल में बहुत-सा धन एकत्र कर लिया था और अपने प्रथम धावे में आक्रामकों को बहुत-सा माल मिला। आऊसा के आसपास के क्षेत्र को २०,००० की सेना ने लूटा और उससे मालगुजारी वसूल की, परन्तु वे किले पर आक्रमण किये बिना ही चल दिये। कारिंजा और नानदरबार के क्षेत्र में मराठों ने भयभीत लोगों से भविष्य में चौथ वसूल करने के लिए लिखित आश्वासन लिये।[१०]

मुगलों ने कोई विरोध नहीं किया। बिहार का गवर्नर खानेजमाँ इतनी धीमी चाल से आगे बढ़ा कि वह आक्रमणकारियों को बीच में नहीं रोक सका और वह देवगढ़ पहुँचकर रुक गया। खानदेश का गवर्नर दाऊदखाँ इस समय वहाँ उपस्थित न था, क्योंकि वह अहमदनगर के निकट सेना-संचालन कर रहा था, और उसका लड़का अहमदखाँ जो बुरहानपुर में उसका प्रतिनियुक्त था, महाराज जसवन्तसिंह के प्रति खुले रूप से विद्रोह कर बैठा था जो राजकुमार के लिए द्रव्य एकत्र कर रहा था और जिसने खानदेश के राजकोष से पाँच लाख रुपया माँगा था। दाऊदखाँ के लड़के ने उत्तर दिया कि यदि महाराज इस सम्बन्ध में औरंगजेब का आदेश दिला सकेंगे तो वह उन्हें बीस लाख रुपया भी दे देगा, अन्यथा एक कौड़ी भी नहीं देगा; यह समाचार पाकर उसने नगर को लूटने की धमकी दी। (कोठी के अभिलेख, सूरत, बम्बई से सूरत को, ५ फरवरी, १६७१)

अंकाई-तंकाई के निकट अपने शिविर से दाऊदखाँ बुरहानपुर की ओर शीघ्रता से बढ़ा। फर्दापुर के दर्रे के निकट आकर उसे मालूम हुआ कि बरार से लौटते समय मराठे बुरहानपुर से बचकर निकल गये और बगलाना वाली सड़क पर चल दिये। राजधानी खानदेश में भी स्थिति अब सँभली हुई थी क्योंकि वहाँ १ जनवरी, १६७१ को नया सर्वोच्च सेनापति महाबतखाँ आ पहुँचा था, जो नगर छोड़ने के समय जसवन्तसिंह को भी अपने साथ ले गया था।

फरीदपुर से दाऊदखाँ पश्चिम की ओर घूम पड़ा और मराठों के पीछे-पीछे बगलाना पर पहुँच गया। जब शिवाजी बरार में कारिंजा को लूट रहे

---

[१०] जेधे; दिल० ६८; अखबारात, वर्ष १३—५, १०। कोठी के अभिलेख सूरत, १०५, जे० ट्राटर का पत्र, २० दिसम्बर १६७०; एस० मास्टर का पत्र प्रेसीडेण्ट को, १६ दिसम्बर। दिल० ६४ (केवल करिंजा का जिक्र है)। सभा० ७०। करिंजा ७७°३०′ पूर्व और २०°३२′ उत्तर में है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

थे, मोरो त्रिम्बक पिंगले के अधीनस्थ दूसरी मराठा टुकड़ी पश्चिमी खानदेश और बगलाना को लूट रही थी, और अब ये दोनों टुकड़ियाँ साल्हीर के निकट सम्मिलित हो गयीं। उन्होंने मुल्हीर के पहाड़ी किले के नीचे स्थित गाँव को लूटा और साल्हीर का घेरा डाल दिया। दाऊदखाँ मुल्हीर के निकट शाम को ८ बजे पहुँचा परन्तु आगे न बढ़ सका, क्योंकि उसका अधिकांश शिविर और सेना पीछे रह गयी थी।

खान ने अपनी सेनाओं को दूसरे दिर सवेरे ही साल्हीर का घेरा तोड़ने के लिए आज्ञा दी। वह स्वयं सूर्योदय से पूर्व चल पड़ा। परन्तु उसके अधिकांश आदमी अभी तक नहीं आ पहुँचे थे, और जितने थोड़े आये थे वे अपने सरदार के साथ आगे कूच करने के बजाय खाना बनाने में लगे हुए थे अथवा शिविर में आराम कर रहे थे। मार्ग में ही दाऊदखाँ को मालूम हुआ कि मराठों ने साल्हीर पर पहले ही कब्जा कर लिया था और इसलिए वह निराश होकर मुल्हीर को वापस लौट आया, और वहाँ थोड़ी देर रुककर चन्दौर श्रेणी में कांचणा-मांचणा के निकट अपनी नयी चौकी पर आ गया।

शिवाजी ने २०,००० घुड़सवारों और पैदल सेना से साल्हीर का घेरा डाला था, और एक दिन किले की सेना को चौकस न पाकर वह रस्सी की सीढ़ियों की सहायता से दीवार पर चढ़ गये। किलेदार फतहउल्लाखाँ लड़ते-लड़ते मारा गया और फिर उसके साले ने किला दुश्मन को सौंप दिया। यह लगभग ५ जनवरी, १६७१ को हुआ। मराठों की सफलता जारी रही। उन्होंने उस क्षेत्र में अन्य किलों को भी लेने का प्रयत्न किया जैसे मुल्हीर, चौरागढ़, और हुलगढ़। उनके भ्रमणकारी दलों ने बगलाना के फौजदार नेकनामखाँ को अन्न मिलना बन्द कर दिया (जिसका मुख्य आवास स्थान मुल्हीर में था)। उन्होंने ढोडप का भी घेरा डाला, जो चन्दौर श्रेणी का सबसे ऊँचा पहाड़ी किला था।[११]

१६७०-७१ के जाड़ों में पूर्व बुन्देलखण्ड में महोबा के पूर्व सरदार चम्पत-राय बुन्देला के लड़के छत्रसाल का स्वागत हुआ। इस नवयुवक ने जयसिंह की सिफारिश पर शाही सेना में नौकरी कर ली थी, परन्तु वह असन्तुष्ट था क्योंकि उसके विचार के अनुसार उसे गोंड प्रदेश में मुगल आक्रमण के समय उसकी सेवाओं के लिए जो पुरस्कार मिला था वह अपर्याप्त था। इसलिए एक

---

[११] दिल० ९८-१००; अखबारात, वर्ष १३-१२, १५; ९१ क० ब० परि० ७४; खाफीखाँ २. २४७-२४९ (इसमें साल्हीर के पतन का एक अन्य वर्णन दिया हुआ है)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दिन वह मुगल शिविर से शिकार के बहाने भाग निकला और अपनी स्त्री के साथ महाराष्ट्र के लिए अज्ञात और घूमघुमाव के मार्गों से होता हुआ महाराष्ट्र पहुँचा। उसने सम्राट के विरुद्ध शिवाजी की सेवा में रहने की इच्छा प्रकट की। शिवाजी ने उसका सम्मानपूर्वक अभिनन्दन किया, उसकी वीरता की प्रशंसा की, परन्तु उन्होंने उसे यह परामर्श देकर वापस कर दिया कि वह औरंगजेब के विरुद्ध बुन्देलखण्ड में विद्रोह का झण्डा खड़ा कर दे; उन्होंने ये शब्द कहे, "यशस्वी सरदार ! अपने वैरियों पर विजय प्राप्त करो और उन्हें अधीन करो। अपनी जन्मभूमि को पुनः प्राप्त करो और उस पर शासन करो .....यही वांच्छनीय है कि अपने ही राज्य में युद्ध आरम्भ कर दो जहाँ तुम्हारी ख्याति के कारण अनेक अनुगामी मिल जायँगे। जब कभी मुगल तुम पर आक्रमण करने का विचार करेंगे मैं उनका ध्यान हटा दूँगा और तुम्हारे साथ क्रियाशील सहयोग देकर उनकी योजनाओं को विफल कर दूँगा।" परन्तु समसामयिक इतिहासकार भीमसेन लिखता है कि छत्रसाल राजगढ़ से निराश होकर लौटा क्योंकि दक्षिणी दरबार की प्रान्तीय भावना उसे प्रतिकूल मालूम हुई और शिवाजी उत्तरी भारत के लोगों पर न विश्वास करते थे और न उन्हें कोई ऊँचा पद ही देते थे।[१२]

---

[१२] छत्रप्रकाश, सर्ग ११; अनुवाद पौगसन कृत 'बुन्देले', पृष्ठ ५२-६३, दिल० १३२। छत्रसाल के इतिहास के लिए देखिए औरंगजेब, अध्याय ६१ और अरविन का 'बाद के मुगल' २, अध्याय ९

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय ८

मुगलों और बीजापुर से संघर्ष

(१६७१–१६७४)

१. महावत और दाऊदखां की मुहिम, १६७१ ।
२. बहादुर और दिलेर की मुहिम ।
३. मराठों ने कोली प्रदेश पर अधिकार किया, १६७२ ।
४. सूरत खतरे में ।
५. मराठा सफलताएँ, १६७२ ।
६. अनियमित लड़ाई, १६७३ ।
७. पन्हाला और सतारा का पतन ।
८. उमरानी का युद्ध ।
९. नेसारी की लड़ाई, १६७४ ।
१०. दिलेरखाँ की पराजय ।

१. महावतखाँ और दाऊदखाँ की मुहिम, १६७१—सूरत की दूसरी लूट तथा बगलाना में मराठों द्वारा विध्वंस ने दक्षिण में परिस्थिति की गम्भीरता के प्रति औरंगजेब की आँखें खोल दीं। २८ नवम्बर, १६७० को उसने दक्षिण में महाबतखाँ को प्रमुख सेनापति नियुक्त किया था। परन्तु दिसम्बर की घटनाओं से सम्राट अति चिन्तित हो गया। ९ जनवरी, १६७१ को उसने बहादुरखाँ को आदेश भेजा कि वह अपने गुजरात के सूबे को छोड़कर दक्षिण की शाही सेना के एक खण्ड की कमान सँभाले और दिलेरखाँ को उसके साथ जाने को कहा। सम्राट ने कई बार दक्षिण जाने का विचार किया और शिवाजी के विरुद्ध स्वयं सेना-संचालन करने के लिए सोचा, परन्तु अन्त में विचार छोड़ दिया गया। दाऊद को आदेश मिला कि शिवा जहाँ कहीं भी पाया जाय उस पर आक्रमण किया जाय। अमरसिंह चन्दावत और बहुत-से राजपूत अधिकारी तथा उनके सजातीय लोगों की नियुक्ति दक्षिण में की गयी। जनवरी, १६७१ में अतिरिक्त सेना और सामग्री बगलाना में भेजी गयीं। (अखबारात, १३-१, २, ८, १४, १६; म० आ०, १०७)

महाबतखाँ ३ जनवरी, १६७१ को जसवन्तसिंह के साथ बुरहारनपुर से चलकर १० तारीख को औरंगाबाद पहुँचा, राजकुमार मुअज्जम वाइसराय के सामने पेश हुआ, और चंदौर से निकटस्थ सेना में शामिल हो गया। दाऊदखाँ

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उसका लेफ्टिनेंट तथा उसकी अग्रसेना का सेनाध्यक्ष नियुक्त किया गया; परन्तु उसने इस पद को अपने गौरव से नीचा समझकर नापसन्द किया और सम्राट से उसे वापस बुलाने की प्रार्थना की। (अख० १३-१२; दिल० १०२)

अब हम चन्दौर क्षेत्र में युद्ध के इतिहास के विषय में पढ़ेंगे। दिसम्बर, १६७० के अन्त में शिवाजी के आदमियों ने धोदप का घेरा डाला और दाऊदखाँ उस महीने की २८ तारीख को साल्हीर किले की सहायता के लिए पहुँच गया। परन्तु किलेदार मुहम्मदजमाँ ने बिना किसी की सहायता के ही आक्रमण का सफलतापूर्वक प्रतिरोध कर दिया। फिर दाऊदखाँ साल्हीर की सहायता के लिए आगे बढ़ा, परन्तु जैसा हम देख चुके हैं उसकी रक्षा के लिए वह बहुत देर से पहुँचा। जनवरी, १६७१ में उसने कांचणा दर्रे के निकट एक किलेबन्द स्थान पर अधिकार कर लिया जहाँ से वह जहाँ-कहीं भी मराठों को घूमते हुए सुनता था उसी दिशा में दौड़ पड़ता था। सम्राट के पत्रों से ऐसा मालूम होता है कि दाऊदखाँ को सामान्य आदेश दे दिया गया था कि बगलाना में यदि वह कोई भी गड़बड़ी पाये उसे ठीक कर दे। एक बार रात्रि को कूच करने के पश्चात वह हातगढ़ में वैरी के एक सेना-दल पर टूट पड़ा और ७०० आदमियों को मौत के घाट उतार दिया। (अखबारात, १३-६ और १५; दिल० १. १०१)

जनवरी, १६७१ में अन्त में, महाबतखाँ चन्दौर के निकट दाऊदखाँ से मिला और दोनों ने अहिवन्द का घेरा डाल दिया जिसे शिवाजी ने हाल में ही लिया था। दोनों ओर से विफल गोलाबारी में एक महीने से अधिक समय निकल जाने के बाद दाऊदखाँ के मोर्चे से सेना किले में घुस गयी और किले की सेना ने उसके सामने हथियार डाल दिये। महाबतखाँ बहुत ज्यादा नाराज हुआ कि इस सफलता का श्रेय उसे नहीं मिला। वह पहले से ही पंचहजारी दाऊदखाँ के प्रति अशिष्टता का व्यवहार कर रहा था, और अब उन दोनों के बीच के सम्बन्ध बहुत ही कटु हो गये। अहिवन्द पर अधिकार जमाये चलने के लिए महाबत ने किले में कुछ सेना छोड़ दी और फिर तीन महीने नासिक में व्यतीत किये और इसके बाद वह परनेरा (१५ मील दमन के उत्तर) में गया जहाँ उसने वर्षा ऋतु (जून से सितम्बर) व्यतीत की, और इधर दाऊदखाँ दरबार में वापस बुला लिया गया (लगभग जून)।[1]

---

[1] दिल० १०२-१०४, १०६; सभा० ७२: "महाबतखाँ नासिक त्रिम्बक तक आ गया है और उसने ४ गढ़ ले लिये हैं, जिनमें से दो के नाम हुतुरुन्त (अहिवन्त) और साल्हीर हैं।" कोठी के अभिलेख सूरत, १०५, बम्बई

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उस वर्ष घोर वर्षा हुई और परनेरा के शिविर में बहुत-से मनुष्य और पशु महामारी के शिकार हो गये। परन्तु इधर उसके सेनानी मर रहे थे और महाबतखाँ प्रतिदिन पारी-पारी से अपने सरदारों के घेरों पर दावतें उड़ा रहा था। उसके शिविर में अफगानिस्तान और पंजाब की ४०० नर्तकियाँ थीं, और वे अधिकारियों की कृपापात्र थीं। (दिल० १६०)

२. **बहादुर और दिलेर की मुहिम, १६७१-७२—साल्हीर का युद्ध**—१६७१ के प्रथम चतुर्थांश में महाबतखाँ की मुहिम के तुच्छ फल के कारण और इसके पश्चात लम्बे समय के लिए क्रियाहीनता के कारण सम्राट उससे नाराज था और उसे उस पर संदेह होने लगा कि उसने शिवाजी से कोई गुप्त समझौता कर लिया है। इसलिए उसने अगले जाड़ों में बहादुरखाँ और दिलेरखाँ को दक्षिण में भेजा। वे सूरत से बगलाना में गये, साल्हीर का घेरा डाला (जो अब मराठों के हाथ में था), और इखलासखाँ, मियाना, राव अमरसिंह चन्द्रावत तथा कुछ अन्य अधिकारियों को घेरा जारी रखने के लिए पीछे छोड़ दिया, और वह अहमदनगर की ओर बढ़ गया (अक्तूबर)। (दिल० १०७; मूल पत्र-व्यवहार, ३५६७; जेधे)

अहमदनगर के पास के इलाके से बहादुरखाँ सूपा (पूना जिले में) की ओर बढ़ा और दिलेरखाँ ने एक तीव्रगामी दस्ते की सहायता से पूना वापस ले लिया, और नौ वर्ष से अधिक अवस्था वाले उसके समस्त निवासियों को मार डाला (दिसम्बर, १६७१ के अन्त में)। जनवरी, १६७२ के आरम्भ में शिवाजी महाद में थे, और वह किलों से सेनानियों को इकट्ठा कर रहे थे जिससे कि वह विशाल सेना बनाकर अपने बचपन की भूमि से आक्रमणकारियों को निकाल बाहर कर दें।[२] परन्तु बहुत शीघ्र ही पूना पर दबाव हट गया

से सूरत, ८ अप्रैल, १६७१) परन्तु मुगल साल्हीर पर फिर अधिकार न कर सके, सभासद ७३ के अनुसार उसके निकट उनकी करारी हार हुई। जेधे के अनुसार, उन्होंने केवल जावला, मर्कंडगढ़, अंचलगिरि और अहिवन्त पर वैशाख (अप्रैल, १६७१) में अधिकार किया।

२ कोठी के अभिलेख १०६, बम्बई से सूरत, १३ जनवरी और २० जनवरी १६७२। दिलेरखाँ ने जिस नगर पर अधिकार किया उसका नाम अंग्रेजी कोठी के अभिलेखों में 'पूना चाकने' दिया गया है (इसका कारण यह है कि एक उप-विभाग में प्रायः दो नाम एक साथ लिये जाने की प्रथा थी) और उसे "शिवाजी के ऊपरी प्रदेश में एक वृहत मैदान के बीच में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान" बताया गया है। इस वर्णन से वह नगर पूना मालूम होता है, न कि चाकन; परन्तु इसका उल्लेख नहीं है कि शिवाजी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और वगलाना में मुगल सेना को गहरा धक्का पहुँचने के कारण वह इस प्रदेश से बुला लिया गया था। वहाँ साल्हीर के घेरे के लिए जो सेना रह गयी थी उस पर प्रतापराव, आनन्दराव और पेशवा (मोरो पन्त) की अधीनता में एक बड़ी मराठा सेना ने आक्रमण किया। घमासान लड़ाई के पश्चात इखलासखाँ और मुहकमसिंह (राव अमरसिंह चन्दावत का पुत्र) घायल हो गये और अपने ३० मुख्य अधिकारियों सहित पकड़ लिये गये, तथा राव अमरसिंह और अन्य बहुत-से सेनाध्यक्ष पकड़े गये, और समस्त घेरे के शिविर पर वैरी ने अधिकार कर लिया।[3] थोड़े ही समय के पश्चात मोरोपन्त ने मुल्हीर ले लिया, और दोनों किलों में नयी सेना, नये गोला-बारूद और युद्ध सामग्री लादकर बिना परेशानी के कोंकण वापस लौट गये। यह १६७२ के जनवरी के अन्त में तथा फरवरी १६७२ के प्रथम सप्ताह में हुआ। इन सफलताओं से शिवाजी की प्रतिष्ठा और उन्हें अपनी शक्ति में विश्वास बहुत अधिक बढ़ गये। अब सूरत में उनका निरंतर आतंक रहा आया क्योंकि अब उनका वगलाना पर पूरा प्रभुत्व हो गया था।[4]

अंग्रेजी अभिलेखों से यह मालूम होता है कि अब शिवाजी ने, "दोनों सेनापति (बहादुर और दिलेर) को शर्म और नुकसान सहित पीछे हटने को विवश किया, जो अपनी सेनाएँ लेकर उनके देश में घुस आये थे। परन्तु फारसी अभिलेख इस विषय में मौन है। किन्तु हमको यह अवश्य मानना पड़ेगा कि मार्च में सतनामियों के उपद्रव और उसके बाद अप्रैल में खैबर के अफगानों के विद्रोह के कारण, सम्राट दक्षिण में अपनी खोयी हुई प्रतिष्ठा को

को १६६५ अथवा १६६८ की संधि द्वारा पूना और चाकन मुगलों से वापस मिले। अंग्रेजों ने एक अफवाह का वर्णन किया है जिसको हम निराधार मानते हैं कि इस स्थान के पतन के पश्चात दिलेरखाँ ने मराठा उप-सेनापति कर्तोजी गूजर अर्थात प्रतापराव को मार डाला।

[3] मराठों की ओर भी अनेक सिपाही मारे गये, परन्तु सरदारों में केवल एक ही प्रसिद्ध मनुष्य मारा गया जो शिवाजी की युवावस्था का साथी था—उसका नाम था सूर्यराव काँकड़े। सभा०, ७४; जेधे०; दिल० १०७; ईश्वरदास ६० बी; कोठी के अभिलेख सूरत ६७, एम० ग्रे द्वारा बम्बई को, १६ फरवरी, खंड १०६ बम्बई से सूरत १६ फरवरी, १६७२; खाफीखाँ २.२४६

[4] मूल पत्र-व्यवहार, सूरत से कम्पनी को ६ अप्रैल, १६७२। दिलेर के साथ रामजी पंगरे की वीरतापूर्ण लड़ाई कनेरा किले (सभा० ७३) के निकट यहीं पर हुई।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

फिर न प्राप्त कर सका, और इसलिए १६७२ में पूरे वर्ष शिवाजी के ही हाथ में पूर्ण सत्ता रही। (म० आ०, ११५-११६)

बहादुरखाँ बगलाना से असफल होकर वापस हुआ, कुछ समय तक भीमा नदी के किनारे डेरा डाले पड़ा रहा और वर्षा ऋतु व्यतीत करने के लिए अहमदनगर वापस चला गया। मई, १६७२ के लगभग महावत दक्षिण से उत्तरी भारत को चला गया, और एक महीने बाद मुअज्जम ने भी ऐसा ही किया। बहादुरखाँ दक्षिण का मुख्य सेनापति तथा कार्यवाहक वाइसराय दोनों पदों पर नियुक्त किया गया और जनवरी, १६७३ में वास्तविक सूबेदार बनाया गया जिस पर वह अगस्त, १६७७ तक रहा। (दिल० १०८-१०९; म० आ० १२१)

३. **मराठों का कोली प्रदेश पर अधिकार, १६७२**—इखलासखाँ पर विजय, मुल्हीर पर अधिकार और पूना से बहादुर और दिलेर के निर्वासन पर मराठों का जोश इतना बढ़ा कि इस वर्ष की ग्रीष्म ऋतु तथा वर्षा ऋतु में भी उनकी क्रियाशीलता ज्यों की त्यों रही आयी। ५ जून को मोरो त्रिम्बक पिंगले के अधीनस्थ एक बड़ी मराठा सेना ने उसके कोली राजा विक्रमशाह से जव्हार छीन लिया और वहाँ से सत्रह लाख रुपये का खजाना उनके हाथ लगा। यह स्थान सूरत से केवल १०० मील दूर है और नासिक जिले से लगा हुआ है जिससे वह पश्चिमी घाट द्वारा अलग हो रहा है। आगे उत्तर की ओर बढ़कर उसने रामनगर[५] पर भी चढ़ाई करने की ठानी जो सूरत से केवल ६० मील दक्षिण में है। इसका राजा, सोमशाह, अपने कुटुम्ब सहित चीकली को भाग गया (लगभग १९ जून, १६७२) जो गंडवी से ६ मील उत्तर-पूर्व में है तथा सूरत से ३३ मील दक्षिण में है। मराठों के आगमन के डर से लोग गंडवी भी छोड़कर भाग गये। परन्तु यह सुनकर कि दिलेर आक्रमण के लिए सेना तैयार कर रहा है, आक्रामक रामनगर से भी बहुत शीघ्र भाग गये। भारी वर्षा के कारण मराठों की क्रियाशीलता कुछ दिन तक बन्द रही। परन्तु बहुत शीघ्र मोरोपन्त १५,००० सेनानी लेकर आक्रमण के लिए फिर आ धमका और उसने जुलाई के पहले सप्ताह में रामनगर पर अधिकार कर लिया। उसके राजा ने भागकर दमन की पुर्तगाली बस्ती में शरण ले ली।

जव्हार और रामनगर के राज्य में मिलाये जाने से कल्याण से उत्तर

---

[५] अब इसे धर्मपुर कहते हैं। पुरानी राजधानी, जिसे नगर कहते हैं, नयी राजधानी धर्मपुर से २४ मील दक्षिण-पश्चिम की ओर है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कोंकण होते हुए सूरत के लिए मराठों को सुरक्षित और सरल मार्ग मिल गया और अब दक्षिण से सूरत पर आक्रमण की सम्भावना बहुत बढ़ गयी। नगर में उस समय जब कभी मराठा सेनाओं का आगमन ६० मील दूर रामनगर में भी सुन पड़ता था, कालिक आतंक छा जाता था।

४. **सूरत से चौथ वसूल करने की धमकी**—रामनगर के निकट से मोरो त्रिम्बक पिंगले ने अपने स्वामी की ओर से सूरत के गवर्नर और प्रमुख व्यापारियों को तीन पत्र लगातार भेजे जिनमें चार लाख रुपया घूस के रूप में माँगे और उनके मना करने पर नगर को लूटने की धमकी दी। इन पत्रों में से तीसरे की भाषा बहुत ही दृढ़ थी; उसमें शिवाजी ने लिखा, "मैं तुम्हारी सरकार की अधीनता में बादशाह की मालगुजारी का चौथाई भाग अर्थात 'चौथ' माँगता हूँ—यह मेरा अन्तिम पत्र है। चूँकि तुम्हारे सम्राट ने मुझे अपनी प्रजा तथा अपने देश की सुरक्षा के लिए सेना रखने को विवश किया है, इस सेना का व्यय उसकी प्रजा को देना पड़ेगा। यदि तुम मुझे शीघ्र ही रुपया नहीं भेजते हो, तो मेरे लिए एक बड़ा मकान तैयार रखो, जहाँ बैठकर मैं मालगुजारी तथा सीमा-शुल्क वसूल करूँगा, क्योंकि मेरे मार्ग को रोकने वाला अब कोई नहीं है।"

रामनगर में मराठा सेना के आगमन का पहला समाचार पाकर सूरत के गवर्नर ने सभी प्रमुख हिन्दू और मुसलमान व्यापारियों को बुलाया और उनसे कहा कि वे दो महीने के लिए नगर की सुरक्षा करने के लिए ५०० घुड़सवार और ३००० पैदल सेना के खर्च के लिए ४५,००० रुपया चन्दा करके दें। चन्दा निश्चित कर देने के लिए अधिकारियों ने नगर में समस्त हिन्दू घरों की एक सूची बनायी। परन्तु कोई सैनिक नहीं भर्ती किये गये और सुरक्षा के लिए जो रुपया वास्तव में इकट्ठा किया गया वह गवर्नर की जेब में गया।

शिवाजी से तीसरा पत्र प्राप्त करने पर असहाय नागरिकों में एकदम आतंक छा गया। धनी आदमी उसी रात गवर्नर के पास गये और उन्होंने सुरक्षा के हेतु अपने परिवारों को भड़ौंच तथा दूसरे नगरों में भेजने की अनुमति माँगी। उसने उनको आधी रात के बाद तक रोके रखा, उनको आज्ञा दे दी परन्तु अगली सुबह उसे वापस ले लिया; इसके बाद दूसरी परिषद बुलाई और उनसे प्रस्तावित घूस माँगी—व्यापारियों से एक लाख माँगा गया और देसाइयों से कहा गया कि आसपास के गाँवों के किसानों से दो लाख रुपये वसूल करें। एक दिन और एक रात बराबर तर्क-वितर्क के पश्चात यह माँग कम करके ६०,००० रुपये कर दी गयी, परन्तु लोगों ने अन्त में कुछ भी देने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

को मना कर दिया क्योंकि वे भलीभाँति जानते थे कि वह उस धन को वैरी को देने के बजाय स्वयं हड़प कर जायगा। इसके पश्चात जब कभी शिवाजी की सेनाओं के निकट आने की खबर मिलती लोग नगर से भागने की चेष्टा करते, परन्तु गवर्नर उनको भीतर ही रोकने के लिए फाटक बन्द करवा देता था।[६]

हम यहाँ कोली राजाओं का इतिहास समाप्त कर सकते हैं। जव्हार का पूर्व-सरदार विक्रमशाह जून, १६७२ में अपना राज्य खोकर निकटवर्ती नासिक के मुगल जिले में चला गया। इस स्थान से वह अपने लुटेरे दलों को लेकर और उत्तरी थाना जिले में, जो अब मराठों के अधिकार में था, संचार के साधनों में बाधा डालता था। उसका लड़का धारा राय कोली के साथ मिल गया (जो एक अन्य पदच्युत सरदार था) और वह भी लुटेरा बन गया; दोनों ने मिलकर मराठा राज्य और सैनिक मार्गों को बहुत हानि पहुँचाई। अन्त में दोनों पकड़ लिये गये और उनको फाँसी लगा दी गयी। (जेधे; ६१ क० ब० परि० ७४)

५. अग्रेतर मराठा सफलताएँ १६७२ में, परन्तु दिसम्बर १६७२ में खानदेश और बरार में धावे की विफलता—कोली प्रदेश में स्थित जव्हार और रामनगर के अपने अड्डों से मोरो त्रिम्बक के अधीनस्थ एक मराठा सेना की टुकड़ी ने आसानी से जुलाई, १६७२ के मध्य में घाटों को पार कर लिया, नासिक जिले में घुस गये, उसको लूटा और उस पर अधिकार कर लिया। लक्खी जादव (शिवाजी का नाना) का पौत्र दक्खिनी नासिक त्रिम्बक का मुगल थानेदार था। युद्ध में अपने बहुत-से आदमी मारे जाने पर वह हार गया और बन्दी बना लिया गया। वाणी दिन्दोरी (या उत्तरी नासिक जिला) का थानेदार सिद्दी हलाल भी हार गया और उसका अधीनस्थ क्षेत्र मराठों ने लूट लिया। इस असफलता के फलस्वरूप बहादुरशाह ने दोनों अधिकारियों को कड़ी

---

६ कोली प्रदेश पर विजय और सूरत पर उसका प्रभाव; कोठी के अभिलेख खण्ड ३, कन्सल्टेशन्स सूरत २१ जून, १६७२; खण्ड ८७, सूरत से बम्बई, २१ और २५ जून; खण्ड १०६ बम्बई से सूरत ८ जुलाई, मू० प०३६४६ कोठी के अभिलेख सूरत, खण्ड ८७, सूरत से फारस, १ नवम्बर, १६७३; सभा० ७२; जेधे०। धमकी वाला पत्र रायल एशियाटिक सोसाइटी पाण्डुलिपि फारसी ७१ (खतूते-शिवाजी), ३, और उसका उत्तर एशियाटिक सोसाइटी ऑव बंगाल (?) पाण्डुलिपि एफ० ५८, पृष्ठ ६८; दोनों का अनुवाद मैंने अपनी पुस्तक 'शिवाजी का घराना' (हाउस ऑव शिवाजी) में किया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भर्त्सना दी और नाराज होकर वे दोनों ही, दो अधिकारियों और "चार बड़े रिसालों" सहित, मराठों से जा मिले (अक्तूबर)। और लोगों के भी छोड़ जाने का भय था और आह्लादित वैरी के विरुद्ध गुजरात सूबे की रक्षा करने के हेतु निर्बल सेना के कारण दिलेरखाँ बड़े खतरे में पड़ गया।[७]

२५ अक्तूबर को एक बड़ी मराठा सेना रामनगर में फिर आ धमकी, और सूरत के लोग भय के मारे काँपने लगे, इसका एक विशेष कारण यह था कि शिवाजी के रिसाले की एक टुकड़ी चिकली पहुँच गयी थी। परन्तु वह नगर अब शिवाजी का लक्ष्य न था। उन्होंने मुगल सामाज्य के एक अन्य भाग में द्रुतगति से धावा बोल दिया।

उन्होंने अपना तीव्रगामी रिसाला बरार और तेलिंगना को लूटने के लिए भेजा।[८] यह सुनकर वाइसराय बहादुरखाँ अहमदनगर से ठीक पूर्व की ओर चला, अपने भारी सामान को बीर (७० मील पूर्व की ओर) और कंधार में छोड़ गया और आक्रमणकारियों का पीछा करते हुए बड़ी तेजी से रामगिरि (१८°३५′ उत्तर ७६°३५′ पूर्व) के किले के निकट पहुँच गया। परन्तु वे लोग उससे दो दिन पहले ही वहाँ आ चुके थे, किले की तलैटी में स्थित गाँव को लूट लिया था और अधिकांश निवासियों के परिवारों को छुड़ाई के लिए ले गये थे। अतएव घबड़ाया हुआ मुगल सेनापति इन्दुर (वर्तमान निजामाबाद) होते हुए वापस लौट गया जो रामगिरि से ६५ मील ठीक पश्चिम में है। कुतुबशाही राज्य क्षेत्र में पहुँचकर दिलेरखाँ के उकसाने पर उसने क्षेत्र में खूब लूट-मार की। वापसी में मराठे दो भागों में बँट गये; एक दल तो गोलकुण्डा राज्य को पार करके अपने राज्य में दक्षिण-पश्चिम की ओर मुड़ गया और दूसरा दल शाही राज्य-क्षेत्र में चन्दा होते हुए उत्तर की ओर चला गया। दिलेरखाँ पहले

---

७ दिल० ११६; कोठी के अभिलेख सूरत ८१, सूरत से बम्बई २० जुलाई, १६७२, खण्ड ३, सूरत २६ अक्तूबर; बम्बई से सूरत १८ अक्तूबर, कोठी के अभि० सूरत में १०६। ६१ क० ब० दोनों भगोड़ों के लिए।

सिद्दी हलाल जो पहले (बीजापुर के) अफजलखाँ का एक अधिकारी था, सम्राट की सेवा में आ गया था, परन्तु मुगल मुख्यावास में जो कुछ होता था उसका समाचार चुपके-चुपके शिवाजी को भेज देता था। अख० १३–१८। (पाण्डुलिपि में 'सिद्दी' के स्थान पर 'शाह' लिखा है।)

८ दिल० ११६, १२०-१२२ (पूर्ण)। ठीक महीना अनिश्चित है। शिवपुर यादी में केवल यह लिखा है, "शिवाजी २६ दिसम्बर, १६७२ को घोड़े पर सवार हुए और अन्नाजी पन्त ६ जनवरी, १६७३ को भेजा गया" —उनके गन्तव्य स्थान नहीं दिये गये हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दल का पीछा करने के लिए भेजा गया, और बहादुरखाँ ने दूसरे दल का मार्ग रोकने की कोशिश की।

वाइसराय अपना भारी सामान जामखेद नामक गाँव के निकट से औरंगाबाद वापस भेजकर पश्तुर, शैलोद और पीदोला होते हुए अन्तूर में (३८ मील औरंगाबाद से उत्तर) आ पहुँचा। यहाँ मराठे लड़ने के लिए लौट पड़े और उन्होंने सुजानसिंह बुन्देला की कमान में मुगल अग्रसेना पर आक्रमण कर दिया। परन्तु वे खदेड़ दिये गये, और शाम तक उनका पीछा किया गया, व्यापारियों के बहुत-से घोड़े और अनेक प्रकार का लूट का सामान बैरी से छीन लिया गया और उनके स्वामियों को वापस दे दिया गया। अगले दिन मुगलों ने दर्रा पार किया और उन्होंने अन्तूर किले से चार मील दूर पर दुर्गापुर में डेरा डाला।

दूसरे दिन जब वे सेनापति द्वारा नियत किये समय से पूर्व ही बिखरे हुए समूहों में जा रहे थे, ७५० मराठा चुने हुए घुड़सवारों ने छह मील दूर बाकापुर के दर्रे के बायीं ओर १०,००० शाही सेना के दल पर आक्रमण कर दिया। घमासान युद्ध के पश्चात, जिसमें उनके सेनापति ने मुगल सेना और बढ़ा दी थी, मराठे वापस लौट गये और मैदान में अपनी ४०० लाशों को छोड़ आये। इस विजय का श्रेय शुभकर्ण के अधीनस्थ बुन्देलों को है, जिसका बहादुर लड़का दलपत राव लड़ाई में घायल हुआ।

दिलेरखाँ के अधीनस्थ डिवीजन, दूसरे मराठा दल को पश्चिमी बीजापुर राज्य-क्षेत्र में खदेड़कर और बहुत-सा लूट का सामान लेकर, बहादुरखाँ से फिर मिल गया। सेनापति ने अपनी सेना का डेरा औरंगाबाद के दक्षिण-पूर्व में ७६ मील दूर पथरी में डाल दिया। खानदेश और बरार में मराठों का यह धावा, उनकी दिसम्बर, १६७० की प्रथम घुसपैठ के विपरीत, पूर्णरूप से विफल रहा और मुगल सेनाओं ने प्रशंसनीय गति और साहस का प्रदर्शन किया (नव०-दिस० १६७२)।

बालाघाट से खानदेश में ऐसे इन दो मराठा आक्रमणों को पुनः रोकने के लिए बहादुरखाँ ने मुख्य दर्रों के सर्वोच्च स्थानों पर फाटक लगाये और उनमें से प्रत्येक पर तोपखाना लगा दिया। अब मुगलों ने "बड़े दक्षिणी जमींदार" बालाजी नायक निम्बालकर को, जो शिवाजी के दामाद महदाजी का पिता था, उसके परिवार सहित मुगलों ने अपनी ओर मिला लिया। (दिल० १२२ और १२५)

६. **देश में अनियमित लड़ाई, १६७३**—खानदेश और बरार में इस प्रकार

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मराठा क्रियाशीलता बन्द होने पर, एक अन्य भाग में उभड़ पड़ी। वे अब पूना जिले में एकत्र हुए। वहादुरखाँ ने अपना सामान चमारगुंडा में छोड़ा, बहुत शीघ्र आक्रामकों का मुकाबला किया और घमासान लड़ाई के बाद उनको हरा दिया।[९] तब उसने पैदगाँव पर डेरा डाला, जो चमारगुंडा से ठीक दक्षिण में आठ मील दूर पर भीमा के उत्तरी तट पर स्थित है। यह स्थान कई वर्ष बाद तक उसकी सेना का निवास-स्थान रहा और यहाँ उसकी छावनी से एक किला और नगर बन गया, जिसका नाम सम्राट ने वहादुरगढ़ रखने की आज्ञा प्रदान की। (दिल० १२६)

पैदगाँव की स्थिति युद्ध की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। वह पूना से पूर्व में चलने वाले लम्बे पहाड़ी कूट के ठीक बाद ही मैदान पर बसा हुआ है। इस स्थान से मुगल सेनापति अपनी इच्छानुसार, पश्चिम की ओर की श्रेणी के उत्तर में मूला और भीमा नदियों (उत्तरी पूना जिला) तथा नीरा और कड़ा (जिले के दक्षिणी भाग) की घाटियों की रक्षा के लिए दक्षिण की ओर जा सकता था। उत्तर की ओर वह अहमदनगर की हथियार और युद्ध-सामग्री की बड़ी डिपो को आ-जा सकता था और यहाँ नदी को पार करने की आवश्यकता न थी (सिवाय उस किले के अंचल में); और दक्षिण की ओर वह शोलापुर जिले में होकर आसानी से बीजापुर पर आक्रमण कर सकता था। संक्षेप में, इस समय से कई वर्षों तक पैदगाँव की छावनी मुगल अग्रसर सैनिक अड्डे का काम देती रही, ठीक उसी तरह जैसे कि बाईस वर्ष पीछे उसके दक्षिण-पूर्व में ९० मील दूर पर ब्राह्मणपुरी काम देती रही, जब मुगल साम्राज्य अधिक दक्षिण की ओर बढ़ गया था।

बहुत सम्भावना यह है कि इसी वर्ष (१६७३)[१०] शिवाजी को घोर निराशा का सामना करना पड़ा। शिवनेर का किला, जुन्नार से एक मील पश्चिम में, निस्संदेह युद्ध की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण था, चूँकि यह पूना जिले के उत्तर में मुगल सीमा की रक्षा करता था और उस लघुतम मार्ग का अवरोध करता

---

९ कदाचित यही अभियान है जिसका जिक्र मसीरे-आलमगारी में, १६७३ के दरबार के समाचारों के अन्तर्गत निम्न शब्दों में आया है, "बहादुरखाँ ने १२० मील की तीव्र यात्रा के बाद शिवाजी को हरा दिया, बहुत-सा माल लूटा और दलपत के साथ उसे सम्राट को भेज दिया, जिसको उसने २२ अक्तूबर को देखा।"

१० परन्तु जेधे में लिखा है कि उन्होंने एक बार जुन्नार (अर्थात शिवनेर) का घेरा डाला।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

था जिसके द्वारा मुगल दक्षिण को लूटने के लिए शिवाजी उत्तरी कोंकण से बहुत शीघ्र पहुँच सकते थे। परन्तु शिवाजी की दृष्टि में इसका बहुत बड़ा मूल्य यह था कि यह उनका जन्म-स्थान था। शिवनेर का मुगल गवर्नर अब्दुल अजीजखाँ था जो ब्राह्मण से मुसलमान हो गया था और औरंगजेब के अत्यन्त स्वामिभक्त और मूल्यवान सेवकों में से था। शिवाजी ने किले को मराठा हाथों में सौंपने के बदले "सुवर्ण-पर्वत" देने का वचन दिया था; और उसने झूठा वायदा कर लिया, रुपया ले लिया, सौंपने के लिए एक दिन निश्चित कर दिया और उससे किले पर अधिकार करने के लिए शिवाजी से ७००० घुड़सवार लाने को कहा। परन्तु साथ ही साथ अब्दुल अजीज ने चुपचाप इस षड्यन्त्र का पता बहादुरखाँ को भी दे दिया; मराठा सेना मुगलों की दमपट्टी में आ गयी और भारी हानि के बाद निराश होकर लौट गयी। (फ्रायर, १.३३९-३४०)

७. **बीजापुर और कनारा पर धावे से लाभ, १६७३**—किन्तु अब दूसरी दिशा में मराठों के लिए विजय का बड़ा द्वार खुल गया। अली आदिलशाह द्वितीय २४ नवम्बर, १६७२ को मर गया और बीजापुर के राजसिंहासन पर उसका चार वर्ष का लड़का बैठा। खवासखाँ (एक अबीसीनियाई सेनापति) उसका राजप अर्थात रीजेंट बनाया गया, और उसने राज्य की समस्त शक्ति पर एकाधिकार कर लिया और इस प्रकार उसने उस अनुबन्ध को भंग कर दिया जो उसने अन्य तीन प्रमुख सरदारों के साथ राज्य का प्रशासन चलाने के लिए किया था—जिसके अनुसार अब्दुल मुहम्मद (पूर्व वजीर) को पूर्व सूबे का अधिकार दिया गया था, बहलोल को पश्चिमी सूबा (पन्हाला किला सहित), मुजफ्फरखाँ को कनारा के जिले दिये गये और राजप को राजधानी में रहना था। उसने उनको अपने-अपने जिलों में शाही किले देने को मना कर दिया और इसलिए वे उसे छोड़कर चले गये। "चारों ओर उपद्रव आरम्भ हो गये" और इस भीतरी अनबन से सरकार कमजोर हो गयी।

भला शिवाजी इस अवसर को कब चूकने वाले थे। उन्होंने नये राजप के साथ मैत्री के सम्बन्ध तोड़ दिये और बीजापुर से अपने राजदूत बाबाजी नायक पुण्डे को वापस बुला लिया। तब उन्होंने अन्नाजी पन्त की अधीनता में महत्त्वपूर्ण गुप्त मुहिम के लिए एक शक्तिशाली सेना भेजी। यह सेना राजापुर में एकत्र हुई। अन्नाजी ने उसका एक भाग, जिसके पास किले की दीवार पर चढ़ने और किले पर गोलाबारी करने का सामान था, कोंदाजी फर्जन्द की अधीनता में आगे भेज दिया और उसे आदेश दिया कि वह केवल रात को ही चले,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और अन्नाजी स्वयं शेष सेना सहित रत्नागिरि जिले के बड़े जंगल में छिपा रहा।

६ मार्च, १६७३ की घोर अन्धकारमय रात को कोंदाजी पन्हाला के किले पर आ धमका और ६० चुने हुए मावलियों को अपने साथ लेकर चुपके-से पहाड़ी के खड़े पार्श्व पर चढ़ गया; इसमें प्रत्येक मनुष्य ने अपने बाद के आने वाले साथी को हाथों का सहारा देकर ऊपर की ओर उचकाया। ऊपर चोटी पर पहुँचकर उन्होंने चारों ओर से अपनी तुरही बजाना शुरू कर दी और किले के भीतर घुसकर धावा बोल दिया। इन लोगों का आगमन पूर्ण रूप से अचानक ही हुआ। किले की सेना में नितान्त अस्तव्यस्तता और आतंक छा गया; यह और भी बढ़ गया जब हथियारों से सुसज्जित होने के लिए ढोल बजाये गये और जब अकस्मात जागे हुए सिपाही इधर-उधर भागने लगे। शेष रात भर दोनों ओर के सैनिकों में परस्पर युद्ध होता रहा। कोंदाजी स्वयं ने आक्रमण किया और किले के मुख्य अधिकारी को मार डाला। मुख्य असैनिक अधिकारी अथवा वेतन-अधिकारी नागोजी पण्डित अपनी जान बचाकर भाग गया। अन्य मराठा सेना भी बड़ी संख्या में किले में घुस पड़ी, दिन निकल आया और विजेताओं ने बहुत शीघ्र समस्त स्थान पर अधिकार कर लिया; उन्होंने स्थानीय अधिकारियों को पकड़ा और उनको इसलिए मारा कि वे अपने घरों तथा सरकारी दफ्तरों में छिपे हुए खजाने का पता दे दें।

विजय का समाचार पाकर अन्नाजी सेना के पृष्ठ भाग से आया और शिवाजी स्वयं रायगढ़ से आये, और नये प्राप्त किले में एक महीना व्यतीत किया जिसे उन्होंने शरण के अजेय गढ़ के रूप में निर्माण करने का आयोजन किया। मराठों की सफलता जारी रही; पारली पर १ अप्रैल को और सतारा पर २७ जुलाई को अधिकार कर लिया गया।[११]

३. **उमरानी का संग्राम, १६७३**—पन्हाला की क्षति से बीजापुर के दरबार की निद्रा भंग हुई। खवासखाँ राज्य की सुरक्षा में असमर्थ होने पर अपनी अयोग्यता और असावधानी के लिए बदनाम किया गया। बहलोल खाँ

---

[११] ब० स० ४३६-४४०; जेधे; जयराम कृत संस्कृत कविता 'परनाल-पर्वत-ग्रहनाख्यानम्'। जेधे के अनुसार किले के कुछ आदमियों को तोड़कर उस पर अधिकार किया गया, परन्तु जयराम इसके विरुद्ध कहता है और 'बसातिन' इस मामले पर मौन है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

किले को पुनः लेने के लिए भेजा गया, और तीन अन्य बड़े सेनाध्यक्ष सूबों से बुलाकर उसके साथ किये गये और मुगलों के सहयोग से मराठों पर सम्मिलित आक्रमण किया गया। परन्तु सदा की भाँति, शिवाजी ने पहला प्रहार किया और अपने वैरियों की समस्त योजनाओं को बेकार कर दिया। उन्होंने उसके साथियों से मिलने से पहले बहलोल की सेना पर आक्रमण करने के लिए प्रताप-राव, आनन्दराव तथा अन्य अनेक सेनापतियों को १५,००० सेना लेकर भेजा। बहुत वेग और गोपनीय दो रात्रि-प्रयाणों के बाद मराठों से बीजापुर नगर के ३६ मील पश्चिम में उमरानी पर बहलोल से मुठभेड़ हो गयी और बिना उसको मालूम पड़े ही कुछ दूरी पर उसका शिविर पूर्ण रूप से घेर लिया गया। उन्होंने चुपचाप उसकी जल-पूर्ति बन्द कर दी, और दूसरे दिन सवेरे विभिन्न दिशाओं से क्रमबद्ध समूहों में उस पर आक्रमण कर दिया। समस्त दिन घमा-सान युद्ध होता रहा। बहुत-से आदमी मारे गये तथा घायल हुए, परन्तु तेज और भ्रान्तिजनक मराठों की, दबे हुए और घने आबाद बीजापुरियों की अपेक्षा कम हानि हुई। किन्तु बहलोल की अफगान सेना रणक्षेत्र में दृढ़ता-पूर्वक डटी रही। वास्तव में, मनुष्य या पशु को अप्रैल की गर्मी में प्यास बुझाने के लिए बिना जल के रहकर और उन पर उल्लासपूर्ण तीव्र घुड़सवारों के टूट पड़ने की आशंका के होते हुए मैदान छोड़कर भाग जाना निश्चय ही मृत्यु को आह्वान देना था।

रात्रि के आरम्भ होने पर दोनों सेनाएँ पृथक् हो गयीं। बहलोल ने प्रताप-राव को गुप्त सन्देशा भेजा कि मैं वास्तव में शिवाजी से लड़ना नहीं चाहता, वरन मैंने केवल अपनी सरकार को सन्तुष्ट करने के लिए लड़ाई का दिखावा किया है, और इसलिए प्रत्येक दल को एक-दूसरे से अलग हो जाना चाहिए। प्रतापराव राजी हो गया, शायद घूस लेकर, और आक्रमण करने के बिन्दु से दूर हट गया और इस मार्ग से होकर बहलोल की घायल सेना अपने तिकोटा के अड्डे पर पहुँच गयी; केवल एक युद्ध के हाथी और कुछ सामान की क्षति हुई (लगभग १५ अप्रैल)।

शिवाजी ने कड़े शब्दों में अपने सेनापति की निन्दा की कि उसने बहलोल को भाग जाने दिया, उस समय जबकि वह आसानी से उसे कुचल सकता था और उसके समस्त शिविर पर अधिकार कर सकता था।[१२]

---

[१२] उमरानी; सभा० ७८, परनाल-पर्वत-ग्रहण; ब० स० ४४०। नेसारी : सभा० ७९ और कोठी के अभिलेख, सूरत ८८ (नारायण शेवनी का पत्र)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उमरानी के मैदान से प्रतापराव दक्षिण-पश्चिम की ओर मई में कनारा में घुस पड़ा और उसने अनेक स्थानों को लूटा जिसका वर्णन अध्याय १० के परिच्छेद ९ में किया जायगा। कुछ समय बाद थोड़ी-सी सेना और लेकर बहलोल ने कोल्हापुर के निकट अड्डा जमाया और वहाँ से कुछ महीनों में कई मुठभेड़ों में मराठों को हराया तथा उनकी समस्त घूमने वाली टुकड़ियों को कनारा छोड़ने के लिए मजबूर किया। ऐसा मालूम होता है कि उसने शिवाजी पर बहुत दबाव डाला और जून, जुलाई व अगस्त, १६७३ में उस प्रदेश की सफलतापूर्वक रक्षा की। परन्तु सितम्बर में वह मीराज में बहुत बीमार पड़ गया और बहादुरखाँ द्वारा मुगल आक्रमण से रक्षा के लिए बीजापुर और गोलकुंडा की सरकारों ने शिवाजी से सहायता माँगी। जैसा कि बम्बई काउंसिल के प्रेसीडेण्ट जिराल्ड औंगियर ने १६ सितम्बर को लिखा, "शिवाजी अपने समस्त वैरियों से बहादुरी से लोहा ले लेता है,··· और यद्यपि इसकी सम्भावना अधिक है कि उसके देश पर इस वर्ष ही एक ओर से मुगल सेना आक्रमण कर दे और दूसरी ओर से बहलोलखाँ, परन्तु रसद की कमी के कारण उन दोनों में से कोई अधिक दिनों तक नहीं टिक सकता और उसकी तीव्रगामी सेना निरन्तर उनको डराये रहेगी; और न उनकी यह योजना है कि शिवाजी को पूर्णतः हरा दिया जाय, क्योंकि उमरा (अमीर लोग) राजनीतिक युद्ध के लिए बादशाह से खर्च लेते हैं और अपने लाभ के लिए लड़ते रहते हैं, और कभी युद्ध का संचालन इतनी तीव्रता से नहीं करते कि वह समाप्त हो जाय।" (कोठी के अभिलेख १०६)

वर्षा ऋतु के अन्त में शिवाजी ने १० अक्तूबर को (दशहरा के दिन) एक वृहत अभियान आरम्भ किया और कनारा के ऊँचे भाग तथा तट दोनों को लूटा। यहाँ वह दिसम्बर के मध्य तक रहे और अन्त में बहलोल, शर्जा और अन्य बीजापुरी सेनापतियों के दबाव से लौट जाने को विवश हुए। (अध्याय १०, परिच्छेद ९)

९. नेसारी की लड़ाई और प्रतापराव की मृत्यु, १६७४—अगले महीने (जनवरी, १६७४) में इस पराजय के कारण अपनी प्रतिष्ठा पुनः स्थापित करने के लिए शिवाजी ने बहलोल के विरुद्ध प्रतापराव को भेजा, और उस सेनापति की घोर निन्दा की कि गत अप्रैल में उमरानी में यद्यपि वह उसकी दया पर था, फिर भी उसको सदा के लिए कुचल देने के बजाय उसको छोड़ दिया। राजा ने अपने सेनापति को क्रोध में लिखा, "बहलोल फिर आ गया है। अपनी सेना सहित जाओ, उसे नष्ट कर दो और निश्चित विजय प्राप्त करो। अन्यथा, मुझे फिर कभी अपना मुँह मत दिखाओ!"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इस पत्र से अति प्रभावित होकर प्रतापराव ने बहलोल को "दो पहाड़ियों के बीच के तंग मार्ग में" ढूँढ़ लिया (२४ फरवरी, १६७४)। अपने स्वामी की निन्दा से व्याकुल होकर, वह अपने सेनापति के पद की मर्यादा का ध्यान न रखते हुए, केवल छह घुड़सवार लेकर दौड़ पड़ा और उसके शेष सेनानी इस पागलपन के कार्य से अलग रहे। वैरी के दल ने सातों बहादुरों को काटकर गिरा दिया और मराठों में बड़ा आतंक छा गया जो अपने नेता की मृत्यु से निराश हो गये; "खून की नदी वह निकली।" शिवाजी ने प्रतापराव की मृत्यु पर बहुत शोक मनाया और अपने क्रोधमय पत्र पर पश्चात्ताप किया। विगत सेनापति के सम्बन्धियों और आश्रितों को सहायता दी गयी। और छह वर्ष पीछे उसकी लड़की का विवाह राजा ने अपने प्रिय पुत्र राजाराम के साथ कर दिया।

प्रतापराव के एक अधीनस्थ सरदार ने अपने स्वामी की सेना को संघर्ष के लिए फिर जुटाया। शिवाजी ने उसे स्वतन्त्र कमान दी और आदेश दिया कि वैरी को हटाये बिना जीवित मत लौटना।[13] इस आदेश के पाने पर आनन्दराव बहलोल की तलाश में अपने समस्त घुड़सवारों सहित बीजापुर राज्य में बहुत दूर तक घुस गया। दिलेरखाँ मुगल सेना लेकर अपने भाई बहलोलखाँ की सहायता के लिए तुरन्त आगे बढ़ा। परन्तु इन दो बड़ी सेनाओं से एक-साथ भिड़ने के लिए आनन्दराव की हिम्मत न पड़ी और वह कनारा की

---

[13] इस परिच्छेद और अगले दो में मराठा विजयों का श्रेय सभासद और चितनिस दोनों ने हंसाजी मोहिते को दिया है। परन्तु नारायण शेनवी ने केवल एक महीने बाद ही रायगढ़ से लिखा कि शिवाजी के मन्त्रियों के अनुसार प्रतापराव की मृत्यु के पश्चात आनन्दराव ने मराठा सेना को एकत्र किया और वही इन सब अभियानों का नेता था। जेधे ने भी ऐसा ही लिखा है और मैंने मूल प्रमाणों को ही माना है।

प्रतापराव की मृत्यु का स्थान सभासद में जेसरी लिखा है (नेसरी के स्थान पर) और जेधे में निवती दिया गया है, और उसकी स्थिति पन्हाला जिले में बतायी गयी है। यह नेसरी कोल्हापुर राज्य के उपभाग गढ़ हिंगलाज में ४५ मील दक्षिण में स्थित है, घाटप्रभा नदी से एक मील दक्षिण में है, और गढ़ हिंगलाज नगर से ११ मील दक्षिण में है (डिग्री शीट ४७ एल.)। उसके निकट ही "दो पहाड़ियों के मध्य एक तंग रास्ता" विद्यमान है। एक और नेसरी भी है जो पन्हाला से बहुत दूर है और जो इसलिए युद्ध-क्षेत्र नहीं माना जा सकता, अर्थात इंडियन एटलस का 'नेसारगी', शीट ४१ उत्तर-पूर्व, बेलगाम-कल्दगी सड़क पर बेलगाम से १८ मील पूर्व। यह लिटल के सेना-खंड का ठहरने का स्थान था जबकि वह परशुराम भाऊ से सहयोग कर रहा था। (मूर, पृष्ठ १५, बम्बई गजेटियर २१. ५९१)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

ओर प्रतिदिन ४५ मील चलकर बड़ी तेजी से लौट गया। दोनों खान तीव्र-गामी मराठा सेनाओं का पीछा करने में असमर्थ हुए, उन्होंने पीछा छोड़ दिया और वापस लौट पड़े—बहलोल कोल्हापुर को और दिलेर पन्हाला को—जहाँ उसका घेरा डालने के विचार से पाँच दिन रुककर वह अपने अड्डे पर वापस लौट गया।

आनन्दराव कनारा में और आगे बढ़ा, उसने सम्पगाँव की पैंठ (बाजार) को लूटा जो बहलोल की जागीर में बाँकापुर से लगभग २० मील दूर है, और वहाँ से १,५०,००० होन का माल लूटा (२३ मार्च)। वापसी में वह ३००० बैलों पर लूट का माल लादकर लाया। बहलोल और खिज्रखाँ ने २००० घुड़सवार और बहुत-सी पैदल सेना की सहायता से बाँकापुर के निकट उसको मार्ग में रोकने की कोशिश की, परन्तु घमासान युद्ध के पश्चात वे हार गये और मैदान छोड़कर भाग गये, जिसमें खिज्रखाँ का एक भाई मारा गया। आनन्दराव ने समस्त बीजापुरी सेना को लूट लिया, और ५०० घोड़े, २ हाथी तथा अन्य बहुत-सा सामान उसके हाथ लगा। (मार्च, १६७४)[१४]

परन्तु बीजापुरियों ने इसके बाद बहुत शीघ्र ही बदला ले लिया। बहलोलखाँ ने, "हाथियों की हानि को अपना बड़ा अपमान समझा, उसने हताश होकर लुटेरों पर पुनः आक्रमण किया, और अतिरिक्त सेना लेकर ऐसी विजय प्राप्त की कि लुटेरों को १००० घोड़े छोड़ने पड़े और वे बड़ी दूर तक खदेड़े गये।" धावे के समय घना युद्ध लड़ना मराठों की नीति के बाहर था। इसलिए, आनन्दराव बहुत शीघ्र अपनी लूट का माल लेकर शिवाजी के राज्य में जा पहुँचा, वहाँ वह उसे सुरक्षित छोड़ आया और तब अप्रैल के आरम्भ में उसे

---

१४ वेन रीड नामक डच ने, १५ दिसम्बर, १६७४ (डच अभिलेख, खंड ३२, संख्या ८२४), लूटे गये बाजार को "हौंसपेंट" कहा है "जो बाँकापुर के निकट बीजापुर की सीमा पर स्थित" है। नारायण ने उसको "पेंच नामक नगर" बताया है, "बाँकापुर से २४ मील दूर।" सभासद ने इस अभियान का जिक्र पृ० ८० पर किया है, परन्तु दो सेनापतियों के नाम दूसरे ही बताये हैं: "हम्बीरराव अपनी सेना को लेकर सम्पगाँव गया (बेलगाँव से १९ मील दक्षिण-पूर्व)। एक महान बीजापुरी सेनापति हुसेन खाँ मियाना ने ५००० पठान सेना लेकर हम्बीरराव के विरुद्ध कूच किया। दोपहर से दूसरे दिन सवेरे तक दोनों के बीच में घोर युद्ध हुआ। हुसैन की सेना के बहुत-से घोड़े और हाथी मारे गये। वह ४००० घोड़े, १२ हाथी, बहुत-से ऊँट और असीम सामान सहित पकड़ा गया। उसकी पूरी सेना नष्ट कर दी गयी।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पठार (बालाघाट) पर चढ़कर अधिक नगरों को लूटने का आदेश दिया गया।[१५]

८ अप्रैल को शिवाजी ने चिपलूण में अपनी सेना का महान प्रदर्शन किया, और प्रतापराव गूजर के स्थान पर हंसाजी मोहिते को 'हम्बीरराव' की पदवी देकर मुख्य सेनापति बनाया। सेनानियों को दिल खोलकर द्रव्य दिया गया। २४ अप्रैल को केलंजा (मोहनगढ़) के किले पर विजय प्राप्त की गयी। (सभा० ८०; जेधे शा०)

१०. दिलेरखाँ की पराजय, जनवरी, १६७४—जनवरी, १६७४ के उत्तरार्द्ध में मुगल सेना ने कोंकण में उतरने की कोशिश की, और इस प्रकार उस क्षेत्र में पन्हाला प्रदेश के बीजापुरी आक्रमण के साथ-साथ पथभ्रंश करने का यत्न किया। परन्तु शिवाजी ने मार्गों को बन्द कर दिया—यह उन्होंने सड़कों और पहाड़ी दर्रों को तोड़कर अथवा जहाँ पथ बहुत कठिन था वहाँ निरन्तर चौकीदारी करके किया; और मुगलों को निराश होकर वापस लौटना पड़ा। सम्भवतः यही अभियान था जिसका जिक्र अंग्रेज व्यापारियों ने जनवरी, १६७४ के अन्त में लिखे अपने एक पत्र में निम्न शब्दों में किया है, "दिलेरखाँ ने हाल में शिवाजी से हार खायी है जिनमें उसके १००० पठान काम आये और शिवाजी के ५००-६०० आदमी मारे गये। यदि ऐसा हुआ तो दिलेरखाँ ने या तो किसी सेना द्वारा रक्षित किसी दर्रे पर सामने से विवेकरहित आक्रमण किया, अथवा वह मराठों की छिपी हुई सेना के चंगुल में फँस गया। इन चार महीनों में, दिसम्बर १६७३ से मार्च १६७४ तक, आदिलशाह और सिद्दियों के प्रति शिवाजी के युद्ध बहुत धीरे-धीरे चलते रहे जिनमें कभी-कभी तेजी आ जाती थी। दोनों ओर के सैनिक लड़ते-लड़ते थक गये थे, और उनके सेनाध्यक्ष इस लाभदायक कार्य को बन्द करने के लिए उत्सुक न थे। इस वर्ष जाड़ों की वर्षा बहुत भारी हुई और उससे महामारी फैली। दिसम्बर और जनवरी में शिवाजी ने अपने घोड़ों को अपने राज्य में इधर-उधर वितरित कर दिया जिससे वे इन दिनों अस्तबलों में आराम से रह सकें।[१६]

---

[१५] सभासद, ८२, में लिखा है कि आक्रमण (हम्बीरराव की अधीनता में) खानदेश, बगलाना, गुजरात, अहमदाबाद, बुरहानपुर, बरार और माहोर में नर्मदा के तट तक हुआ, और यह कि थके हुए पीछा करने वाले मुगल सदा ही ३० या ४० मील पीछे रह गये, और इस प्रकार मराठे बिना परेशानी के और समस्त लूट के माल के साथ घर वापस आ गये।

[१६] कोठी के अभिलेख सूरत, खण्ड ८८ में रायगढ़ से नारायण शेवनी का पत्र; मूल पत्र-व्यवहार, ३९०६ और ३९३९; डच अभिलेख, खण्ड ३४, संख्या ८४०

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इसके पश्चात शीघ्र ही दक्षिण में मुगल शक्ति क्षीण हो गयी। खैबर के अफगानों का विद्रोह इतना गम्भीर हो गया कि औरंगजेब को दिल्ली छोड़ना पड़ा (७ अप्रैल) और वह हसन आब्दाल पर पहुँचा जहाँ उसने सेना के पृष्ठ भाग से युद्ध-संचालन किया, और दूसरे महीने में ही दिलेरखाँ को उत्तर-पश्चिमी सीमा पर बुला लिया गया। बहादुरखाँ दक्षिण में अकेला रह गया तथा उसकी सेना बहुत कमजोर हो गयी। युद्ध में इस खामोशी के कारण शिवाजी को बड़े ठाट-बाट और धूम-धाम से विधिवत अपने को सिंहासनारूढ़ करने का अवसर मिल गया। (म० आ० १३२; कोठी के अभिलेख सूरत ८८, ऑक्सिनडन का पत्र, २१ मई १६७४)

यह उपयुक्त होगा कि शिवाजी के सिंहासनारूढ़ होने के ठीक पहले हम उनके भूमि-क्षेत्र का सिंहावलोकन करें। अध्याय ३ के परिच्छेद ५ में हम देख चुके हैं कि उनका राज्य १६४८ में और १६५९ में कितना था। नवम्बर, १६५९ और फरवरी, १६६० के बीच में उनके प्राप्त क्षेत्र, दक्षिण कोंकण को छोड़कर, उनके अधिकार में थोड़े ही दिन तक रहे। यहाँ उन्होंने रत्नगिरि जिले की विजय को पूरा किया; इसके लिए उन्होंने पहले उसके पश्चिमी भाग पर अधिकार किया (राजापुर और विंगुर्ला के पत्तनों को छोड़कर अन्य समस्त पत्तनों को शामिल करके), और उसके धुर दक्षिण के भाग पर भी। इस समय से उनकी शक्ति का दबाव वादी के सामन्तों पर (या कुदाल के देसाइयों पर, जैसा कि वे उस समय कहलाते थे) पड़ने लगा, और दीर्घ तथा अव्यवस्थित संघर्ष के पश्चात (१६६३ के मध्य तक) इन लोगों का राज्य-क्षेत्र तथा राजापुर और विंगुर्ला के पत्तन शिवाजी के अधिकार में चले गये, और समस्त दक्षिण कोंकण उनको अपना एकमात्र स्वामी मानने लगा। उन्होंने सिद्दियों से कोलाबा जिले के पश्चिमी तट को पहले ही छीन लिया था।

पुरन्दर की सन्धि (१६६५) द्वारा जो कुछ उन्होंने मुगलों को दिया वह केवल पूना और थाना जिलों में उनके राज्य-क्षेत्र से सम्बन्धित था, परन्तु मध्य और दक्षिण कोंकण में उनके विजित भाग ज्यों के त्यों रहे। इन खोये हुए भागों का बहुत अंश १६७० और १६७१ में उन्होंने पुनः वापस ले लिया।

१६६४ से आगे मराठों ने कनारा में लूटपाट शुरू की—कारवार तट और हुबली तथा बेदनूर की उच्चभूमि, दोनों पर; परन्तु तट की वास्तविक 'विजय' १६७५ में ही हो पायी।

१६७१ और १६७२ में मराठों की क्रियाशीलता से सूरत और थाना जिले के बीच में कोली प्रदेश और बगलाना पर (नासिक जिले के उत्तर में)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अधिकार हो गया। चन्दौर श्रेणी के पहाड़ी किलों पर अधिकार बराबर बदलता रहा, कभी मुगलों का कभी मराठों का। परन्तु शिवाजी की दृष्टि में उनका महत्त्व केवल युद्ध की दृष्टि से था, क्योंकि वे बगलाना और खानदेश को उत्तर की ओर जाने वाले मार्गों की रक्षा करते थे।

दक्षिण में १६७३ में पन्हाला की जीत से और १६७५ में कोल्हापुर और फौंदा की विजय से शिवाजी की शक्ति पक्के तौर से जम गयी। इस प्रकार १६७५ में उनकी सीमा कोल्हापुर जिले से आगे बढ़कर कर्नाटक या कनारा की उपत्यकाओं में पहुँच गयी।

उनकी मृत्यु के समय (१६८०) उनके राज्य के विस्तार का वर्णन अध्याय १५ के आरम्भ में किया जायगा।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय ९

शिवाजी का राज्याभिषेक और उसके बाद

(१६७४–१६७६)

१. शिवाजी सिंहासनारूढ़ क्यों होना चाहते थे ?
२. शिवाजी को क्षत्रिय होने की मान्यता मिली।
३. राज्याभिषेक की तैयारियाँ।
४. पूजा और अनुष्ठान।
५. राज्याभिषेक का दृश्य।
६. नगर में जलूस।
७. शिवाजी का तांत्रिक राज्याभिषेक।
८. राज्याभिषेक का व्यय।
९. बहादुरखाँ के शिविर की लूट।
१०. शिवाजी की दिखावटी वार्ता।
११. मुगलों के विरुद्ध पुनः युद्ध आरम्भ हुआ।

१. **शिवाजी सिंहासनारूढ़ क्यों होना चाहते थे ?**—शिवाजी और उनके मन्त्री बहुत काल से उनका राज्याभिषेक न होने की व्यावहारिक हानियों को अनुभव कर रहे थे।[1] अवश्य उन्होंने अनेक प्रदेश जीत लिये थे और बहुत-सा धन भी एकत्र कर लिया था। उनकी थल-सेना और जल-सेना शक्तिशाली थीं, और एक सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न स्वतन्त्र शासक की भाँति वह मनुष्यों को जीवन-दान और मृत्यु देने के अधिकार का प्रयोग करते थे। परन्तु सिद्धान्त

---

[1] यह अध्याय मुख्यतः निम्न पर आधारित है—अंग्रेज राजदूत हेनरी ऑक्सिनडन की विस्तारपूर्ण रिपोर्ट (पत्र और संस्मरण या वर्णन) और अंग्रेजी के दुभाषिया नारायण शेवनी तथा (विंगुर्ला का) डच व्यापारी अब्राहम ले फेबर के लेखों पर जो इण्डिया आफिस लन्दन में कोठी के अभिलेख सूरत, खण्ड ८८ और ३, तथा डच अभिलेख, खण्ड ३४, संख्या ८४१ के रूप में सुरक्षित हैं। इनको सभासद (८२-८४) से अनुपूरित किया गया है। ९१ क० ब० परिच्छेद ८३ कुछ बातों में समकालीन यूरोपीय अभिलेखों की बड़ी आश्चर्यजनक रीति से सम्पुष्टि करता है। बम्बई गजेटियर (११. ३६९) के अनुसार चितनिस बखर ने शिवाजी के राज्याभिषेक के अवसर पर वे ही संस्कार किये गये बताये हैं जो एक शताब्दी बाद पेशवा के राज्याभिषेक के अवसर पर हुए। संस्कृत कविता 'शिवराज-राज्याभिषेक-कल्पतरु' का प्रयोग बहुत सावधानी से किया गया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रूप से उनकी स्थिति एक अधीन मनुष्य की भाँति थी; मुगल सम्राट के लिए वह केवल जमींदार थे; आदिलशाह के लिए वह एक सामन्त जागीरदार के बागी लड़के थे। वह किसी राजा के साथ राजनीतिक स्तर पर समानता के अधिकारी न थे।

फिर, जब तक कि वह केवल एक सामान्य प्रजा की भाँति थे तो वह वास्तविक शक्ति होते हुए भी, उन लोगों से प्रजाभक्ति और निष्ठा की आशा नहीं कर सकते थे जिन पर वह शासन करते थे। उनके वादों में राज्य के शासक की सार्वजनिक प्रतिज्ञाओं की पवित्रता और निरन्तरता नहीं रह सकती थी। वह किसी सन्धि पर हस्ताक्षर न कर सकते थे, वैधिक प्रामाणिकता अथवा स्थायित्व के आश्वासन की दृष्टि से वह किसी को भूमि का दान नहीं दे सकते थे। तलवार के बल पर प्राप्त भूमि उनकी वैध सम्पत्ति नहीं मानी जा सकती थी, भले ही व्यावहारिक रूप से उसमें कोई हस्तक्षेप न होता था। उनके शासन में रहने वाले लोग अथवा उनकी पताका की छत्रछाया में सेवा करने वाले मनुष्य, भूमि के पूर्व-शासक के प्रति राजभक्ति को नहीं छोड़ सकते थे और न उनको यह विश्वास था कि शिवाजी के प्रति राजभक्ति के कारण वे राजद्रोह से मुक्त समझे जा सकते थे। उनकी राजनीतिक सत्ता के स्थायित्व के लिए आवश्यक था कि वह एक सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न शासक (sovereign) के रूप में माने जायँ।

यह भी स्पष्ट है कि भोंसलों के उत्थान ने अन्य मराठा परिवारों में बहुत ईर्ष्या पैदा कर दी थी, जिनकी सामाजिक स्थिति किसी समय उनके बराबर थी। ये अपने को शिवाजी का सेवक न मानकर ही सन्तोष कर लेते थे, औरंगजेब या आदिलशाह की राज-भक्त प्रजा होने में गर्व करते थे, और एक विद्रोही अनभिजात और अनुचित अधिकार करने वाले के रूप में शिवाजी का तिरस्कार करते थे। उन लोगों की दृष्टि में उनकी स्थिति का परिशोधन आवश्यक था। एक औपचारिक राज्याभिषेक से ही उनको यह निश्चय कराया जा सकता था कि वह राजा थे और इसलिए उनसे उच्च थे और इसी से वह बीजापुर और गोलकुण्डा के शासकों के प्रति बराबरी का व्यवहार कर सकते थे।

महाराष्ट्र के उच्च विचारक शिवाजी को हिन्दू धर्म का संरक्षक समझते थे और वे उनकी स्थिति एक स्वतन्त्र राजा के पद पर औपचारिक रूप से आसीन करके हिन्दू जाति का पूर्ण राजनीतिक उत्थान चाहते थे। वे हिन्दू स्वराज्य के स्वप्न देखते थे, और इसमें निहित था एक हिन्दू छत्रपति का होना।
(सभा० ८२)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

२. **गागा भट्ट ने शिवाजी को क्षत्रिय स्वीकार किया**—परन्तु इस आदर्श के प्राप्त करने में एक विचित्र रुकावट थी। पुराने हिन्दू धर्म-ग्रन्थों के अनुसार केवल एक क्षत्रिय ही वैध रूप से राजा वन सकता है और अपनी हिन्दू प्रजा की राजनिष्ठा स्वीकार कर सकता है। लोकमत के अनुसार भोंसले न तो क्षत्रिय थे और न द्विज थे, वरन केवल भूमि के जोतने वाले किसान थे जैसा कि शिवाजी के प्रपितामह थे। शूद्र जाति में उत्पन्न एक अनभिजात क्षत्री किस प्रकार अधिकार और प्रतिष्ठा का पात्र वन सकता था ? भारत के समस्त भागों के ब्राह्मण उसी दशा में शिवाजी के राज्याभिषेक पर उपस्थित हो सकते थे और उसे उचित वता सकते थे जबकि वह अधिकारपूर्ण ढंग से क्षत्रिय मान लिये जाते।

अतएव सर्वप्रथम एक विद्वान पण्डित द्वारा समर्थन की आवश्यकता थी, जिसकी ख्याति उसके मत का विरोध करने वाले को चुप कर देती। ऐसा विद्वान बनारस का विश्वेश्वर मिला जिसका उपनाम गागा भट्ट था; वह अपने समय का सवसे बड़ा संस्कृत का धर्मशास्त्री और तार्किक था; वह चारों वेद, षट्दर्शन और हिन्दुओं के समस्त धर्म-ग्रन्थों का ज्ञाता था, और उसे आधुनिक युग का ब्रह्मदेव और व्यास कहते थे। पहले वह राजी नहीं हुआ, किन्तु वाद को उसने सम्मति दे दी, और चतुर सचिव वालाजी अवजी व शिवाजी के अन्य अभिकर्ताओं ने जो भोंसने वंशावली तैयार की थी उसे स्वीकार कर लिया और घोषणा की कि यह राजा विशुद्ध कुल के क्षत्रिय हैं और इनकी परम्परा उदयपुर के महाराणाओं से है जो श्री रामचन्द्र जी के सूर्यवंशी कुल के एकमात्र प्रतिनिधि हैं। उसके साहसपूर्ण और विनयपूर्ण जातिसम्बन्धी सिद्धान्त के बदले वहुत बड़ा पुरस्कार दिया गया और उससे प्रार्थना की गयी कि वह महाराष्ट्र में आकर शिवाजी के राज्याभिषेक के अवसर पर मुख्य पण्डित का आसन ग्रहण करे। वह राजी हो गया, और वहाँ पहुँचने पर उसका स्वागत राजा के समान हुआ, और शिवाजी तथा उनके समस्त अधिकारीगण मार्ग में ही उसका स्वागत करने के लिए सतारा से कई मील आगे पहुँचे।

३. **राज्याभिषेक की तैयारियाँ**—राज्याभिषेक की तैयारियों में कई महीने लग गये। स्वतन्त्र हिन्दू अधिराज के राज्याभिषेक के अवसर पर वांछित संस्कार और साज-सज्जा के विषय में कोई बिलकुल निश्चित परम्परा नहीं थी। अतएव पण्डितों के दल ने इन विषयों पर प्राचीन शास्त्रीय प्रथाओं के जानने के लिए महाकाव्यों और राजनीतिक ग्रन्थों की छानबीन की, तथा कुछ लोग यह ज्ञात करने के लिए नियुक्त किये गये कि उदयपुर और आमेर के राजाओं के यहाँ प्रचलित प्रथाएँ कौन-कौनसी हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भारत के प्रत्येक भाग के विद्वान ब्राह्मणों को आमन्त्रित किया गया; आने वाले राज्याभिषेक से बहुत-से अन्य लोग आकर्षित हुए। ग्यारह हजार ब्राह्मण रायगढ़ में आये जिनकी संख्या उनकी स्त्रियों और बच्चों सहित ५०,००० हो गयी; चार महीने तक राजा की ओर से इनको मिठाई खिलायी गयी। शिवाजी ने अवश्य ही इतनी बड़ी संख्या में अतिथियों को सब प्रकार का आराम पहुँचाने के लिए बड़ी दूर-दृष्टि और व्यवस्था-शक्ति से काम लिया होगा—ब्राह्मण, सरदार, राज्य के रईस, दूसरे राज्यों के प्रतिनिधि, विदेशी व्यापारी व आगन्तुक, और गरीब भाई जो समारोह में सम्मिलित हुए, इन सबकी संख्या, पुरुष, स्त्री और बच्चों की, लगभग एक लाख होगी।

जैसा कि अंग्रेज राजदूत हैनरी ऑक्सिनडन ने कुछ व्यथापूर्वक लिखा है कि प्रतिदिन के धार्मिक संस्कार और ब्राह्मणों से परामर्श के पश्चात शिवाजी को अन्य कार्यों की देखभाल के लिए समय नहीं मिल पाता था। शिवाजी ने सर्वप्रथम अपने गुरु रामदास स्वामी और अपनी माता जीजाबाई की वन्दना की और उनके आशीर्वाद प्राप्त किये। शाहजी की पहली दुखी और उपेक्षित पत्नी, जिसकी अवस्था इस समय अस्सी वर्ष के करीब थी, अब अपने पुत्र के प्रेम और श्रद्धा के सामने अपने पति के तिरस्कार को भूल गयी और यह देखकर फूली न समायी कि उसकी मृत्यु से पूर्व ही उसका शिवाजी अपनी ही जन्मभूमि में विधिवत राजा बन गया जो मानवीय महानता की पराकाष्ठा थी—शिवाजी जो अजेय विजेता था और जो धर्म का दृढ़ रक्षक था जिससे उसे अपने जीवन में सान्त्वना मिलती थी। उसी देश की राजमाता गौतमी के समान, जो पन्द्रह शताब्दी पहले जन्मी थी और आन्ध्र राजा श्री सातकर्णी की माँ थी, उन्होंने भी अपने विजेता और धर्मनिष्ठ पुत्र की ख्याति और प्रतिष्ठा में अपने को गौरवान्वित समझा।[२] दयालु विधाता ने उनका जीवन इतना दीर्घ कर दिया कि वह राज्याभिषेक के दृश्य को देखने भर के लिए जीवित रही, क्योंकि इस घटना के बारह दिन बाद ही उसका देहावसान हो गया।

---

२ "मैं श्री सातकर्णी (राज्यकाल सन ई० १०९-१३५) की माँ गौतमी हूँ, जिसने बिना भेदभाव के जनता के दुख-सुख में साथ दिया, जिसने योद्धाओं के गर्व को चूर किया, सीथियाई, बेक्टेरियाई और पार्थियाई लोगों को नष्ट किया, क्षहरात वंश का समूल नाश किया, शातवाहन वंश की प्रतिष्ठा स्थापित की, चार वर्णों में परस्पर अवैध वैवाहिक सम्बन्धों का अन्त किया, अपने वैरी दलों को कई युद्धों में पराजित किया और जिसकी विजयी पताका कभी नीचे नहीं झुकी।" (एपीग्रेफिका इंडिका, ८. ६०)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

४. **शिवाजी द्वारा पूजा और अनुष्ठान**—तब शिवाजी देश के अति प्रसिद्ध मंदिरों में पूजा के लिए निकल पड़े। मई १६७४ के आरम्भ में उन्होंने चिपलूण की यात्रा की और वहाँ विशाल मन्दिर में परशुराम के दर्शन और पूजा करके वे रायगढ़ में १२ तारीख को लौटे। चार दिन बाद वे देवी भवानी की पूजा के लिए निकल पड़े जिनको उन्होंने प्रतापगढ़ में प्रतिष्ठापित किया था, क्योंकि तुल्जापुर की प्राचीन भवानी के पास पहुँचना उनके लिए कठिन था। इस मूर्ति के लिए उन्होंने शुद्ध सोने का छत्र भेंट किया जो तोल में सवा मन (लगभग ५६,००० रुपये मूल्य का) था, और अनेक अन्य बहुमूल्य उपहार भी दिये। २१ तारीख को तीसरे पहर रायगढ़ लौटकर वह पूजापाठ में लग गये। अपने कुल-पुरोहित बालम भट्ट (प्रभाकर भट्ट उपाध्याय के पुत्र) के निर्देशन में उन्होंने लगातार कई दिन तक महादेव, भवानी और अन्य स्थानीय देवी-देवताओं की पूजा-अर्चना की।

परन्तु राज्याभिषेक से पहले एक बहुत बड़ा दोष निवारण करना आवश्यक था। सार्वजनिक रूप से उनकी शुद्धि करना और "क्षत्रिय बनाना" जरूरी था। इतने समय तक स्वयं अपनी तथा अपने पूर्वजों की ओर से क्षत्रिय धर्म न पालने के लिए उनको २८ मई को प्रायश्चित करना पड़ा, और गागा भट्ट ने उनको उपनयन (जनेऊ) धारण कराया जो उत्तरी भारत के "शुद्ध" क्षत्रियों के समान द्विजों का विशिष्ट चिह्न है। दूसरे दिन क्षत्रियों की प्रथा के अनुसार उनका विवाह अपनी दोनों जीवित पत्नियों के साथ पुनः किया गया और साथ में मन्त्रों का उच्चारण किया गया, जो केवल द्विजों का ही अधिकार है; इससे वे शुद्ध हो गयीं और राज्याभिषेक के संस्कार में भाग लेने की अधिकारिणी हो गयीं।

आगे का कदम था उनको मन्त्र सिखाना तथा क्षत्रिय जाति में प्रविष्ट कराना। शिवाजी ने यह ठीक ही चाहा कि एक हिन्दू राजा की दीक्षा और राज्याभिषेक के अनुरूप वेदों के समस्त मन्त्र उनको अवश्य सुनने चाहिए, क्योंकि द्विज जातियों में ही क्षत्रिय होने के नाते उनको ब्राह्मणों के समान ही वैदिक मन्त्रों के सुनने-सुनाने का अधिकार था। इस बात को लेकर एकत्रित ब्राह्मणों में घोर मतभेद पैदा हो गया जिनका कथन था कि वर्तमान काल में कोई भी शुद्ध क्षत्रिय नहीं है[3] और केवल ब्राह्मण ही जीवित द्विज हैं!

---

[3] ६१ क० ब० परि० ८३ में निम्न उल्लेखनीय लेखांश से मालूम होता है कि शिवाजी ने एक बार यह विचार किया कि असहिष्णु गर्वीले ब्राह्मणों को समस्त धर्म-विहीन कार्यों से हटा दिया जाय जैसे सेनाओं की कमान अथवा सूबे में वाइसराय का पद आदि से, और उनको केवल आध्यात्मिक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

गागा भट्ट को भी सामान्य विरोध के सामने झुकना पड़ा और ऐसा मालूम होता है कि उन्होंने वेदोच्चारण का विचार छोड़ दिया और द्विज के जीवन के केवल संशोधित रूप में ही राजा का अभिषेक कर डाला। और इस प्रकार उनको ब्राह्मणों के समकक्ष नहीं रखा। यह शुद्धीकरण और उसका प्रतिफल यज्ञोपवीत-धारण 'बड़े समारोहपूर्वक' मनाये गये; ब्राह्मणों को अतुल धन दिया गया और केवल गागा भट्ट को ७००० होन प्रदान किये गये और सामान्य ब्राह्मण-गण को १७,००० होन। (६१ क० ब० ८३; डच अभिलेख)

दूसरे दिन शिवाजी ने जान में अथवा अनजान में स्वयं किये हुए पापों का प्रायश्चित किया। उन्होंने अलग-अलग निम्न धातुओं से तुलादान किया—सोना, चाँदी, ताँबा, जस्ता, राँगा, सीसा और लोहा—और निम्नलिखित वस्तुओं से भी तुलादान किया—बहुत बढ़िया मलमल, कपूर, नमक, कीलें (यह ध्यान देने योग्य है—लेखक), जायफल व अन्य गरम मसाले, मक्खन, चीनी, फल और सब प्रकार के खाद्य पदार्थ (जिनमें पान और देशी शराब भी सम्मिलित थे)। उनके शरीर की तोल के बराबर-बराबर ये सब धातुएँ तथा अन्य वस्तुएँ और एक लाख होन राज्याभिषेक के बाद एकत्रित ब्राह्मणों को बाँट दिये गये।

परन्तु इससे उनका लोभ शान्त न हो सका। दो विद्वान ब्राह्मणों ने बताया

कामों में लगे रहने की आज्ञा दी जाय, जैसे उपवास, पूजा-पाठ आदि। "महाराजा ने (जब उनको मालूम हुआ कि ब्राह्मण लोग उसे वैदिक मन्त्र बोलने की अनुमति नहीं देते हैं) कहा, 'ब्राह्मण आदर-सम्मान के योग्य हैं। उनको राजकीय सेवा में नियुक्त करना उचित नहीं है। भगवत् सेवा के अतिरिक्त और कोई काम उनको देना अनुचित है।' अतः उन्होंने समस्त ब्राह्मणों को अपने पदों से हटा दिया और उनके स्थानों पर प्रभू कायस्थों को नियुक्त किया। मोरो पन्त ने ब्राह्मणों का पक्ष लिया।"

किसी ने भी इस पर आपत्ति नहीं की। गागा भट्ट ने राज्याभिषेक के प्रकरण में अनिवार्य पूर्व-कार्य के रूप में शिवाजी को जनेऊ धारण कराया और उनको "परिष्कृत क्षत्रिय" बना लिया। परन्तु मेरा विश्वास है कि उनको "गायत्री मन्त्र" उच्चारण करने की आज्ञा नहीं दी गयी, क्योंकि न तो सभासद (जिसने शिवाजी के पुत्र को प्रसन्न करने के लिए लिखा) और न दत्ताजी वाकनिस इस तथ्य का वर्णन करते हैं। जेधे में केवल यह लिखा है कि ३० मई को शिवाजी का विवाह "मन्त्रोच्चारण सहित" सम्पन्न हुआ, और निश्चलपुरी ने यह लिखा है कि शिवाजी ने "अपने गुरु गागा द्वारा उच्चारित गायत्री मन्त्र अशुभ घड़ी पर ग्रहण किया।"

मराठा समाज में 'वेदोक्त' अब भी विवादग्रस्त विषय है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कि शिवाजी ने अपने आक्रमणों में नगरों को जलाया, जिससे "अनेक ब्राह्मण, गायों, स्त्रियों और बच्चों की हत्या हुई।" इस पाप से मुक्त होने का मूल्य चुकाना था। इसके लिए यह आवश्यक नहीं समझा गया कि सूरत या कारिंजा की लूट में वह उन पुरुषों और स्त्रियों के सम्बन्धियों को मुआवजा दे दें जो बच रहे थे। उन्हें केवल कोंकण और 'देश' के ब्राह्मणों की ही जेबें भरनी थीं। इसके प्रायश्चित के लिए केवल ८००० रुपये देने थे, और इस छोटी-सी रकम को शिवाजी देने से मना नहीं कर सकते थे। (डच अभिलेख, खण्ड ३४, संख्या ८४१)

५. शिवाजी के सिंहासनारूढ़ होने का दृश्य—सुवर्ण द्वारा उनकी समस्त अपात्रताएँ दूर हो जाने के बाद अब उनका वास्तविक राज्याभिषेक आरम्भ हुआ। इस बड़े समारोह का पूर्व-दिन ५ जनवरी था। यह दिन आत्मसंयम और इन्द्रियदमन में व्यतीत किया गया, ठीक जैसे कि यूरोप में पराक्रम (knighthood) के युग में पहली रात व्यतीत करनी पड़ती थी। शिवाजी ने गंगा के पवित्र जल में स्नान किया, और गागा भट्ट को ५००० होन प्रदान किये तथा अन्य प्रसिद्ध ब्राह्मणों को प्रत्येक को सौ-सौ सोने की मुहरें दीं। कदाचित पूरे दिन उपवास रखा गया।

दूसरे दिन (६ जून, १६७४ को) राज्याभिषेक हुआ। उस दिन बहुत सवेरे शिवाजी ने उठकर मन्त्रोच्चारण और संस्कारों के साथ स्नान किया जिससे अनिष्ट दूर हो जायँ, कुल देवताओं की पूजा की और अपने कुल-पुरोहित बालम भट्ट, गागा भट्ट तथा अन्य प्रसिद्ध ब्राह्मणों के पैर छुए और उन सबको आभूषण तथा वस्त्र दान में दिये।

हिन्दुओं में राजतिलक के मुख्य भाग 'अभिषेक' (जल से स्नान करना) और 'छत्रधारण' (अर्थात सिर पर राजसी छाता लगाना) हैं। निर्मल श्वेत वस्त्र धारण कर, फूलों की मालाएँ गले में डालकर, इत्र छिड़ककर तथा सुवर्ण आभूषणों से सुसज्जित शिवाजी स्नान करने के नियत स्थान पर गये। यहाँ वह सोने के पत्र से मढ़ी हुई चौकी पर बैठे जो दो फुट लम्बी, दो फुट चौड़ी और दो ही फुट ऊँची थी। राजमहिषी सोयराबाई ने उनके बायीं ओर आसन ग्रहण किया और उनके साड़ी के छोर व राजा के दुपट्टे में गाँठ लगायी गयी, जिसका आशय यह था कि वह उनकी 'सहधर्मिणी' थी, अर्थात इस लोक तथा परलोक दोनों में उनकी साथी थी। युवराज शम्भूजी दोनों के ठीक पीछे बैठे। तब उनके मन्त्रिमण्डल ('अष्ट प्रधान') के आठों मन्त्रियों ने, जो क्षितिज के आठ विन्दुओं के अनुसार गंगा तथा अन्य पवित्र नदियों के कलश लेकर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

खड़े थे, राजा, रानी और युवराज के सिर पर अभिषेक किया अर्थात कलशों से पानी उँडेला—इस समय मन्त्रोच्चारण तथा बाजों की आनन्दमय ध्वनि होती रही। स्वच्छ वस्त्र धारण किये हुए छह ब्राह्मण विवाहित स्त्रियों ने सोने के थाल में पाँच दीये रखकर उनकी आरती उतारी, जिससे समस्त कुप्रभाव दूर रहें।

तब शिवाजी ने अपने लाल रंग और सुनहरी काम के राजसी वस्त्र पहने; चमचमाते हुए रत्न और सोने के आभूषण धारण किये, गले में हार और फूलों की माला डाली; एक राजमुकुट (उष्णीष) पहना जिसमें मोती जड़े थे तथा जिससे मोती की लड़ें लटक रही थीं; अपनी तलवार, ढाल और तीर-कमान की पूजा की; और पुनः अपने बड़ों तथा ब्राह्मणों को सिर नवाया। तब ज्योतिषियों द्वारा बतायी गयी शुभ घड़ी में उन्होंने राज-सिंहासन के कमरे में प्रवेश किया।

राज-तिलक का कक्ष हिन्दू परम्परा के अनुसार ३२ शकुन चिह्नों तथा विभिन्न शुभ पौधों से सुसज्जित था। ऊपर सुनहरी काम का वितान था जिससे मोतियों की बन्दनवारें लटक रही थीं। फर्श पर मखमल बिछी हुई थी। केन्द्र में बड़ा 'भव्य सिंहासन' था जो कई महीनों के लगातार परिश्रम के बाद राजा के अनुरूप निर्मित किया गया था। यदि हम सभासद के कथन को अस्वीकार कर दें कि उसमें ३२ मन सोना (१४ लाख रुपये के मूल्य का) था, हमको अवश्य ही अंग्रेज अवेक्षक की रिपोर्ट माननी पड़ेगी कि वह "मूल्यवान और आलीशान" था। सिंहासन पर सोने का पत्र मढ़ा था और आठ स्तम्भों पर भी जो उसके आठ कोणों पर खड़े थे, परन्तु इनमें रत्न और हीरे भी जड़े हुए थे। स्तम्भों के ऊपर मण्डप था जिस पर बहुत सुन्दर सोने की कारचोबी का काम हो रहा था और जिससे मोतियों के गुच्छ और बन्दनवारें लटक रही थीं, जिनके बीच-बीच में दमकते हुए रत्न थे। राजा के बैठने के स्थान पर जो आसन बिछे थे उनमें हिन्दू संयम और मुगल विलास का विचित्र सम्मिश्रण था—नीचे बाघ की खाल और ऊपर मखमल!

सिंहासन के दोनों ओर राजसी प्रतीक और सरकार के विभिन्न चिह्न सुनहरी बल्लमों के सिरों से लटके हुए थे। दायीं ओर बहुत बड़े दाँतों वाली दो बड़ी सुवर्ण मछलियों के बड़े सिर थे और बायीं ओर कई घोड़ों की पूँछें थीं (जो तुर्कों में राजकीय प्रतीक मानी जाती हैं) और बहुमूल्य बल्लम के सिरे से सुवर्ण-तुला (न्याय का प्रतीक) लटकी हुई थी जिसके दोनों पलड़े संतुलित थे। यह सब मुगल दरबार का अनुकरण था। महल के द्वार पर दोनों ओर पानी से भरे हुए और ताजा हरी पत्तियों से ढके हुए दो कलश थे; साथ

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

ही दो जवान हाथी और दो सुन्दर घोड़े थे जिनकी लगाम और झूलों पर सोने का काम था। यह पिछली, हिन्दू विश्वास के अनुसार, शुभ समझी जाती हैं।

जैसे ही शिवाजी सिंहासन पर आरूढ़ हुए, रत्नजड़ित सोने के छोटे कमल के फूल और सोने व चाँदी के अन्य फूल एकत्र भीड़ पर बरसाये गये। सोलह साध्वी स्त्रियों ने नये सिंहासनारूढ़ राजा की आरती पुनः उतारी। ब्राह्मणों ने ऊँचे स्वर में मन्त्र उच्चारण किये और राजा को आशीर्वाद दिया जिसके उपलक्ष में राजा ने उनको सिर नवाया। जन-समूह ने बहुत ऊँचे स्वर में नारे लगाये—"शिवराज की जय ! शिवराज की जय !" समस्त बाजे एक साथ बजने लगे और गवैये गाने लगे। जैसा पूर्व निश्चित कर दिया गया था, राज्य के प्रत्येक किले से ठीक इस समय एक-साथ तोपें दागी गयीं। मुख्य पुरोहित गागा भट्ट सिंहासन की ओर बढ़ा, उसने सोने के काम का और मोतियों की झालर का वितान उनके ऊपर ताना और 'शिवा छत्रपति' कहकर उनका आवाहन किया।

ब्राह्मण आगे बढ़े और उन्होंने उनको आशीर्वाद दिया। राजा ने उनको तथा एकत्र भिखारियों और सामान्य जनता को विपुल धन तथा प्रत्येक प्रकार के उपहार वितरित किये। "उन्होंने हिन्दू धर्म के अनुसार सोलह प्रकार के महादान भी दिये। इसके पश्चात मन्त्री सिंहासन की ओर बढ़े और उन्होंने अभिवादन किया, और छत्रपति ने अपने हाथों से उपहारस्वरूप उनको सम्मान-परिधान, नियुक्ति-पत्र तथा धन, घोड़े, हाथी, रत्न, वस्त्र और हथियार प्रदान किये। यह आदेश दिया गया कि भविष्य में उनके पदों को निर्दिष्ट करने के लिए संस्कृत की पदवियों का प्रयोग किया जायगा, और अब तक प्रयुक्त किये जाने वाले फारसी पदों को त्याग दिया जायगा।" (सभासद, ८३-८४)

युवराज शम्भूजी, मुख्य पुरोहित गागा भट्ट और प्रधान मन्त्री मोरो त्रिम्बक पिंगले भी ऊँचे आसन पर बैठाये गये जो सिंहासन से जरा ही नीचा था। अन्य मन्त्री राजा के दायीं और बायीं ओर दो पंक्तियों में खड़े हुए। अन्य सब दरबारी और आगंतुक लोग अपने पदों के अनुसार उचित आसनों पर सम्मान की वृत्ति में बैठाये गये।

इस समय सवेरे के आठ बजे थे। अब अंग्रेजी दूत हैनरी ऑक्सिनडन को नीराजी पन्त ने राजा के सामने पेश किया। उसने कुछ दूर से ही राजा का अभिवादन किया और उनके दुभाषिया ने अंग्रेजों की ओर से राजा को एक हीरे की अँगूठी भेंट की। शिवाजी ने अन्य विदेशियों और अपरिचितों की ओर भी ध्यान दिया और उनको सिंहासन के निकट आने का आदेश दिया तथा उन्हें सम्मान-परिधान भेंट किये, और फिर वे अपने-अपने स्थानों पर चले गये।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

६. **रायगढ़ में सार्वजनिक जलूस**—जब पेशियाँ समाप्त हो गयीं, राजा अपने सिंहासन से उतरे, सबसे बढ़िया घोड़े पर सवार हुए जिस पर बड़ी शानदार झूल पड़ी हुई थी, और जगदीश्वर के मन्दिर के लिए चल पड़े। फिर वह अपने फीलखाने के सर्वोत्तम हाथी पर सवार हुए, और उन्होंने अवसर के अनुसार अत्यन्त भव्य वस्त्र धारण किये, और राजधानी के राजमार्गों पर पूरे सैनिक जलूस के साथ चल पड़े, उनके चारों ओर उनके मन्त्री और सेनापति थे, आगे-आगे दो हाथी चल रहे थे जिन पर ज़री-पताका और भगवा-झण्डा, दो ध्वज थे, पीछे-पीछे सेनाध्यक्ष और सैन्य टुकड़ियाँ थीं जिनके साथ उनके झण्डे, तोपखाने तथा बाजे थे। नगरवासियों ने अवसर के अनुकूल ही अपने मकान तथा मार्गों को सजा रखा था। गृहस्वामिनियों ने उनकी आरती उतारी और उनके सिर पर धान की खीलें, फूल, कुश आदि चढ़ाये। रायगढ़ की पहाड़ी पर स्थित अनेक मन्दिरों के दर्शन करने और प्रत्येक में भेंट चढ़ाने के बाद, वह महल को वापस आ गये।

७ तारीख को समस्त उपस्थित राजदूतों को सामान्य रूप से उपहार दिये गये और भिखारियों को दान। दान का कार्यक्रम बारह दिन तक चलता रहा, और इस अवधि में राजा के खर्चे पर भंडारा भी चलता रहा जिसमें लोगों को मुफ्त भोजन कराया गया। अधिक विख्यात पंडित और संन्यासी इसमें नहीं सम्मिलित किये गये, क्योंकि इस साधारण जनसमूह के लोगों में प्रत्येक को तीन रुपये से पाँच रुपये तक और स्त्रियों एवं बच्चों हर एक को एक या दो रुपये दिये गये।

राजतिलक के एक-दो दिन बाद ही वर्षा ऋतु पूरे वेग से आरम्भ हो गयी और मौसम कुछ समय तक वर्षायुक्त रहा जिससे एकत्र जन-समुदाय को बड़ी असुविधा हुई। ८ तारीख को शिवाजी ने बिना किसी रस्म के चौथी स्त्री से विवाह कर लिया। यह अवश्य ही अपनी एक पहली स्त्री से ही विवाह का पुनर्नवीकरण था, परन्तु वह क्षत्रिय संस्कारों के अनुसार सम्पन्न किया गया क्योंकि अब उन्हें उनके अनुरूप कार्य करने का पूरा अधिकार था।[४] (ऑक्सिनडन का पत्र, २७ मई; ऑक्सिनडन का स्मरण-लेख, दिनांक ८ जून।)

---

[४] जेधे शाकावली के अनुसार शिवाजी का विवाह (वैदिक) मन्त्रों के उच्चारण के साथ ३० मई को सम्पन्न हुआ अर्थात उनके यज्ञोपवीत धारण करने के दो दिन पश्चात, और यह मान लेना ठीक ही होगा कि इन देर के विवाहों के करने में शिवाजी का उद्देश्य यह था कि वह सार्वजनिक रूप से घोषणा कर सकें कि वह अब द्विज हैं और उन्हें वैदिक मन्त्रों के सुनने का अधिकार है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

राजतिलक के समाप्त होने के पश्चात जीजाबाई का देहान्त १८ जून को हो गया। इस समय उनकी वय पूरी थी और वह पूर्ण रूप से सुखी थीं। स्वर्गवास के समय उन्होंने २५ लाख होन और "कुछ लोगों के अनुसार अधिक" निजी सम्पत्ति छोड़ी। जब उनके प्रति शोक का समय समाप्त हो गया, शिवाजी दोबारा फिर २४ सितम्बर को सिंहासनारूढ़ हुए। (डच अभिलेख, शि० रा० कल्पतरु, शिवापुर यादी।)

७. शिवाजी का पुनः राजतिलक—शिवाजी के प्रसिद्ध प्रथम औपचारिक सिंहासनारूढ़ होने के पश्चात केवल तीन महीने बाद ही दूसरे राजतिलक का वर्णन संस्कृत पाण्डुलिपि शिव-राज-राज्याभिषेक-कल्पतरु में हाल में मिला है। इस पुस्तक में हमको ब्राह्मणों में भिक्षा-लोभ, लोलुपता और साम्प्रदायिक विषमता का वर्णन मिलता है। इसमें प्रसिद्ध तान्त्रिक पुरोहित निश्चलपुरी गोस्वामी ने गर्वपूर्वक वर्णन किया है कि राजा ने उसके प्रभाव में यह दूसरा संस्कार क्यों और किस प्रकार किया। कथा निम्न प्रकार है :—

शिवाजी के प्रथम राज्याभिषेक संस्कार के निर्देशक गागा भट्ट हिन्दू धर्म की वैदिक परम्परा के मानने वाले थे और उस सम्प्रदाय के ब्राह्मणों के आश्रयदाता थे, और निश्चल तान्त्रिक (बंगाली) मत के प्रतिपोषक थे, और ये एक-दूसरे से नितान्त भिन्न थे। अतएव प्रथम राजतिलक वैदिक रीति के अनुसार प्रतिपादित किया गया और संस्कार के अवसर पर केवल वैदिक ब्राह्मणों को ही राजा की प्रचुर उदारता से लाभ हुआ, परन्तु निश्चल द्वारा भेजे गये तान्त्रिक साधुओं को राजसी दान में भाग लेने का अवसर नहीं मिला और उन्हें बुरा-भला कहा गया।

गागा भट्ट (जैसा निश्चल ने कहा है) मूर्ख था; उसने ज्योतिष का हिसाब गलत लगा दिया और इस प्रकार राजतिलक एक दिन पहले ही कर दिया गया जब अशुभ ग्रहों का योग था। उसने राजा से केवल वैदिक देवताओं की पूजा करायी, और उन दुरात्मा तथा प्रेतों की एकदम उपेक्षा की गयी जिनकी तन्त्र में अर्चना की जाती है। इस प्रकार सम्पादित राजतिलक समाप्त तो हो गया, परन्तु अन्य चमत्कार दिखायी पड़ने लगे! अनेक अप्रत्याशित बातें हो गयीं (कुछ उससे पहले ही घटित हो गयीं!!!)—महारानी काशीबाई, राजमाता जीजाबाई, मुख्य सेनापति प्रतापराव सब थोड़े ही समय में चल बसे। उल्कापात भी हुआ। जैसे ही राजा ने राजतिलक-कक्ष छोड़ा लकड़ी का टुकड़ा गिरकर गागा भट्ट की नाक पर लगा—अवश्य ही इस उपेक्षा के लिए यह दैवी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कोप था कि गागा ने शिवाजी को यह विश्वास दिलाया कि निश्चल "आदर-सत्कार के योग्य न था"—और सबसे बड़ी बात यह थी कि राजा ने गागा को जो ७००० मुहरें भेंट की थीं उनमें से आधा भाग निश्चल को नहीं मिला था ! इस प्रिय प्रमुख पुरोहित के पाप का प्रभाव उसके सहायक बालम भट्ट पर पड़ा जिसके सिर पर बड़े कमरे में खम्भ का काष्ठ-कमल गिर पड़ा। तिलक के अवसर पर भी कई अपशकुन हुए—जैसे, जब शिवाजी सिंहासन की सीढ़ियों पर चढ़ रहे थे किसी अभागे मनुष्य ने दक्षिण-पश्चिम के कोने पर (जहाँ अग्नि-देवता निवास करते हैं) छींक दिया; बड़े युवराज के हार के दो मोती खो गये; शिवा के सामने पूजा के लिए रखी गयी तलवार मियान से निकल पड़ी; जब राजा ने संस्कार के रूप में एक तीर छोड़ा तो राज-मुद्रा उनके हाथ से गिर गयी; मन्त्री दत्ताजी धरती पर गिर पड़ा।

इन अपशकुनों से, जिनका कोई सांसारिक कारण नहीं बताया जा सकता था, शिवाजी और जनता दोनों ही परेशान हुए और भौंचक्के रह गये। तब निश्चल ने गागा से बदला लिया; उसने अपने एक शिष्य (मल्ला अर्थात दुष्ट नागा चेला) को राजा के पास भेजा और बताया कि इन अपशकुनों का मुख्य कारण यह है कि मूर्ख गागा भट्ट ने तन्त्र के देवताओं को पूजा और बलि[५] द्वारा शान्त नहीं किया, जैसे दस महाविद्या, पर्वतों में रहने वाली आत्माएँ, भूमि, द्वार-स्तम्भ, सिंहासन और क्षितिज के दस बिन्दु, और इन्हीं के प्रकोप के द्वारा विभिन्न प्रकार के उपद्रव हुए।

इस दैवी साक्ष्य से निर्बाध सिद्ध होता है कि वैदिक देवता अपने भक्तों को इतनी सुरक्षा नहीं दे सकते थे कि उन्हें तान्त्रिक दुष्ट आत्माएँ हानि न पहुँचा सकें और यह कि मांसाहारी साधु वैदिक मत के मानने वाले शाकाहारी पुरोहितों की अपेक्षा अधिक शक्तिवान थे ! शिवाजी एक बुद्धिमान राज-नीतिक पुरुष थे और उन्होंने इन दोनों दैवी शक्तियों को तृप्त करने की

---

५ यहाँ संस्कृत शब्द बलि का अर्थ दो प्रकार से हो सकता है, (१) सूखे अन्न का दान जैसे चावल, अथवा (२) बकरों या भैंसों की बलि जो तान्त्रिक पूजा का अभिन्न भाग है। दकन में यह अति प्राचीन रीति थी कि राजा के किसी किले में प्रवेश करने से पहले द्वार पर भैंसे की बलि दी जाती थी और उसके रक्त से हाथी के पैर पखारे जाते थे। बुसी की सेना के एक फ्रांसीसी अधिकारी ने ऐसा होते हुए सन १७५० में देखा जब सलाबत जंग ने अपने साथियों सहित गोलकुण्डा के किले में प्रवेश किया। (पेरिस पाण्डुलिपि जिसका अनुवाद मैंने 'इस्लामी संस्कृति'—Islamic Culture—में किया है।)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चेष्टा की,[६] क्योंकि यह कैसे निश्चय किया जा सकता है कि उस अज्ञात लोक पर वास्तव में कौन शासन करता है जहाँ से आज तक कोई यात्री वापस नहीं आया ? अतएव, शिवाजी निश्चल पुरी के 'पैरों पर गिर गये' और उनसे तान्त्रिक राज-तिलक करने की प्रार्थना की। यह कार्य २४ सितम्बर को सम्पन्न हुआ और प्रत्येक प्रकार की दुष्ट आत्माओं को भेंट देकर सन्तुष्ट किया गया। इसका स्वाभाविक उपप्रमेय भी हुआ; ब्राह्मणों ने राजा को एक बार फिर झकझोर दिया और उनसे खूब धन ऐंठा—परन्तु अब की बार तान्त्रिक और वैदिक साधु दोनों ही थे और वे उस कोलाहलपूर्ण भीड़ में परस्पर मिल गये और वह भीड़ उन ब्राह्मण याचकों के जमघट का पूर्वाभास देती थी जो बाद में श्रावण का दान प्राप्त करने के लिए प्रतिवर्ष पेशवाओं की पूना नगरी में इकट्ठे होते थे और अपने धृष्ट तथा उच्छृङ्खल चलन से नगर को आतंकित कर देते थे !

निश्चल पुरी ने एक और दुर्घटना का जिक्र किया है—वह यह थी कि प्रतापगढ़ के मन्दिर में आग लग गयी और इसके फलस्वरूप कई मूल्यवान घोड़े और हाथी जलकर मर गये। 'शिवापुर यादी' में लिखा है कि "२५, सितम्बर १६७५ को प्रतापगढ़ के मन्दिर पर बिजली गिरी"—अर्थात तान्त्रिक राजतिलक के ठीक एक वर्ष बाद। यदि यह समाचार ठीक है तो स्पष्ट है कि अनिष्टों को रोकने के लिए तान्त्रिक संस्कार उतने ही व्यर्थ रहे जितने वैदिक संस्कार, और निश्चल पुरी ने जो धन-राशि शिवाजी से ऐंठी और जिस बात पर उसे गर्व था, वे सब व्यर्थ रहीं।

८. **राजतिलक का व्यय**—राजतिलक का व्यय, उपहार और दान में दिये गये द्रव्यों को सम्मिलित करके, सभासद ने १ करोड़ और ४२ लाख होन की अविश्वसनीय राशि माना है। डच व्यापारी अब्राहम ले फेबर ने विंगुर्ला से केवल चार महीने के पश्चात ही लिखते हुए, जनसाधारण द्वारा की गयी चर्चा के अनुसार बताया है कि "इस संस्कार में और दान तथा उपहारों को देने में १,५०,००० पेगोडा[७] व्यय हुए।" उसका अभिप्राय स्पष्टतः उस द्रव्य से है जो ७ से १८ जून तक सामान्य दान देने में व्यय हुआ, और इसमें वे

---

६ कच्छ का जारेजा राजपूत राव "जब सार्वजनिक रूप से प्रकट होता है तो वह पारी-पारी से हिन्दू मन्दिर तथा मुस्लिम मस्जिद में ईश्वर की आराधना करता है।" (जे० बर्न कृत 'सिन्दे के दरबार में आगमन और कच्छ का इतिहास', १८३९, पृष्ठ १४)

७ पेगोडा लगभग आठ आने के मूल्य का चाँदी का सिक्का था।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

विशेष उपहार शामिल नहीं हैं जो मन्त्रियों व अन्य अधिकारियों, ब्राह्मणों और पुरोहितों को दिये गये। परन्तु इन सब खर्चों को शामिल करके और साथ ही सिंहासन और उस अवसर के लिए बनाये गये आभूषणों के मूल्य की तथा एकत्र मनुष्यों को भोजन कराने के खर्च को सम्मिलित करके पूरा व्यय दस लाख होन अर्थात पचास लाख रुपया से अधिक नहीं कूता जा सकता।

९. **बहादुरखाँ के शिविर की लूट और मुगलों से व्यापक झगड़ा**—राजतिलक के कारण शिवाजी का राजकोष खाली हो गया और उन्हें अपनी सेना को देने के लिए रुपये की आवश्यकता थी। इसलिए उनको तुरन्त ही लूटमार के लिए निकलना पड़ा। (कोठी अभिलेख सूरत, ८८, निकोल्स से सूरत के लिए, १४ अक्तूबर, १६७४)

उनका पहला अभियान बहादुरखाँ के विरुद्ध था। मई, १६७४ में ही मराठा दरबार में जिक्र था कि दिलेरखाँ को, जिससे वे बहुत भयभीत थे, सम्राट् ने वापस बुला लिया था, और अब दक्षिण में मुगल सेनाएँ केवल बहादुरखाँ के अधीन थीं जिससे वे घृणा करते थे और जिसके "घर पर वे वर्षा के बाद अकस्मात आक्रमण करने वाले थे।" आक्रमण अधिक शीघ्र कर दिया गया जबकि वर्षा ऋतु अपने पूरे जोर पर थी। जुलाई के मध्य में २००० मराठा तीव्रगामी रिसाले ने झूठा प्रदर्शन किया और बहादुरखाँ को पेदगाँव में स्थित उसके सैनिक पड़ाव से लगभग ५० मील दूर धोखे में ले गये, जबकि ७००० सेनानियों की दूसरी टुकड़ी उसके अरक्षित शिविर पर दूसरे मार्ग से चलकर टूट पड़ी, लूट में एक करोड़ रुपया और २०० बढ़िया घोड़े ले लिये जो सम्राट को पेश करने के लिए एकत्र किये गये थे। (कोठी अभिलेख सूरत, ८८, ऑक्सिनडन से सूरत २१ मई; खण्ड ८७, सूरत से बम्बई, १ अगस्त, १६७४)

बीजापुर से युद्ध की दशा जारी रही, यद्यपि इसकी प्रगति बहुत धीमी रही। उस राज्य का एक सेनापति—कदाचित रुस्तमेजमाँ द्वितीय, अपनी सेना सहित कोल्हापुर के निकट पड़ाव डाले रहा (जुलाई), और नीचे कोंकण में उतरने के लिए सदा तैयार रहा, इस उद्देश्य से कि मराठों से राजापुर छीन लिया जाय। अगस्त, सितम्बर और अक्तूबर में मराठे जत्थे उत्तर की ओर कोली प्रदेश में बिखरे पड़े रहे और उनसे सूरत के पत्तन को सदा ही आतंक रहा। परन्तु रामनगर के तीन-चार हजार भीलों का एक दल उस राज्य के जंगलों में तथा दर्रों में पड़ा रहा और मराठों का विरोध करता रहा, जिन्होंने रक्षित मार्ग प्राप्त करने के लिए एक लाख रुपये की घूस देने का व्यर्थ ही

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

प्रयास किया (अक्तूबर १६७४ का मध्य)।[८] कुछ समय बाद ही आतंकित मराठा सेना, उस क्षेत्र में अपने किलों में रसद पहुँचाने के पश्चात, औरंगाबाद में शिवाजी के पास पहुँच गयी, और सूरत ने फिर से मुक्ति की साँस ली। परन्तु उन्होंने दूसरे क्षेत्र में एक सरल शिकार प्राप्त कर लिया। अक्तूबर के अन्तिम दिनों में स्वयं शिवाजी की कमान में एक बड़ी सेना दक्षिण के पठार में बढ़ी, उसने बहादुरखाँ के शिविर को घेर लिया जो 'भयातुर' हो गया, औरंगाबाद के निकट कई नगरों को लूट लिया, और फिर बगलाना और खानदेश में घुस पड़े, जहाँ वे एक महीने से अधिक काल तक रहे (नवम्बर से मध्य दिसम्बर तक)। अन्य स्थानों के अतिरिक्त उन्होंने धरनगाँव (इरानदोल से १० मील उत्तर में) और उसकी अंग्रेजी कोठी को लूटा और जलाया। कुतुबुद्दीनखाँ खेशगी ने आक्रमणकारियों का बहादुरी से सामना किया, परन्तु उसकी छोटी-सी सेना नष्ट कर दी गयी जिसके तीन-चार सौ आदमी खेत रहे, और वह सुरक्षा के लिए औरंगाबाद को भाग गया। (कोठी अभिलेख सूरत ८७, सूरत से बम्बई, २८ अक्तूबर, १६६४; खण्ड १०७, बम्बई से सूरत २ नवम्बर, १६७४; दुंगोम से सूरत, १० दिसम्बर; मू० प० ४०६२)

सम्भवतः इस आक्रमण से वापसी के बाद ही शिवाजी ने जुन्नार के निकट डेरा डाला, परन्तु शिवनेर की दीवार से २२ फुट लम्बी तंग छेद की तोप के एक गोले से उनकी सेना का एक राजा मारा गया और फलतः मराठे तुरन्त वापस लौट गये।[९]

जनवरी, १६७५ के अन्त में दत्ताजी की कमान में मराठे रिसाले का ३००० का एक दल कोल्हापुर जिले में लूटमार के लिए चक्कर काटता रहा। कोल्हापुर नगर ने १५०० होन देकर पीछा छुड़ाया और शोनगाँव (कोल्हापुर के दक्षिण में ३० मील दूर, गार्गोटी के निकट) ने ५०० होन दिये। फरवरी के मध्य में एक मुगल सेना ने घाटों को पार किया, कल्याण नगर पर धावा बोल दिया, मकानों को जला दिया (इनमें बहुत-से खोजा लोगों के थे) और फिर शीघ्रतापूर्वक वापस लौट गये; इसके पश्चात मराठों ने पुनः उस स्थान पर अधिकार कर लिया। (कोठी अभिलेख सूरत ८८, राजापुर से सूरत, ६ फरवरी; खण्ड १०७, बम्बई से सूरत, २७ फरवरी, १६७५।)

---

८ कोठी के अभिलेख, ३, कन्सल्टेशन्स ६ अगस्त; खंड ८७, सूरत से बम्बई, ६ अगस्त और २२ अक्तूबर, १६७४ मूल पत्र-व्यवहार, ४०६२

९ फ्राइर (१. ३८८) के अनुसार यह घटना २२ मई, १६७५ से "लगभग चार महीने पहले" घटी थी, और गोला दो कोस दूर पहुँचा।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१०. शिवाजी का बहादुरखाँ से दिखावटी समझौता, १६७५—शिवाजी ने पुनः बहादुरखाँ से सुलह की भ्रमपूर्ण बातचीत की, जो शीघ्र ही धोखे में आ गया, क्योंकि वह युद्ध से परेशान था और वह किंकर्तव्यविमूढ़ हो रहा था कि ऐसे शीघ्रगामी और कपटी वैरी के विरुद्ध अपने अधीन क्षेत्र के सब भागों की कैसे रक्षा करे। लगभग तीन महीने (मार्च-मई) तक शिवा सुलह की झूठी आशाएँ दिलाकर मुगलों को धोखा देते रहे।[१०] उनका असली मंशा निम्न कार्यों के लिए मुगल आक्रमणों से थोड़ा विश्राम पाना था—अपने किलों को रसद पहुँचाना, बीजापुर के आक्रमण के लिए मुगलों से सन्धि करने की धमकी देकर आदिल से रुपया लेना, और फौंदा के घेरे की अवधि में अपनी उत्तरी सीमा की सुरक्षा करना।

यह प्रस्ताव किया गया कि शिवाजी अपने किलों में से १७ औरंगजेब को दे देंगे और अपने पुत्र शम्भूजी को सेना की टुकड़ी सहित मुगल सूबेदार की अधीनता में सेवा करने के हेतु भेज देंगे, और सम्राट शम्भूजी को ६००० घुड़सवारों की कमान प्रदान करेगा और शिवाजी को भीमा के दायें तट पर स्थित समस्त प्रदेश देगा। बातचीत को जानबूझकर बढ़ाया गया। शिवाजी ने "अपने लड़के को मुगल सेनापति के पास भेजने में टालमटोल की जब तक कि उसकी सुरक्षा का पूरा प्रबन्ध नहीं हो जाता था।" बहादुरखाँ ने शर्तें सम्राट को भेजीं, और उसने उनको स्वीकार करके एक फरमान भेजा तथा शिवाजी के पूर्व-अपराधों को क्षमा कर दिया। तब वाइसराय ने शिवाजी के पास फरमान लेने के लिए तथा किले सौंपने के लिए दूत भेजे। परन्तु इस समय (जुलाई, १६७५) तक फौंदा अधिकार में आ चुका था। अब शिवाजी अपने असली रूप में प्रकट हुए और मुगल दूतों को व्यंग्य करते हुए वापस भेज दिया, और कहा, "तुम मेरे ऊपर दबाव डालने में कहाँ तक सफल हुए हो जिससे मैं तुम्हारे साथ सुलह करूँ? यहाँ से तुरन्त भाग जाओ अन्यथा तुम अपमानित किये जाओगे।"

बहादुरखाँ इस प्रकार मात खाकर लज्जित हुआ और अपने मूर्खतापूर्ण विश्वास और राजनयिक हार पर पर्दा डालने की दृष्टि से कोई चमत्कारी

---

[१०] १६७५ में मुगलों के साथ सुलह के झूठे प्रस्ताव; कोठी अभिलेख, सूरत १०७, बम्बई से सूरत, २७ फरवरी, १६७५; मूल पत्र-व्यवहार, खण्ड ८८, सूरत से बम्बई, १५ जून और १७ जुलाई, जे० चाइल्ड के पत्र, ७ अगस्त; दिलकशा १३४-१३५; बसातिन-उस-सलातिन, ४१०-२, मसीरे-आलमगीरी, १४२ (७ जुलाई, १६७५)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सफलता दिखाना चाहता था; अतएव उसने बहुत जल्दी में शिवा के प्रति सम्मिलित युद्ध करने के लिए बीजापुरी वजीर खवासखाँ के साथ सन्धि की (अक्तूबर)। औरंगजेब ने इस विचार को पसन्द किया, और कहा जाता है कि उसने यह प्रस्ताव रखा कि बीजापुर शिवाजी पर दो तरफ से सम्मिलित आक्रमण करने के लिए उसके वाइसराय को पूर्ण सहयोग दे तो वह बीजापुर से एक वर्ष का कर न लेगा। परन्तु खवासखाँ के पतन तथा बहलोलखाँ द्वारा राजप के पद के छीने जाने के कारण (११ नवम्बर) यह योजना असफल हुई, और बहुत शीघ्र ही मुगल आदिलशाही दरबार की दलीय दलदल में फँस गये। (ब० स०, ४४५)

इस बीच में, जबकि सुलह के इन प्रस्तावों के कारण मुगल वाइसराय निष्क्रिय हो गया था और शिवाजी फौंदा के घेरे के लिए प्रस्थान कर रहे थे, उन्होंने कोल्हापुर ले लिया (मार्च), परन्तु रायबाग लेने में असमर्थ रहे। कुछ समय के पश्चात सेना की एक अन्य टुकड़ी पूर्व की ओर दूर तक चली गयी और उसने बीजापुर तथा गोलकुंडा राज्यों को लूटा, विशेषकर यादगिरि व हैदराबाद के निकट दो नगर, तथा "बहुत-सा धन अपने साथ लाये एवं कई धनी मनुष्य भी" जिनको निस्तार-धन पर ही छोड़ना था। इसी समय उनकी सेना ने पुर्तगाली राज्य-क्षेत्र में कुनकोलिम और वरोदा[११] को लूट लिया (अप्रैल का मध्य)। इस वर्ष के शेष आधे भाग में मराठों की अन्य क्रियाओं का वर्णन दक्षिण कोंकण तथा कनारा के अध्याय में किया जायगा।

११. **मुगलों के साथ युद्ध पुनः आरम्भ, बीजापुर से मेल**—नवम्बर में औरंगजेब द्वारा बहादुरखाँ की घोर निन्दा किये जाने पर उसने कल्याण को कूच किया, और शिवा को उत्तर कोंकण में बहुत दबाया। अगली जनवरी (१६७६) में एक मराठा दल औरंगाबाद के निकट जा धमका, परन्तु बहादुर ने हल्का सामान लेकर और बिना डेरों के पेदगाँव से तेजी से कूच किया, राजधानी से २८ मील दूर लासूर के निकट पर्यटकों को हराया, और उनको जुन्नार की जोर खदेड़ दिया। (मूल पत्र०, ४१३९; दिल० १४०)

इस समय शिवाजी सख्त बीमार पड़ गये और अगले तीन महीने सतारा में बीमार पड़े रहे। मार्च के अन्त में उनके पूर्णतः स्वस्थ होने की घोषणा की गयी, और इसके बाद वह पन्हाला चले गये। मराठों ने अप्रैल में बीजापुर के

---

[११] कोठी के अभिलेख सूरत ८८, राजापुर से सूरत, करवार से सूरत २२ अप्रैल, १६७५

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पश्चिम में ४३ मील दूर स्थित अठनी को लूटा। बीजापुर में दक्षिणी तथा अफगान दलों के बीच गृह-युद्ध हो जाने से शिवाजी ने लाभ उठाया। मई के आरम्भ में उन्होंने "४००० घुड़सवार भेजे, जो चारों ओर धावा बोलते थे और बिना किसी रुकावट या खतरे के लूट-मार मचाते रहे।" (कोठी अभिलेख सूरत, खण्ड ८९, राजापुर से सूरत ११ जनवरी और ९ मई, १६७६; मूल पत्र० ४२०२)

मई में उनके प्रधान मन्त्री मोरो त्रिम्बक ने रामनगर के राजा को उसके राज्य से मार भगाया और उसने सूरत से तीन दिन की कूच के भीतर पिंडोल[१२] और पैनिका पर अधिकार कर लिया। परन्तु मानसून को निकट आते हुए देखकर, उसने जिले की देखभाल के लिए ४००० आदमी छोड़ दिये और वह महीने के अन्त में शेष सेना सहित राजगढ़ को वापस चला गया। (कोठी अभिलेख, सूरत से बम्बई, २७ मई और १ जून, १६७६)

३१ मई को बहादुरखाँ ने बीजापुर के विरुद्ध एक जोरदार और लम्बा अभियान आरम्भ किया, जहाँ की सरकार में अफगान दलबन्दी ने जोर पकड़ लिया था। इस कार्रवाई ने नये राजप (अर्थात रीजेंट) बहलोलखाँ को शिवाजी से मेल करने को मजबूर किया, और जुलाई में गोलकुंडा के मन्त्री मादन्ना के माध्यम द्वारा दोनों में सुलह हो गयी। इस सन्धि की शर्तें निम्न थीं—आदिलशाही सरकार शिवाजी को मुगलों के आक्रमणों से रक्षा करने के हेतु तीन लाख रुपया अंशदान के रूप में देगी और प्रतिवर्ष उपदान के रूप में एक लाख होन देगी, और उनके राज्य पर उनका अधिकार मानेगी जिसके पूर्व में कृष्णा नदी थी और जिसमें कोल्हापुर जिला भी शामिल था। परन्तु यह मेल अल्पकालीन रहा, क्योंकि गृह-युद्ध से ग्रस्त और अधिकारियों के दैनिक परिवर्तनों से प्रभावित किसी राज्य में कोई नीति स्थायी नहीं रह सकती थी। शिवाजी ने इस सहायक मैत्री के विच्छेद होने की तनिक भी परवाह न की; उनका लक्ष्य कुछ और ही था; और अगली जनवरी (१६७७) में उन्होंने अपने जीवन का सबसे बड़ा अभियान हाथ में लिया—वह था पूर्व कर्नाटक पर आक्रमण। (ब० स० ४५०-४७०; कोठी अभि० सूरत ८९, राजापुर से सूरत, २४, जुलाई १६७६)

---

[१२] पिंडवल, सूरत के दक्षिण में, धर्मपुर राज्य में धर्मपुर से ११ मील दक्षिण-पूर्व में। पेनिका संभवतः पनवा है जो धर्मपुर से ९ मील उत्तर में, पिंडवल या पनाज से ५ मील पश्चिम में है। (इंडियन एटलस, २४ उत्तर-पूर्व)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust ,।Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय १०

दक्षिण कोंकण और कनारा

१. कनारा, उसके शासक और व्यापार।
२. राजापुर आदि पर प्रथम आक्रमण।
३. दक्षिण कोंकण की मराठा विजय, १६६३।
४. कनारा में शिवाजी १६६४—घोर-पड़ों का संहार।
५. बसरूर और कारवार की लूट।
६. दक्षिण कनारा में बीजापुरी संघर्ष, १६६५।
७. शिवाजी और रुस्तमे-जमाँ।
८. गोआ पर अधिकार करने का उनका षड्यन्त्र।
९. बीजापुरी कनारा में उनकी असफलता।
१०. कनारा में भीतरी परेशानियाँ।
११. फौंदा का पतन, १६७५।
१२. कनारा उच्चभूमि में मराठे।

१. **कनारा, उसके शासक और व्यापार**—सत्रहवीं शताब्दी में, कनारा अथवा हमारे पश्चिमी तट पर विस्तृत प्रदेश पर विभिन्न हिन्दू सरदारों का आधिपत्य था। उत्तरी कनारा (जो अब बम्बई राज्य में है) बीजापुर की अधीनता मानता था, और जिसका सीधा शासन कारवार (गोआ के दक्षिण) से मीरजान (१४°३०′ उत्तर अक्षांश) की तटीय पट्टी पर था, परन्तु इसके भीतरी जिलों पर सामन्तों का अधिकार था जिनमें सूँडा के नायक अति प्रसिद्ध थे। कनारा का वह भाग जो मीरजान के दक्षिण में स्थित था केल्दी वंश की बड़ी और स्वतन्त्र रियासत के रूप में था, जिसकी राजधानी उस समय बेदनूर में थी।

बीजापुर राज्य के दक्षिण-पश्चिम भाग का वाइसराय उस समय एक मुस्लिम अधिकारी था जिसका वंशानुगत पद रुस्तमे-जमाँ (पहले रनदौलाखाँ) था। उसका आधिपत्य रत्नगिरि नगर से पश्चिमी तट पर था और फिर वह दक्षिण की ओर गोआ से कारवार और मीरजान तक पुर्तगाली राज्य से मिला हुआ था, परन्तु दक्षिण की ओर इसमें रत्नगिरि जिले का दक्षिणी भाग, कोल्हापुर, बेलगाँव, धारवाड़ का थोड़ा-सा भाग और उत्तर कनारा जिले का पश्चिमी भाग सम्मिलित थे। उसकी राजधानी मीरज में थी। पन्हाला का किला उसकी अधीनता में ही था, परन्तु उसका प्रशासन एक कमानडेण्ट के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

द्वारा होता था जो सीधे सुल्तान के अधीन था। वाइसराय उत्तर में राजापुर और दक्षिण में कारवार के समृद्ध पत्तनों पर अपने अभिकर्ता द्वारा राज्य करता था; इन पत्तनों के द्वारा ही भीतरी धनी स्थानों से यूरोप का व्यापार होता था। इन दोनों नगरों में अंग्रेजों की कोठियाँ थीं।

"संसार भर में सर्वोत्तम काली मिर्च सूँडा में पैदा होती है कि जिसे इंगलैण्ड में कारवार मिर्च के नाम से पुकारते हैं, यद्यपि वह वहाँ पाँच दिन की यात्रा के बाद चलकर है।" (फ्रायर २. ४२)। वास्तव में चौल के पत्तन के पश्चात पश्चिमी तट पर कारवार ही बीजापुर का सबसे बड़ा पत्तन था। "पश्चिमी भारत की सबसे बढ़िया मलमल का निर्यात यहीं से होता था। बुनाई का प्रदेश सह्याद्रि के पूर्व में हुबली (धारवाड़ जिला) में था और इसके अन्य केन्द्र भी थे, जहाँ अंग्रेजी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के प्रतिनिधि थे और वे ५०,००० बुनकरों को काम में लगाये हुए थे।" (बम्बई गजेटियर, १५, भाग २, पृष्ठ १२३-१२५)

कारवार से २० मील दूर दक्षिण-पूर्व में मीरजान नामक पत्तन स्थित था जहाँ से सूरत के लिए काली मिर्च, शोरा और सुपाड़ी भेजे जाते थे। जरसाप्पा जिला, जिसे वेदनूर में सम्मिलित कर लिया गया था, अपनी काली मिर्च के लिए इतना प्रसिद्ध था कि पुर्तगाली उसे उसकी रानी कहते थे—"रानी मिर्च।" (वही, ३३३ और १२४)

१६४६ में इलायची और काली मिर्च का व्यापार मुख्य आकर्षण था जिसके प्रलोभन से अंग्रेज कम्पनी ने वहाँ कोठी खोली। १६६० में विंगुर्ला एक ओर बटेविया, जापान और लंका से आने वाले और दूसरी ओर फारस की खाड़ी व लाल सागर से आने वाले जहाजों के लिए मार्ग-पत्तन था। रत्नगिरि के सभी पत्तन छपा कपड़ा, रेशम, अन्न और मोटी लाख का भी व्यापार करते थे यद्यपि उनकी मुख्य निर्यात-वस्तु काली मिर्च (गोल मिर्च) थी "जो कनारा से निकलकर फारस, सूरत और यूरोप को समुद्र के मार्ग द्वारा भेजी जाती है, यह प्रदेश अपने समस्त पड़ोसियों के लिए बहुत बड़ा गोदाम है।" (बम्बई गजेटियर, १०. १७५)

२. **राजापुर पर शिवाजी का पहला आक्रमण, आदि**—अफजलखाँ की भीषण विफलता के पश्चात रुस्तमे-जमाँ शिवाजी के विरुद्ध ३००० का रिसाला लेकर चल पड़ा था (दिसम्बर, १६५६), परन्तु वैर का यह प्रदर्शन सम्राट के सामने केवल अपने सम्मान की रक्षा करना मात्र ही था। बेगम राजप, बड़ी साहिबा उसकी वैरी थी, अतएव उसने शिवाजी से अपनी आत्म-रक्षा के हेतु गुप्त मैत्री कर रखी थी। यह तथ्य सबको भली भाँति विदित था और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अंग्रेज व्यापारियों ने इसके सबूत भी प्राप्त कर लिये थे। परन्तु रुस्तम का उद्देश्य वास्तव में कुछ करने का होता तो भी वह अपनी छोटी सेना द्वारा कुछ कर भी न सकता था।

अफजल की सेना पर विजय प्राप्त करने के बाद शिवाजी ने पन्हाला के गढ़ पर अधिकार कर लिया (२८ नवम्बर)। तब वह रत्नगिरि जिले में घुस पड़े और उन्होंने "समस्त पत्तनों तथा भीतरी नगरों पर अधिकार करना आरम्भ कर दिया।" इन स्थानों के बीजापुरी गवर्नर राजापुर को भाग गये जिस पर पहले आक्रमण नहीं किया गया "क्योंकि यह रुस्तमे-जमाँ का है जो शिवाजी का मित्र है।" (राजापुर से सूरत, १० दिसम्बर १६५९, कोठी अभिलेख, राजापुर)

दाभोल के पतन के पश्चात उसका पराजित गवर्नर अफजल के तीन जहाज (जंक) लेकर राजापुर भाग गया, जो क्रमशः ४५०, ३५० व ३०० टन भार के थे। राजापुर के गवर्नर ने अपने स्वामी रुस्तमे-जमाँ की आज्ञा से जहाजों को ले लिया और उन पर लदे सामान को सुरक्षित रखने के लिए उतार लिया। इसके थोड़े ही दिन बाद शिवाजी ने रुस्तम और फज़लखाँ (अफजल का पुत्र) की सम्मिलित सेना को पन्हाला के निकट हरा दिया।[1] फजलखाँ ने, जिसको युद्ध का मुख्य भार उठाना पड़ा, अपने बहुत-से साथी खो दिये, परन्तु रुस्तम ने, जो केवल लड़ाई का दिखावा मात्र कर रहा था, बहुत कम हानि उठायी, पीछे हटकर वह हुक्री चला गया और वहाँ चुपचाप बैठ गया, और मराठे बराबर आदिलशाही राज्य में लूटपाट करते रहे। (राजापुर से बेसीन, ४ फरवरी १६६०, कोठी अभिलेख, राजापुर)

इस युद्ध के समाचार ने रुस्तम के राजापुर गवर्नर को बहुत आतंकित कर दिया और उसने भागकर अफजल के जहाज में शरण ले ली जिससे वह खुले समुद्र की ओर भाग सके। परन्तु उसके चलने से पूर्व ही नावों के पकड़ने के लिए एक मराठा सेना तट पर पहुँच गयी; किन्तु गवर्नर (लगभग १० जनवरी को) मराठा तोपों की मार से दूर निकल जाने में सफल हुआ; ऐसा वह अंग्रेजी व्यापारी हेनरी रैविंग्टन की सहायता से कर सका जो अपने निजी लाभ के लिए मराठों का विरोध कर रहा था, जैसा अध्याय १४ में बताया जायगा।

शिवाजी ने अपने मित्र के नगर राजापुर पर इस आक्रमण की निन्दा की

---

[1] जेधे शकावली के अनुसार इस संग्राम में मराठों ने २००० घोड़े और १२ हाथी पकड़े। शिवापुर यादी ने इस घटना की तारीख २४ दिसम्बर, १६५९ बतायी है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और उन्होंने सेनापति डोरोजी को बरखास्त कर दिया जो इसके लिए उत्तरदायी था, "नगर के निवासियों से उसके सैनिकों ने जो सामान लिया था उसे वापस करने की आज्ञा दी", और रुस्तमे-जमाँ के प्रतिनिधियों को नगर और पत्तन पर पुनः अधिकार कर लेने दिया। (राजापुर से सूरत, २० फरवरी)

डच रिपोर्ट के अनुसार इस समय शिवा अपनी सेनाओं को लेकर विंगुर्ला से केवल चार घंटे की कूच की दूरी पर थे, परन्तु उनको कुदाल के देसाई (अर्थात सावन्तवादी) ने भगा दिया, और दूसरी मराठा सेना जो बीजापुर के निकट पहुँच गयी थी उसे बीजापुर और गोलकुण्डा की सम्मिलित सेनाओं ने रक्तमय युद्ध में हराकर पीछे भगा दिया (१६६० के आरम्भ में)। (डच अभिलेख, अनुवाद, खण्ड २४, संख्या ६६४ और खण्ड २३, संख्या ६५१)

फरवरी-अप्रैल, १६६१ में रत्नगिरि जिले के मराठा आक्रमण का वर्णन अध्याय ४ परिच्छेद ५ में किया जा चुका है।

मार्च, १६६३ में रुस्तमे-जमाँ ने शिवाजी के प्रति एक और कृपा का काम किया। शिवाजी के 'उप-सेनापति' नेताजी पाल्कर ने शाही राज्य में लूट-मार मचा दी थी, परन्तु ७००० घुड़सवारों से एक बड़े मुगल रिसाले ने उसका पीछा इतने वेग से किया कि उसे ४० या ५० मील प्रति दिन चाल से पीछे हटना पड़ा। रुस्तम इस सेना से बीजापुर के निकट मिला और मुगल सेनापति को पीछा न करने को राजी कर लिया क्योंकि "वह देश किसी अपरिचित सेना के प्रवेश के लिए खतरनाक था, और यह भी वचन दिया कि वह स्वयं वहाँ जाकर उसका पीछा करेगा—इस छल के कारण नेताजी बच गया, परन्तु उसके ३०० घुड़सवार काम आये और वह स्वयं घायल हो गया।" इस पराजय के कारण शिवाजी को उत्तरी कनारा को लूटकर कारवार के समृद्ध पत्तन में घुसने की योजना को छोड़ना पड़ा। (कोठी अभिलेख सूरत, १०३; खण्ड २, ९ अक्तूबर)

१ मार्च, १६६३ को आदिलशाह द्वितीय अपने दरबार सहित राजधानी छोड़कर बाँकापुर चला गया।[२] वहाँ पहले तो अब्दुर्रहीम बहलोल की माँ ने

---

[२] कोठी अभि० खण्ड १०३ गाईफर्ड से सूरत, २० जुलाई, १६६३। उसने सूरत को अपने ३० मार्च के पत्र में लिखा है कि आदिलशाही दरबार मुगलों से डरकर वहाँ चला गया, जो नेताजी का पीछा करते हुए बीजापुर से मुश्किल से पन्द्रह मील दूर रह गये थे। परन्तु तारीखे-अली, २, १६०-१६४ (और ब० स० ३९१ में भी) लिखा है कि वेदनूर के राजा के विरुद्ध अभियान संचालन के लिए अली स्वयं बाँकापुर गया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

प्रवेश मना कर दिया, जिसकी जागीर में वह था। परन्तु राजा के लिए शीघ्र ही फाटक खोल दिया गया। आदिलशाह ने बहलोलखाँ शाहजी तथा अन्य अधिकारियों को कर्नाटक से बुलवा लिया, जो अति शीघ्रता से आये और वर्दा नदी (तुंगभद्रा की एक सहायक) के किनारे राजा की सेवा में उपस्थित हुए। बहलोल और शाहजी तुरन्त बन्दी बना लिये गये और उनको हथकड़ी डाल दी गयी (जून, १६६३ का अन्त), परन्तु शाहजी दो दिन बाद ही मुक्त कर दिया गया यद्यपि कुछ समय आगे तक उसको सेना की कमान नहीं मिली। कनारा का बीजापुरी आक्रमण इससे पूर्व शुरू हो गया था। (कोठी अभिलेख, सूरत १०३, गाईफर्ड से सूरत को, ८ अप्रैल और २० जुलाई, १६६३)

३. **मराठों द्वारा दक्षिण कोंकण की विजय, १६६३**—शिवाप्पा नायक[3] ने, जिसने वेदनूर पर ४२ वर्ष प्रशासन किया (१६१८-१६६०), पहले राजप के रूप में और फिर राजा के रूप में, अपनी विजयों से अपना राज्य चारों ओर बढ़ा लिया था, और पूरे दक्षिण कनारा पर, मैसूर के दक्षिण-पश्चिम भाग पर, गंगावती नदी तक उत्तरी कनारा पर (मीरजान के बन्दरगाह सहित) अपना प्रभुत्व जमा लिया था। अपने जीवन के अन्त में अपनी महत्त्वाकांक्षा के कारण वह बीजापुर के संघर्ष में आ गया। उसने सूंडा और आदिलशाह के जागीरदारों के अधीनस्थ कुछ अन्य किलों को जीत लिया था, और इस प्रकार बाँकापुर के अति निकट आ गया था—यह किला बीजापुर सुल्तानों के राज्य के दक्षिण-पश्चिम के कोने में उनका शरण-स्थान था। (बम्बई गजेटियर १५, भाग २, पृष्ठ १२२-१२३)

सूंडा के राजा ने बीजापुर से सहायता की याचना की और आदिलशाह ने

---

[3] बीजापुर के फारसी इतिहासों में उसको मालन्द का राजा कहा गया है जो कन्नड़ भाषा का शब्द है और जिसका अर्थ 'पहाड़ी देश' है। (मैसूर गजेटियर, २. २८६)। सूरत से कारवार पत्र दिनांक १८ अप्रैल, १६६४ के अनुसार भद्रप्पा 'अपने ब्राह्मणों द्वारा मार डाला गया'; पुर्तगाली वर्णन के अनुसार वह बीमार पड़ा (चेचक रोग से ग्रसित) और आदिलशाह से संधि करने के कुछ ही दिन पश्चात मर गया—ऐसा सन्देह किया जाता है कि उसे विष दिया गया (पिसुरलेंकर, १. १९ एन.)। इन राजाओं की सही उत्तराधिकार सूची निम्न है :—१६६० में शिवाप्पा के देहान्त के बाद उसका भाई वेंकटाप्पा सिंहासनारूढ़ हुआ, परन्तु उसकी मृत्यु १६६१ में हुई; तब आठ वर्ष के लड़के भद्राप्पा ने १६६३ तक राज्य किया और उसके बाद सोमशेखर सिंहासन पर बैठा (शासन १६६३-१६७१)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाप्पा की मृत्यु और उसके निर्बल पुत्र भद्राप्पा के सिंहासनारूढ़ होने से लाभ उठाकर स्वयं बहुत बड़ी सेना लेकर बेदनूर पर आक्रमण कर दिया।

अली आदिलशाह का अभियान यद्यपि अल्पकालीन था परन्तु शक्तिशाली था और बराबर सफल होता रहा। भद्राप्पा नायक समस्त बीजापुर राज्य के सम्मिलित साधनों के सामने न टिक सका; उसने सूँडा, बेदनूर और बहुत-से दूसरे किले खो दिये, और सूँडा को अपने पहले सरदार को वापस देकर तथा आदिलशाह को ७ लाख होन हरजाने के रूप में देने का वादा करके ही वह सुलह करने को मजबूर हुआ। २१ नवम्बर को विजयी अली द्वितीय अपनी राजधानी को लौटा। (ब० स० ३९१-३९५; कोठी-अभि० सूरत, १०३)

अब हम इस क्षेत्र में शिवाजी के कार्यों को देखेंगे। जब अली बेदनूर से संघर्ष में लगा हुआ था, शिवाजी दक्षिण कोंकण और कनारा जिले के उत्तर-पश्चिम भाग में सक्रिय थे। कोल्हापुर और कुदाल होते हुए उन्होंने विंगुर्ला को कूच किया (मई, १६६३); "जैसे वह आगे बढ़ता है समस्त स्थानों पर अपना कौल (सुरक्षा का वचन) देता जाता है और उनको वचन देता रहता है कि वह और उनके सैनिक कौल करने के पश्चात किसी को भी हानि न पहुँचायेंगे और उस वचन को उसने अब तक पूरा किया है।" (कोठी अभि० सूरत, खण्ड १०३ गाईफर्ड से सूरत, २४ मई, १६६३)

तट पर दक्षिण की ओर उनके जाने पर इतना आतंक फैला कि "सब मुसलमान गवर्नर भागकर सेंविवलिम और बाईकोलिम तक पहुँचे", और फलतः मार्ग में सब छोटे डाकू मामूली तौर से अधिक क्रियाशील हो गये। जून में शिवाजी विंगुर्ला से लौट आये और वहाँ पर २००० सैनिक छोड़ दिये। इससे थोड़े समय पूर्व ही शाइस्ताखाँ ने एक मराठा सेना को हरा दिया जिसमें २०० आदमी खेत रहे। (वही, गाईफर्ड से सूरत, २४ मई और २२ जून, १६६३. पिसूरलेंकर, ऐंटिग० १. १. १०७)

जुलाई में बीजापुर सरकार ने अपने फौंदा के गवर्नर को आज्ञा दी कि वह वादी के सावन्त तथा अन्य छोटे राजाओं से मिलकर राजापुर और खारेपत्तन से शिवाजी के आदमियों को भगाने की चेष्टा करे। परन्तु कुछ नहीं किया जा सका, क्योंकि उनमें आपस में खटपट हो गयी और उसके अधिकार में सब कुछ रहा आया। (कोठी अभि० सूरत १०३, २० जुलाई, १६६३, खण्ड ८६, सूरत से कम्पनी को, २० नवम्बर, १६६३)

शिवाजी के साथ रुस्तमे-जमाँ की गोपनीय मित्रता के कारण, सुल्तान ने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उसे वाइसराय के पद से हटा दिया और उस सूबे को मुहम्मद इखलासखाँ के सुपुर्द किया जो स्वर्गीय खाने-खानान इखलासखाँ का ज्येष्ठ पुत्र था और खवास का भाई था, परन्तु दाभोल और चिपलूण फज़लखाँ को दिये गये। शिवाजी ने इस समय ही राजापुर पर अन्तिम रूप से अधिकार प्राप्त किया और उसे स्थायी रूप से अपने ही हाथों में रखा। (वही)

कारवार में रुस्तम के आदमियों ने अंग्रेज व्यापारियों को इतना सताया कि जुलाई, १६६३ में सूरत की काउंसिल ने उनको आज्ञा दी कि वे वहाँ से हट जायँ और कम्पनी के सामान को चुपके से हुबली में हटा दें। व्यापारियों को इस प्रकार दुख देने से मालगुजारी में जो हानि होती थी उससे आदिलशाह और रुस्तमे-जमाँ दोनों ही अवगत थे, और इसलिए राजा ने एक फरमान भेजा जिससे द्वारा वादा किया कि कारवार में उनको शान्तिपूर्वक रहने दिया जायगा और उनको केवल वे ही कर देने पड़ेंगे जो वे पहले देते रहे हैं। इस आश्वासन पर कारवार में कोठी फिर स्थापित कर दी गयी। (कोठी अभि०, खण्ड २, कन्सल्टेशन्स, १४ अगस्त, १६६३)

४. **शिवाजी कनारा में, १६६४**—१६६४ में बेदनूर से युद्ध फिर आरम्भ हो गया। शिवाप्पा नायक वृद्ध होकर अक्तूबर, १६६० में मर गया था। उसके पुत्र और उत्तराधिकारी भद्राप्पा को उसके ब्राह्मणों ने मार डाला (१६६३) और शिशु सोमशेखर को अपनी माता चिन्नाम्माजी तथा उसके कृपापात्र तिम्मैया नायक की राजपता में सिंहासन पर बैठा दिया; तिम्मैया पहले ताड़ी बेचता था और "अपनी चालाकी की नीति से राज्य के सेनापति और संरक्षक के पद पर पहुँच गया।" इस क्रान्ति पर आदिलशाह द्वितीय इतना क्रोधित हुआ कि उसने अपने सेनापति बहलोलखाँ और सैयद इलियास शरजाखाँ को बेदनूर पर दो ओर से आक्रमण करने के लिए भेजा (अप्रैल, १६६४)। (कोठी अभि० सूरत १०४, कारवार से सूरत १८ अप्रैल, १६६४, फायर १. ४१-४२ पिसूर० १, १६ एन)

अब रुस्तमे-जमाँ दरबार में फिर वापस ले लिया गया था। मुहम्मद इखलासखाँ को कारवार और उसके प्रशासन से स्थानान्तरित कर दिया गया और उसके मित्रों को उत्तरी कनारा में आँकोला, शिवेश्वर (हालेकोट), कादरा तथा अन्य स्थानों के लिए बदल दिया गया और ये नगर रुस्तम के तीन पुत्रों को दे दिये गये। अगस्त में स्वयं रुस्तम को आज्ञा दी गयी कि वह उस प्रदेश में दो बीजापुरी सेनापतियों को लेकर जाय और शिवाजी को निकाल देने का प्रयत्न करे। वह अगस्त के अन्त में कुदाल पहुँचा, परन्तु वहाँ पहुँचकर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उसने कुछ नहीं किया। (कोठी अभि०, १०४, कारवार २३ जुलाई और हुबली २८ अगस्त, १६६४)

आदिलशाह द्वारा शिवाजी पर कोई गम्भीर आक्रमण अब सम्भव न था, क्योंकि सुल्तान का ध्यान अब बेदनूर पर लग रहा था, जिस पर वह दिवाली के पर्व (अक्तूबर) के पश्चात १२,००० घुड़सवारों को लेकर हमला करना चाहता था और कनारा के राजा को कुचलने के लिए शर्जाखाँ के साथ सहयोग करना चाहता था। १६६४ के पिछले अर्धभाग में तटीय प्रदेश बराबर दुर्भाग्यपूर्ण दशा में रहा आया। जैसा अंग्रेज सौदागरों ने लिखा है, "दकन और समस्त दक्षिणी तट सभी गृह-युद्ध में लिप्त हैं—राजा के विरुद्ध राजा और देश के विरुद्ध देश है और शिवाजी का शासन विजयपूर्ण और निरंकुश चल रहा है और वह आसपास के राजा-महाराजाओं के लिए आतंक है जिनकी शक्ति दिन-दिन बढ़ती जा रही है।" (कोठी अभि०, खण्ड ८६, सूरत से कम्पनी, २६ नवम्बर, १६६४)

शिवाजी ने निम्न योजना बनायी थी—अपनी सेना को पश्चिमी तट पर दक्षिण की ओर कूच करें, भटकल (उत्तरी कनारा जिले के दक्षिणी सिरे पर, १४° उत्तर) पर स्थित अपने जहाजी बेड़े पर सवार हो जायँ और तत्पश्चात तटीय नगरों को लूटें। परन्तु खवासखाँ ने उनके मार्ग में रुकावट डाली।

कुदाल के सरदार लखम सावन्त ने शिवाजी की अधीनता स्वीकार करके और उन्हें कुदाल देकर उनसे सन्धि कर ली। परन्तु फिर बीजापुरी सहायता माँगकर अपना खोया हुआ भाग वापस लेना चाहा। इसलिए आदिलशाह ने खवासखाँ को शिवाजी को निर्वासित करने के लिए उसे जिले में एक छोटी-सी सेना के साथ भेजा। उनमें पहली मुठभेड़ अक्तूबर, १६६४ में हुई। पहले तो असावधान खवासखाँ को मराठों ने घेर लिया, परन्तु उसने कप्तानों को एकत्र किया और उस निराशा के समय उनका साहस बढ़ाया। मराठों ने तोपें छोड़ीं; बीजापुरी निकट पहुँच गये और घोर संग्राम हुआ और उनके कई अधिकारी खेत रहे, जैसे सिद्दी सरवार (कोंकण का सूबेदार जिसका मुख्य नगर फौंदा था), शाह हजरत, शेख मीरान और कई अन्य ऊँचे अफसर। चार घंटे के संग्राम के पश्चात मुस्लिमों की हार सन्निकट मालूम होने लगी कि खवासखाँ स्वयं तलवार लेकर कूद पड़ा; उसकी सेनाएँ भी एक-दिल होकर निर्भयता से टूट पड़ीं; और वे नेताजी के रिसाले को चीरती चली गयीं, जिनमें से कुछ के पास कारबाइन (छोटी बन्दूकें) थीं। इस पर शिवाजी ने मैदान छोड़ दिया और उनके "४०० आदमी मारे गये तथा लगभग १०००-घायल हुए, किन्तु वैरियों

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के केवल इसके एक-चौथाई आदमी ही हताहत हुए।" (विंगुर्ला से डच पत्र; व० स०, ३९८-४०२. पिसूरलेंकर, ऐंटीगुलहास १. १. १०८-११६)

अफवाह तुरन्त फैल गयी कि यह युद्ध शिवाजी के लिए अभिशाप साबित हुआ और यह भी खबर फैला दी गयी कि शिवाजी का पीछा किया गया, उनको किले में बन्दी कर लिया गया और उनके छह हजार आदमी खेत रहे! यह समाचार सूरत के कोठी के पत्र दिनांक २६ नवम्बर में प्रकाशित हुआ, परन्तु उन्होंने ही २ जनवरी, १६६५ को इसका प्रतिवाद भी कर दिया। लखम सावन्त ने तुरन्त ही कुदाल वापस ले लिया और वहाँ खवासखाँ को ले आया।

परन्तु यह कदापि नहीं सोचना चाहिए कि इस संग्राम से शिवाजी की शक्ति नष्ट हो गयी। उन्होंने केवल युद्धनीतिक अपयान किया था जिससे कि वह पहले खवासखाँ की सेना को मजबूत करने के लिए जो कुमुक आ रही थी उसे बीच में ही रोक सकें और फिर जब खान इस धक्के से कमजोर हो जाय तो एकदम लौटकर उसे दबोच दें। उन्हें अपने एक पुराने दुश्मन से भी बदला लेना था। मुधोल का जागीरदार घोरपड़े बीजापुर का स्वामिभक्त सरदार था। जिंजी के घेरे के शिविर के अवसर पर उसने अपने मुख्य सेनापति की आज्ञा के अनुसार हठी शाहजी को बन्दी कर लिया था (१६४८) परन्तु, जैसा बाद को मराठा दन्तकथाओं में कहा गया है, उसने धोखा नहीं दिया। वह आदिलशाही सेनापतियों को पूर्ण सहयोग देता था जो शिवाजी द्वारा छीनी गयी कोंकण राज्य पर अपने राजा के आधिपत्य को पुनः स्थापित करने का उद्योग करते थे। उसकी ऊर्जा, ईमानदारी और अपने स्वामी के प्रति भक्ति ने शिवाजी के लिए उसे भयानक वैरी बना दिया था। जब खवासखाँ शिवाजी को निकालने के लिए कुदाल पर जा रहा था, घोरपड़े उसके सेनादल में १५०० घुड़सवार लेकर आ मिला। परन्तु शिवाजी ने पहले आक्रमण कर दिया और दोनों वैरियों को मिलने से रोक दिया। उसने अकस्मात मुधोल पर आक्रमण कर दिया। बाजी घोरपड़े जो अपनी जागीर की सुरक्षा के लिए गया था, हार गया और मारा गया और उसके १२०० घुड़सवार पकड़े गये। मुधोल पर अधिकार कर लिया गया और घोरपड़े परिवार के इतने लोग मारे गये कि इस घटना को "घोरपड़ों का संहार"[४] कहते हैं (अक्तूबर का अन्त)।

---

४ सभा० ६८; जेधे शकावली। सामान्य जनश्रुति (९१ क० ब०, खण्ड ६६-६९) के अनुसार शिवाजी ने यह हत्याकांड अपने पिता के आदेशानुसार किया था कि यदि तुम मेरे सच्चे पुत्र हो तो बाजी घोरपड़े ने जो दगाबाजी शाहजी के साथ १६४८ में की थी उसका बदला लेना। घोरपड़ों

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

क्या मुधोल को शिवाजी ने लूटा ? कुदाल से, जहाँ शिवाजी ने खवासखाँ के प्रथम संग्राम को समाप्त कर दिया, मुधोल तक की दूरी सीधी रेखा में ११० मील है और मार्ग में दो पहाड़ी दर्रे हैं। कूच के अन्त में युद्धक्षमता कम किये विना शिवाजी के रिसाले को इस दूरी को तय करने में छह दिन लग जाते और छह दिन अतिरिक्त लौटने में लगते। सभासद (पृष्ठ ६८) से स्पष्ट है कि बाजी घोरपड़े के १५०० घुड़सवार सैन्य-दल के कटाव के लिए घाट के नीचे कोंकण में, कुदाल से दो दिन की कूच करनी पड़ी होगी। इसलिए शिवाजी ने स्वयं मुधोल नगर को नहीं लूटा। जब बाजी घोरपड़े ने, जो अब बूढ़ा था और जिसकी सेना शिवाजी की सेना का केवल दशमांश थी, कोंकण के युद्ध में पराजित हुआ, शिवाजी के एक भाग ने मुधोल के अरक्षित और विना स्वामी के नगर को लूटा और उन समस्त घोरपड़ों को मार डाला जो अब भी वहाँ थे।

जब शिवाजी, घोरपड़ों पर इस विजय के हर्षोल्लास में, निकट आये तो लखन सावन्त ने खवास को कुदाल से भाग जाने के लिए सलाह दी, क्योंकि अब उसकी सेना शिवाजी की सेना की अपेक्षा बहुत कम थी। खान बाँदा को लौट गया और वापसी में अपनी सेना को मोर्चों पर लगाता गया। बीजापुरी सेना के छिन्न-भिन्न होने का समाचार पाते ही २६ अक्तूबर को (पुराने गणन के अनुसार) शिवाजी ने चुने हुए घुड़सवारों सहित खवास पर अचानक हमला करने के लिए नेताजी को बाँदा भेजा। परन्तु खान अब हमले का मुकाबला नहीं कर सकता था; वह अपने सिपाहियों को लेकर तावड़तोड़ उच्च भूमि (बालाघाट) में चन्द्रगढ़ को लौट गया। तब शिवाजी, आजकल सावन्तवादी पुकारे जाने वाले जिले में (रत्नगिरि और गोआ के मध्य) एकदम घुस पड़े जिसके अनेक छोटे सरदार बीजापुर के सामन्त थे। इनमें सबसे बड़ा कुदाल का 'देसाई' (सरदार) लखन सावन्त था जिसने इन क्षेत्रों में शिवाजी के विरुद्ध बीजापुरी सेनापतियों का साथ दिया था और अब शिवाजी के क्रोध का पहला शिकार था। थोड़े काल तक शिवाजी का मुकाबला करने के पश्चात वह केवल अपने प्राण बचाकर जंगल में भाग गया और सारी दौलत को विजेता के लिए पीछे छोड़ गया। परनेम के केशव नायक और केशव प्रभू तथा

का पतन और लखन सावन्त की पराजय (जो उसके तुरन्त बाद ही हुई) नवम्बर, १६६४ में शाहजी की मृत्यु के लगभग एक वर्ष पश्चात हुई; ये घटनाएँ १६६३ में नहीं हुईं। (पिसूरलेंकर, ऐंटीगुल्हास, १. १. ११३ डच पत्र)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बिचोलिम[५] के रावल शेवली की वही गति हुई। इन सब हारे हुए देसाइयों ने गोआ में शरण ली और वहाँ गरीबी में दिन काटे तथा उन्होंने सेना इकट्ठी करके और शिवाजी के गवर्नरों के विरुद्ध पुर्तगाली राज्य से अभियानों की योजना करके अपने खोये हुए भागों को फिर से प्राप्त करने का प्रयत्न किया। कृष्ण सावन्त, जो देसाई के पद के लिए लाखम का प्रतिद्वन्द्वी था यद्यपि उसी की जाति का था, स्वभावतः शिवाजी से जा मिला जिन्होंने उसको कुदाल का अधिकारी बना दिया।

शिवाजी ने विंगुर्ला को लूटा जो "बड़ा व्यापारिक स्थान था और जहाँ से उन्हें बहुत धन प्राप्त हुआ।" उन्होंने सुन रखा था कि इस महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह की कोठी में उन लोगों ने बहुत धन इकट्ठा कर लिया था। उसके निकट ही एक अन्य नगर (कदाचित मालवन) की भी वही दशा हुई। इसी समय, अर्थात दिसम्बर, १६६४ के आरम्भ में, उनके आदमियों ने हुबली और उस

---

५ १६६४ में इस क्षेत्र का भूगोल निम्न था :—रत्नगिरि जिले के दक्षिण-पश्चिम में मालवन से तारीखोल तक तंग तटीय पेटी को छोड़कर उसके पूर्व का भीतरी भाग कुदाल (पूर्व), वादी (मध्य) और वाँदा (दक्षिण) जिलों में बँटा हुआ था। बाँदा के दक्षिण-पश्चिम में परनेम था और पिछले के दक्षिण में क्रमशः बार्डे और गोआ थे, और फौंदा गोआ के ठीक पूर्व में था। बार्डे ओर गोआ के उत्तर-पूर्व में बिचोलिम था और उसके आगे पूर्व में सेंक्विलिम था। इनमें से केवल बार्डे, गोआ और सालसिट (अथवा गोआ के ६६ समुद्री गाँव, जो बम्बई टापू के सालसिट से भिन्न था) सत्रहवीं शताब्दी में पुर्तगालियों के अधिकार में थे, जबकि परनेम, बिचोलिम और सेंक्विलिम बाद को जीते गये। लाखन सावन्त के विरुद्ध कृष्ण सावन्त के षड्यन्त्रों और लगातार बीजापुरी सेनापतियों को उनके द्वारा दी गयी निष्ठापूर्ण सहायता के लिए, देखिए पिंगुलकर फर्मान ८-१२; सभा० ६८

भगोड़े देसाइयों के आचार के विरुद्ध शिवाजी ने बारबार गोआ सरकार से शिकायत की, और बदला लेने के लिए बार्डे की पुर्तगाली बस्ती पर भी आक्रमण किया। अन्त में वाइसराय ने मई, १६६८ में देसाइयों को गोआ से निर्वासित कर दिया। (पिसूरलेंकर, १. १२-२५; ऐंटिग० १.१.११६ व अग्रेतर)। तब लाखन सावन्त ने शिवाजी की अधीनता स्वीकार कर ली और कहा कि वह भी उसी भोंसले जाति में था। शिवाजी ने उसे कुदाल में वेतन देकर अपना अभिकर्ता बनाकर नियुक्त किया और यह अनुबन्ध किया कि वह न सेना रखेगा और न किले बनायेगा वरन शिवाजी की अधीनता में रहेगा। (सभा० ६८; पिंगूलकर, फर्मान ७, तारीख अशुद्ध)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

क्षेत्र के अनेक धनी नगरों को लूट लिया और कई प्रमुख व्यापारियों को निस्तार के रूप में रख छोड़ा। उन्होंने हुबली को केवल ३०० घुड़सवार ही भेजे थे, परन्तु इन्होंने ही अपना काम इतनी खूबी से किया कि नगर "लगभग नष्ट कर दिया गया।" आक्रमण के समय जो व्यापारी भाग गये थे वे इतने भयभीत हो गये कि मराठों के लौट जाने के बाद भी वे शीघ्र वापस न आये। कहा जाता है कि आक्रमणकारियों को रुस्तम के कुछ सैनिकों ने मदद दी; जैसा कि अंग्रेजों ने कहा, उस सरदार ने भी "लूट का मजा चखना शुरू कर दिया जिससे कि थोड़े काल में ही उसे भी इसकी आदत पड़ जाय।" "शिवा और उनके सैनिक सारे देश पर घूमते रहते हैं और जहाँ कहीं वह पहुँचते हैं आग और तलवार से हाहाकार मचा देते हैं।" (कोठी अभि० सूरत १०४, कारवार से सूरत ६ जनवरी १६६५, टेलर से सूरत को, १४ दिसम्बर, १६६४; खण्ड ८६ सूरत से कारवार को, २३ मार्च, सूरत से कम्पनी को, २ जनवरी १६६५)

१२ मार्च, १६६५ को सूरत काउंसिल ने लिखा था—"आदिलशाह की पूरी प्रजा शिवाजी की लूट-मार के विरुद्ध आवाज ऊँची कर रही है कि वह उसके देश को विना विरोध के जलाते और लूटते रहते हैं जिससे कि यह परिणाम निकालते हैं कि उसका भी उसकी लूटमार में साझा है; इस प्रकार पूरा देश ऐसी अव्यवस्थित दशा में है कि व्यापारी अपनी रक्षा के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान के लिए पलायन करते रहते हैं जिससे समस्त व्यापार नष्ट हो गया है·····सूरत की लूट के बाद शिवाजी ने अनेक कुख्यात और बड़ी लूटें की हैं और दकन (अर्थात बीजापुर) के अनेक प्रसिद्ध पत्तनों पर अधिकार कर लिया है जिनकी गणना ८ या ९ है जिनमें से हर एक पत्तन से फारस, बसरा, मोखा आदि के लिए प्रतिवर्ष २ या ३ या अधिक व्यापारी पोत भेजते हैं।"

५. बसरूर की लूट और कारवार से घूस, १६६५—८ फरवरी, १६६५ को शिवाजी ८५ फ्रिगेट (छोटा पालदार लड़ाकू पोत) और तीन बड़े पोतों के बेड़े सहित मालवन से गोआ होते हुए बसरूर[६] पर जा धमके जो बेदनूर राज्य का मुख्य पत्तन है, जहाँ उनकी बिलकुल ही आशा न थी; इससे उन्होंने एक दिन में ही बहुत-सा लूट का माल लिया। फिर वापसी में वह तट पर कारवार

---

६ बसरूर (संस्कृत वासपुरा) कुंडापुर से १२ मील दक्षिण कनारा जिले में, बेदनूर राजाओं का प्रमुख पत्तन था।" (द० कनारा गजेटियर, २. २४२। पुर्तगाली वर्तनी Bracolore, पूर्व अंग्रेजी Barcelore, हण्टर द्वारा Barkalur, मराठी बासनूर।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

से २२ मील दक्षिण में गोकर्ण के पवित्र नगर पर उतरे और महाबलेश्वर के बड़े मन्दिर के समक्ष धार्मिक क्रियाओं सहित स्नान किया। इस स्थान से वह ४००० पैदल सेना सहित अकोला चले (नौ मील उत्तर में) और १२ फ्रिगेटों को छोड़कर शेष बेड़े को वापस भेज दिया जो उन्होंने इसलिए रोक लिया कि उत्तरी कोंकण के मार्ग में वह अपनी सेना को उनके द्वारा नदियों के पार भेज सकें। २२ तारीख को वह कारवार पहुँचा। अंग्रेज व्यापारियों को अपने गुप्तचरों द्वारा उनके आगमन का समाचार शीघ्र मिल गया और उन्होंने कम्पनी का समस्त नगद रुपया व परिवहनीय सामान मसकत के इमाम के छोटे १०० टन वाले जहाज में भेज दिया जो उस समय नदी में पड़ा था और उसके कप्तान इमेनुअल डोनेवेडो ने यह वचन दिया कि जब तक वह जीवित रहेगा अथवा उसका पोत तैरता रहेगा वह उसकी रक्षा करेगा। स्वयं व्यापारियों ने जहाज में शरण ली। शेरखाँ,[७] जो मृत खाने-खानान खान मुहम्मद का लड़का था और जो बहलोलखाँ का अधीनस्थ था, नगर में उसी रात को आया था और उसे शिवाजी के प्रत्याशित आगमन का बिलकुल पता न था। अपने ५०० अनुरक्षियों की सहायता से उसने यथासम्भव शीघ्र अपनी और अपने साथ लाये हुए सामान की रक्षा की, और शिवाजी के पास एक सन्देशवाहक भेजा कि वह नगर में घुसने का साहस न करें क्योंकि वह भरसक उसकी रक्षा करेगा। शेरखाँ अपनी वीरता और प्रशासन की योग्यता के लिए सारे प्रदेश में प्रसिद्ध था और उसके प्रमुख सरदार बहलोलखाँ की गणना "बीजापुर राज्य के अति वीर मनुष्यों में थी।" अतएव शिवाजी ने उसे भड़काने का साहस नहीं किया और वह बहुत वादविवाद के पश्चात "मार्ग से कुछ दूर हटकर चले जाने को राजी हो गये" और नगर को छोड़ते हुए काला-नदी के "मुहाने पर सेना का शिविर डाला।"

इस स्थान से उन्होंने शेरखाँ को एक दूत भेजा और उससे कहला भेजा कि वह या तो अंग्रेज व्यापारियों को उनको सौंप दे अथवा स्वयं हट जाय और उनसे बदला ले लेने दे "जिनको उन्होंने अपना जानी दुश्मन बताया।" शेरखाँ ने यह समाचार अंग्रेजों को भेजा और उनसे अन्तिम उत्तर माँगा जो उन्होंने इस प्रकार दिया कि उनके पास सिवाय बारूद और गोलियों के कुछ नहीं है जो शिवाजी ले जा सकते हैं यदि वह यह समझें कि ये सोने के बदले उनके काम

---

७ कारवार में उनके आने का कारण था रुस्तमे-जमाँ के लिए एक जहाज तय करना जो बहलोलखाँ की माँ को मक्का ले जाय।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

में आ सकती हैं। "इस उत्तर से शिवाजी इतने नाराज हुए कि उन्होंने कहा कि वहाँ से जाने से पहले ही वह उनकी खबर ले लेंगे; यह सुनकर नगर के गवर्नर ने समस्त व्यापारियों को इस बात पर राजी कर लिया कि उन्हें (शिवाजी को) एक पुरस्कार भेजा जाय जिससे कि वह अपने बेड़े को वापस न बुलायें जो सालसिट के इस ओर ही लंगर डाले हुआ था।" इस घूस में अंग्रेजों ने ११२ पाउण्ड दिये जिससे कि कारवार में कम्पनी के ८००० होन के माल की सुरक्षा हो सके। "इसे लेकर शिवाजी २३ फरवरी को अनिच्छापूर्वक लौट गया और यह कहा कि शेरखाँ ने होली के अवसर पर इस लूटमार को न होने दिया, क्योंकि यही अवसर था जिस पर वह प्रायः ऐसी योजना को चुना करता था।"[८]

वहाँ से निराश मराठा सरदार उत्तर की ओर अपने घर वापस चले गये, और वह भीमगढ़ (कारवार से २५ मील उत्तर-पश्चिम) १४ मार्च को पहुँचे। परन्तु इसके शीघ्र पश्चात ही जयसिंह के पुरन्दर के घेरे तथा निकटवर्ती प्रदेश पर जोरदार आक्रमण ने शिवाजी को अपने देश की रक्षा के लिए वापस होने को मजबूर किया, और कुछ समय तक कनारा में शान्ति रही।

६. **बीजापुरियों ने दक्षिणी कोंकण पर अधिकार किया और खो दिया, १६६५**—पुरन्दर की संधि (१२ जून, १६६५) से मुगलों ने शिवाजी को आदिलशाही कोंकण को जीतने के लिए मुक्त कर दिया। इस समय बीजापुर के मामले भी अस्तव्यस्त हो गये। बहलोलखाँ मर गया (जून या जुलाई)। राजा के आदेश पर वह कर्नाकट युद्ध से बीजापुर आया था जहाँ आने के आठ दिन बाद ही बीमार होकर वह मर गया। सुल्तान उसकी विशाल सेना, १०,००० बहादुर अफगान, से ईर्ष्या करता था और उसने उसके बेटों और भतीजों में फूट डालने का प्रयत्न किया। शेरखाँ ने, जो एक वीर, योग्य और ईमानदार मनुष्य था, उनको शान्त करने की चेष्टा की, परन्तु शीघ्र ही उसे विष दे दिया गया। ऐसा सन्देह किया जाता था कि यह आदिलशाह ने किया, और

---

८ शिवाजी की बसरूर की लूट और कारवार : कोठी-अभि० सूरत, खण्ड १०४, कारवार से सूरत, १४ मार्च, १६६५-सभा० ७०-७१. कारवार के व्यापारियों ने २८ जनवरी को लिखा कि महान वार्षिक स्नान-पर्व (शिवरात्रि) गोकर्ण में केवल ८० दिन पश्चात ही होने वाला है। ४ फरवरी कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी थी। शिवाजी इस पर्व में सम्मिलित न हो सके। उन्होंने बसरूर (मालवन) अभियान के लिए ८ फरवरी को जहाज लिया (शिवपुर यादी) और बसरूर से लौटने के पश्चात ही उन्होंने गोकर्ण में स्नान किया। (कोठी अभि० सूरत, १०४)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तुरन्त ही बहलोलखाँ के दो बड़े लड़कों में परिवार के प्रमुख बनने के लिए बहुत बड़ा झगड़ा उत्पन्न हो गया, जबकि सुल्तान के उनकी कुछ जागीरें छीन लीं। बीजापुर के शाही शराबी के मामले बद से बदतर होते गये। (कोठी अभि० सूरत १०४, कारवार से सूरत, २९ अगस्त १६६५; 'शिवाजी का घराना' अध्याय ५)

हुबली के बीजापुरी गवर्नर के प्रति दरबार में नाराजगी रहने लगी और मीरजान के गवर्नर ने बगावत की। खवासखाँ के भाई मुहम्मद इखलासखाँ ने दाभोल और दक्षिण कोंकण के अनेक स्थान मराठों से वापस छीन लिये जबकि वे जयसिंह से लड़ने में व्यस्त थे। परन्तु अगले नवम्बर तक शिवाजी ने, जिनकी अब मुगलों से मैत्री हो गयी थी, मुहम्मद इखलास के २००० सेनानियों के मार डालने के बाद उस समस्त प्रदेश पर फिर अधिकार कर लिया, जिनमें कई प्रसिद्ध मनुष्य भी थे। खान कुदाल को वापस चला गया और वहाँ अधिक सेना पाने के लिए शर्जाखाँ की बाट जोहने लगा। परन्तु सहायता न मिली, क्योंकि उसी महीने में जयसिंह ने बीजापुर पर आक्रमण कर दिया और इखलासखाँ को राजधानी की सुरक्षा के लिए कुदाल से तुरन्त वापस आना पड़ा। परन्तु विंगुर्ला और कुदाल बीजापुरियों के हाथ में ही रहे, और राजापुर व खारेपत्तन पर शिवाजी का अधिकार रहा। शिवाजी की गढ़-सेना के सैनिक कारवार के प्रदेश पर निरन्तर लूटमार करते रहे, जो २०० आदमियों के समूहों में अपने किलों से चलकर छोटे नगरों में लूटपाट करते रहे। मुर्तजाबेग भी, जिसका किला छिन गया था, अपने २०० सेवकों द्वारा लूटपाट करता रहा। (कोठी अभि०, २९ अगस्त, २१ सितम्बर और २९ नवम्बर, १६६५ तथा १५ जनवरी, १६६६)

७. शिवाजी और रुस्तम, १६६६—बीजापुर के प्रति जयसिंह द्वारा युद्ध के समय शिवाजी पन्हाला के विरुद्ध लड़ रहे थे। उस किले पर उनका आक्रमण विफल रहा (१६ जनवरी, १६६६) और तब वह खेलना चले गये। इस स्थान से उन्होंने एक मुसलमान अधिकारी के अधीन २००० आदमी फौंदा का घेरा डालने के लिए रवाना किये।[९] गढ़ की सेना ने दो महीने (फरवरी, मार्च)

---

९ फौंदा का पहला घेरा : कोठी अभि० सूरत १०४, 'दकन-न्यूज', जो कारवार से दिनांक २४ अप्रैल १६६६ के पत्र के पश्चात। फौंदा १० मील गोआ नगर के दक्षिण-दक्षिणपूर्व, गोआ के निकटतम बीजापुर की पश्चिमतम सीमा-गढ़ था, और उससे गोआ के लिए खतरा था। कुछ पूर्व असफलताओं के पश्चात पुर्तगालियों ने उसे अठारहवीं शताब्दी में राज्य में शामिल कर लिया। पिसूरलेंकर, ऐंटिग० १.१. ११८

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तक मुकाबला किया जिसमें ५०० मराठे मारे गये और अन्त में वे छः घण्टे में आत्मसमर्पण के लिए तैयार हो गये। इसी समय में बीजापुरी सरकार ने ५००० घुड़सवार और १००० पैदल सेना पन्हाला क्षेत्र के लिए भेजी जिसके अधिपति सिद्दी मसूद, अब्दुल अजीज (सिद्दी जौहर का बेटा) और रुस्तमे-जमाँ थे। उन्होंने शिवाजी को अकस्मात घेरने के लिए एक योजना बनायी जो इस समय कोंकण के सामने वाली पहाड़ी पर थे। परन्तु जब रुस्तम के अधीनस्थ उनका अग्रभाग निकट आया तो उसने ढोल पिटवा दिये और तुरही बजवा दी, तथा इस प्रकार शिवाजी को भाग जाने से लिए चेतावनी दे दी। परन्तु मसूद ने ६०० चुने हुए घुड़सवारों से पीछा किया और वैरी के २०० आदमी मार डाले। वापसी में उसने शिवाजी के रुस्तम के लिए मैत्री-पूर्ण पत्र प्राप्त कर लिये और उनको तुरन्त बीजापुर भेज दिया। इस पर आदिलशाह ने रुस्तम को लिखा कि यद्यपि वह इस गैर-फर्मावरदारी के कार्य को अनिच्छा से क्षमा करता है, किन्तु यदि वह फौंदा का घेरा न डालेगा तो वह बरखास्त कर दिया जायगा। तब रुस्तम ने अपने प्रतिनिधि मुहम्मदखाँ को लिखा कि हर प्रकार से फौंदा की रक्षा की जाय। ऐसा एक कूटयुक्ति द्वारा ही किया गया। मुहम्मदखाँ केवल एक छोटी-सी सेना ही एकत्र कर सका। इसे लेकर वह आगे बढ़ा और फौंदा से तीन मील दूर अपने स्वामी के इलाके में ही एक नगर में रुक गया, और शिवाजी के सेनाध्यक्ष से कहला भेजा कि वह केवल अपने प्रदेश की देखभाल के लिए आया है। सेनाध्यक्ष को इसमें कोई चाल न दिखायी दी, क्योंकि उसका स्वामी और रुस्तम दोनों मित्र थे। वह अपने मुस्लिम सैनिकों सहित एक मील दूर एक पहाड़ी पर सार्वजनिक रूप से नमाज पढ़ने गया। मुहम्मदखाँ ने इस अवसर से लाभ उठाया; वह घेरे के शिविर से बचे हुए सैनिकों पर अचानक टूट पड़ा और उनको मार डाला, और एक लम्बी तथा घमासान लड़ाई के पश्चात शेष मराठा सेना को पराजित कर दिया जो पहाड़ी से जल्दी से आ गयी थी। इस प्रकार फौंदा का घेरा समाप्त हो गया; इससे पूर्व तीन दिन तक घिरे हुए आदमियों ने पेड़ों की पत्तियाँ खायी थीं। "यह विश्वास किया जाता है कि इस कार्रवाई से रुस्तमे-जमाँ और शिवाजी की पुरानी मैत्री समाप्त हो गयी। रुस्तम ने अब शिवाजी से फौंदा, कुदाल, बाँदा, सेंक्विलिम और बिचोलिम नामक पाँच प्रसिद्ध नगर ले लिये थे।" इस प्रकार हम देखते हैं कि कोंकण के धुर दक्षिण और गोआ के निकटस्थ कनारा पर शिवाजी का अधिकार अल्पकालीन ही रहा। उन्होंने प्रत्येक जिले को लूटा जहाँ वे स्वयं पहुँचे, परन्तु जब उनकी सेनाएँ अन्य स्थानों

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पर बड़ी संख्या में उलझ जाती थीं अथवा जब वह महाराष्ट्र से बहुत दूर पहुँच जाते थे, तब हटाये गये स्थानीय सरदार (जैसे कि गोआ में शरण पाने वाले देसाई) और बीजापुरी अधिकारी दल-बल के साथ पुनः आ जाते थे और अपने खोये हुए भागों पर फिर अधिकार कर लेते थे। यह डाँवाडोल व उलट-फेर वर्षों तक रही आयी और केवल उनकी मृत्यु के पूर्व ही समाप्त हुई।

८. **गोआ लेने का षड्यन्त्र, १६६८**—इसके बाद शीघ्र ही शिवाजी ५ मार्च, १६६६ को मुगल दरबार के लिए चल दिये। अगले चार वर्ष तक उन्होंने बीजापुरी कोंकण अथवा कनारा में कोई कार्रवाई नहीं की; इस अवधि में उनके विरोधी पुर्तगाली और सिद्दी लोग थे। कारवार के अंग्रेज व्यापारी १६६८ और १६६९ में शिवाजी के विषय में बारबार कहते हैं कि वह "बहुत खामोश" है और "राजगढ़ में ही चुपचाप रहता है" और उसका मान इन निष्क्रिय वर्षों में घटता जा रहा है, परन्तु "आसपास का देश बिलकुल शान्त था।" अक्तूबर १६६८ में शिवाजी ने कूटयुक्ति द्वारा गोआ के राज्य-क्षेत्र पर अधिकार करने का प्रयत्न किया। इस राज्य में उन्होंने अलग-अलग समय पर और विभिन्न रूपों में अपने ४००-५०० सैनिक छोटे-छोटे समूहों में चोरी-छिपे भेज दिये और यह योजना बनायी कि जब इनकी संख्या दूनी हो जायगी तो वे एक रात को एकदम उपद्रव मचा देंगे, एक दर्रे पर अधिकार कर लेंगे और पूर्व इसके कि पुर्तगाली अपनी प्रतिरक्षा के लिए बड़ी सेना एकत्र करें, वह वहाँ पहुँच जायेंगे। परन्तु या तो षड्यन्त्र का पता लग गया, या पुर्तगाली वाइसराय[१०] को सन्देह हो गया। उसने अपने राज्य-क्षेत्र के समस्त नगरों की गम्भीर तलाशी ली और विभिन्न स्थानों पर शिवाजी के ४०० या ५०० आदमियों को बन्दी कर लिया और उनसे वास्तविकता मालूम कर ली। तब उसने शिवाजी के राजदूत को बुलावा भेजा और उसकी कनपटी पर अपने हाथ से ही दो-तीन चाँटे रसीद किये, और उसे तथा मराठा कैदियों को अपने राज्य के बाहर निकाल दिया। यह समाचार पाकर शिवाजी ने १०,००० पैदल और १००० घुड़सवार की सेना तैयार की, और स्वयं गोआ के बार्डे तथा सालसिट जिलों पर आक्रमण करने के लिए तैयार हुए। राजापुर के उत्तर से उन्होंने विंगुर्ला के लिए कूच किया, उस क्षेत्र में सब किलों का निरीक्षण किया,

---

१० वाइसराय का नाम कोंड डि एस० विसेंट था जिसकी मृत्यु २७ अक्तूबर १६६८ को हुई और गाइफर्ड के पत्र के अनुसार उसको षड्यन्त्र का पता "मृत्यु के कुछ दिन पहले ही लगा।" पिसूरलेंकर, *Port. e Mar.* १.२७ ऐंटीग० १. १. १३२

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

"अपने आदमियों को बदला और (नयी) खाद्य-सामग्री व सामान तथा गोला-बारूद रखे," और जब दिसम्बर में राजगढ़ पहुँचे तो उन्हें मालूम हुआ कि "पुर्तगाली उनका डटकर सामना करने को तैयार हैं।" (गाइफर्ड से सूरत, १२ नवम्बर और १६ दिसम्बर, १६६८, कोठी अभि० सूरत १०५)

१६७० के आरम्भ में उनका मुगलों से बिगाड़ शुरू हुआ जिससे वह अन्य क्षेत्रों में व्यस्त रहे और जिससे कनारा में १६७२ के अन्त तक शान्ति रही; अब अली द्वितीय के देहान्त से लाभ उठाकर उन्होंने बीजापुर राज्य-क्षेत्र में लूट-पाट आरम्भ कर दी।

इस बीच में, सितम्बर १६७१ में, रुतस्मे-जमाँ ने अपने स्वामी के विरुद्ध बगावत शुरू कर दी। अन्त में शिवाजी से कपटपूर्ण मैत्री करने के कारण उसको वाइसराय के पद और जागीर से हाथ धोना पड़ा, और इसका सबसे बड़ा प्रतिफल यह हुआ कि राजा का एक किला मराठों के हाथ में चला गया। अब उसने सरकार को उसे फिर से पदारूढ़ करने के हेतु हथियार सँभाले। शिवाजी की भीतरी सहायता से उसने बीजापुर राज्य के एक भाग पर अधिकार कर लिया जिससे तीन लाख होन की वार्षिक आय होती थी। और रायबाग को लूटा और जला दिया, और इस प्रकार उस नगर को बिलकुल नष्ट कर दिया, जिसे पहले मराठों ने लूटा था। परन्तु एक महीने के भीतर ही शाही सेना ने विद्रोह को दबा दिया—केवल मीरजान और आँकोला के किले कई महीने तक अधीन नहीं हुए। १६७२ के मध्य में कनारा तट के नये आदिल-शाही वाइसराय मुजफ्फरखाँ ने शिवेश्वर और कद्रा के विद्रोही सरदारों (नायकवाड़ियों) से संधि कर ली।[११]

९. **बीजापुरी कनारा में शिवाजी की असफलता, १६७३**—आदिलशाह द्वितीय की मृत्यु (२४ नवम्बर, १६७२) के बाद ही सूँडा और वेदनूर के राजाओं ने विद्रोह किया, जिन्होंने सीमा को पार करके बीजापुर राज्य पर आक्रमण कर दिया। मुजफ्फरखाँ के अधीनस्थ एक सेना ने दोनों को दण्ड दिया (फरवरी, १६७३) और उसके राजा से सूँडा को छीन लिया। (कोठी अभि० सूरत, १०६, कारवार से कम्पनी, १७ फरवरी १६७३)

यह विद्रोह पूरा दब भी नहीं पाया था कि मराठों ने बीजापुरी कनारा की उच्चभूमि पर पुनः दूसरा धावा कर दिया और उस क्षेत्र में अनेक किलों और

---

[११] कोठी अभि० सूरत १०६, कारवार से सूरत, २० सितम्बर, ३१ अक्तूबर १६७१, २६ जून १६७२

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

धनी नगरों को लूट लिया। उनके सेनापति प्रतापराव ने हुबली[१२] को लूटा जो उस क्षेत्र की सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मण्डी थी; इससे केवल कम्पनी को ही ७,८९४ होन की क्षति उठानी पड़ी, और इसके अतिरिक्त उसके व्यापारियों की निजी सम्पत्ति की भी हानि हुई (मई का आरम्भ, १६७३)। वे सबसे पहले कम्पनी की कोठी में घुसे और वहाँ सब धरती को खोद डाला, और उसमें से तमाम बढ़िया ऊनी कपड़ा अपने सेनाध्यक्ष के पास ले गये जो बाजार में बैठा था। किन्तु मुजफ्फरखाँ शीघ्र ही ४००० घुड़सवार लेकर आ गया और नगर को बिलकुल नष्ट होने से बचा लिया। मराठे एकदम लूट के सामान को लेकर भाग गये, "और उन्होंने उस सामान को सड़कों पर छोड़ दिया जिसे वे न ले जा सके।" जब सूरत के अंग्रेजों ने इस लूट की शिकायत शिवाजी से की तो उन्होंने उत्तर दिया कि यह कार्रवाई उनके सैनिकों की न थी।

हुबली में मराठा आक्रमणकारियों के लौटने के ठीक एक दिन बाद मुजफ्फर पहुँचा। रुस्तमे-जमाँ की भाँति उस पर भी यह सन्देह किया गया कि उसने उनसे गुप्त रूप से मेल कर लिया है, क्योंकि इसके तुरन्त बाद ही उसकी कमान में समस्त सरदार और उसके स्वयं के सैनिक उसे छोड़ गये और बीजापुर सरकार ने उसे वाइसराय के पद से हटा दिया। इसके फलस्वरूप वह विद्रोह कर बैठा और उसने अपनी समस्त जागीरों पर बलपूर्वक अधिकार जारी रखने का यत्न किया। बेलगाँव का बड़ा किला उसके हाथ में रहा और गोआ और कनारा के बीच के कई शक्तिशाली स्थान भी (जून, १६७३)। आदिलशाह ने एक बड़ी सेना बेलगाँव पर आक्रमण करने के लिए भेजी, यदि मुजफ्फर समझौते के लिए राजी न हो।

जून में बहलोलखाँ ने एक बड़ी बीजापुरी सेना की सहायता से कोल्हापुर पर अधिकार कर लिया और मराठों को कई मुठभेड़ों में हराया, और इस प्रकार उनके अनेक पर्यटक दलों को कारवार छोड़ने पर विवश होना पड़ा।

---

१२ हुबली का व्यापारिक महत्त्व अंग्रेज व्यापारियों के निम्न कथन से मालूम होता है—हुबली हमारी कारवार कोठी की मण्डी है जहाँ हम अपना बहुत-सा माल खरीदते और बेचते हैं जो वहाँ उपलब्ध होता है। (कोठी अभि० सूरत ८७, १ नवम्बर १६७३) "हुबली एक बड़ा भीतरी नगर और बहुत बड़े व्यापार की मण्डी।" (मूल-पत्र व्यवहार, ३७७९) कनारा का मराठा आक्रमण १६७३ में; कोठी अभि० सूरत ३, कन्सल्टेशन्स २४ मई, १० और ९ जुलाई, खण्ड ८७, सूरत से फारस, १ नवम्बर। मूल पत्र-व्यवहार ३७७९ और ३८०० । सभासद ६९ में १६७३-७५ की घटनाओं के लिए केवल ८ पंक्तियाँ लिखी गयी हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वह अगले जाड़ों में दक्षिण कोंकण पर आक्रमण करने और बीजापुर तथा अन्य नगरों को मुक्त करने के लिए सोच रहा था। अगस्त में उसके विषय में कहा गया है, "शिवाजी पर दबाव डालते हुए जो सुलह की याचना करते हैं और अपनी स्वयं की दशा से बहुत असन्तुष्ट हैं।" परन्तु शीघ्र ही उसका कट्टर वैरी बहलोलखाँ मीरज पर टूट पड़ा और बीजापुर व गोलकुण्डा सरकारों ने बहादुरखाँ के सेनापतित्व में मुगल-आक्रमण से रक्षा करने के लिए शिवाजी की सहायता माँगी (सितम्बर)।[13]

सितम्बर के अन्त में शिवाजी ने एक बड़ी सेना तैयार की जिसका उद्देश्य था "मुगलों के विरुद्ध कोई विशेष प्रयास।" उन्होंने २०,००० सूती थैले भी तैयार कराये जिनमें भरकर वह प्रत्याशित लूट के माल को ला सके। परन्तु दशहरा के दिन (१० अक्तूबर), जो हिन्दुओं में अभियानों के लिए शुभ दिन माना जाता है, वह बीजापुर राज्य में २५,००० आदमी लेकर एक लम्बे अभियान के लिए घुस गये, अनेक धनी नगरों को लूटा जिनमें बाँकापुर भी था और तब कनारा में प्रवेश किया जिससे "अपनी सेना के व्यय के लिए उन बड़े नगरों से अधिक लूट का माल ले सकें।" दिसम्बर के आरम्भ में वह कद्रा (कारवार से २० मील उत्तर-पूर्व) पहुँचे और उनके साथ ४००० पैदल और २००० घुड़सवार थे, और वहाँ चार दिन तक रुके। उनकी सेना के अधिकांश भाग ने हुबली के निकट एक पहाड़ी पर अधिकार कर लिया। परन्तु बहलोल और शर्जाखाँ द्वारा क्रमशः बाँकापुर और चन्दगढ़ (बेलगाँव और सावन्तवादी नगरों के मध्य में एक किला) पर बुरी तरह पराजित होने पर वह शीघ्र ही कनारा छोड़ देने को बाध्य हो गये।[14]

१०. कनारा में भीतरी संकट, १६७४—यद्यपि कनारा मराठों से मुक्त हो गया, परन्तु इस सूबे में शान्ति न थी। कारवार के फौजदार मियाँ साहिब ने (कहा जाता है कि शिवाजी के उकसाने पर) विद्रोह किया और आदिलशाह को उसे दबाने के लिए लम्बा युद्ध ठानना पड़ा। दोनों पक्षों में भिड़न्त होती

---

[13] मूल पत्र-व्यवहार, ३८०० तथा ३८३२; कोठी अभि० सूरत १०६, बम्बई से सूरत १६ और २९ सितम्बर १६७३; ब० स० ४३९-४४३; जेधे श०।

[14] कोठी अभि० सूरत १०६, बम्बई से सूरत २९ सितम्बर और १० अक्तूबर, खण्ड ८८ कारवार से सूरत, १७ दिसम्बर, १६७३। मूल पत्र-व्यवहार; फ्रायर २, डच अभि०, खण्ड ३१, संख्या ८०५; जेधे श० में लिखा है कि कार्तिक के महीने में अर्थात लगभग नवम्बर में शर्जाखाँ ने विट्ठोजी सिन्धिया को मार डाला।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रही जिनमें कभी एक पक्ष की और कभी दूसरे पक्ष की विजय हुई। फरवरी, १६७४ में शाही सेनाओं ने सूँडा पर अधिकार कर लिया और उसी में विद्रोही की वेगम थी, परन्तु अन्य किलों पर उसने अपना अधिकार दृढ़तापूर्वक जमाये रखा। किन्तु २२ अप्रैल तक नये वाइसराय, आबूखाँ, रुस्तमे-जमाँ द्वितीय, के आने पर "यह लम्बा और उबा देने वाला विद्रोह" समाप्त हो गया। वेतन न मिलने के कारण मियाँ साहिब के अनुगामी उसे छोड़कर भाग गये; उसके किले (कद्रा, कारवार, अंकोला और शिवेश्वर) सब बिना विरोध किये हुए अधीन हो गये, और उसने अपनी स्त्री के मुक्त किये जाने की शर्त पर सुलह कर ली। शिवाजी इस समय कारवार से केवल एक दिन कूच की दूरी पर थे और वह "किसी बहुत ऊँची पहाड़ी पर एक गढ़ बनाने वाले थे जहाँ से वह इन भागों को खूब परेशान कर सकें।" (कोठी अभि० सूरत ८८, कारवार से सूरत, १४ फरवरी और २२ अप्रैल, १६७४ ओर्म, खण्ड ३५)

अपने पिता के विपरीत इस नये रुस्तमे-जमाँ ने मराठों से मित्रता नहीं की। अगस्त १६७४ में उसने एक धनी व्यापारी को पकड़ लिया जो शिवा की प्रजा था और जो नर्सा (फौंदा से १६ मील दूर) में रहता था, और मराठा राजा प्रतिशोध के लिए तैयार हो गया। अक्तूबर में नये वजीर खवासखाँ ने रुस्तम को बीजापुर बुला लिया; और चूँकि उसे आशंका थी कि यह पद दूसरे आदमी को दे दिया जायगा, उसने जाने से पहले यथासम्भव कारवार और उसके निकटस्थ सभी धनी लोगों से बलात कर्जा लिया। अगस्त के अन्तिम सप्ताह में अन्नाजी दत्तो ३००० सैनिकों को लेकर कुदाल में होकर गुजरा; उसका उद्देश्य था "फौंदा के किले पर आक्रमण करना", "परन्तु पण्डित को खाली हाथ लौटना पड़ा क्योंकि वहाँ ममेतखाँ ने युद्ध की पूरी तैयारी कर लीं थी।" (कोठी अभि० सूरत ८८; डच अभि० खण्ड ३४, सं० ८४१)

बीजापुर में प्रत्येक बात अव्यवस्थित थी—"बड़े खान आपस में बहुत मतभेद रखते थे।" राज्य में अफगान दलबन्दी के कारण निकम्मा वजीर खवासखाँ बहुत ही परेशान था। राजधानी की यात्रा के पश्चात रुस्तमे-जमाँ द्वितीय से उसका वाइसराय का पद छीन लिया गया। इस अवसर से शिवाजी ने लाभ उठाया और उन्होंने अब कनारा को सदा के लिए जीत लिया। पहले तो उन्होंने मुगल वाइसराय बहादुरखाँ को मूर्ख बनाया—उन्होंने सुलह का एक झूठा सन्देश भेजा जिसमें खान की मध्यस्थता द्वारा मुगल सरकार से क्षमा-याचना की गयी थी और यह वचन दिया गया था कि वे शाही किले जो उन्होंने हाल में जीत लिये थे और साथ ही वे तेईस किले जो उनके निजी थे

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और जिनको उन्होंने जयसिंह के समय में देना स्वीकार कर लिया था, उन सब को वह दे देंगे। इन कुटिल वार्ताओं के कारण शिवाजी इस समय मुगलों द्वारा अपने राज्य पर आक्रमण से बच गये और बीजापुरी कनारा पर होकर चढ़ाई कर दी।

११. फौंदा पर अधिकार और कनारा तट का राज्य में मिलाया जाना, १६७५—मार्च, १६७५ में उन्होंने एक सेना एकत्र की जिसमें १५,००० घुड़-सवार, १४,००० पैदल और १०,००० अग्रसेना थी जिस पर कुदालियाँ, गदाले और कुल्हाड़ियाँ आदि थीं।[१५] राजापुर पहुँचकर (२२ मार्च) उन्होंने वहाँ तीन दिन व्यतीत किये, और चालीस छोटे जहाज विगुर्ला को शीघ्र भेजे तथा उनको आज्ञा दी कि वे वहाँ नवीन आदेशों की बाट देखें। इसके बाद वह अपने नगर कुदाल को चल पड़े और ८ अप्रैल को फोंदा का घेरा डाला जो गोआ के निकट सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण बीजापुरी किला था। जब वह घेरा डाले हुए थे उनकी सेना की एक टुकड़ी ने आदिलशाही राज्य में अटगिरि को तथा हैदराबाद के निकट दो अन्य बड़े नगरों को लूटा और अपने साथ "बहुत-सा धन, और निस्तार-धन के हेतु अनेक धनी मनुष्यों" को ले गये।

उन्होंने फौंदा का घेरा २००० घुड़सवार और ७००० पैदल सेना से डाला, और किले के सामने आने वाली वर्षा ऋतु में भी जमे रहने का प्रबन्ध कर लिया जिससे गढ़-सेना भूख से तंग आकर अधीनता स्वीकार करने के लिए विवश हो जाय। किले में मुहम्मदखाँ के पास केवल चार महीने के लिए सामग्री थी; बीजापुर से सहायता की कोई आशा न थी और न पुर्तगालियों से जो गोआ की सुरक्षा के लिए भयभीत थे और जिन्होंने तटस्थ होने का वचन देकर शिवाजी को शान्त किया। रुस्तमे-जमाँ के पास न धन था और न जन जिससे वह घेरे से मुक्ति दिला सके। किन्तु मुहम्मदखाँ ने किसी की सहायता के बिना और बहुत बड़ी सेना के समक्ष बड़ी वीरता से किले की रक्षा की।

शिवाजी ने किले की दीवारों के नीचे चार स्थानों पर सुरंगें डालने की कोशिश की, परन्तु उन सबको नष्ट कर दिया गया, जिससे उनके बहुत-से आदमी काम आये। तब उन्होंने किले से केवल १२ फुट की दूरी पर मिट्टी

---

[१५] कनारा पर आक्रमण और फौंदा का पतन (१६७५) : कोठी अभि० सूरत ८८, कारवार से सूरत, १४ और २२ अप्रैल, ८ और २५ मई; राजापुर से सूरत १ और २० अप्रैल; ३, २१ और ३१ मई; ३ और १४ जून; ब० स० ४४१; ओर्म खण्ड-लेख, ३८,४०; सभा० ७० (न्यून)। मुगलों को झूठा शान्ति-सन्देश, ब० स० ४४५; मूल पत्र-व्यवहार ४०७७

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

की एक दीवार खड़ी कर दी और उनके सैनिक उसके पीछे सुरक्षित रहे आये। पुर्तगालियों ने इस डर से कि यदि फौंदा का पतन हो जाता है तो उनका गोआ भी नष्ट होने के बराबर है, दस नावों के बराबर सामग्री और आदमी भेजे जो घिरे हुओं की सहायता कर सकें (अप्रैल का मध्य); परन्तु शिवाजी ने इस सब सामान को रास्ते में ही रोक लिया, और गोआ के वाइसराय ने कहा कि इस कार्य में उसका हाथ बिलकुल नहीं है।

घेरा जोर-शोर से जारी रहा। मई के आरम्भ तक शिवाजी ने सुरक्षा के दो बाहरी स्थानों पर अधिकार कर लिया, खाई को भर दिया, ५०० सीढ़ियाँ तथा ५०० सोने के हार बनवाये—इनमें प्रत्येक हार तोल में आध सेर था जो उन लोगों को देने के लिए था जो किले की दीवार को तोड़ने या उस पर चढ़ने की हिम्मत करें।

बहलोलखाँ, जो १५,००० सेना सहित मीरज में था, घाटों से उतरकर फौंदा की सहायता करना चाहता था, परन्तु शिवाजी ने पेड़ काटकर और उन स्थानों पर अपने सैनिक नियत करके मार्ग को रोक रखा था, और बहलोल यह सोचकर कि यदि वह उनसे लड़ेगा तो उसकी भारी हानि होगी अथवा हार खाकर लौटना पड़ेगा, अपने अड्डे पर वापस आ गया। घेरे के अवसर पर उसकी निष्क्रियता का कारण शिवाजी द्वारा उसे घूस देना बताया जाता था। अन्त में लगभग ६ मई को किले का पतन हो गया। उसमें जितने आदमी पाये गये सब तलवार के घाट उतार दिये गये, केवल मुहम्मदखाँ और उसके साथ चार-पाँच आदमी बच गये, जिसने यह वादा किया कि वह बीजापुर के अधिकृत समस्त निकटवर्ती भागों को शिवाजी को सौंप देगा। मृत्यु के भय से खान ने उन किलेदारों को आज्ञा दी कि वे उन्हें मराठों को समर्पित कर दें, परन्तु पहले तो उन्होंने ऐसा करने से मना कर दिया। इसलिए खान को हथकड़ी-बेड़ी पहना दी गयीं। अंकोला के फौजदार इनायतखाँ ने मुहम्मदखाँ के पूर्व-अधिकृत समस्त प्रदेश और किलों को ले लिया और उनमें अपने आदमी नियुक्त कर दिये, परन्तु वह शिवाजी के विरुद्ध न टिक सका जिनकी सेना अब फौंदा के पतन के बाद मुक्त हो गयी थी। अतएव उसने अब समझौता कर लिया और धन लेकर किले छोड़ दिये। कुछ दिनों में अंकोला (जिसका घेरा २४ अप्रैल से ३००० मराठा घुड़सवार और कुछ पैदल सैनिकों ने डाल रखा था), कारवार और कद्रा (केवल जिसने ही कुछ समय तक मुकाबला किया था) सबने शिवाजी को आत्मसमर्पण कर दिया, और २५ मई तक दक्षिण में गंगावती नदी तक का देश बीजापुरी अधिकार से उसके हाथ में चला गया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१२. कनारा उच्च भूमि में मराठे—२६ अप्रैल, १६७५ को शिवाजी का एक सेनाध्यक्ष कारवार को गया और उसने "नगर में व्यापक रूप से आग लगा दी जिससे एक भी मकान सुरक्षित न रहा"—यह कारवार के किले द्वारा अपनी रक्षा अब भी करने की सजा थी। अंग्रेजी कोठी को कोई हानि नहीं पहुँचायी गयी। किन्तु यह सेनाध्यक्ष कुछ दिनों में वापस चला गया। परन्तु फोंदा के पतन के पश्चात अगले महीने में ही कारवार ने मराठों को आत्म-समर्पण कर दिया।

वर्षा ऋतु के आरम्भ हो जाने के कारण अभियान समाप्त कर दिया गया। वहलोलखाँ बीजापुर वापस चला गया और अपनी सेना को मीरज में छोड़ गया। शिवाजी ने पहले तो सूँडा की सीमा पर एक किले में वर्षा ऋतु के अन्त तक अपनी सेना को रखने के लिए विचार किया, परन्तु शीघ्र ही उन्होंने अपना विचार बदल दिया और १२ जून को राजापुर होते हुए रायगढ़ को वापस चले गये।

मई के अन्त में सूँडा के राजा के देश में एक मराठा सेना भेज दी गयी। "अधिक विरोध न मिलने के कारण उन्होंने राजा के अधीनस्थ सूपा और उलवी पर अधिकार कर लिया।" परन्तु खिज्रखाँ पनी (वहलोल का उप-सेनापति) और देसाइयों ने मिलकर वहाँ मराठों की गढ़-सेना पर आक्रमण कर दिया, ३०० आदमी मार डाले और दोनों स्थानों को वापस ले लिया। मराठों का एक दल अब लौटने को विवश हो गया, जो अंकोला के दक्षिण में ७ मील दूर वारहुल्ली में नियुक्त था जिससे कि वह वहाँ से गुजरने वाले सब सामान पर कर वसूल कर सके (अगस्त, १६७५)। (कोठी अभि० सूरत ८८, राजापुर से सूरत, २७ अगस्त, १६७५)

वेदनूर की राजमाता का अपने सहयोगी तिम्मैया से झगड़ा हो गया था परन्तु उसे उसके साथ सन्धि करनी पड़ी (अगस्त); झगड़े का कारण यह था कि वह केवल शून्य थी और राज्य में सारी शक्ति उसके सहयोगी के हाथ में केन्द्रित थी। इस पर रानी ने शिवाजी से रक्षा की याचना की, उसे वार्षिक कर देना स्वीकार किया और अपने दरबार में एक मराठा रेजीडेंट रखना स्वीकार कर लिया। (कोठी अभि० सूरत ८८; ९१ क० ब०, खण्ड ६५)

दलवी या देसाई के सेनाध्यक्ष ने, जो उत्तरी कनारा का स्थानीय बीजापुरी गवर्नर रह चुका था, उस जिले की विजय में शिवाजी की सहायता की थी। परन्तु अब (१६७५) उससे असन्तुष्ट होकर दलवी भी एक सेना लेकर प्रदेश में घूमता रहा और यह कहने लगा कि वह प्रदेश के पूर्व स्वामी को

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उसे जीत कर दे देगा। उसने कारवार नगर में शिवाजी के पहरेदारों पर आक्रमण किया और उनको गढ़ में शरण लेने के लिए मजबूर किया। शिवाजी के नये विजित भागों में लोग अत्यन्त कष्ट में थे; वे देसाइयों से खूब धन वसूल करते थे, और ये प्रजा से वसूल करते थे। परन्तु बीजापुर अब गृह-युद्ध से ग्रसित था, आदिलशाही राज्य शीघ्रता से विघटन की ओर जा रहा था, और शिवाजी की मृत्यु तक दक्षिण कोंकण और उत्तरी कनारा का जिला उनके हाथ में ही रहे। (बम्बई गजेटियर १५, भाग १, १२८)

परन्तु वेदनूर वास्तव में मराठा संरक्षित भाग कभी नहीं हुआ। २९ जुलाई, १६७९ के एक अंग्रेजी पत्र से हमको मालूम होता है कि "सूँडा के राजा और वेदनूर की रानी में जोर की लड़ाइयाँ हुईं, परन्तु जमशेदखाँ की सहायता से राजा ने सुलह होने पर रानी को मजबूर किया कि वह सिर्सी व सेरा के किले उसे दे दे जो उसके अधिकार में पहले थे, और मिर्गी (=मीरजान) का किला और बन्दरगाह भी दे दे जो कारवार के दक्षिण में था।" (ओर्म पांडुलिपि, ११६)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय ११

नौसेना अभियान

१. राष्ट्रीय नौसेना की आवश्यकता।
२. शिवाजी की नौसेना के अड्डे और गोदियाँ।
३. मावलों की किलेबन्दी।
४. पश्चिमी तट की समुद्रगामी जातियाँ।
५. मराठा नौसेना की दुर्बलता—उसका व्यूह कौशल।
६. लड़ाकू पोत—गुराब और गल्लीवत।
७. शिवाजी का व्यापारी समुद्री बेड़ा।
८. पश्चिमी तट पर अबीसीनियाई।
९. अबीसीनियाइयों पर मराठा विजय १६६१ तक।
१०. शिवाजी की नौसेना का विकास।
११. मराठा नौसेना की कृतियाँ, १६६४-१६६५
१२. जंजीरा पर मराठा आक्रमण, १६७०
१३. अबीसीनिया वालों ने दाँदा वापस लिया।
१४. नौसेना युद्ध, १६७२-१६७५
१५. जंजीरा पर महान आक्रमण, १६७६
१६. नौसेना युद्ध, १६७६-८०
१७. खंदेरी के लिए अंग्रेजों से युद्ध।

१. राष्ट्रीय नौसेना की आवश्यकता—एक जन्मजात राजमर्मज्ञ के रूप में शिवाजी की प्रतिभा का सबसे बड़ा प्रमाण यह मिलता है कि उन्होंने नौसेना और नौसैनिक अड्डों का सृजन बड़ी योग्यतापूर्वक किया। उनके पिता ने उत्तराधिकार में कुछ जिले छोड़े थे; परन्तु कल्याण और भिवांडी (१६५८) नगरों के प्राप्त करने के पश्चात ही इनके दक्षिण में स्थित निवेपिका (अर्थात सकरी खाड़ी) में अपने स्वयं के जहाज बनाना शुरू कर दिये। तीन वर्ष पीछे जब उनकी भू-सेनाओं ने दक्षिण कोंकण तट को लूटना शुरू कर दिया, उन्होंने दक्षिण में गोआ तक समस्त समुद्री तट का सर्वेक्षण किया और वहाँ नवीन नौसेना के अड्डे निर्माण करने तथा पुरानों की मरम्मत कराने की योजना तैयार की। उन्होंने सहज ही यह ज्ञात किया कि तटीय समुद्र पर अधिकार किये बिना उसके भीतरी राज्य-क्षेत्र की रक्षा कदापि नहीं की जा सकती है और न उसकी प्रजा की आर्थिक सम्पन्नता ही हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

गत एक सहस्र वर्षों में कोंकण तट पर विदेशी जहाजों द्वारा आक्रमण और उनके फलस्वरूप यातनाओं ने मराठा जाति के मन में यह कटु सत्य भली भाँति अंकित कर दिया था कि यदि वे अपने समुद्री तट की रक्षा नहीं कर सकते तो वे असमर्थ ही रहेंगे। इस्लाम की प्रथम शताब्दी में, ६३६ से ६६० तक, समुद्री लुटेरे अरब से आकर थाना के समृद्ध नगर को लूट ले जाते थे। १५३० तक में भी गोआ में पहुँचकर पुर्तगाली जहाजों ने कल्याण के उपनगर को जला दिया और वहाँ से बहुत-सा लूट का माल ले गये; १५४० में उन्होंने एक बड़े पत्तन अगशी को लूटा और उसमें स्थित ३०० जलयानों को नष्ट कर दिया।

दक्षिणी भारत की मूल्यवान उपज विदेशों को निर्यात के लिए पश्चिमी तट पर स्थित ऐतिहासिक पत्तनों पर एकत्र की जाती थी। यदि, इन वाणिज्य केन्द्रों की विदेशी लुटेरों से रक्षा न की जाती और निकटवर्ती समुद्र काठियावाड़ और गुजरात की वंशानुगत लुटेरी जातियों से मुक्त न रखा जाता तो भारत के समुद्री व्यापार के सदा ही नष्ट होने की आशंका रहती। समुद्र के मार्ग से अरब और अबीसीनियाई आक्रामकों के अलावा सत्रहवीं शताब्दी में भारतीय समुद्रों में यूरोपीय लुटेरों के शक्तिशाली दल भी कार्यरत थे जो अधिकतर ब्रिटिश जाति के थे। नौसेना के अड्डों द्वारा संरक्षित केवल एक शक्तिशाली राष्ट्रीय समुद्री बेड़ा ही हमारे पश्चिमी तटीय नगरों की और उनके व्यापार की रक्षा कर सकता था जो उनको जीवन-दान देता था।

इस आवश्यकता के अतिरिक्त शिवाजी ने बड़ी बुद्धिमानी से भारतवासियों के समुद्र-पार व्यापार का विकास करके अपने राज्य की आय और अपनी प्रजा के धन को बढ़ाने की योजना बनायी, और इस उद्देश्य से अपने ही व्यापारी समुद्री बेड़े की प्राथमिक आवश्यकता थी। अपनी अनुपजाऊ मातृभूमि की थोड़ी-सी मालगुजारी पर ही वह क्यों संतोष कर लेते, जबकि विदेशी केवल माल की अदला-बदली में दलाल के रूप में ही मालामाल हो गये थे? व्यापारी समुद्री बेड़े से ही राष्ट्रीय लड़ाकू नौसेना का पोषण हो सकता है। अन्त में, हिन्द महासागर में खेने के लिए गोआ की सरकार से पारपत्र (पासपोर्ट) खरीदने के लिए पुर्तगाली प्रत्येक भारतीय जहाज को बाध्य करते थे और यदि उनके इस नियम का उल्लंघन किया जाता था तो उनके जहाज जब्त कर लिये जाते थे। खुले समुद्र की स्वतन्त्रता पर अपनी प्रजा को इस अतिक्रमण से सुरक्षित करने के लिए शिवाजी के पास एक ही उपाय था, और वह था कि वह पुर्तगालियों को यह जतला सकें कि समुद्र पर भी वह इतने शक्तिशाली हैं कि वहाँ भी उनसे टक्कर ले सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अन्त में, उस युग के स्थानीय कानून और परम्परा के अनुसार निकटवर्ती समुद्र में जहाज दुर्घटना के कारण समुद्र पर बहने वाला सामान तथा बोझ हलका करने के हेतु जहाज से गिराया हुआ सामान और दुर्घटनाग्रस्त जहाजों का माल सब तटीय भूमि के शासक की सम्पत्ति हो जाते थे। केवल अपने निजी जहाजी बेड़े के स्वामित्व द्वारा ही शिवाजी इस अधिकार को कायम रख सकते थे।

२. **शिवाजी की नौसेना के अड्डों तथा गोदियों का वर्णन**—युद्ध-पोत अपना काम नहीं कर सकते जब तक कि निकट ही उनके लिए सुरक्षित अड्डे न हों जहाँ उनकी मरम्मत हो सके, सामान मिल सके और जहाँ कठोर मौसम में वे शरण पा सकें। अपने युद्ध-पोत तथा व्यापारी जलयानों को बढ़ोतरी के साथ-साथ पश्चिम तट पर ऐसे अनेक नौ-गढ़ स्थापित करके शिवाजी ने अपने उत्कृष्ट नेतृत्व का प्रमाण दिया।

शिवाजी के समस्त किले, चाहे वे भीतरी हों अथवा समुद्री, सब एक ही नमूने के बने थे। "स्थान प्रायः वह चुना जाता है जहाँ दन्दी (खड़ी चट्टान) अथवा संलग्न भित्ति हो जो आधी से अधिक समुद्र से घिरी हुई हो। पहाड़ी की पूरी चोटी अथवा अन्तरीप का सिरा दीवार से घिरा होता है जिस पर प्रतिरक्षा के हेतु अनेक बुर्ज बना दिये जाते हैं। किले में प्रायः एक ही फाटक होता है, और यह आमतौर पर सबसे अधिक मजबूत भाग होता है। बाहर का फाटक बाहर की ओर खुलता है और उसके दोनों ओर रक्षा के हेतु एक-एक बुर्ज होती है जिस पर अक्सर एक मीनार बनी होती है। दो दीवारों के बीच में भीतरी फाटक के लिए एक तंग घुमावदार मार्ग होता है, जो मुख्य दीवार के अग्रभाग के सामने होता है उसकी प्रतिरक्षा दो बुर्जों द्वारा होती है जो मार्ग की रक्षा करते हैं।·····मुख्य दीवार के भीतर प्रायः एक भीतरी किला होता था (फारसी और मराठी में 'बाला किला') और इसके चारों ओर अनेक भवन बने होते थे जिनमें सैनिक रहते थे, और बारूदखाना, तालाब और कुएँ भी यहीं होते थे। बड़े किलों से संलग्न एक नगर या पेठा होता था जो उस पहाड़ी की तलहटी में संगुच्छित था जिस पर किला बना होता था।"

विजयदुर्ग, जिसे आम लोग 'घेरिया' कहते थे, और जिसका शिवाजी ने पुनर्निर्माण कराया, "एक बड़े तटीय किले का बहुत अच्छा उदाहरण है, जो महल भी है (अर्थात सरदार का निवास-स्थान)। यह एक सुन्दर नदी (वाघोटन) की चौड़ी एस्चुएरी में निकली हुई संलग्न भित्ति पर बना है और देश के भीतरी भाग से उसका संचार एक खाई द्वारा बन्द कर दिया गया था

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जो इस भीत के आरपार जाती थी। दीवारों के सबसे बड़े विस्तार पर समुद्र है और·····वाहरी सुरक्षा के भाग आगे तट तक विस्तृत हैं।·····दीवारें वहुत अधिक मोटी और ऊँची हैं, और इस उतराई के घाट से अति शक्तिशाली प्रतिरक्षा की तीन पंक्तियाँ दिखायी देती हैं। एक ओर मुख्य दीवार के सर्वोच्च भाग से एक बड़ी मीनार देख पड़ती है।···वहाँ से दृश्य वहुत सुन्दर और विविध देख पड़ता है। सामने खुला समुद्र, एक ओर चौड़ा वेला-संगम (एस्चुएरी) और दूसरी ओर छोटा-सा सफेद वालू का शरण-स्थान जिसके चारों ओर काले चटियल अन्तरीप हैं। पीछे नदी दूरवर्ती घाटों की नीली पंक्ति तक फैली हुई है।" शिवाजी ने इसको वहुत मजवूत कर दिया था; उन्हीं के कारण इसमें अनेक सुन्दर वातें उपलब्ध हैं—दीवारों की तिहरी पंक्ति, अनेक (सत्ताइस) मीनारें और विशाल भीतरी भवन। (वम्वई गजेटियर, १. २. ७४; १०. ३८०)

सुवर्ण दुर्ग अथवा सोनगढ़ उनके द्वीप-गढ़ का सबसे बड़ा ज्वलन्त उदाहरण है; इसकी ऊँची दीवारें सीधी समुद्र में से निकलती हुई देख पड़ती हैं एक निम्न विषम टापू पर जिसका क्षेत्रफल आठ एकड़ है। किलेबन्दी के बड़े भाग ठोस चट्टान से काटे गये हैं, और शेष दस या बारह फुट वर्ग चौकों के बने हुए हैं। किले के भीतर कई तालाव और एक छोटी वावड़ी (सीढ़ीदार कुआँ) बने हुए हैं जिनमें एक बड़ी गढ़-सेना के लिए पर्याप्त पानी है। (बम्वई गजेटियर, १०. ३३८)

रत्नगिरि में रत्नगिरि के बन्दरगाह के उत्तरी पार्श्व के पश्चिमी सिरे पर ऊँची भूमि पर कई किलेवन्दियाँ हो रही हैं। अन्तरीप की प्रतिरक्षा वाहरी और भीतरी किलों द्वारा होती है।···शिवाजी ने प्रकाशघर विन्दु (Lighthouse Point) के दक्षिण में स्थित पूर्वी कूट के ऊपर बनी हुई दीवार को बढ़ा दिया था, और दो ऊँचे स्थानों पर रक्षा करने वाली मीनारें बना दी थीं। (वही, ३६७)

३. मालवन की किलेबन्दी—"परन्तु उनके नौसिक किलों में मालवन सबसे अधिक रोचक और शक्तिशाली है। इसका प्रधान भाग एक किला है और दो किलेबन्द टापू हैं जो तट से चौथाई मील की दूरी पर हैं—ये ऐसी खाड़ी में स्थित हैं और उसमें इतनी चट्टानें और शैल-भित्ति हैं कि लघु ज्वार के समय ऐसा प्रतीत होता है मानो उसमें खेई जाने वाली नाव की अपेक्षा कोई अन्य वड़ी वस्तु प्रविष्ट नहीं हो सकती है। इन टापुओं में सबसे बड़ा सिन्धुदुर्ग है और उसका उपयोग शिवाजी कदाचित मुख्य भूमि से शरण-स्थान

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के रूप में प्रयोग करते थे। यह बहुत विस्तृत है, और इसके परकोटे का घेरा दो मील से कुछ ही कम है। दीवारें नीची हैं, लगभग ३० फुट (ऊँचाई में) और इनकी औसत मोटाई १२ फुट है, तथा इन पर लगभग ३२ मीनारें हैं—ये मीनारें प्रायः ऊँचे अर्ध-वृत्त के रूप में हैं जिनमें तोपों से गोले छोड़ने के लिए झरोखे बन रहे हैं। तंग सीढ़ियाँ भीतर से दीवारों की चोटी पर पहुँचती हैं। यह कहा जाता है कि शिवाजी ने उसकी किलेबन्दी स्वयं अपने हाथों से की थी, और उसमें स्थित एक मन्दिर में उनकी मूर्ति का पूजन अवतार की भाँति होता है। एक छोटा किलेबन्द टापू पांडवगढ़ कहलाता है; यह कहा जाता है कि इसमें शिवाजी के पोत-निर्माण का कार्यालय था।

सिन्धुदुर्ग की किलेबन्दी हिन्दू संस्कारों के साथ २५ नवम्बर, १६६४ को आरम्भ की गयी और इसके निर्माण पर सूरत की प्रथम लूट से प्राप्त धन व्यय किया गया। इसके निर्माण-कार्य के लिए भवन-सामग्री तथा कुशल कारीगर गोआ जैसी दूर जगहों से भी बुलाये गये और उन पर होने वाले व्यय का कोई विचार नहीं किया गया, तथा किला शीघ्र ही पूरा बन गया।

"मालवन की खाड़ी का एक ही रास्ता था और वह चट्टानों में होकर एक तंग जल-मार्ग था, तथा भूमि से टापू को मार्ग भी अति जटिल था। घाट से किले तक मार्ग सामान्य मार्गों की अपेक्षा अधिक तंग था।

"इन नौसैन्य अड्डों के बनाने में शिवाजी का मुख्य उद्देश्य ऐसे सुविधा के स्थान बनाना न था जहाँ से उनके स्वयं के जहाज भीतर जा सकें और बाहर आ सकें। ऐसा मालूम होता है कि अच्छे बन्दरगाह के सम्बन्ध में उनका विचार यह था कि जहाँ वैरी आसानी से प्रवेश न कर सके। उनका सबसे पहले का नौसेना का मुख्य कार्यालय कोलाबा (अलीबाग के निकट, १६६० में अधिकृत) चट्टानों और शैल-भित्तियों से चारों ओर बेतरह घिरा हुआ है। विजयदुर्ग में जहाज आसानी से प्रवेश कर सकते हैं और निरापद लंगर डाल सकते हैं; जयगढ़ (संगमेश्वर नदी के मुहाने पर) इसके समान ही बन्दरगाह है, और देवगढ़ का मार्ग सँकरा परन्तु सुरक्षित जल-मार्ग से है जो बड़े और थल से घिरे हुए बन्दरगाह में पहुँचता है जिसका पानी बहुत गहरा है।" (बम्बई गजेटियर, १. २. ७५, १०, ३१८-३४०)

जयगढ़ में किलेबन्दी की दो पंक्तियाँ थीं, एक ऊपरी और दूसरी निचली, इसमें शिवाजी ने कई अच्छे कुएँ और कुछ निवास-भवन बना दिये थे। इस तट पर रत्नगिरि (पत्तन), अंजनवेल, और राजापुर में छोटे नौसैन्य अड्डे थे और उनमें मरम्मत के लिए कर्मशालाएँ थीं।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

४. **पश्चिमी तट की समुद्रगामी जातियाँ**—अपने पोतों पर काम करने के लिए भारत में ही काठियावाड़, गुजरात और कोंकण तटों पर शिवाजी को अति चतुर और अनुभवी मनुष्य उपलब्ध थे। यहाँ ऐसी हिन्दू और मुस्लिम जातियाँ रहती थीं जिनका कई शताब्दियों से वंशानुगत पेशा मछली पकड़ना, समुद्री नौसंचालन और समुद्री लूटमार था। आज के भाप से चलने वाले जहाजों के युग में भी वे नाविक जिनको यूरोप में लस्कर (lascars) कहते हैं अधिकांश पश्चिम तट की खार्वा, कोली और भादेल कौमों में से लिये जाते हैं, और कुछ कम वाघेर और मियाना कौमों से (इन पिछलों का पेशा ही समुद्र पर डाके डालना है)। खारवों के विभाग राजपूत, कोली और मुस्लिम हैं; भादेल और वाघेर अधिकांश मुस्लिम मत के अनुयायी हैं।

खारवों के विषय में कहा जाता है कि नौसैनिकों में वे अत्यधिक परिश्रमी और कुशल व साहसी मल्लाह हैं; "वे उन देशीय जलयानों पर काम करते हैं जो जंजीबार, अदन, भारत के पूरे तट पर, पूर्व में सिंहापुर तक जाते हैं, और वे बम्बई और यूरोप के बीच चलने वाले वाष्प-पोतों पर काम करते हैं।" (बम्बई गजेटियर ९, भाग १, ५१९-५२९)

अति कुशल वंशानुगत नौसैनिकों की प्रजाति के प्राप्त होने के अतिरिक्त, पश्चिमी तट से पोत-निर्माण के लिए कुशल कारीगर भी मिलते थे जिनकी प्रवीणता की ख्याति एशिया में दूर-दूर तक फैली हुई थी। बिना किसी यूरोपीय निर्देशन के कोंकण तट के गोदी-बाड़ों में निर्मित भारतीय पोत उस युग में पुर्तगाल में बने जहाजों का मुकाबला करते थे। १५३० में "अगाशी का लकड़ी तथा पोत का व्यापार बहुत बढ़ा-चढ़ा था, और यहाँ के निर्मित पोत यूरोप तक की समुद्री यात्रा करते थे।" "वेसीन और अगाशी पोत-निर्माण की कला में पुर्तगाल के समकक्ष थे।"[1]

३. **मराठा सेना की दुर्बलताएँ—उसका व्यूह-कौशल**—शिवाजी की नौ-सेना के विषय में हमको यह विचार न करना चाहिए कि उनके पास अच्छी संख्या में यूरोप की भाँति युद्ध-पोत थे जो असीम खुले महासागर में निधड़क

---

१ बम्बई गजेटियर, १४, पृष्ठ १, ३१, खण्ड १, भाग २, पृष्ठ ३६

अगाशी में निर्मित एक जहाज पर पुर्तगालियों ने अधिकार कर लिया और उसने पुर्तगाल को कई नौयात्राएँ कीं। १६१२ में सर एच० मिडलटन द्वारा रोका हुआ एक पोत १५३ फुट लम्बा, ४२ फुट लम्बे शहतीर का, १३ फुट गहरा और १५०० टन भार का था। उसी समय रोका गया दाभोल का एक पोत १२०० टन भार का था।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जाकर अपने उत्कृष्ट दाँवपेच और गोलाबारी द्वारा विरोधी बेड़े से टक्कर ले कर उसे हरा सकते थे। मराठा युद्ध-पोत केवल तटीय समुद्र के ही लिए थे; उनका कार्य था व्यापारिक पोतों को एक पत्तन से दूसरे पत्तन के लिए रक्षार्थ ले जाना, अथवा अपने थल से घिरे बन्दरगाह से निकलकर वैरी के किसी जलयान या छोटी युद्ध-नाव पर टूट पड़ना और उसके मस्तूल हटाकर उस पर सैनिकों को भेजकर और उसके आदमियों से लड़कर उसे पकड़ लेना। इस उद्देश्य से उनकी 'गुराब' नामक तोप वाली नावों को खेने वाली नावों से खींचा जाता था जिससे वे शत्रु-पोत को पकड़ सकें, उसके मस्तूलों को गोलाबारी से उड़ा दें और फिर खेने वाली नावों में एक दल भेजकर उसे अपने अधिकार में कर लें। वास्तव में शिवाजी के समुद्री युद्ध उनके थल-युद्ध के कौशल का अनुकरण मात्र थे। गोलाबारी में भी उनके महत्तम जलयान तीसरी श्रेणी के अंग्रेज या पुर्तगाली युद्ध-पोतों से भी निम्नतर थे। उनमें तोपें संख्या में कम और छोटी थीं और उनकी तोपों की निशानेबाजी निम्नकोटि की तथा धीमी थी। सी० डाउनिंग ने जो १७१७ में आँगड़े के जहाजों के विरुद्ध लड़ा था, कहा था, "चूँकि वे नहीं जानते थे कि तोप का निशाना किस प्रकार लगाया जाय, वे हमारा बहुत कम नुकसान कर पाये" और फिर जैसे ही वे मुख्य मार्ग पर आ जाते थे, उन्होंने हम पर कभी गोलाबारी नहीं की, परन्तु अपनी नावों को जहाज पर चढ़ा लिया।" (भारतीय युद्ध, २१ और २३)

शिवाजी के पास तोप बनाने का कोई कारखाना न था और न ही उनके राज्य में प्रथम श्रेणी की बारूद बनाने की कोई कर्मशाला थी।[२] नौसेना के लिए समस्त हथियार और गोलाबारूद वह यूरोपीय व्यापारियों से खरीदते थे, परन्तु उनको अंग्रेज तथा पुर्तगालियों से इस प्रकार की कोई सहायता न मिलती थी जिससे कि कहीं मुगल सरकार उनसे नाराज न हो जाय, केवल डच और फ्रांसीसी पर्यटक जहाजों से उनको गुप्त रूप से कुछ छोटी तोपें मिल जाती थीं जिनको वे कदाचित अपने लिए अनुपयोगी पाते थे। अवश्य ही, स्थल पर विजय प्राप्त करने के पश्चात पूर्व समय में भारत में ढली हुई तोपें मराठों के हाथ पड़ जाती थीं, ये उनके किलों में एकत्र कर ली जाती थीं और कुछ बड़े परिश्रम से सैनिक अड्डों को स्थानान्तरित कर दी जाती थीं; केवल कुछ ही मामूली आकार की तोपें उनके 'गुरबाओं' पर चढ़ाई जा सकती थीं। ये पुरानी

---

२ १८०१ में दौलतराव सिंधिया अपने राज्य में अच्छी बारूद न प्राप्त कर सका और उसने उसे कोटा तथा अन्य स्थानों से प्राप्त किया। महाराष्ट्र शोरा और गंधक के पूर्ति-केन्द्रों से और भी अधिक दूर था।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

'संग्रहालय तोपें' उन आधुनिक पीतल की तोपों का मुकाबला हरगिज नहीं कर सकती थीं जो उच्छ्रित पेचों पर रखी जाती थीं, और जिनको दि बायने के फ्रेंच इंजीनियरों ने महादजी सिंधिया के लिए ढाला था, और जिनकी १८०३ में लेक व वेलिंगटन ने भी प्रशंसा की।

नौसेना निर्माण करने में शिवाजी का प्रथम उद्देश्य था अपने सनातन वैरी जंजीरा के सिद्दी का मुकाबला करना और तटीय पानी में अपने व्यापारी जहाजों का रक्षार्थ साथ देना। वह अंग्रेजों[3] से कभी नहीं लड़ना चाहते थे जो उनकी प्रजा को परेशान नहीं करते थे, और न वह पुर्तगालियों से ही भिड़ना चाहते थे जिनकी एकमात्र नीति उनके पतन के उस युग में अपने समस्त भारतीय पड़ोसियों से मेलजोल से रहने में थी। उन्होंने पुर्तगाली राज्य-क्षेत्र में बहुत ही कम बार घुसपैठ की (और इसका कारण था सावन्तों द्वारा तटस्थता का भंग किया जाना), परन्तु ये सब मामले सदा राजनयिकता द्वारा तय कर लिये जाते थे। इस प्रकार अल्पायु मराठा नौसेना ने किसी यूरोपीय शक्ति से समुद्र पर कोई घमासान युद्ध नहीं किया। सिद्दी बेड़े से जो युद्ध हुए उनमें हर बार दोनों पक्षों की हानि हुई, और व्यूह-कौशल विषयक विजय सदा अबीसीनिया वालों के ही हाथ रही।

६. लड़ाकू जहाज, गुराब और गल्लीवत—शिवाजी की तीन पीढ़ियों के बाद तूलोजी आँगड़े की नौ-सेना ने ठीक वही व्यूह-कौशल बरता था। ओर्म की कुशल कलम से शिवाजी के लड़ाकू बेड़े का निम्न वर्णन यथेष्ट होगा, परन्तु हमको उसकी अपेक्षाकृत लघुता, गोलाबारी में कमजोरी और छत्रपति की नौ-सेना की प्राचीन विधियों का विचार रखना होगा, तथा यह भी ध्यान रखना होगा कि मोटे रूप से उसका युद्ध विषयक महत्त्व या कुशलता आँगड़े के बेड़े की अपेक्षा एक-चौथाई रही होगी, जो शिवाजी की मृत्यु के ७५ वर्ष पश्चात नष्ट कर दिया गया।

"आँगड़े के बेड़े में 'गुराब' और 'गल्लीवत' थे। गुराबों में दो मस्तूल से अधिक शायद ही कभी होते हैं; जो तीन मस्तूल के हैं, उनका भार ३०० टन होता है, परन्तु अन्य १५० टन से अधिक के नहीं होते। वे पानी में बहुत कम गहराई तक पहुँचते हैं क्योंकि उनकी लम्बाई के अनुपात में उनकी चौड़ाई बहुत अधिक होती है, वे बीच में कुछ चौड़े होते हैं और सिरे की ओर सकरे

---

[3] खन्देरी के लिए अंग्रेजों के साथ संघर्ष (१६७९) मराठा नौसेना के लक्ष्य और व्यूह-कौशल का सर्वोत्तम उदाहरण है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

होते जाते हैं, जहाँ उनका अग्रभाग निकला हुआ होता है, जिस पर मजबूत तूतक (डेक) होता है जो पीत के मुख्य डेक के समतल होता है।···मल्लाहों के आवासों के नीचे मुख्य डेक पर ९ या १२ पाउण्ड वाले गोलों की दो तोपें हैं जिनके मुँह आगे की ओर निकले रहते हैं; बगल की तोपें छह या नौ पाउण्ड के गोलों की होती हैं।

"गल्लीवत बड़ी खेने वाली नावें होती हैं जो गुराब की भाँति बनी होती हैं, परन्तु परिमाण में कुछ छोटी होती हैं और उनमें से सबसे बड़ी सत्तर टन से अधिक नहीं होती है; इनमें दो मस्तूल होते हैं जिनमें पाल बहुत छोटा होता है, परन्तु मुख्य मस्तूल में केवल एक पाल होता है जो तिकोना होता है और बहुत बड़ा होता है।···सामान्यतः गल्लीवतों में बाँस की खपच्चियों का डेक होता है और इनमें केवल 'पैटेरैरो' नामक छोटी तोपें होती हैं जो पोत के ऊपरी किनारों पर कुलाबों में लगी रहती हैं, परन्तु सबसे बड़ों में डेक स्थिर होते हैं जिन पर दो या चार पाउण्ड वाले गोलों की ६ या ८ तोपें होती हैं। उनमें ४० या ५० मजबूत डाँड (पतवार) होते हैं और जो चार मील प्रति घण्टा की गति से खेये जा सकते हैं।[४]

"जहाजों पर आक्रमण करने के लिए आँगड़े के मुख्य बेड़े में आठ-दस गुराब और चालीस-पचास गल्लीवत होते थे जिनमें आदमी भरे रहते थे।··· वैरी का जहाज जैसे ही पोत से दिखाई देता था, जहाँ (मराठा) बेड़ा रहता था, वे तुरन्त अपने रस्सों को ढीला कर देते थे और समुद्र की ओर चल पड़ते थे।···यदि हवा शान्त होती थी तो गल्लीवत गुराबों को खींचते थे। जब शिकार (वैरी का जहाज) गोलों की मार के भीतर आ जाता था तो गुराब अपने अग्रभाग की तोपों से उस पर दूर से ही आक्रमण करते थे और पहले केवल मस्तूलों पर हमला करते थे।···जैसे ही पीछा किये जाने वाले जहाज

---

४ गुजरात तट के गलवतों (गल्लीवतों) का पृष्ठ भाग गोल होता था और उनमें दो मस्तूल होते थे और प्रत्येक में त्रिभुजाकार पाल होता था; भार १० से ५० टन तक।

"साफ-सुथरे और सुस्पष्ट होने के कारण वे प्रायः भलीभाँति चलते हैं। ये गलवत पूर्व के समय के लुटेरे जहाज थे।" (बम्बई गजेटियर, २.४१६) "पूर्व के समय के कोल्हापुर और वादी के समुद्री लुटेरे मालवन कहलाते थे, क्योंकि उस पत्तन का नाम जिसमें वे निवास करते थे माल-वन था, और रत्नगिरि तट के समुद्री लुटेरे सेग्वीसेरो कहे जाते थे जो शब्द संगमेश्वर शब्द का एक पुर्तगाली रूप था, जहाँ उनका मुख्य स्टेशन था।" (बम्बई गजेटियर १, भाग २, ८८)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के मस्तूल गिर जाने थे वे उसके निकट आ जाते थे और उसके चारों ओर तोपों से मार करते थे; और यदि उसकी प्रतिरक्षा कठोर होती थी तो वे कई गल्लीवत भेजते थे जिनमें से प्रत्येक में दो सौ या तीन सौ आदमी होते थे जो चारों ओर से एक साथ तलवारें लेकर उस जहाज पर कूद पड़ते थे।" (ओर्म 'इन्दुस्तान', चौथा संस्करण, १. ४०८-४०९)

७. शिवाजी का व्यापारी समुद्री बेड़ा—शिवाजी के व्यापारी और परिवहन के पोतों में निम्न प्रकार थे :

मचुआ—बड़ी माल ढोने वाली नाव जिसमें चौकोर पाल होता था और केवल एक मस्तूल होता था। रत्नगिरि तट पर इनका आकार एक से तीन टन भार का होता था। इसके पुर्तगाली नाम 'मचुआ' की व्युत्पत्ति संस्कृत शब्द 'मंच' से हुई है। (हॉब्सन-जॉब्सन, मोल्सवर्थ) किन्तु पुर्तगाली बेड़े के युद्ध-मंचूकाओं में १२ पतवार होते थे, १५ सैनिक और चार छोटी तोपें। (करेरी)[५]

शिबार—यह एक बड़ा फटीमार पालदार जलयान होता था, चौकोर पृष्ठ भाग का, चौरस तल का, दो मस्तूल का और बिना डेक का। फटीमार तीव्र गति का गहरा तंग जलयान था और बहुत अच्छा जहाज होता था, २५-४५ फुट लम्बा और २५-१०० टन भार[६] वाला।

टरांड—यह बड़ा खेये जाने वाला यान था; परन्तु मराठी भाषा में यह नाम सभी प्रकार के जहाजों के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

पगार—मराठी भाषा में इस शब्द का अर्थ है डोंगी जो अच्छी तरह खोखली की गयी, चिकनाई हुई और भलीभाँति साफ की गयी होती थी। (मोल्सवर्थ, ६२५)। पुर्तगाली परंग (parangue या pangara)—यह खाद्य वस्तुएँ ले जाने के काम में आती थी। रत्नगिरि में पगार फटीमारी वर्ग में गिनी जाती थी। (बम्बई गजेटियर, १०. १७१)

---

५ सूरत के तट पर मचुआ (उच्चारण 'मछ्वो') जिले के समुद्री व्यापार के लिए सबसे छोटे प्रकार का जलयान था; इसका भार १½ से ८ टन तक होता था और इसमें एक मस्तूल, एक तिकोना पाल और कुछ पतवार होते थे। (बम्बई गजेटियर, २.४१३)। परन्तु बाद के मचुआ गोल, दो मस्तूल के और ३ से २० टन के भार के बनने लगे। (१३. भाग २.७१७)

६ जहाजों में टन-भार से आशय जहाज की तोल से नहीं है, वरन उसकी धारिता या समाई से है। ४० घन फुट का स्थान एक टन के भार के बराबर माना जाता है। —अनुवादक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

८. **पश्चिमी तट के अबीसीनियाई**—पश्चिमी घाट के पार कोंकण के तटीय जिले में शिवाजी के राज्य-क्षेत्र के विस्तार से वह पश्चिमी तटीय क्षेत्र की समुद्री शक्तियों के सम्पर्क में आ गये। इनमें से मुख्य जंजीरा के सिद्दी या अबीसीनियाई थे, जो बम्बई के दक्षिण में ४५ मील हटकर एक चटियल टापू था, और जो राजपुरी सकरी खाड़ी के मुहाने की रक्षा करता था। उसके पूर्व में आध मील दूर मुख्य भूमि पर राजपुरी नगर है और इसके दो मील दक्षिण-पूर्व में खाड़ी के तट पर दाँदा का किला है। परन्तु इन दोनों को एक-ही स्थान माना जाता है, और यहाँ सिद्दियों की भूमि-क्षेत्र का प्रधान कार्यालय था, जो आधुनिक कोलाबा जिले का अधिकांश भाग है। इस प्रदेश से ही जंजीरा की सरकार के लिए मालगुजारी और खाद्य-सामग्री प्राप्त होती थी।

यहाँ पर पन्द्रहवीं शताब्दी में एक अबीसीनियाई उपनिवेश स्थापित हो गया था। इनमें से एक के हाथ अहमदनगर के सुल्तानों की अधीनता में दाँदा-राजपुरी का प्रशासन आ गया। परन्तु उस राजतन्त्र के नष्ट होने से और पश्चिमी घाट की चरम सीमा पर जिले की स्थिति के कारण सिद्दी को यह अवसर मिला कि वह केन्द्रीय सत्ता से लगभग स्वतन्त्र हो गया; इसलिए जब १६३६ की विभाजन संधि के अनुसार बीजापुर को पश्चिमी तट मिला तो उस सरकार को सिद्दी को अधीन करने में कई वर्ष लग गये। अन्त में समझौता हो गया, उसने उस जिले में सिद्दी को अपना प्रतिनिधि मान लिया, उसे 'वजीर' का पद दिया, और उसको नागोथना से बंकोट तक का समस्त समुद्र-तट इस शर्त पर दे दिया कि वह बीजापुरी व्यापार और समुद्र पर मक्का जाने वाले यात्रियों की रक्षा करे।

चूँकि सिद्दी छोटे-से सैनिक कुलीन-तन्त्र के रूप में थे जो बड़ी विदेशी जन-संख्या पर राज्य करते थे, अतएव उनके संविधान में योग्यतम मनुष्य के शासक बनने की व्यवस्था थी, और किसी सरदार की मृत्यु के पश्चात जहाजी बेड़े का प्रधान अधिकारी, न कि उसका पुत्र, गवर्नर बनाया जाता था। अबीसीनियाई साहसी, चतुर और धीर नाविक थे और मुस्लिम जातियों में समुद्र पर लड़ने वालों में सबसे अधिक कुशल थे; उनका साहस और शक्ति और साथ ही उनका शान्त स्वभाव और नियन्त्रण-शक्ति के कारण, उनकी गणना उच्चकोटि के सैनिकों और प्रशासकों में की जाती थी।

जंजीरा के सिद्दी सरदार के पास एक अच्छा बेड़ा रहता था और सत्रहवीं शताब्दी में उसे अधिकृत रूप से 'एडमिरल' की मान्यता प्राप्त थी—पहले बीजापुर द्वारा और बाद को मुगल साम्राज्य द्वारा। पश्चिमी तट पर कोई

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

देशी शक्ति ऐसी न थी जो समुद्र पर उसके विरुद्ध उसका मुकाबला कर सके। (बम्बई गजेटियर, ११. ४३४, ४१६)

कोंकण के स्वामी के लिए यह आवश्यक था कि सिद्दी या तो मित्र बनाया जाता अथवा इतना अशक्त कर दिया जाता कि वह शरारत न कर सके। शिवाजी ने देखा कि यदि वह बलशाली नौसेना का निर्माण नहीं करेगा तो उसका विदेशी व्यापार नष्ट हो जायगा और समुद्रतट तथा कुछ दूर तक भीतर उसकी प्रजा निरन्तर लूटमार, दासकरण, परेशानी और मारकाट का शिकार रहेगी और यह उन समुद्री लुटेरों द्वारा जो जाति, धर्म और मत में बिलकुल भिन्न थे। पश्चिमी तट की अगणित सकरी खाड़ियों और नौचालन के योग्य नदियों के कारण, जो स्वाभाविक रूप से धनी पत्तनों और व्यापार-केन्द्रों को पोषित करती थीं, उनकी रक्षा के लिए यह नितान्त आवश्यक था कि उनका स्वामी समुद्र पर शासन करे। इसके विपरीत, जंजीरा के स्वामी को अपने अस्तित्व के लिए आवश्यक था कि दाँदा-राजपुरी और उसके निकटवर्ती भू-भाग पर आधिपत्य रखे। दोनों के राजनीतिक अलगाव के फलस्वरूप मुख्य भूमि के विरुद्ध युद्ध करना उसके लिए आर्थिक अनिवार्यता थी।

९. अबीसीनियाइयों पर मराठा विजय, १६६१ तक—सिद्दियों के प्रारम्भिक इतिहास के विषय में ठीक-ठीक पता नहीं है। गोआ में वाइसराय की काउंसिल की कार्रवाई से पता चलता है कि दाँदा का कप्तान सिद्दी अम्बर नवम्बर १६४० में अपने राजा आदिलशाह के विरुद्ध पराजित विद्रोही था, कि एक बीजापुरी सेनापति असदखाँ (प्रधान मंत्री मुस्तफाखाँ का पुत्र) ने फरवरी, १६४२ में बड़ी सेना लेकर विद्रोहियों से दाँदा लेने के लिए कूच किया, और यह कि मार्च, १६४२ में फतह नामक एक विद्रोही ने कठपुतली निजामशाह को शहीद सुल्तान अलाउद्दीन के खिताब के सहित प्राचीन राजवंश का वैध उत्तराधिकारी घोषित कर दिया, और उसने उसकी छलयुक्त सत्ता के अन्तर्गत बालघाट के बहुत-से भूमि-क्षेत्र को बलपूर्वक ले लिया। अन्त में बीजापुर सरकार ने फतेहखाँ को अपना जागीरदार और दाँदा का स्वामी मानकर उससे सुलह कर ली।

शिवाजी ने इससे पहले ही सिद्दी राज्य-क्षेत्र से मिले हुए कोलाबा जिले के पूर्वी भाग को जीत लिया था, परन्तु सिद्दी के पास दाँदा-राजपुरी और उसका निकटवर्ती क्षेत्र अब भी था। कोलाबा जिले के पूर्वी और पश्चिमी भागों पर इस प्रकार दो शक्तियों का अधिकार होने के कारण परस्पर संघर्ष हुआ करते थे, परन्तु हमारे पास इसका कोई अभिलेख उपलब्ध नहीं है। स्थल

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पर नियमित मराठा सेनाओं का मुकाबला करने के लिए सिद्दी के पास बहुत छोटी सेना थी, और ऐसा मालूम होता है कि वह यदा-कदा छापा मारकर ही और उस क्षेत्र में शिवाजी के गाँवों में छोटी-मोटी शरारत करके ही सन्तुष्ट हो जाता था, जैसा कि सिद्दी के विषय में मराठा इतिहासकार के वर्णन से स्पष्ट है—"मकान में चूहे के समान वैरी।"[७] (सभा० ६६)

फतेहखाँ बहादुर, सक्रिय और योग्य नेता था। १६५९ में जब अफजलखाँ पूर्व से शिवाजी के विरुद्ध बढ़ रहा था फतेह खाँ ने सिर उठाने का अवसर देखा। परन्तु बीजापुरी सेना के विनाश के विषय में जानकर (नवम्बर), वह शीघ्रता से वापस लौट गया। अगले वर्ष जब अली आदिल द्वितीय ने शिवाजी के विरुद्ध सैनिक कार्रवाई आरम्भ की, जो पन्हाला किले में घिरा हुआ था, तो फतेहखाँ ने कोंकण का आक्रमण फिर शुरू किया। काय सावन्त नामक बीजापुर के एक राजभक्त जागीरदार ने सिद्दी को सहयोग दिया। घोर युद्ध के पश्चात सावन्त और बाजीराव पासलकर (शिवाजी का सेनापति) दोनों एकल द्वन्द्व में मारे गये, और दोनों दल अपने अपने अड्डों पर वापस चले गये। (सभा० ६५)

अपनी स्थिति पुनः प्राप्त करने के लिए शिवाजी ने रघुनाथ बल्लाल (आत्रे ?) के अधीनस्थ अधिक बड़ी सेना, पाँच से सात हजार सैनिक की, भेजी; और उसने सिद्दी सेनाओं को मार भगाया, ताला, गौन्साला और अन्य किलों पर अधिकार कर लिया और दाँदा तक समुद्री तट छीन लिया।[८] मराठों ने वर्षा ऋतु में भी अभियान जारी रखा और दीर्घकालीन घेरे के पश्चात दाँदा के किले पर अधिकार कर लिया, और फिर विजय को पूर्ण करने के लिए

---

७ इस परिच्छेद में सिद्दियों के प्रति संघर्ष की जो तारीखें दी गयी हैं वे बहुत संदिग्ध हैं, क्योंकि सभासद घटनाओं के वर्णन में कभी ठीक नहीं है और यहाँ उसके कथनों पर कोई स्वतन्त्र रोक नहीं है। 'शिवापुर दफ्तर यादी' के अनुसार जुलाई, १७५७ में रघुनाथ राजपुरी भेजा गया। इस तारीख का समाधान दूसरे वर्णन से नहीं किया जा सकता है और जेधे ने इसका प्रतिपादन नहीं किया है। अर्थ भी स्पष्ट नहीं है। अंग्रेजी कोठी के एक पत्र (१६५९) में इस प्रकार लिखा है, "दाँदा-राजपुरी के निवासी समुद्री लुटेरे और दुष्ट हैं और यथासम्भव इधर-उधर लूटमार मचाने के लिए जलयान रखते हैं।" (फौस्टर, २१४)

८ १० दिसम्बर को राजापुर के अंग्रेज व्यापारियों ने लिखा है कि "शिवाजी दाँदा-राजपुरी पहले ही ले चुका था, परन्तु गढ़ नहीं।" (कोठी अभि० राजापुर)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जंजीरा पर भी गोलाबारी आरम्भ कर दी। परन्तु उनके तोपखाने की कमजोरी के कारण समुद्र से घिरी हुई इस चट्टान पर आक्रमण विफल रहा। बीजापुर से सहायता न मिलने के कारण सिद्दी ने शिवाजी से समझौता कर लिया और औपचारिक रूप से दाँदा-राजपुरी दे दिया। इस प्रकार मुख्य भूमि पर सिद्दियों के पास कोई दुर्ग न रहा। (सभा० ६६)

परन्तु यह सुलह अधिक समय तक न रही। सिद्दी के लिए कोलाबा राज-क्षेत्र की हानि का अर्थ भूखों मरना था, और इसके विपरीत, "जंजीरा को अधीनस्थ करना शिवाजी के जीवन की पुरानी अभिलाषा थी" और इस प्रकार पश्चिमी तट पर अपना आधिपत्य पूर्णरूप से निरापद रह सकता था। युद्ध शीघ्र ही फिर शुरू हो गया। सिद्दियों ने तट पर अपने धावे पुनः आरम्भ कर दिये और शिवाजी प्रति वर्ष शुष्क ऋतु में जंजीरा पर गोलाबारी करते रहे, परन्तु उस द्वीप-गढ़ को न ले सके।

मराठों ने कोलाबा तट पर जीते हुए क्षेत्र का एक सूबा बना दिया, और उसे व्यंकाजी दत्तो नामक वाइसराय के अधीन रखा, जिसे पाँच से सात सहस्त्र सेना दी गयी (सभा० ६६)। उसने सिद्दियों को एक बड़े स्थल-युद्ध में हरा दिया, उन्हें मुख्य भूमि पर नहीं आने दिया, दाँदा-राजपुरी के निकटस्थ पहाड़ी पर गढ़ बनाकर उसकी प्रतिरक्षा को दृढ़ कर दिया, और कई किले सिलसिले-वार बनाये (जैसे बीरवादी और लिंगाना), जिन्होंने उस क्षेत्र में सिद्दियों के आक्रमण को न होने दिया। इस पर सिद्दियों ने "अपने पेट भरने के लिए" अधिक दक्षिण की ओर रत्नपुरी जिले में गाँव और पत्तनों की लूटमार शुरू कर दी, जो अब शिवाजी के अधीनस्थ थे। अतएव मराठा सरदार ने यह सोचा कि यदि उन्हें समुद्री जिलों की सुरक्षा अभीष्ट है और यदि वह जंजीरा की विजय को स्थायी चाहते हैं जो यदि वैरी के हाथ में रहे तो उनकी बगल में काँटे के समान चुभता रहे, तो उनके लिए आवश्यक है कि उन्हें एक शक्ति-शाली नौसेना का निर्माण करना चाहिए और तट पर अनेक गढ़-केन्द्र स्थापित करने चाहिएँ। (सभा० ६७)

१०. **शिवाजी की नौसेना का विकास**—यह कहा जाता है कि सिद्दी के दाँदा पर आक्रमण करने के लिए शिवाजी ने जून, १६५९ में कल्याण, भिवाँडी और पेन में बीस गल्लीवत बनवाये थे, और बेड़े को राई लीटाओ वीगा के अधीनस्थ रखा था जिसे उन्होंने आदेश दिया था कि वह पुर्तगाली सरकार से थाना और बेसीन के पुर्तगाली स्थानों में होकर खुले समुद्र में जाने की आज्ञा ले ले। वाइसराय की काउंसिल ने यह आज्ञा नहीं प्रदान की थी। फिर,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अगस्त, १६६४ में चौल के पुर्तगाली कप्तान ने रिपोर्ट की कि मराठा राजा ने पचास जहाज बना लिये हैं जिनमें से ऊपरी चौल में सात निर्मित पोत समुद्र में उतरने वाले हैं। (वाइसराय की काउंसिल की कार्रवाई, गोआ।)

मराठी इतिहासों में शिवाजी की नौसेना में विभिन्न परिमाण और श्रेणी के ७०० जलयान बताये गये हैं, जैसे गुरबा (तोप-जहाज), तराँदी, तारम्बे, गल्लीवत, शिबार, पगार, मंचवा आदि। इनमें से अधिकांश राज्य के व्यापारी नौपोत थे अथवा रसद के पोत थे। अंग्रेजी कोठी की रिपोर्टों के अनुसार उनके युद्ध-पोत १६० से अधिक कदापि न थे और वे इस संख्या को प्रायः ६० ही बताती हैं। उनके दो स्क्वाड्रन बनाये गये थे (मराठे वर्णन के अनुसार प्रत्येक २०० जलयानों का), और वे दो एडमिरल (नौ-सेनापतियों) के अधीन थे जिनके पद 'दरिया सारंग' (महासागर का नौसेनापति) और 'माई नायक' थे।[६]

हम यहाँ पर शिवाजी के व्यापारी नौपोतों के विषय में जो थोड़ा-सा ज्ञात है उसे बताते हैं। उत्तरी कोंकण पर अधिकार करने के पश्चात शीघ्र ही वह निजी तौर पर विदेशी व्यापार करने में लग गये। जनवरी १६६० के पूर्व में ही उन्होंने राजापुर में अफजलखाँ के एक छोटे पोत अर्थात जंक पर अधिकार कर लिया और उसे अपने काम में ले लिया। फरवरी १६६३ में सूरत के अंग्रेजों ने रिपोर्ट दी कि मोखा (पश्चिमी अरब में) से व्यापार करने के लिए वह दो बड़े जहाज तैयार कर रहे हैं राजापुर नदी में समुद्र से दो मील चलकर जैतपुर में वह उनको लाद रहे हैं "जिनमें मूल्यवान सामान है जो तूफान या खराब मौसम के कारण उसके तट पर आ लगा है।" दो वर्ष के बाद (१२ मार्च १६६५), उन्होंने लिखा कि "दकन के अति महत्त्वपूर्ण" आठ या नौ पत्तनों में से प्रत्येक से, जिन पर उन्होंने अधिकार जमा लिया था, "प्रतिवर्ष" दो-तीन या अधिक व्यापारी पोत फारस, बसरा, मोखा आदि बन्दरगाहों को जाते थे। फिर यह भी वर्णन मिलता है कि अप्रैल १६६९ में कारवार तट पर एक बड़े तूफान ने उसके कई पोतों और चावल से भरे जहाजों को नष्ट कर दिया, और "इनमें एक पोत पर बहुत-सा मूल्यवान सामान था।" (कोठी अभिलेख, खंड २, ८६, १०५)

---

६ सभासद, ६७ ने दरिया सारंग को मुसलमान और माई नायक को भंडारी जाति का हिन्दू बताया है। परन्तु १६ नवम्बर, १६७० के बम्बई पत्र के अनुसार (मराठा) जहाजी बेड़े का नौसेनापति 'वेंटूगी सरूँगी' है जिसे प्रायः 'दुरिआ सरूँगी' कहते हैं। दौलतखाँ का पद दरिया सारंग के पद से पृथक था। (राजवाड़े ८, २७ और ९१ क० ब०, ७४)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

११. मराठा नौसेना के कार्य, १६६४-१६६५—मराठा नौसेना के उन्नयन के कारण सिद्दी, अंग्रेज व्यापारी और मुगल सम्राट तीनों एक-ही समान चिन्तित होने लगे। २६ जून १६६४ को सूरत के व्यापारियों ने रिपोर्ट दी कि "शिवाजी ६० फ्रिगेट का एक बेड़ा किसी अज्ञात स्थान पर आक्रमण करने के लिए तैयार कर रहे हैं; उनका उद्देश्य शायद सूरत के सभी जंक (चौरस पेंदे के पोत) को नष्ट करना है और बसरा तथा फारस से वापसी में उन पर आक्रमण करना है," अथवा यह भी लक्ष्य हो सकता है कि अहमदाबाद पर आक्रमण करने के लिए खम्भात की क्रीक या लम्बी खाड़ी (साबरमती) में एक सेना पहुँचायी जाय। नवम्बर के अन्त में यह ज्ञात किया गया कि उन्होंने वह बेड़ा कनारा पर आक्रमण करने वाली सेना को सहयोग देने के लिए भटकल में भेज दिया। अंग्रेज प्रेसीडेंट ने मराठा जलयानों का निम्न वर्णन किया है, "दया के योग्य वस्तुएँ, कि एक अच्छा अंग्रेजी जहाज उनके सौ जहाजों को नष्ट कर देगा और स्वयं उसको कोई विशेष आँच न आयेगी।" मराठों के जहाजों के छोटे कद और घटिया बनावट के अतिरिक्त, उनका तोपखाना स्थल और जल दोनों पर कमजोर था, और इसलिए यूरोपीय युद्ध-पोतों के मुकाबले में बिलकुल असहाय था। (कोठी अभि० सूरत ८६.)

फरवरी १६६५ में शिवाजी के बेड़े के ८५ फ्रिगेट[१०] और तीन बड़े जहाजों में उनकी सेना दक्षिण कनारा की लूट के लिए बसरूर गयी। (अध्याय १०)

उन्होंने मुगल जहाजों को बहुत समय से लूटना शुरू कर दिया, विशेषकर उनको जो सूरत (जिसे दार-उल-हज्ज या "हज्ज का नगर" कहते थे) के पत्तन से मक्का को यात्रियों को लेकर जाते थे। सम्राट के पास हिन्द महासागर में कोई समुद्री बेड़ा न था जो मराठों का मुकाबला कर सके। १६६५ के आरम्भ में शिवाजी के विरुद्ध समस्त सम्भावित वैरियों को सम्मिलित करने की नीति के अनुसार जयसिंह ने सिद्दी को मुगलों के साथ मैत्री करने के लिए लिखा। (हल्फ अंजु० बनारस पांडुलिपि, ७८ ए)। उसी वर्ष के अन्त में, जब जयसिंह बीजापुर का आक्रमण आरम्भ करने वाला था, उसने इन अबीसीनियाइयों को मुगलों के साथ संयुक्त होने के लिए बुलाया और उन्हें मनसब प्रदान करने का

---

[१०] डफ (१. २०१ एन) का विचार है कि फ्रिगेट से अभिप्राय कदाचित उन छोटे जलयानों से था जिनमें एक मस्तूल होता था तथा जो ३० से १५० टन भार के होते थे और जो मलाबार तट पर सामान्य रूप से पाये जाते थे।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वचन दिया।[११] पुरन्दर की सन्धि द्वारा शिवा के राज्य-क्षेत्र के निकटस्थ उन्होंने जंजीरा को विजय करने का यत्न करने का वचन दिया। (वही, ७८ वी। परन्तु ९१ क० ब० ५१ में लिखा है कि जयसिंह ने सिद्दियों को शिवाजी को जंजीरा देने के लिए निश्चित रूप से मना कर दिया)।

१२. **जंजीरा पर मराठों का आक्रमण विफल हुआ, १६७०—१६६९ में** शिवाजी द्वारा जंजीरा पर आक्रमण पुनः बड़े वेग से आरम्भ किया गया। वर्ष के आरम्भ के महीनों में विरोधी सेनाओं ने एक-दूसरे के देश में प्रतिदिन धावे शुरू कर दिये और इस युद्ध के कारण सड़कों पर शान्तिपूर्ण यातायात बन्द हो गया। अक्तूबर में सिद्दी इतना परेशान हो गया और जंजीरा में घिरी सेना भूख से व्याकुल हो उठी कि उसने अंग्रेज सौदागरों को लिखा कि उसका "संकल्प है कि अन्त समय तक लड़ा जाय और फिर उसे मुगलों को सौंप दिया जाय।" (कोठी अभि० सूरत १०५, हुबली से सूरत १७ जुलाई, बम्बई से सूरत १६ अक्तूबर।)

लड़ाई अगले वर्ष चरम विन्दु पर पहुँच गयी (१६७०)। शिवाजी ने जंजीरा को जीतने के लिए अपने समस्त साधन लगा दिये। जंजीरा उनको सौंप देने के लिए शिवाजी ने फतेहखाँ को बहुत-सा धन और समृद्ध जागीर देने का वचन दिया, और फतेहखाँ इसके लिए राजी हो गया, क्योंकि वह लगातार युद्ध से परेशान हो गया था, अपनी प्रजा के धनहीन हो जाने से साधनहीन हो रहा था, और अपने बीजापुर के स्वामी से सहायता प्राप्त होने से निराश हो गया था। परन्तु उसके तीन अबीसीनियाई दासों ने टापू को अपने सजातियों को काफिर को सौंप देने के विरुद्ध भड़काया, फतेहखाँ को बन्दी बना लिया, सरकार पर अधिकार कर लिया और आदिलशाह तथा दकन के मुगल वाइसराय से सहायता की प्रार्थना की। मुगल तुरन्त राजी हो गये और सिद्दी बेड़ा बीजापुर की अधीनता से दिल्ली की अधीनता में स्थानान्तरित कर दिया गया, और क्रान्ति के नेताओं में से एक नेता सिद्दी सम्बल शाही नौसेनाध्यक्ष बना दिया गया और उसे एक मनसब तथा जागीर दी गयी जिससे तीन लाख

---

[११] १६६६ में बीजापुर के आक्रमण के मध्य में सिद्दी सम्बल मुगलों की ओर से लड़ा। (आलमगीरनामा, १०१२) सम्राट और सिद्दियों के मध्य जो अनौपचारिक सम्बन्ध इस प्रकार स्थापित हुआ वह जारी रहा, क्योंकि हम यह देखते हैं कि १६६९ में जंजीरा के शिवाजी द्वारा घेरे में उसको आदेश दिया कि वह घेरे को छोड़ दे। (बम्बई से सूरत, दिनांक १६ अक्तूबर, कोठी अभि० सूरत, खंड १०५)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रुपये की आय होती थी। उसके दोनों साथियों, सिद्दी कासिम तथा खैरियत को क्रमशः जंजीरा और स्थल-क्षेत्र की कमान सौंपी गयी। सिद्दी वेड़ा उन्हीं शर्तों पर मुगल सेवा में आ गया जिन शर्तों पर वह बीजापुर के अधीन था। इस समय से आगे चलकर सिद्दी नौसेनाध्यक्षों को याकूतखाँ की सामान्य पदवी प्रदान कर दी गयी, और जंजीरा की सरकार नौसेनाध्यक्ष (एडमिरल) की अधीनता से पृथक कर दी गयी और वह दूसरे सिद्दी के अधीनस्थ रखी गयी जो कबीला का दूसरा नेता और एडमिरल के पद का उत्तराधिकारी मान लिया गया। याकूत अपने बराबर वालों में केवल प्रथम था। "अन्य सिद्दी कप्तानों ने अपने नौसैनिकों तथा आश्रितों पर अपनी अलग-अलग कमान जारी रखीं और एक अभिजात समिति ने इस विचित्र गणतन्त्र के सामान्य कल्याण को सँभाला।" [ओर्म के खण्ड (फ्रेग्मेंट्स); खाफीखाँ, २. २२४]

जंजीरा की इस क्रान्ति का समय खाफीखाँ ने जनवरी या फरवरी, १६७१ बतलाया है।[१२] इसके कुछ ही समय पहले मराठा बेड़े को बहुत बड़ी हार खानी पड़ी। नवम्बर, १६७० में शिवाजी ने जंजीरा के १० मील उत्तर में नन्दगाँव पर १६० छोटे जलयान (दरिया सारंग के अधीनस्थ) और १०,००० घुड़सवार तथा २०,००० पैदल सेना एकत्र कर ली थी, जिसके साथ घेरे के लिए पूरी सामग्री, बड़ी संख्या में सुरंग खोदने के लिए औजार (कुदालियाँ, फावड़े और गदाले), और चालीस दिन के लिए भोजन इकट्ठा कर लिया था। ३००० सैनिकों का एक अन्य दल और सड़कों की देखभाल करने वाले और घेरे में मदद करने वाले बहुत-से मनुष्य तैयार रखे गये जो "एक क्षण में ही नौसेना के साथ चलने को तैयार थे।" उनकी गोपनीय योजना यह थी कि स्थल की ओर से सूरत पर कूच किया जाय, जहाँ कि जहाजों का बेड़ा भी साथ में मिल जाय और तब किला उनको २९ नवम्बर को सौंप दिया जाय, जैसा कि उसका कमाडेंट गुप्त रूप से राजी हो गया था। यदि उन्हें वहाँ सफलता

---

१२ परन्तु यह तारीख स्पष्टतः अशुद्ध है। अंग्रेजी राजनयिक एजेंट नारायण शेवनी ने रायगढ़ से बम्बई को लिखा था "सिद्दी फतेहखाँ से जो सुलह आप करना चाहते थे उसकी शर्तों पर मैंने नीराजी पंडित से वार्ता की।" (कोठी अभि० सूरत खण्ड ८८) इससे साबित होता है कि (क) फतेहखाँ सिद्दी था, न कि अफगान जैसा कि खाफीखाँ ने लिखा है, और (ख) १६७४ में वह अपने पद पर था न कि वह १६७१ में अपने पद से हटा दिया गया था। इस विषय में समकालीन अभिलेखों द्वारा खाफीखाँ अविश्वसनीय सिद्ध होता है। परन्तु १६७१ से आगे सिद्दी सम्बल निस्संदेह मुख्य नौसेनाध्यक्ष था।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मिल जाती, तो उनका विचार था कि भड़ौंच पर भी आक्रमण किया जाय।

परन्तु योजना विफल हुई। बेड़ा नन्दगाँव से २४ नवम्बर को चला, दूसरे दिन उत्तर की ओर कूच करके बम्बई टापू के निकट पहुँचा और २६ तारीख को महीम पहुँचा। शिवाजी के अधीनस्थ सेना भी उसी दिशा में स्थल पर चली। परन्तु २६ तारीख को वे अकस्मात वापस लौट पड़े और अपने बेड़े को भी वापस बुला लिया। उन्होंने ज्ञात किया था कि किला बेचने के लिए किलेदार का वचन धोखामात्र था और उनके लिए केवल जाल रचा गया था। उन्होंने अपनी योजना को तुरन्त बदला, और वह एक आसान शिकार की ओर झुके। दिसम्बर के आरम्भ में वे एकदम खानदेश और बरार में घुस पड़े और इन सूबों में चारों ओर लूटपाट मचा दी। इस छापे के कारण उनकी अनुपस्थिति में उनके बेड़े की पराजय हुई। दमन के पास से गुजरते हुए उनके नौसेनापति ने उस स्थान पर १२,००० रुपये के मूल्य का बड़ा जहाज पकड़ लिया जो सूरत जा रहा था। पुर्तगालियों ने इसका उत्तर उनके १२ जहाज पकड़कर दिया[13] और इनको बेसीन में छोड़कर मराठा बेड़े के शेष जहाजों का पीछा किया, परन्तु वे बचकर दाभोल को भाग निकले। (कोठी अभि० सूरत, खण्ड १०५, बम्बई से सूरत, १७,२१ और २८ नवम्बर व १७ दिसम्बर, १६७०)

१३. अबीसीनियाइयों ने दाँदा किला वापस लिया, १६७१—जंजीरा का नया गवर्नर अपने कबीले के मनुष्यों में वीरता, किसानों के कल्याण, कार्य-क्षमता और चालाकी के लिए प्रसिद्ध था। उसने अपना जहाजी बेड़ा व युद्ध सामग्री बढ़ाने में, अपने किलों की प्रतिरक्षा मजबूत करने में, तथा समुद्र पर छापा मारने में अपना समय लगाया। वह दिन-रात अपना कवच पहने रहता था और बारबार वैरी के जहाजों को पकड़ लेता था, उसने अनेक मराठों के सिर काट डाले और उन्हें सूरत भेज दिया (खाफीखाँ, २. २२५)। उसकी सबसे महान कृति थी शिवाजी के आदमियों से दाँदा छीन लेना। फरवरी १६७१ में एक रात को जब मराठी गढ़-सेना शराब के नशे में चूर थी और होली का उत्सव मनाने में मस्त थी, कामिस ४० जहाज लेकर चुपचाप घाट पर आ धमका और सिद्दी खैरियत ने ५०० सैनिकों को लेकर स्थल की ओर आक्रमण

---

[13] पादरी नवरट ने लिखा है कि १५ छोटे जहाज थे जिन्हें पुर्तगाली तट तक ले गये, और बारूद का एक कण भी नष्ट किये बिना उन पर अधिकार कर लिया। (ओर्म, फ्रेगमेंट्स, २०७)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

का वहाना किया। खैरियत को पीछे हटाने के लिए पूरी गढ़-सेना उस ओर जुट गयी, और इधर कासिम ने मौका पाकर समुद्र की ओर की दीवार पर चढ़ने का विचार किया। उसके कुछ वीर अनुयायी मारे गये, कुछ समुद्र में गिर पड़े, परन्तु शेष किले के भीतर घुस जाने में सफल हो गये। ठीक इसी समय गढ़ के बारूदखाने में आग लग गयी जिसमें मराठा कमाण्डेंट और कई आदमी तथा आक्रामकों के एक दर्जन आदमी मारे गये। कासिम ने तुरन्त ही युद्धघोष उच्चारित किया—"खस्सू ! खस्सू !" और चिल्लाया, "मेरे बहादुरो, हिम्मत न हारो; मैं जीवित हूँ और सुरक्षित हूँ।" यह कहता हुआ और मारकाट करता हुआ वह किले के केन्द्र की ओर चल पड़ा जहाँ वह खैरियत की सेना से जा मिला, और उसने समस्त स्थान पर विजय प्राप्त कर ली।

शिवाजी जंजीरा को लेने का प्रयत्न कर रहे थे, और अब वह दाँदा पर भी अधिकार न रख सके ! यह कहा जाता है कि अकस्मात आक्रमण की रात को जब गोला-बारूद में आग लगी, शिवाजी जो ४० मील दूर थे नींद से एक-दम जाग पड़े और कह उठे कि अवश्य ही दाँदा पर कोई महान विपत्ति आ गयी है। परन्तु वह इसका बदला तुरन्त न ले सके क्योंकि उनकी सेना नासिक और बगलाना जिलों में व्यस्त थी जहाँ मुगल वाइसराय का दबाव बढ़ रहा था। इसलिए कासिम ने अपनी विजय को आगे बढ़ाया और निकटवर्ती सात अन्य किलों पर अधिकार कर लिया। उनमें से छह ने दाँदा पर उसकी महान विजय से आतंकित होकर उसकी शक्ति के भय के कारण किलों के फाटक खोल दिये। सातवें किले का घेरा एक सप्ताह तक जारी रहा और इसके पश्चात उसके आदमियों ने कुछ शर्तों पर आत्मसमर्पण करना स्वीकार कर लिया जिनका उल्लंघन कासिम ने किया; उसने लड़कों और सुन्दर स्त्रियों को कैद कर लिया और मुसलमान बना लिया और वृद्ध तथा कुरूप स्त्रियों को छोड़ दिया, तथा गढ़-सेना के समस्त पुरुषों को कत्ल कर दिया। इस घटना के कुछ समय बाद तक मराठे अपने ही राज्य-क्षेत्र में बचाव की ओर ही रहे। (खाफीखाँ, २. २२५-२२८, एकमात्र प्रमाण।)

इन विपदाओं ने शिवाजी को झकझोर दिया और पूर्ण रूप से जाग्रत कर दिया। दाँदा किले पर पुनः अधिकार प्राप्त करना उनके लिए अति क्षोभ का विषय तथा राजनीतिक आवश्यकता हो गयी। उनके जीवनपर्यन्त तथा शम्भूजी के राज्य-काल के समय में मराठों और सिद्दियों के मध्य सदैव वैमनस्य रहा आया जो लगातार, अनिश्चित परिणाम से परन्तु बड़ी कटुता और कठोरता सहित, जारी रहा। प्रत्येक पक्ष ने दूसरे पक्ष के कैदी सिपाहियों और भोले

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

किसानों पर अत्याचार किया, और प्रदेश उजाड़ हो गया। मराठों की अपेक्षा अवीसीनियाइयों को आर्थिक हानि अधिक अनुभूत हुई क्योंकि उनका राज्य छोटा था, और यदाकदा सिद्दी सुलह की प्रार्थना भी करते थे, परन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली, क्योंकि शिवाजी की शर्तों के अनुसार वे उनसे सब-कुछ ले लेना चाहते थे।

सितम्बर, १६७१ में दाँदा पर आक्रमण करने के लिए शिवाजी ने अंग्रेजों से सहायता प्राप्त करने के लिए दूत भेजा। परन्तु सूरत की काउंसिल और प्रेसीडेंट ने बम्बई के व्यापारियों को सलाह दी कि "न तो उसे उसकी इच्छा के अनुसार हथगोले, छोटी बन्दूकें और गोला-बारूद दिये जायँ और न उसको बिलकुल मना किया जाय क्योंकि यदि हम उसे दाँदा को प्राप्त करने में मदद करें और वह उसके अधिकार में आ जाय, तो बम्बई के पत्तन के लिए बहुत बड़ा खतरा हो जायगा।" (कोठी अभि० सूरत, ८७)

१४. समुद्री युद्ध, १६७२-१६७२—१६७५ के अन्त में औरंगजेब ने ३६ छोटे और बड़े जलयानों का एक बेड़ा सूरत से दाँदा-राजपुरी सिद्दी की सहायता के लिए पथ बदलकर समुद्र मार्ग से भेजा। इस युद्धपोत के दस्ते ने शिवाजी को "बहुत हानि पहुँचाई, उनके समस्त पत्तन-नगरों को लूटा और ५०० से अधिक जलयानों को नष्ट कर दिया" (स्पष्टतः व्यापारिक जलयान)।[१४] इस समय (२१ दिसम्बर) शिवाजी के पास छह छोटे फ्रिगेट थे, जो मुगल जहाजी बेड़े के डर से बम्बई पोताश्रय में पड़े हुए थे और जिनको अंग्रेजों ने मुगलों से यह बहाना बनाकर बचाया कि उन जहाजों को तो उन्होंने ही १६६१ में राजापुर कोठी की लूट के हर्जाने के रूप में कुर्क कर लिया है। अगली जनवरी के आरम्भ में मुगल बेड़ा मराठों के विरुद्ध सफल अभियान के बाद बम्बई में आया। इस समय शिवाजी और सम्राट दोनों ही दूसरे पक्ष से युद्ध करने के लिए अंग्रेजों की सहायता चाहते थे। परन्तु विदेशी व्यापारियों ने बड़ी बुद्धिमानी से अपनी तटस्थता बनाये रखी थी, यद्यपि यह 'विषम खेल' था। किन्तु उसी वर्ष अगस्त में कोलबर्ट द्वारा स्थापित नयी फ्रेंच ईस्ट इंडिया कम्पनी का जहाज 'सोलील ड ओरियंट' राजापुर में आया और उसने गुप्त रूप से ८० तोपें (अधिकांश छोटी) और २००० मन सीसा शिवाजी के बेड़े को

---

[१४] "दाभोल को लूटा और जलाया, केलशी (१७°५५′ उ० बंकोट के निकट) में शिवाजी के बेड़े में और आठ बड़े जलयानों में आग लगा दी,..... समस्त तट को लूटा।" (पुर्त० अभि०; पिसूर० १. ३५-३७)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बेचा। फ्रांसीसियों ने नवम्बर, १६७६ में इसी प्रकार की सहायता दी जब उन्होंने पन्हाला की प्रतिरक्षा के लिए ४० तोपें उनको बेचीं। (मूल पत्र० ३७२२; ३७३४. कोठी अभि० सूरत से कम्पनी, १२ जनवरी १६७४; खण्ड १०८, राजापुर से सूरत, ३० दिसम्बर १६७६)

अंग्रेजों और शिवाजी के परस्पर भेद से डच कमोडोर रिकलौफ वेन गोएन ने लाभ उठाकर मार्च, १६७३ में मराठा सरदार से समझौते की बातचीत शुरू की और उनको यह वचन दिया कि दाँदा-राजपुरी को वापस लेने में पूरा डच बेड़ा (२२ जहाज का) मदद करेगा और शिवाजी डच लोगों को बम्बई को लेने के लिए ३००० सैनिकों से सहायता करेंगे। परन्तु शिवाजी ने डचों का विश्वास नहीं किया और वह अंग्रेजों के मित्र बने रहे। (मूल पत्र०, ३७६०)

सिद्दी सम्बल की कमान में ३० फ्रिगेट का मुगल बेड़ा मई १६७३ में सूरत से दाँदा-राजपुरी को लौट आया और वहाँ दक्षिण-पश्चिम मानसून (जून-सितम्बर) को बिताने के पश्चात तट के किनारे-किनारे आगे बढ़ा और उसने अनेक मराठा व्यापारी जलयान तथा कुछ युद्ध-पोतों पर अधिकार कर लिया। १० अक्तूबर को उसने बम्बई बन्दरगाह में प्रवेश किया, पेन और नगोथना नदियों में स्थल पर उतरने के लिए कुछ दल रवाना किये, बम्बई के सामने के कुछ मराठा गाँवों को नष्ट किया, और बहुत-से आदमियों को उठा ले गये। यह लूटमार का कार्य बहुधा होता रहा। परन्तु महीने के अन्त में "शिवाजी के कुछ सैनिकों ने (राजगढ़ से) सिद्दी के आदमियों के एक दल को घेर लिया जो तट पर उसके देश में धान की फसल काट रहे थे, उनमें लगभग सौ को मार डाला और उनमें कुछ खास लोगों के सिरों को शिवाजी के पास ले गये।" सिद्दियों द्वारा उनकी प्रजा पर किये गये अत्याचारों से और उनके राज्य-क्षेत्र में कई छोटे नगरों को जला देने से "शिवाजी बहुत उत्तेजित हुए" और यह आशंका होने लगी कि मुगल राज्य में, विशेषकर सूरत पर शिवाजी का प्रत्याक्रमण अवश्य होगा। (मूल पत्र० ३७७६ और ३८७०)

फरवरी, १६७४ में एक अंग्रेजी पत्र से हमको ज्ञात होता है कि "सिद्दी और शिवाजी दोनों के बीच युद्ध बराबर जारी रहा परन्तु मन्द गति से, क्योंकि दोनों थक गये थे," और सूरत के प्रेसीडेंट से "दोनों के मध्य बीच-बचाव की प्रार्थना की गयी।" (मूल पत्र० ३६३६)

परन्तु अगले महीने (मार्च, १६७४) में सातवली नदी (अर्थात रत्न-गिरि जिले की मचकुंडी खाड़ी) में सिद्दी सम्बल ने नौसेनाध्यक्ष दौलतखाँ पर आक्रमण किया जिसमें दोनों एडमिरल घायल हुए और दोनों ओर के क्रमशः

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१०० और ४४ आदमी मारे गये। मराठे विजयी रहे और सिद्दी सम्बल ने जंजीरा के दक्षिण में २१ मील दूर पर हरीश्वर में शरण ली। मई में शिवाजी ने "किसी भी कीमत पर दाँदा-राजपुरी के गढ़ को लेने का पक्का इरादा कर लिया," और वह प्रतिदिन अपनी घिरी हुई सेना के लिए अधिक तोपखाना, गोला-बारूद तथा धन व जन भेजने लगे। इस वर्ष में शिवाजी ने राजपुरी से गोआ के उत्तर में बार्डे तक समस्त दक्षिण कोंकण को जीत लिया, परन्तु दाँदा-राजपुरी के किले को नहीं। १६७२ के अन्त तक वह जंजीरा पर असफल आक्रमणों पर बहुत-सा धन और १५,००० सैनिक खो चुके थे। (कोठी अभि० सूरत ८८; मूल पत्र० ३७६०)

१५. जंजीरा पर बड़ा हमला, १६७५-१६७६—हम पहले पढ़ चुके हैं कि शिवाजी ने सितम्बर, १६७५ में जंजीरा किले पर स्थल और जल दोनों ओर से आक्रमण करने का विचार किया था। उनका समुद्री बेड़ा अब बढ़कर ५७ पोत का हो गया था जिसमें १५ गुरवा और शेष गल्लीवत थे। इस वर्ष के जनवरी और फरवरी के महीनों में शिवाजी के तट पर सिद्दी नौसेना का अभियान असफल रहा। परन्तु नवम्बर में यह अधिक बल के साथ फिर आरम्भ हुआ और तट पर विंगुर्ला तक बेड़ा चला और उसने उस नगर को लूट लिया और उसमें आग लगा दी। घेरिया (विजयदुर्ग) और राजपुर के मराठे स्क्वाड्रन समुद्र में लड़ने के लिए पहुँच गये परन्तु सिद्दी बचकर जंजीरा को भाग निकला। (कोठी-अभि० सूरत १०७, बम्बई से सूरत, ७ सितम्बर; ओर्म, खण्ड-लेख, ४६, ५३)

कुछ महीने पूर्व शिवाजी ने इस टापू पर बहुत दल-बल से घेरा डाला था। निकटवर्ती तट पर उन्होंने बाह्य चौकियाँ और गढ़ी बनायीं, तथा उन्होंने पानी पर कुछ तैरती हुई तोपें भी तैयार कीं और मुख्य भूमि को जंजीरा के टापू तक बाँध बनाने का प्रयत्न किया।[१५] सिद्दी सम्बल के अधीनस्थ जहाजी बेड़े के आगमन पर १६७५ के अन्त में घेरा भंग कर दिया गया; परन्तु अगले वर्ष और भी अधिक बल के साथ यह प्रारंभ किया गया। पेशवा मोरोपन्त, बेड़े और पूर्व घेरे की सेना से सहयोग करने के लिए १०,००० सैनिकों को साथ

---

[१५] जंजीरा का घेरा; ओर्म, खण्ड-लेख, ४८, ५७। शिवदिग्विजय, १९२-१९६ और ९१ क० ब० में इस संघर्ष का बहुत ही अस्पष्ट वर्णन दिया गया है। यह स्पष्ट है कि इन पुस्तकों में १६८१ और इसके बाद के शम्भूजी के घेरों की कुछ घटनाओं का सम्बन्ध शिवाजी के शासन-काल से जोड़ दिया गया है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लेकर, भेजा गया (अगस्त, १६७६)। पानी पर तैरते हुए मंच बनाने के लिए आसपास के पेड़ काट डाले गये और उन पर छोटी-छोटी लकड़ियों के धुस्स बनाये गये जहाँ से दीवारों पर आक्रमण किया जा सके।

परन्तु प्रयास विफल रहा। सिद्दी कासिम अबीसीनियाई बेड़े सहित आ पहुँचा, उसने आक्रमण की पंक्ति को तोड़ दिया, प्रतिरक्षा को मजबूत कर दिया, प्रत्याक्रमण किये, तैरती हुई तोपों को नष्ट कर दिया और मराठों को घेरा डालने से हट जाने को विवश किया। (दिसम्बर का अन्त १६७६)

१६. **समुद्री युद्ध, १६७६-१६८०**—सिद्दियों के साथ शेष संघर्ष का वर्णन अंग्रेजी कोठी-अभिलेखों के आधार पर संक्षिप्त रूप में नीचे दिया जाता है।

अप्रैल, १६७६ में सिद्दी सम्बल समुद्री कमान से हटा दिया गया क्योंकि उसका अपने साथियों से झगड़ा हो गया था और अब कमान सिद्दी कासिम के हाथ में आ गयी जो अब दाँदा-राजपुरी का गवर्नर भी नियुक्त किया गया। परन्तु सम्बल के पास मुगल बेड़ा अब भी था। उसने शिवाजी के तट का पर्यटन किया (अक्तूबर में), जैतापुर (राजापुर नदी के मुहाने पर) में दिसम्बर में आग लगा दी, परन्तु वह नदी में और आगे बढ़ने से रोक दिया गया और वह जंजीरा को लौट आया जहाँ कासिम ने मोरोपन्त के अधीनस्थ पहले से ही मराठा घेरा तोड़ दिया था।

१६७७ के शुरू में दिल्ली से कड़े आदेश आ गये कि शाही बेड़ा कासिम को सौंप दिया जाय। किन्तु सम्बल कई महीनों तक इस आज्ञा की अवहेलना करता रहा, फिर यह नौबत आ गयी कि दोनों विरोधी सिद्दी नौसेनाध्यक्षों में परस्पर मारपीट हो गयी जो बम्बई में रह रहे थे तथा अंग्रेजी काउंसिल की मध्यस्थता से दोनों का झगड़ा तय हो गया और अक्तूबर के अन्त में कासिम नौसेनाध्यक्ष बना दिया गया। सम्बल निराश होकर शिवाजी की सेवा में चला गया और अपने कुटुम्बीजन तथा निजी सेवकों को अपने साथ ले गया जिनमें सबसे प्रसिद्ध उसका बहादुर भतीजा सिद्दी मिस्त्री था।

कासिम नवम्बर में बेड़ा लेकर बम्बई से चल पड़ा; अगले मार्च तक उसने कोंकण तट का चक्कर लगाया, कई जगह भूमि पर उतरा और लोगों का अपहरण किया और उन सबको (ब्राह्मण कैदियों सहित) मलिन ढंग का सेवा-कार्य करने को विवश किया। अप्रैल, १६७८ में वह मानसून के दिनों में आराम करने के लिए बम्बई लौट आया। अपनी ब्राह्मण प्रजा के साथ दुर्व्यवहार का बदला लेने के उद्देश्य से शिवाजी ने बम्बई के दूसरी ओर स्थित

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पानवेल नगर के लिए अपने नौसेनाध्यक्ष दौलतखाँ और दरिया सारंग को ४००० आदमी लेकर भेजा (जुलाई), और उनको यह आज्ञा दी गयी कि खाड़ी को पार करके बम्बई टापू में स्थित मजागोन में सिद्दी बेड़े को जला दें। परन्तु जलयानों की कमी और मानसून के वेग के कारण सेना खाड़ी को पार न कर सकी और पुर्तगालियों से व्यर्थ ही प्रार्थना करने के पश्चात कि वह उसे अपने राज्य-क्षेत्र में से निकल जाने दें, दौलतखाँ रायगढ़ को लौट गया। सिद्दी कासिम ने अपनी नावें भेजीं और अलीबाग तट को लूट लिया।

जंजीरा की गोलाबारी पुनः आरम्भ करने के लिए अक्तूबर, १६७८ में दौलतखाँ पहले की अपेक्षा अधिक तोपखाना और बड़ी सेना के सहित भेजा गया; परन्तु सूरत से रुपया न मिलने के कारण सिद्दी कासिम अपने आदमियों को वेतन न दे सका और बम्बई के बन्दरगाह में निष्क्रिय रहा आया।

अब शिवाजी की नौसेना में बढ़कर २० दो मस्तूल वाले गुराब और ४० गल्लीवत हो गये थे। "उनके पास कोई ऐसा बन्दरगाह न था जिसमें बड़े जहाज लंगर डाल सकें, जो सूरत में प्रयोग किये जाते थे अथवा जो यूरोप वाले काम में लाते थे। मलाबार और···कोंकण तटों पर (विशाल) यातायात अतीत काल से छोटे व चौड़ी पैंदी के जलयानों द्वारा होता था जो भूमि के संरक्षण में भलीभाँति शरण प्राप्त कर सकते थे। इन तटों पर युद्ध-पोत भी" उसी परिमाण के अर्थात छोटे ही बनाये जाते थे "माल ढोने वाले पोतों की अपेक्षा उनकी अधिक संख्या पर अधिक भरोसा किया जाता था (न कि उनकी बारूद पर अथवा समुद्र पर खेये जाने की क्षमता पर)। शिवाजी ने अपने समुद्री बेड़े में इस प्रथा में परिवर्तन नहीं किया।" (ओर्म, खण्ड-लेख, ७७-७८)

फरवरी, १६८० में कासिम बम्बई बन्दरगाह में से एकदम निकला, उसने पेन नदी के किनारे कई गाँवों में आग लगा दी और लगभग एक सहस्र बन्दी ले आया। इस पर शिवाजी और अंग्रेजों में अनुबन्ध हो गया कि जब तक कठोर तटस्थता का वचन न मिल जाय बम्बई में सिद्दी बेड़े को न ठहरने दिया जाय। यह वर्णन शिवाजी के देहान्त तक का है, परन्तु शम्भूजी के समय में भी मराठों द्वारा जंजीरा पर विफल आक्रमण और सिद्दियों द्वारा तटीय क्षेत्र की निर्दय लूटमार जारी रही।

१७. खंदेरी टापू के लिए अंग्रेजों से युद्ध, १६७९—जंजीरा को प्राप्त करने में कठिनाई के कारण शिवाजी निकट ही किसी अन्य टापू के विषय में सोचने लगे जहाँ वह अपना नौसेना अड्डा स्थापित कर सकें। इसके लिए उन्होंने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

खंदेरी (Kennery) को पसन्द किया जो छोटा-सा चटियल टापू था जिसका विस्तार १½ मील × ½ मील था और जो बम्बई से ११ मील दक्षिण में तथा जंजीरा से ३० मील उत्तर में स्थित था। अप्रैल, १६७२ में ही सूरत के लोगों को शिवाजी का उस टापू पर किला बनाने का इरादा मालूम हो गया। अंग्रेज प्रेसीडेण्ट ने तुरन्त इस इरादे के पूरा न होने देने के लिए निश्चय किया, क्योंकि इससे सूरत की अपेक्षा बम्बई को अधिक हानि होने की सम्भावना थी; इसका कारण यह था कि बम्बई के बन्दरगाह से ऐसा न कोई जहाज जा सकता था और न उसमें प्रवेश कर सकता था जो खंदेरी से न दिखायी पड़े। (कोठी अभि० सूरत ८७, सूरत से बम्बई २२ अप्रैल; खण्ड १०६, १ मई १६७२)

मराठे इंजीनियर बड़ी धीमी गति से काम कर रहे थे और अगले सितम्बर में भी उनकी किलेबन्दी अधूरी थी। अंग्रेजी और सिद्दी बेड़े वहाँ मिल गये और उन्होंने मराठों से काम बन्द करने के लिए कहा। शिवाजी के नौसेनाध्यक्ष दौलतखाँ और माईनायक ने देखा कि उनको अधिक शक्तिशाली सेनाओं का मुकाबला करना पड़ेगा और वे टापू से हट गये।

अगस्त, १६७९ के अन्त में शिवाजी ने खंदेरी की किलेबन्दी की योजना फिर हाथ में ली,[१६] और इस कार्य के लिए चौल में आदमी और सामान जमा किये। इस कार्य पर व्यय करने के लिए कल्याण और चौल की मालगुजारी से एक लाख होन विनिहित करने का निश्चय किया गया। १५ सितम्बर को माईनायक की कमान में चार छोटी तोपों के सहित शिवाजी के १५० आदमी उस टापू पर काम कर रहे थे और वहाँ उन्होंने चारों ओर मिट्टी और पत्थर की छोटी दीवारें उठा दीं। बम्बई के डिप्टी गवर्नर की इस प्रार्थना को कि "टापू छोड़ दिया जाय क्योंकि वह बम्बई के अधीनस्थ है" मराठों ने ठुकरा दिया क्योंकि उन्होंने कहा कि इस सम्बन्ध में शिवाजी द्वारा आदेश प्राप्त किये बिना वे ऐसा न कर सकेंगे। अतएव अंग्रेजों ने निश्चय किया कि यदि टापू को अधिकृत करने का निश्चय रखा जायगा और दौलतखाँ की अधीनता में मराठा बेड़ा किलेबन्दी की रक्षा के लिए आयेगा तो वे "उसे खुला और सार्वजनिक वैरी मानकर बलपूर्वक खदेड़ देंगे।" (ओर्म पांडुलिपि, ११६. कोठी-अभि० सूरत ४, कन्सलटेशन्स ४ और १५ सितम्बर, १६७९)

समुद्र पर अंग्रेज और मराठों में पहली मुठभेड़ १९ सितम्बर को हुई जिसमें अंग्रेजों की पराजय हुई। बड़े अंग्रेजी जहाज अब भी खंदेरी की खाड़ी

---

[१६] नींव २७ अगस्त को डाली गयी।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के बाहर खड़े रहे क्योंकि समुद्र की गहराई अभी नहीं मालूम की गयी थी और वे टापू के निकट नहीं लाये जा सके। लेफ्टिनेंट फ्रांसिस थोर्प ने कुछ 'शिवारों' द्वारा टापू पर उतरने का उग्र प्रयत्न किया परन्तु यह निश्चय ही "आदेशों के विरुद्ध था।" तट की बन्दूकों और तोपों से अंग्रेजों पर आक्रमण किया गया। अविवेक मदोन्मत्त नवयुवक अफसर दो अन्य साथियों (जान ब्रेडबरी और हेनरी वेल्श) सहित मारा गया, दूसरे कई घायल हुए और जार्ज कोल तथा अन्य कई अंग्रेज टापू पर बन्दी बना लिये गये। लेफ्टिनेंट का शिवार वैरी ने पकड़ लिया और दो अन्य शिवार बचकर खुले समुद्र में बेड़े से जा मिले। अगले दिन मराठों ने एक और शिवार पर अधिकार कर लिया क्योंकि डरपोक सार्जेण्ट गाइल्स ने कोई विरोध नहीं किया। (ओर्म पांडु-लिपि, ११६)

अक्तूबर के आरम्भ में मराठा जहाजी बेड़ा खंदेरी की सहायता के लिए तैयार हुआ। अंग्रेजों के साथ दूसरी लड़ाई १८ अक्तूबर, १६७९ को हुई।[१७] दिन निकलते ही दौलतखाँ के अधीनस्थ ६० से अधिक जलयानों का पूरा मराठा बेड़ा यकायक छोटी-सी अंग्रेजी टुकड़ी पर टूट पड़ा जिसमें रिवेंज नाम का फ्रिगेट, दो पालों के दो गुरवे, ३ शिवार और २ मंचवा थे—कुल ८ जल-यान, जिनमें पूर्वी द्वीपों के सैनिक और श्वेत मल्लाहों के अतिरिक्त २०० यूरोपीय नाविक थे। मराठे तट से चौल के कुछ उत्तर की ओर अपने किनारों से गोलाबारी करते हुए आगे बढ़े, परन्तु वे इतनी तेजी से चले कि खंदेरी के निकट लंगर डाले हुए अंग्रेजी जलयानों को उनका पीछा करने का अवसर नहीं मिला। आध घंटे के भीतर ही डोवर नामक एक अंग्रेजी गुरवा ने, जिस पर सार्जेण्ट मौलेवरर और कुछ अंग्रेज नाविक[१८] थे, कायरपन से अपने झंडे

---

[१७] बम्बई गजेटियर १३, भाग २, पृष्ठ ४७८ में पूरा वर्णन दिया गया है। मैंने इसके अतिरिक्त ओर्म के खण्ड-लेखों, ८०-८१ का भी प्रयोग किया है।

[१८] सूरत कन्सल्टेशन्स ३ दिसम्बर, १६७९: सामग्री और अन्य आवश्यक वस्तुओं की कमी होने के कारण सार्जेण्ट मौलेवरर आदि अंग्रेजों को शिवाजी गुराव 'डोवर' सहित ले गये···हमने उसके मामले पर पूरी तौर पर विचार किया और यह भी मालूम किया कि युद्ध के समय उन्होंने बड़ी कायरता प्रदर्शित की, इसलिए हम आज्ञा देते हैं कि उनका नाम उपस्थिति-रजिस्टर से काट दिया जाय, परन्तु वे एकदम नष्ट न हो जायँ इसलिए हम सिफारिश करते हैं कि केवल उनके भोजन के लिए कुछ भत्ता नियत कर दिया जाय यदि यह (मराठा बन्दीगृह में) उनको सुरक्षा-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नीचे कर दिये और उसे मराठे ले गये। दूसरा गुरबा अलग रहा और पाँच छोटे जलयान मैदान छोड़कर भाग गये, केवल 'रिवेंज' दुश्मन के बीच में अकेला रह गया। परन्तु वह बहादुरी से लड़ा और उसने पाँच मराठे गल्लीवत डुबो दिये; इस पर उनके पूरे बेड़े ने भागकर नागोथना की रोधिका पर शरण ली क्योंकि 'रिवेंज उनका पीछा कर रहा था। दो दिन बाद मराठा बेड़ा खाड़ी से निकला परन्तु अंग्रेजी जहाजों के आगे बढ़ते ही वे भाग गये। समुद्री युद्धों में तोपखाने की सहायता से लड़ने वाले "मच्छर जलयानों" की इतनी असमर्थता थी कि पचास छोटे और खुले भारतीय पोत एक बड़े और मजबूत अंग्रेजी जहाज के सामने न टिक सके। नवम्बर के अन्त में ३४ जहाजों का सिद्दी बेड़ा खंदेरी के सामने अंग्रेजों से आ मिला और प्रतिदिन टापू पर गोलाबारी करता रहा। (ओर्म ८१-८४)

परन्तु इन अभियानों का व्यय अंग्रेजी व्यापारियों को इतना अधिक महसूस हुआ कि वे युद्ध में मारे जाने वाले सैनिकों के स्थान पर नये श्वेत सैनिक नहीं भर्ती कर सकते थे, और इसलिए वे "शिवा के विरुद्ध अधिक समय तक कार्रवाई नहीं कर सकते थे जिससे कि वे कहीं इतने कमजोर न हो जायँ कि उसके बम्बई की ओर आ जाने पर वे उसकी रक्षा भी न कर सकें।" इसके अलावा मानसूनी तूफानों के समय अंग्रेज खंदेरी से अपने गश्ती समुद्री जहाज वापस मँगा लेने के लिए बाध्य थे और तब शिवा "इस अवसर को पाकर टापू की किलेबन्दी कर लेगा और उस पर सामग्री भेज देगा जिससे हमारी समस्त योजनाएँ धूल में मिल जायेंगी।" इसलिए सूरत काउंसिल ने बुद्धिमानीपूर्वक तय किया (२५ अक्तूबर) कि समय रहते ही अंग्रेज सम्मान पूर्वक वापस लौट आयें" और या किसी मित्र मध्यस्थ के द्वारा शिवाजी से इस भेद को दूर करें अथवा उनसे विरोध करने का दायित्व बेसीन के पुर्तगाली गवर्नर या सिद्दी पर डाल दें, और इस प्रकार "माननीय कम्पनी को इस अभिशाप से मुक्त कर दें।" सूरत कम्पनी स्वयं खतरे में थी और बम्बई की सहायता के लिए कोई यूरोपीय सैनिक नहीं दे सकती थी। (कोठी अभि०

पूर्ण ढंग से भेजा जा सके।" (कोठी-अभि० सूरत, खण्ड ४)। यह मौले-वरर के दिनांक ६ नवम्बर के पत्र के उत्तर में लिखा गया जिसमें उसने घायलों के लिए भोजन-सामग्री, वस्त्र और दवाएँ माँगी थीं और उसमें यह भी लिखा था कि मराठा किले (सूरगढ़?) में २० अंग्रेज, फ्रेंच और डच, २८ पुर्तगाली और ९ पूर्वी द्वीपों के नाविक थे। (ओर्म पांडु-लिपि, ११६)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सूरत ४, कन्सल्टेशन्स २५ और ३१, अक्तूबर ३, ८ और १२ दिसम्बर १६७९)

बम्बई के विरुद्ध शिवाजी द्वारा आतंककारी बदला लगभग घटित हो गया। "खंदेरी पर अपने बेड़े की पराजय से अति कुपित होकर" शिवाजी ने कल्याणभिवाँदी में ४००० सैनिक भेजे जिससे वह थाने के मार्ग से बम्बई में उतर जायँ। बेसीन के पुर्तगाली गवर्नर ने उनको अपने देश में होकर निकलने की अनुमति न दी, अतएव आक्रमकों ने पानवेल (अपने राज्य क्षेत्र में ही एक नगर) को कूच किया जो ट्राम्बे टापू के सामने था और उन्होंने वहाँ सात शिवार ले जाने का निश्चय किया (अक्तूबर १६७९ का अन्त)। बम्बई के निवासी अत्यन्त भयभीत हो गये। डिप्टी गवर्नर ने अति रोषपूर्ण बातें कीं, परन्तु प्रेसीडेंट और सूरत की काउंसिल ने समझौता करने के लिए तय किया। राजापुर से शिवाजी का नम्र पत्र पाकर उन्होंने "नम्र उत्तर दिया कि हमको इस बात का बड़ा दुख हुआ है कि खंदेरी जैसे छोटे-से स्थान की किलेबन्दी करने पर आपके आदमियों ने बम्बई के अंग्रेजों को आपसे लड़ने का मौका दिया, जो आप जैसे महान और योग्य राजा की शान के विरुद्ध है; और यद्यपि हमको उस स्थान पर अधिकार है, तथापि अपनी नेकनीयती दिखाने के लिए हम बीती हुई बात को भूल जाने को तैयार हैं, और इसलिए हमने बम्बई के डिप्टी गवर्नर को आदेश दिया है कि हमारे व आपके बीच के वर्तमान भेदों पर वह उन आदमियों से बातचीत करें जिन्हें आप नियुक्त करें।" इस शान्तिपूर्ण भावना पर डिप्टी गवर्नर "अत्यन्त असन्तुष्ट" था और उसकी राय थी कि शिवाजी के देश और बेड़े के विरुद्ध तीव्र आक्रामक नीति ही "इस झगड़े को जल्द निपटा सकती है जो माननीय कम्पनी के लिए लाभप्रद हो।" परन्तु सूरत के उच्च अधिकारियों ने अपना पूर्व आदेश ही दोहराया कि बम्बई को शिवाजी के साथ युद्ध नहीं करना चाहिए और "उनकी खंदेरी की गोलाबारी की योजना या तो सन्धि द्वारा अथवा सिद्दी के बेड़े की सहायता से उनका विरोध करके तय होनी चाहिए।" दो अंग्रेजी कप्तानों से राय ली गयी और उन्होंने भी यही सम्मति दी। दिसम्बर के अन्त में मराठों ने कई तोपें थाल (मुख्य भूमि पर) पहुँचा दीं और उनसे उन्देरी में खराब मौसम के कारण आश्रय लेने वाले एक छोटे अंग्रेजी जलयान पर गोलाबारी शुरू कर दी। (ओर्म पाण्डुलिपि, ११६)

परन्तु बिना लड़े हुए टापू पर मराठा किलेबन्दी को रोकना व्यर्थ सिद्ध हुआ, और अंग्रेजी जहाज खंदेरी से हटा लिये गये (जनवरी १६८०), जो

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

"(सिद्दियों और अंग्रेजों के विरुद्ध) जमा रहा और जिसकी सबने प्रशंसा की" यहाँ से मानसून के कारण अन्य सब जहाज हट गये और यह शिवाजी के हाथ में ही रहा। (कोठी अभि० सूरत १०८, बम्बई से सूरत, १ जनवरी, १६८०)

किन्तु सिद्दी ने खंदेरी के निकट केवल एक मील परिधि वाले एक छोटे टापू उन्देरी (Henery) को ३०० आदमी और १० बड़ी तोपों सहित ले लिया और उसकी किलेबन्दी कर दी (६ जनवरी, १६८०) और थाल पर स्थित मराठा तोपों को शान्त करने की कोशिश की; नागोथन नदी से निकलकर दौलतखाँ अपने बेड़े सहित आया और दो रात उन्देरी पर उसे शीघ्रता से ले लेने की आशा से आक्रमण किया, "परन्तु चौल से ही सिद्दी की सावधानी और उत्तम जासूसी के कारण उसकी योजना विफल रही।" २६ जनवरी, १६८० को दौलतखाँ ने टापू पर तीन विन्दुओं पर आक्रमण किया और यह प्रयास किया कि २००० आदमी उतारकर उस पर अधिकार कर ले। परन्तु चार घण्टे के संघर्ष के पश्चात वह चौल को वापस लौट आया—इसमें उसके ४ गुराब और ४ छोटे जलयान नष्ट हो गये, २०० आदमी मारे गये, १०० घायल हुए, कुछ कैद कर लिये गये[१६] और वह स्वयं बहुत घायल हो गया। सिद्दी की ओर के केवल ४ आदमी मारे गये और ७ घायल हुए, परन्तु उसके दो बड़े जहाज, पाँच तीन मस्तूल वाले छोटे जहाज, एक कैच और २६ गल्लीवत में से एक की भी हानि नहीं हुई, जिन पर ७०० आदमी थे—मराठों के अधिक खुले हुए और अधिक छोटे जहाजों की अपेक्षा अबीसीनियाई जहाजों की ऐसी श्रेष्ठता थी। शम्भूजी के शासन-काल में भी उन्देरी सिद्दी के हाथों में रहा, और इसने मराठों द्वारा खंदेरी पर अधिकार को बेकार कर दिया; जब-कभी दोनों टापू एक-दूसरे पर केवल गोलाबारी करते रहे। (वही, ३१ जनवरी भी)

---

[१६] उन्देरी से बम्बई भेजे जाने वाले दो पत्रों में लिखा है कि दौलतखाँ के बेड़े में ३० गुराब और गल्लीवत थे और उसके १३७ आदमी हताहत हुए। २८ जनवरी के पत्र में यह भी लिखा है कि "शिवाजी ने दौलतखाँ को जोर की धमकी दी कि यदि वह उन्देरी लेने में विफल रहा और नेगाँव को फिर कभी वापस आया तो उसकी जान की खैर नहीं है।" ६ मार्च को दौलतखाँ पैर में घायल होकर अपने बेड़े से राजापुर नगर में वापस आ गया। (ओर्म पाण्डुलिपि, ११६)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय १२

कर्नाटक का आक्रमण, १६७७-१६७८

१. मद्रास का तट : उसकी धन-दौलत।
२. बीजापुरी कर्नाटक में आपसी फूट।
३. पूर्वी कर्नाटक में शिवाजी के दावे।
४. कर्नाटक अभियान की राजनयिक तैयारियाँ।
५. हैदराबाद के लिए कूच।
६. हैदराबाद में शिवाजी का भव्य प्रवेश।
७. शिवाजी की कुतुबशाह से भेंट।
८. गोलकुंडा के साथ मैत्री।
९. श्रीशैल के लिए प्रस्थान।
१०. जिंजी पर अधिकार और वैलोर का घेरा।
११. आक्रमित देश की दशा।
१२. शेरखाँ लोदी के साथ संघर्ष।
१३. कोलेरन नदी पर शिवाजी।
१४. शिवाजी और व्यांकोजी की भेंट।
१५. उनका घर लौटना तथा विजय।
१६. व्यांकोजी के साथ युद्ध—अन्तिम समझौता।
१७. आक्रमण-काल में यूरोपीय व्यापारी।
१८. व्यांकोजी का वास्तविक चरित्र।

१. मद्रास का तट : उसकी धन-दौलत—जून १६७४ में शिवाजी के वैभवशाली राज्याभिषेक से उनके कोष में बहुत कमी आ गयी। तब से कोई बड़ी दौलत उनके हाथ नहीं लगी, यद्यपि उनके घुमक्कड़ गिरोहों ने आदिलशाही प्रदेश में कई स्थानों पर धावे किये। इसके साथ ही मुगलों तथा बीजापुरियों से उनके १६७४ और १६७५ के युद्ध तथा फौंदा का उनका घेरा उन्हें बड़े महँगे पड़े थे, जहाँ उन्हें बीच-बीच में हार भी खानी पड़ी थी, जबकि मई १६७५ में सुन्दर प्रदेश या कनारा (कन्नड़) उच्च प्रदेश पर उनका आक्रमण असफल हो गया था। १६७६ के प्रारम्भिक मासों में वह एक लम्बी बीमारी के शिकार हुए जिसके परिणामस्वरूप एक बड़े अरसे तक उन्हें मजबूरन निष्क्रिय रहना पड़ा।

अतएव वह धन-प्राप्ति के नये क्षेत्रों की खोज में थे। मुगल राज्य-क्षेत्र में, सूरत उनके दो हमलों से जर्जरित हो चुका था जबकि रामनगर के कोली प्रदेश

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तथा सूरत के पास जव्हार पर उनके स्थायी कब्जे से उस पत्तन में इतना भय छा गया था कि उसका व्यापार तथा धन लगभग समाप्त हो गये थे। धनवान कनारा तट-प्रदेश का उनकी लूट से पहले ही सफाया हो चुका था। राजप खवासखाँ के अयोग्य शासन के दौरान बीजापुर राज्य की अव्यवस्था और कुशासन तथा दरबार में अफगानी एवं दक्षिणी दलों के आपसी झगड़ों से राज्य का मध्यभाग इतना दरिद्र हो गया था कि वहाँ से किसी प्रकार की लाभ-प्राप्ति की लालसा नहीं की जा सकती थी, आदिलशाही राज्य के केन्द्र-भाग में आक्रमण करने का यह परिणाम हो सकता था कि राजधानी के सभी परस्पर विरोधी तत्त्व आक्रमण का विरोध करने के लिए एक हो जाते।

किन्तु इस राज्य की बाहरी सीमा पर एक प्रान्त था जहाँ कि अनेक वर्षों से शान्ति तथा समृद्धि रही थी और जहाँ अतुल धन था। मद्रास तट का कर्नाटक मैदान उस समय सोने की भूमि समझा जाता था। यह अत्यन्त उपजाऊ मैदान था जहाँ के निवासी बहुत सरल जीवन व्यतीत करते थे तथा बहुत कम भोजन व कपड़े का उपभोग करते थे। इसके लम्बे समुद्री किनारे के अनेक पत्तनों द्वारा अति प्राचीन काल से खूब व्यापार होता था जबकि भीतरी भागों की समृद्ध खानों से मैदानों में धन का प्रवाह होता था। इस प्रकार प्रति वर्ष राष्ट्रीय आय में खूब वृद्धि होती थी। इसका एक अंश वैभवपूर्ण मन्दिरों पर व्यय किया जाता था जिनके लिए यह प्रदेश अब भी प्रसिद्ध है; परन्तु अधिकतर धन गाड़कर रखा जाता था। बहुत आरम्भ के समय से कर्नाटक अपने गड़े हुए कोष के लिए प्रसिद्ध रहा है और वहाँ विदेशी लुटेरे आकर्षित होते रहे हैं। (दिल० १२३ ए)

यहाँ की भूमि से समुद्रगुप्त तथा पश्चिमी चालुक्य, मलिक काफूर व मीर जुमला, लूट का बहुत सामान ले गये थे। और १७वीं शताब्दी के अन्त में, मीर जुमला तथा मुहम्मद आदिलशाह, शिवाजी और नसरतजंग के हाल के हमलों के बाद भी, औरंगजेब की लालसा को प्रलोभित करने के लिए वहाँ पर्याप्त धन शेष था। जैसा कि उसने अपने सेनानी को लिखा था (लगभग १७०३), "कर्नाटक में पुराने जमाने की बहुत-सी दौलत दबी पड़ी बतायी जाती है। तंजौर का वह निम्न वंश का (बे-असल) जमींदार, शिवाजी के पिता उस शाहजी का पोता था जो अब नरक में है, उस प्रदेश पर जबरदस्ती कब्जा किये बैठा है। उसका राज्य शक्तिशाली नहीं है। स्वर्गवासी सिद्दी मसूदखाँ के अनुसार वहाँ का राजस्व ७०-८० लाख होन के लगभग है। यह उसके पास क्यों रहे? मालूम करो कि इस प्रदेश की क्या परिस्थिति है और किस प्रकार

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उसके हाथ से इसे छीना जा सकता है।" (रुक्कात, संख्या १६३)। अब इस वास्तविक सोने की भूमि की ओर शिवाजी की नजर गयी। इस सीमान्त प्रदेश पर आक्रमण करने से बीजापुर की सरकार शायद ही उत्तिष्ठ होती क्योंकि कर्नाटक प्रान्त कुछ अर्ध-स्वतन्त्र जागीरदारों की जागीरों से मिलकर बना था और केवल वे ही उसकी रक्षा में दिलचस्पी रखते थे। इसके अलावा शिवाजी का उसके एक भाग पर न्यायसंगत स्वत्व भी था।

जिंजी का बड़ा सूबा जिसे अधिकृत रूप से बीजापुरी कर्नाटक पैनघाट कहते थे, तीन जागीरों में बटा हुआ था; उसका एक-तिहाई शाहजी के उत्तराधिकारी के रूप में व्यंकोजी के पास था, और शेष दो-तिहाई आदिलशाही राज्य के सरदारों के पास था। शिवाजी ने इन दोनों मुस्लिम जागीरों को लेने का विचार किया, उनमें शाहजी की आधी जागीर जो अपने भाई के हाथ से उन्होंने छीनी थी मिलायें और इस प्रकार बड़ा पूर्व-तट-राज्य कायम कर दें जो वह अपने एक पुत्र को स्वतन्त्र राज्य के रूप में उत्तराधिकार में दें और उनका दूसरा पुत्र महाराष्ट्र के राज्य को विरासत में प्राप्त करे। उन्होंने अपनी इस योजना को, जो खतरे और लाभ दोनों से एकसमान पूर्ण थी, कार्यान्वित करने के लिए १६७७ वर्ष को चुना, और एक वर्ष की अवधि के भीतर ही उनकी पूर्ण सफलता ने साबित कर दिया कि वह कितने सफल अवसरवादी थे।

२. **बीजापुरी कर्नाटक में आपसी फूट**—सत्रहवीं शताब्दी के आरम्भ में विजयनगर साम्राज्य के पतन के पश्चात उसके मैसूर पठार तथा कर्नाटक के मैदानों पर स्थित विभिन्न सूबों ने एक सामान्य स्वामी का आधिपत्य मानना बन्द कर दिया जो उनमें मेल बनाये रखता और उनकी रक्षा करता। अगणित स्थानीय सरदार उठ खड़े हुए, जो एक-दूसरे से नितान्त पृथक थे और अपने पड़ोसियों से निरन्तर लड़ते रहे थे जिसका कारण था राज्य-विस्तार की हानिकारी लालसा। इन धनी देशों के अरक्षित और अस्तव्यस्त दशा के कारण अधिक संख्या में लुटेरे हो गये। जैसा कि १६५९ में त्रिचनापल्ली के जेजुइट मिशनरी प्रोंज़ा ने लिखा है, "वे आपसी ईर्ष्या और विवेकहीन कार्यों के द्वारा आवाहन करते थे कि सारे देश पर मुसलमानों का आधिपत्य हो जाय···।"

पहले तो जिंजी, तंजौर और मदुरा के हिन्दू नायकों ने अपने राजा विजयनगर के श्रीरंगा (जो उस समय वैलोर में दरबार कर रहा था) के विरुद्ध विद्रोह किया। मदुरा के शासक ने गोलकुण्डा की सहायता माँगी और वह प्राप्त हो गयी तथा उसने वैलोर राज्य जीत लिया और श्रीरंगा को निकाल दिया जिसने मैसूर में अपने सामन्त के पास शरण ली। तब मदुरा के उसी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नायक ने आदिलशाह को आमन्त्रित किया जिसने जिंजी किले को ले लिया और उस धनी सूबे को जीत लिया (१६४९)। फिर, अधिक दक्षिण की ओर बढ़कर उसने तंजौर और मदुरा के नायकों को विपुल धन देने और वार्षिक कर देने का वचन देने को बाध्य किया। (मिशन डू मदुरे, ३. ४१-४७)

१६३६ में मुगल साम्राज्य के साथ संधि के द्वारा बीजापुर और गोलकुण्डा राज्यों की उत्तरी और पश्चिमी सीमाएँ निश्चित हो गयी थीं, इसलिए अब ये राज्य अपनी राज्य-लिप्सा पूरी करने के लिए केवल दक्षिण और पूर्व की ओर ही बढ़ सकते थे, और अगले अठारह वर्षों में उन्होंने मैसूर और पूर्वी कर्नाटक का बहुत-सा भाग जीत लिया। इस क्षेत्र में गोलकुण्डा ने कड़ापा और पलार नदी तक उत्तरी आर्काट के जिले, तथा चिकाकोल से मद्रास तक समुद्र के किनारे की समस्त भूमि पर अधिकार कर लिया। बीजापुर ने अपना आधिपत्य निम्न प्रदेशों पर बढ़ा लिया था—कर्नूल का जिला, बंगलौर के उत्तर में समस्त मैसूर पठार और पलार व कोलेरन नदियों के बीच में मद्रास का मैदान, अर्थात् वैलौर से तंजौर के निकट तक का समस्त प्रदेश। बीजापुरी सेनापतियों ने, बिना इन राज्यों को जीते हुए, तंजौर और मदुरा (१६५०-१६६५) में छापे बराबर जारी रखे। उन्होंने केवल जिंजी सूबे पर अधिकार रखा जहाँ १६७३ में शासन की बागडोर तीन ऐसे सेनापतियों के हाथ में थी (इनमें एक व्यंकोजी था)। (वही, ३. २०१)

हिन्दुओं में आत्मनाशी युद्ध अब भी जारी रहे। अन्ततः मदुरा के नायक ने तंजौर का राज्य छीन लिया, और उसके सदा से विश्वासघात शासक विजय राघव को मार डाला (अप्रैल, १६७४)। मृत राजा के लड़के ने आदिलशाह से अपील की और उसने व्यंकोजी को तंजौर पर आक्रमण करके उसे पुरानेराज-वंश को सौंप देने की आज्ञा दी। एक वर्ष तक रुकने और षड्यन्त्र रचने के पश्चात और अधिक शक्ति के स्थान पर वैरी में मतभेद उत्पन्न करने के पश्चात व्यंकोजी ने १२ जनवरी, १६७६ को राजधानी पर अधिकार कर लिया, देश को जीत लिया, तंजौर के राज-सिंहासन पर अधिकार कर लिया[1] और

---

[1] तामिल पुस्तक 'भोसल-वामशाम' में तंजौर पर इस अधिकार की तारीख २३ जनवरी, १६७५ दी गयी है जिसमें एक वर्ष की भूल है। सही तारीख १२ जनवरी, १६७६ है, जैसा कि पांडिचेरी के संस्थापक फ्रांकोई मार्टिन की दैनिकी से मालूम होता है—खण्ड १. ३०३, २. ९ और ३५। व्यंकोजी को महाराज तंजौर के रूप में ५ मार्च, १६७६ को राजगद्दी पर बैठाया गया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अपने को स्वतन्त्र राजा के रूप में सिंहासनारूढ़ किया। जिंजी के सूबे में कोलेरन नदी के उत्तर में उसके पिता की जागीरें अब भी उसके अधिकार में थीं। आदिलशाह ने अपने सेनापति के इस धृष्ट विद्रोह के लिए उसे दण्ड देने के लिए एक सेना भेजी, मदुरा के नायक ने बीजापुरियों की सहायता के लिए अपनी सेनाएँ भेजीं, और मैसूर ने भी अपनी सेना एकत्र की जिसका अभिप्राय यह मालूम होता था कि वह मदुरा पर आक्रमण कर दे जब उसका नायक व्यंकोजी से निपट रहा हो (१६७६)।

केन्द्रीय सरकार का आधिपत्य बीजापुरी कर्नाटक से उठ गया। १६७२ में लड़का सिकन्दर बीजापुर की गद्दी पर बैठा और राजधानी में उसका संरक्षक बनने के लिए दो विरोधी दलों में झगड़ा होने लगा। जब उसके पहले राजप खवासखाँ को बहलोलखाँ ने मार डाला (१८ जनवरी, १६७६), राज्य के मध्य भाग में खुला गृह-युद्ध आरम्भ हो गया और साथ ही सूबे के गवर्नरों ने किसी को अपना उच्च पदाधिकारी मानने से इनकार कर दिया और वे अपना-अपना प्रभुत्व बढ़ाने में लग गये।

कर्नाटक के मैदान में, १६७६ में बीजापुर के स्थानीय गवर्नर दो थे—नासिर मुहम्मदखाँ (एक पूर्व वजीर खान मुहम्मद खाने-खाना का लड़का, और खवासखाँ का भाई) जिसका मुख्य स्थान जिंजी था और जिसका अधिकार-क्षेत्र पांडीचेरी तक फैला था, और उसके दक्षिण में शेरखाँ लोदी (बहलोलखाँ का एक अफगान आश्रित) जिसका मुख्य स्थान वली-गन्द-पुरम था। आगे चलकर दक्षिण में तंजौर और मदुरा के हिन्दू राजा थे।

परन्तु इन बीजापुरी सामन्तों में न परस्पर सौहार्द्र था और न शक्ति। शेरखाँ, पांडिचेरी के फ्रांसीसी व्यापारियों के हथियारों की सहायता से जिंजी राज्य को झपटने पर तुला हुआ था। परन्तु उसके स्वप्न की यह सीमा न थी। उसका विचार था कि इन भागों से अपने एकमात्र प्रतिद्वंद्वी को इस प्रकार हटाकर फ्रांसीसी सैनिकों को नौकर रखे, कावेरी के पार के हिन्दू नायकों से उनका अतुल धन छीन ले और इन साधनों से स्वयं अपने लिए गोलकुण्डा राज्य को जीत ले!

और देश के हिन्दू शासक भी किसी तरह कम विभक्त और विवेकहीन न थे। व्यंकोजी "मदुरा के नायक का जानी दुश्मन था," और उसने जून, १६७६ में पड़ोस के छोटे राजाओं (पोलीगारों) को जीतने के लिए फ्रांसीसी सेना और जहाज माँगे। इस प्रकार मदुरा के शासक ने दक्षिण में और आगे युद्ध करने के लिए फ्रांसीसियों से सैनिक सहायता माँगी (जनवरी, १६७५)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शेरखाँ लोदी ने आक्रमण आरम्भ किया। उसने जिंजी के पोर्टो नोवो और कई अन्य स्थानों को ले लिया और अन्त में १४ सितम्बर, १६७६ को फ्रांकोई मार्टिन के अधीनस्थ एक फ्रांसीसी सेना ने रात को आक्रमण करके वल्दौर के किले पर (पाण्डिचेरी से १२ मील पश्चिम में) उसकी ओर से गोलाबारी शुरू कर दी। उस महीने के अन्त में उसने नासिर मुहम्मद को पूरी तरह पराजित कर दिया और उसने भागकर जिंजी में शरण ली। फिर टिंडावनम का घेरा डाला गया। अन्त में नासिर मुहम्मद ने लगभग ४ नवम्बर, को वल्दौर, पोर्टो नोवो और अपने राज्य-क्षेत्र का अधिकांश भाग शेरशाह को देकर सन्धि कर ली। परन्तु वह भलीभाँति जानता था कि शेरखाँ उसके पास जिंजी का किला भी न रहने देगा, और उसे अपने राजा से रक्षा की कोई आशा नहीं हो सकती थी जो इस समय शेरखाँ के परिवारीय और संरक्षक वहलोलखाँ के हाथों में पूर्ण रूप से था।

इस निराशा की दशा में नासिर मुहम्मद को गोलकुण्डा दरबार ने अपनी ओर आने को आमन्त्रित किया और शेरखाँ की भूमि को जीतने के लिए अपने साथ मिलने के लिए कहा। बीजापुर सरकार की शक्तिहीनता और उसके स्थानीय कर्णधारों के मध्य इस गृह-युद्ध ने कुतुबशाह को प्रलोभित किया कि वह बीजापुरी कर्नाटक पर सुगमता से अधिकार कर ले। निरंकुश शासकों में भूमि-स्वत्व सदा ही एक बड़ी लालसा रही है। परन्तु एक मुख्य कारण था जिसके वशीभूत होकर गोलकुण्डा के सुल्तान ने कर्नाटक में विजय की नीति को अपनाया। उसका शक्तिशाली वजीर मदन्ना पण्डित धर्मनिष्ठ हिन्दू था और मदन्ना का भतीजा गोपन्ना वैष्णव सन्त था जिसकी खातिर, कहा जाता है कि, देवता भी चमत्कार दिखाने को तैयार हो जाते थे। मन्त्री की बड़ी प्रबल इच्छा थी कि बीजापुरी कर्नाटक को कहने लिए तो गोलकुण्डा के लिए जीत लिया जाय परन्तु वास्तव में उसे हिन्दू शासन में रखा जाय, जैसा कि १६४८ से पूर्व था।

इस पवित्र योजना को पूरा करने के लिए शिवाजी से बढ़कर और कोई अभिकर्ता नहीं मिल सकता था जो सदा विजयी कप्तान थे और उस युग के हिन्दू पुनरुत्थान की तलवार थे। मदन्ना ने अपने स्वामी को इस बात पर राजी कर लिया कि वह शिवाजी के साथ संयुक्त अभियान करे जिसमें कुतुबशाह निष्क्रिय साझी के रूप में युद्ध के लिए व्यय और गोला-बारूद तथा अन्य सामग्री दे और मराठा राजा सक्रिय साझी के रूप में अपनी सेनाओं से लड़े। बीजापुरी कर्नाटक को "गोलकुण्डा के राजा के नाम से तथा उनके लाभ के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लिए जीतना था," और शिवाजी को अपने परिश्रम के बदले लड़ाई का समस्त लूट का माल और मैसूर की उच्च भूमि पर भूमिक्षेत्र मिलने थे।

कुछ समय पूर्व से शिवाजी की आन्तरिक परिषद में पूर्व कर्नाटक पर आक्रमण करने की बात सोची जा रही थी। जुलाई, १६७५ में ही फ्रांसीसी डाइरैक्टर मौन्शियर बैरन ने राजापुर जाकर मराठा राजा की महत्त्वाकांक्षा के विषय में उनके प्रधान मंत्री से जानकारी प्राप्त की थी।[२]

३. **पूर्व कर्नाटक पर शिवाजी के धावे**—शिवाजी की सदा भाग्यशीलता के अनुसार उन्होंने अपने आयोजित आक्रमण के पहले उस प्रदेश का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। शाहजी ने अपने छोटे पुत्र व्यंकोजी के लिए संरक्षक और राजप के रूप में रघुनाथ नारायण हनुमन्ते को नियुक्त किया था और उसने इस सूबे पर निरंकुश होकर राज्य किया था। जब व्यंकोजी बड़ा हुआ तो यह स्वाभाविक ही था कि वह अपने स्वयं के राज्यक्षेत्र का स्वामी बनना चाहता था और अपने स्वामी का आधिपत्य अब नहीं मानना चाहता था। अपनी सत्ता के दीर्घकाल में रघुनाथ ने राजस्व[3] का बहुत-सा धन बेईमानी से ले लिया था और अब उससे हिसाब माँगा जा रहा था।

इस पर उसने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया, बनारस की पवित्र तीर्थयात्रा करने के बहाने अपने स्वामी से छुट्टी ले ली और अपने छोटे भाई जनार्दन और दोनों के सारे परिवार और सम्पत्ति के सहित तंजौर छोड़ दिया। परन्तु बूढ़ा पूर्वमन्त्री अब भी शक्ति और धन के देवताओं की पूजा-अर्चना करता था। उसने आदिलशाह के पवित्र पूजा-गृह की यात्रा की जहाँ उसकी ख्याति और निजी पटुता का मुस्लिम सरकार पर इतना प्रभाव पड़ा कि उसे उच्च मन्त्री के रूप में सेवा करने के लिए दबाया गया। परन्तु उसने यह देख लिया कि आदिलशाही राज्य-सत्ता डगमगा रही थी, और इसलिए उसने मुस्लिम स्वामी के यहाँ सेवा करने के बजाय शिवाजी के आमन्त्रण को उनके दरबार में जाने के लिए

---

२ कैपेलिन, १५५, मार्टिन के संस्मरण २. २२ (मैत्री का प्रस्ताव निरर्थक) बर्ट्राड का 'मदुरा का मिशन', प्रथम संस्करण, अंश ३

3 मार्टिन के अनुसार शम्भू के राजगद्दी पर बैठते ही गवर्नर को उसके 'अत्यन्त दूषित आचरण' के कारण उसकी अकस्मात निन्दा की गयी, परन्तु बाद को वह पुनः सेवा में ले लिया गया। (कैपे० १६७)। यहाँ आशय अधिकारी रघुनाथ दीवान से मालूम होता है, क्योंकि शान्ताजी फिर बहाल नहीं किया गया। मेमोयर्स २. २१२. ६१ क० व० ७५ (रघुनाथ व्यंकोजी के यहाँ से चला गया, क्यों ?)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

स्वीकार कर लिया । रघुनाथ मराठा राजधानी में चला गया और वहाँ अति उच्च सम्मान के साथ उसका स्वागत किया गया ।

परन्तु अपने हाल के स्वामी के विरुद्ध उसका बदला अब भी शेष था । शिवाजी के साथ निजी भेंटों में रघुनाथ सदा उनके पिता द्वारा व्यंकोजी को प्रदत्त कर्नाटक राज्य के बड़े विस्तार तथा धन-दौलत का वर्णन करता रहा, और राजा से आग्रह करता रहा कि अपने सौतेले भाई से इस विरसात के वैध भाग पर उसको अधिकार करना चाहिए । हनुमन्ते परिवार के विस्तृत स्थानीय ज्ञान और प्रभाव को उसने उसकी विजय करने के लिए शिवाजी की सेवा में अर्पित करने का वचन दिया ।[४]

४. **कर्नाटक अभियान की राजनयिक तैयारियाँ**--पड़ोस के प्रदेशों की राजनीतिक स्थिति उपर्युक्त योजना के पूर्णतया अनुकूल थी । पंजाब में दो वर्ष की उपस्थिति के बाद मुगल सम्राट २७ मार्च को दिल्ली अवश्य लौट आया था, किन्तु उसकी सर्वोत्तम सेना अब भी उत्तर-पश्चिमी सीमान्त प्रदेश में पहाड़ी जनों का विद्रोह दबाने में लीन थी । बीजापुर में अफगान नेता बहलोलखाँ नाबालिग नरेश सिकन्दर का अभिभावक बन बैठा था (११ नवम्बर, १६७५), और उसने सिंहासनच्युत राजप खवासखाँ की हत्या कर दी थी (१८ जनवरी, १६७६) । किन्तु कबालियों के प्रति उसके पक्षपात के कारण सरकार एक प्रकार के "अफगान शासन" में बदल गयी थी जिससे कि दक्षिणी दल और उसके मित्र अबीसीनियाइयों का विरोध जाग्रत हुआ । दक्षिणियों ने खिज्रखाँ की हत्या कर दी जो कि नये राजप का दायाँ हाथ था और उसका सबसे योग्य अधिकारी था, तथा राज्य भर में अफगानों और दक्षिणियों में गृह-युद्ध आरम्भ हो गया (फरवरी) । और भी बुरी बात यह हुई कि मुगल वायसराय बहादुरखाँ से भी बहलोल ने विरोध मोल ले लिया जिससे उसने खुले रूप से दक्षिणी दल का साथ दिया तथा ३१ मई को बीजापुर के विरुद्ध

---

४ तंजौर को व्यंकोजी ने १६७५ में जीता, न कि शाहजी ने । यद्यपि बीजापुरियों ने तंजौर के किले को ले लिया था (मार्च, १६५९) और बाद को दो वर्ष के लिए इसके राज्यक्षेत्र पर भी अधिकार कर लिया था, परन्तु अकाल, महामारी और परस्पर फूट के कारण उनको देश छोड़ने के लिए विवश होना पड़ा (१६६२) । उन दो बीजापुरी सेनाध्यक्षों में से शाहजी एक था जो उसकी सेना की कमान में था, दूसरा मुल्ला था । दूसरे वर्ष उसने (तंजौर के नायक की सहायता से) त्रिचनापल्ली पर आक्रमण किया, परन्तु मदुरा के शासक ने उसे जिंजी के लिए भगा दिया । (मिशन ३. ५१, ११९-१२३)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

एक अभियान जारी किया जो एक वर्ष से अधिक रहा। निकम्मी और लड़-खड़ाती आदिलशाही सरकार ऐसे समय में शिवाजी को परेशान करने की स्थिति में नहीं थी।

शिवाजी के चतुर राजनय ने दक्षिण के मुगल वायसराय पर पूरी विजय पा ली थी। वहादुरखाँ, दो वर्ष तक शिवाजी से लड़ने के पश्चात थक गया था, जिसमें उसे उतनी तो हारें खानी पड़ी थीं जितनी कि उसने सफलताएँ प्राप्त की थीं और जिसका कोई निश्चित परिणाम निकलता दिखायी नहीं देता था। उसने शिवाजी से मैत्रीपूर्ण सन्धि करने का इशारा किया था तथा उनके और मुगल सम्राट के मध्य शान्ति स्थापित कराने और उनके पुत्र शम्भूजी के ६००० अश्वों की कमान दिलाने का प्रस्ताव किया (जून, १६७५)। और अब बीजापुर के विरुद्ध मुगल अभियान प्रारम्भ करने से पूर्व (मई, १६७६), दायें पार्श्व में स्थित शिवाजी को मित्र बनाना उसके लिए उतना ही लाभदायक था जितना कि शिवाजी के लिए अपने कर्नाटक आक्रमण के समय पीछे की ओर के मुगलों की तटस्थता थी। जब दो दल शान्ति में अपना-अपना लाभ देखते हैं, तो शर्तें तत्काल तय हो जाती हैं।

शिवाजी ने अपने मुख्य न्यायाधिपति नीराजी रावजी को, जो "तर्क-कुशल" थे, वहादुरखाँ के पास बहुमूल्य उपहार देकर भेजा जिसका प्रयोजन यह था कि कर्नाटक में उनकी अनुपस्थिति के समय, जिसकी विजय में एक वर्ष लगने की सम्भावना थी, वह तटस्थ रहे। वहादुरखाँ को बहुत बड़ी रकम की घूस निजी प्रयोग के लिए चुपचाप दी गयी जबकि कुछ अन्य रकम खुले रूप से सम्राट के लिए कर के रूप में प्रदान की गयी और वहादुरखाँ ने मराठों से विधिवत सुलह कर ली। (सभा० ८५)

इस प्रकार अपने पार्श्व तथा पृष्ठ को खतरे से मुक्त करके, शिवाजी ने अपने सबसे लम्बे अभियान की तैयारी आरम्भ कर दी। नेताजी पाल्कर दस वर्ष तक दिल्ली सरकार की अधीनता में मुसलमान के रूप में जीवन बिताकर जून १६७६ में महाराष्ट्र आ गया था तथा अब उसे धार्मिक अनुष्ठान द्वारा "पुनः हिन्दू बना लिया गया था" और कदाचित कोई महत्त्वपूर्ण सैनिक कमान उसके सुपुर्द की गयी थी यद्यपि मराठा इतिहासकार उस अभागे धर्म-परिवर्तक के विषय में चुप हैं। राज्य की रखवाली के लिए राज्य के रूप में प्रधानमन्त्री (पेशवा) मोरे त्रिम्बक पिंगले को तथा उसकी सहायता के लिए पत्र-व्यवहार-अधीक्षक (सुरनीस) अन्नाजी दत्तो को कुछ सेना सहित वहाँ छोड़ दिया गया। कोंकण जिले अन्नाजी दत्तो को मजबूत दुर्ग-रक्षक सैनिकों

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तथा पैदल सैनिकों के साथ सौंपे गये। (कोठी अभि० सूरत ८६, सभासद, ८५-८७)

गोलकुंडा के साथ निकट मैत्री तथा सहकार सुनिश्चित कर लिये गये थे। अब्दुल हसन कुतुबशाह के सर्वशक्तिशाली वजीर मदन्ना पण्डित ने शिवाजी से पहले ही सहायक-सन्धि कर ली थी, जिसके अनुसार राज्य की रक्षा के लिए शिवाजी को एक लाख होन प्रतिवर्ष देने का वादा किया गया था। हैदराबाद में मराठा राजदूत बनाकर प्रह्लाद नीराजी को भेजा गया जो एक चतुर राजनयिक था। शिवाजी ने गोलकुंडा को अपनी विजय की प्राप्ति में से कुछ भाग देने का वादा करके वहाँ से अभियान का व्यय तथा सहायक सेना की मदद लेने का निश्चय किया। किन्तु वह कम से कम ताकत का दिखावा चाहते थे और कुतुबशाह की मैत्री प्राप्त करने में उन्होंने अपने व्यक्तिगत आकर्षण तथा हृदयग्राही प्रकृति का प्रयोग किया।

५. हैदराबाद के लिए कूच—उन्होंने हैदराबाद में अपने दूत को लिखा कि वह उनके और कुतुबशाह के मध्य मैत्रीपूर्ण भेंट का प्रबन्ध कर दे। हैदराबाद का आलसी और मौजी राजा उस व्यक्ति से मिलने में डरता था जिसने अफजल की हत्या की थी, शाइस्ता को घायल कर दिया था और भरे दरबार में औरंगजेब की उपेक्षा की थी, किन्तु प्रह्लाद नीराजी ने शिवाजी के प्रयोजन की ईमानदारी की बड़ी संजीदगी से शपथें लीं। मदन्ना पण्डित ने राजा से यह भी कहा कि इस सम्बन्ध में उन्हें पूरा विश्वास है, और शायद दोनों नरेशों के मध्य मैत्री दृढ़ करने में व्यक्तिगत भेंट की महत्ता पर जोर दिया। (सभा० ८६)

कुतुबशाह द्वारा उनका स्वागत करने को राजी हो जाने पर शिवाजी ने जनवरी १६७७ के प्रारम्भ में रायगढ़ से प्रस्थान किया और वह नियमित कूचों द्वारा ठीक पूर्व की ओर अग्रसर हुए। हैदराबाद की सीमा में घुसने पर उन्होंने अपनी सेना को कड़ा आदेश दिया कि वह वहाँ के किसी निवासी को परेशान न करें और और न लूटें, वरन अपनी आवश्यकता की समस्त वस्तुएँ बाकायदा खरीदें। शुरू में ही कुछ दोषी सैनिकों को फाँसी देने या अपंग कर देने से मराठा सैनिकों में इतना आतंक छा गया कि बाद में बराबर उन्होंने आदेशों का पूरी तरह पालन किया और ५०,००० सशस्त्र व्यक्तियों[५] का बड़ा समुदाय

---

५ सभासद ८६। कर्नाटक में गयी शिवाजी की सेना का अनुमान एल० ग्रे ने १६ जनवरी, १६७८ को लिखे एक पत्र में २०,००० घुड़सवार और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पूरे अनुशासन से पेश आया। फरवरी १६७७ के प्रारम्भ में सेना हैदराबाद आ गयी। कुतुबशाह ने अपनी राजधानी से चलकर मार्ग में शिवाजी का स्वागत करने का प्रस्ताव किया था। किन्तु उन्होंने उदारतापूर्वक यह कहते हुए इस सम्मान को मना कर दिया कि "आप तो बड़े भाई हैं। मुझ जैसे लघु व्यक्ति को लेने के लिए आपको आगे चलकर नहीं आना चाहिए।" अतएव, सुल्तान हैदराबाद में रहा आया, किन्तु उसके मन्त्री मदन्ना और अकन्ना अनेक बड़े-बड़े नागरिकों के साथ राजधानी से कई मील पहले शिवाजी से मिले और राजधानी में उन्हें लाये।

६. **हैदराबाद में शिवाजी का भव्य प्रवेश**—अपने राज्य के महान मित्र और रक्षक का स्वागत करने के लिए हैदराबाद शहर बड़ी धूमधाम से सजाया गया था। चारों ओर सड़कों और गलियों में कुंकुम और केशर बखेरी गयी। पुष्पसज्जित काष्ठस्तम्भ और हर्षोल्लास तोरण-द्वार लगाये गये और शहर भर में झण्डियाँ लगायी गयीं। दृश्य देखने के लिए लाखों की संख्या में लोग सड़कों के दोनों ओर खड़े हुए थे जबकि आगन्तुक का अभिनन्दन करने के लिए छज्जों पर स्त्रियों की भीड़ थी।

मेहमानों ने भी आदर-सत्कार का प्रत्युत्तर दिया। मराठा सेना ने अपनी कठोर सादगी त्याग दी और बड़ी सजधज की वेशभूषा धारण की। शिवाजी ने कप्तानों तथा चुने हुए सैनिकों को उनके शिर-कवचों के लिए मोतियों के तोड़े, सोने के बाजूबन्द, नये चमकते हुए कवच, तथा सुनहरी काम वाली फौजी वर्दी दी, "और सारी सेना अत्यन्त सुशोभित दिखाई देने लगी।" अपने लिबास में, सुसज्जित घोड़ों पर सवार उनके सेनानी वंशानुगत सामन्तों के ऐश्वर्य का मुकाबला करते थे।

भेंट[६] के लिए शुभ समय पर ५०,००० मराठा सेना नगर में प्रविष्ट हुई। नागरिक जन भय-मिश्रित प्रशंसा के साथ उन लोगों को निहार रहे थे

४०,००० पैदल लगाया है (मूल पत्र० ४३१४)। सभासद ने केवल "२५,००० चुने हुए घुड़सवारों" का जिक्र किया है (पृ० ८६)। मद्रास काउंसिल ने सेना का अनुमान "१६ से २० हजार घुड़सवार और वनों से भर्ती किये गये कई हजार पैदल" बताया है (१६ जून १६७७, मूल पत्र-व्यवहार, ४२६६)। मार्टिन ने जिसे इसको निकट से देखने का अवसर मिला शिवाजी की सेना की गिनती "१२,००० घुड़सवार और कई हजार पैदल" बतायी है। (२. १००)

६ शिवाजी हैदराबाद में : सभा० ८७-८८; ९१ क० ब० ७८-७९; दिल० ११२-११३

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जिन्होंने उत्तर और दक्षिण भारत के बड़े-बड़े राजाओं को परास्त कर दिया था तथा बीजापुर के दरबार में विलाप और दिल्ली के दरबारियों में विस्मय उत्पन्न कर दिया था। एक ओर द्रुतगामी शूर घुड़सवार थे जो तेज निर्बाध बाढ़ की तरह मुगल दक्षिण के दूरस्थ जिलों में घुस गये थे तथा बीजापुर और गोलकुण्डा के ऐन द्वार तक जिन्होंने धावे मारे थे। दूसरी ओर मावली पैदल मार्च कर रहे थे जिनके कारनामों की स्तुति में दक्षिण भर में अनेक गीत और गाथाएँ प्रचलित थीं, जिनके प्रहारों के सम्मुख कोई गढ़ नहीं टिक सकता था और जिनकी तलवारों से ऐसा हर दुश्मन भयभीत था जिसका उनके साथ युद्ध में पाला पड़ा था। उनके नेतागण ऐसे व्यक्ति थे जिनका नाम घर-घर में लिया जाता था—हमीरराव मोहिते, वेगशाली किन्तु दूरदर्शी मुख्य सेनापति; आनन्द-राव और मानाजी मोड़े, दो सेनापति जिनकी दक्षता हम्बीरराव के बाद ही थी; मालूसरे तथा येसाजी कंक, जो मावलों के महान कप्तान थे और जिनमें से प्रत्येक हाथी को परास्त कर सकता था; सोनाजी नायक, शाही द्वारपाल; और बाबाजी धाँधेरे (जो कदाचित अंगरक्षक गारद के कप्तान थे)।

ऐसे वीरों के मध्य में भी नागरिकों का ध्यान ऊँची भँवों, तेजस्वी किन्तु शान्त नेत्रों और तिलक लगे मस्तकों वाले मराठा ब्राह्मणों की ओर आकर्षित हुए बिना न रहा जिनकी प्रशासनिक क्षमता व राजनयक कुशलता ने इन लोगों की तलवारों द्वारा प्राप्त विजयों को सरल व सुदृढ़ बनाया था : रघुनाथ तथा जनार्दन नारायण हनुमन्ते जो अभी हाल तक तंजौर के बेताज के बादशाह कहे जाते थे; प्रह्लाद नीराजी, हैदराबाद में राजदूत; दत्ताजी त्रिम्बक, इतिहासकार (वाकनीस); केशव पन्त, और नीलो मोरेश्वर तथा गंगाधर पन्त, लेखा-परीक्षक (मजमुआदार)। उनके साथ में थे उदासीन आडम्बररहित कायस्थ लेखक नीलप्रभु, निपुण फारसी मसविदाकार (मुंशी), बालाजी आवजी परमपटु सचिव (चितनिस) जिसे शिवाजी सदा अपने पास रखना पसन्द करते थे; और अन्य जाति के, शामजी नायक, मुद्रापाल (Keeper of the Seal)।

किन्तु किसी ने भी लोगों का इतना ध्यान आकर्षित नहीं किया जितना कि इस समुदाय के प्रेरक मनीषी ने। मन्त्रियों और सेनानियों के दीप्तिमान गिरोह के मध्य एक नाटा, इकहरे बदन वाला सवार था जो अपनी हाल की बीमारी से तथा ३०० मील लम्बे अनवरत अभियान की थकावट से और भी दुबला दिखायी देता था। उसकी चमकीली निगाहें दायें-बायें पड़ रही थीं और रोमानी लोगों की-सी नुकीली नाक वाले उसके लम्बे हलके भूरे चेहरे पर स्वाभाविक मुस्कराहट खेल रही थी। एकत्रित नागरिकों ने "शिवाजी छत्रपति" का

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जयजयकार किया; सड़कों के किनारों से तथा छज्जों पर एकत्रित स्त्रियों द्वारा सोने और चाँदी के पुष्पों की वर्षा की गयी। स्थान-स्थान पर स्त्रियाँ आगे आकर उनकी आरती उतारतीं तथा अभिनन्दन और आशीर्वाद गान गाती थीं। शिवाजी भी कम उदार नहीं थे। वह दोनों ओर भीड़ पर अपने हाथों से सोने और चाँदी की वर्षा करते थे तथा उन्होंने प्रत्येक मुहल्ले के मुख्य नागरिकों को आदरसूचक मूल्यवान सम्मान-परिधान भेंट किये।

७. शिवाजी और कुतुबशाह की भेंट—जलूस इस प्रकार न्याय-भवन (दाद-महल) तक आया। वहाँ द्वार से आगे सब लोग पूर्ण व्यवस्था रखते हुए रुक गये जबकि शिवाजी अपने पाँच अधिकारियों के साथ सीढ़ियों पर चढ़े तथा महल के प्रकोष्ठ में प्रविष्ट हुए जहाँ कुतुबशाह उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। सुल्तान आगे बढ़ा, शिवाजी का आलिंगन किया, तथा राजकीय फर्श पर उन्हें अपने साथ बिठाया। वजीर मदन्ना को भी बैठने की अनुमति मिली; शेष सब खड़े रहे। हरम की बेगमें चकित होकर झरोखों से यह दृश्य देख रही थीं।

तीन घण्टे तक दोनों नरेशों ने मैत्रीपूर्ण बातचीत की। औपचारिक अभिनन्दन तथा स्वास्थ्य के विषय में पूछताछ के पश्चात अब्दुल हसन कुतुबशाह ने बड़ी तल्लीनता से शिवाजी के पराक्रम की कथा सुनी। गोलकुण्डा के आलसी और विलासी नरेश के लिए, जिसने न तो कभी क्रोध में आकर तलवार उठाई थी और न ही जो घोड़े पर चढ़कर कभी तम्बू लगे युद्धक्षेत्र में गया था, ये बातें अत्यन्त मनमोहक रोमांस की भाँति प्रतीत हुईं जब शिवाजी ने बताया कि किस प्रकार अकेले उन्होंने विशालकाय अफजलखाँ को मारा था, तथा शाइस्ताखाँ पर किस प्रकार उसके हरम में ही आघात किया था; भरे दरबार में उन्होंने किस प्रकार औरंगजेब को चुनौती दी थी, आगरे से भागने पर वह किस तरह बाल-बाल बचे थे, किस प्रकार उन्होंने सूरत को लूटा था तथा इतने पहाड़ी गढ़ों पर विजय प्राप्त की थी। अन्त में उसने अपने राजसी अतिथि तथा मुख्य मराठा अधिकारियों को आभूषण, रत्न, घोड़े, हाथी तथा सम्मानसूचक पोशाकें दीं और शिवाजी के आदरपूर्वक इत्र लगाकर तथा स्वयं अपने हाथ से पान का बीड़ा पेश कर, और सीढ़ियों पर नीचे तक आकर उस दिन की भेंट समाप्त की।

तब कुतुबशाह ने सन्तोष की साँस ली; अब उसे शिवाजी के प्रयोजन की ईमानदारी पर और उनके मित्रता करने पर विश्वास हो गया था। अपने दरबार के मराठा राजदूत की प्रशंसा की गयी, और उसको उसकी सचाई के लिए पुरस्कार दिया गया। शिवाजी अपनी सेना सहित, मार्ग में दान लुटाते हुए अपने लिए नियत स्थान पर वापस हुए।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अगले दिन वजीर मदन्ना पण्डित ने शिवाजी और उनके मुख्य अधिकारियों को शानदार भोज दिया। राजा का भोजन प्रधान मन्त्री की आदरणीय माता ने पकाया और जब शिवाजी ने भोजन किया उस समय मदन्ना तथा अकन्ना बड़े आदर और सम्मानसहित उनके साथ बैठे रहे। अतिथियों को अपने निवास स्थानों पर हाथियों, घोड़ों तथा वस्त्रों की भेंट के साथ ले जाया गया।

८. **गोलकुण्डा के साथ सन्धि**—तत्पश्चात उनमें काम की बातें शुरू हुईं। अब्दुल हसन शिवाजी के व्यक्तिगत आकर्षण, चरित्र और योग्यता एवम् उनकी सेना की शक्ति व अनुशासन से इतना प्रभावित हुआ कि उसने अपने वजीर को आज्ञा दी कि जो कुछ भी वह चाहें उन्हें दे दिया जाय। कुछ चर्चा के बाद आगामी अभियान के सम्बन्ध में एक गुप्त समझौता हुआ। सुल्तान शिवाजी को ३००० होन अथवा साढ़े चार लाख रुपये प्रतिमास देने को तथा कर्नाटक विजय के लिए अपने एक सेनाध्यक्ष (सरे-लशकर), मिर्जा मुहम्मद अमीन के अधीनस्थ ५००० व्यक्तियों (१००० घुड़सवार और ४००० पैदल) की सेना भेजने के लिए तैयार हो गया। सामान सहित एक तोपखाना भी कुतुबशाह द्वारा दिया गया, और कदाचित वादा की गयी रकम का काफी बड़ा भाग पेशगी दिया गया। इस सहायता के बदले में शिवाजी ने कर्नाटक में अपनी विजय के उन हिस्सों का जो उनके पिता शाहजी के नहीं थे एक भाग देने का वादा किया प्रतीत होता है। शिवाजी द्वारा कुतुबशाह की उपस्थिति में की गयी प्रतिज्ञा द्वारा मुगलों के विरुद्ध रक्षा मैत्री दृढ़ की गयी जबकि कुतुबशाह ने नियमित रूप से एक लाख होन प्रति वर्ष चौथ देने तथा अपने दरबार में मराठा राजदूत रखने का वादा किया।

जबकि यह गुप्त वार्ता चल रही थी, सार्वजनिक रूप से सामाजिक समारोह भी मनाये जा रहे थे। शिवाजी दूसरी बार औपचारिक रूप से अब्दुल हसन से मिले जिसने उन्हें "बहुत बड़ी मात्रा में रत्न व आभूषण और असंख्य घोड़े व हाथी भेंट किये।" दोनों महल में मंच पर साथ-साथ बैठे तथा उन्होंने उन सब मराठा अधिकारियों की सलामी ली जिन्हें कुतुबशाह ने अपने ओहदों तथा शूरता के अनुसार पुरस्कृत किया था। शिवाजी का घोड़ा भी अन-पुरस्कृत न रहा; उनकी अनुपम कृतियों का साथी होने के नाते बहुमूल्य रत्नों का हार[७] उसकी गर्दन में पहनाया गया!

---

७ एक हार, जो यही ऐतिहासिक हार बताया जाता है, सतारा से बम्बई के श्री पुरुषोत्तम विश्राम मावजी के हाथ आया और उन्होंने वह मुझे दिखाया था। (सभा० ८८, मार्टिन २. ८८-९०)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

एक अन्य दिन हैदराबाद के अग्रणी सभासदों ने शिवाजी को भोज दिया। उस समय मावली कप्तान, येसाजी कंक तथा एक 'मस्त' हाथी के मध्य भिड़न्त का प्रबन्ध किया गया—शिवाजी के मनोविनोद के लिए और साथ ही उनके आदमियों की शूरता का प्रदर्शन करने के लिए। येसाजी ने कुछ समय तक उस वृहताकार पशु को अपनी तलवार द्वारा दूर रखा और फिर उसकी सूँड़ काट दी तथा वह हाथी भाग खड़ा हुआ।[८]

ऊपरी तौर से इन समारोहों में, किन्तु वास्तव में अपने कर्नाटक अभियान में सहायता लेने के लिए सन्धि-सम्पन्न करने, वादा किये गये हथियार, धन तथा सम्मान प्राप्त करने एवं स्थानीय सहायक सेना को शस्त्र-सज्जित करने में, हैदराबाद में एक मास व्यतीत किया गया।

९. **श्री शैल की यात्रा**—अपना ध्येय प्राप्त कर लेने के बाद शिवाजी ने मार्च १६७७ के आरम्भ में हैदराबाद से प्रस्थान किया तथा दक्षिण में कृष्णा नदी की ओर बढ़े। मार्ग में कर्नूल के नगर से उन्होंने पाँच लाख होन चन्दे के रूप में वसूल किये (९१ क० ब० ८०)। तब वह कर्नूल से २४ मील उत्तर-पूर्व संगम पर पहुँचे जहाँ भवनाशी कृष्णा में मिलती है। यह "स्थान हिन्दुओं का अत्यन्त पवित्र तीर्थ समझा जाता है।" यहाँ तथा संगम से कुछ नीचे चलकर चक्रतीर्थ भँवर में भी शिवाजी ने स्नान किया, तीर्थयात्री के धार्मिक अनुष्ठान किये और तब थोड़े-से साथियों सहित ३७ मील पूर्व में स्थित श्री शैल की ओर तेजी से आगे बढ़े और उनकी सेना ने अनन्तपुर (कर्नूल से ४४ मील उत्तर) में प्रतीक्षा की।

कृष्णा नदी समुद्र में गिरने से पहले जब पूर्व की ओर मोड़ लेती है तो कर्नूल से लगभग ७० मील नीचे एक चौड़े और खड़े कगारों वाले लगभग एक हजार फुट गहरे खड्ड में होकर बहते हुए उत्तर की ओर एक तीव्र चाप बनाती है। यहाँ, विषम पहाड़ियों और सूनसान ज्वरग्रस्त भूमि की पेटी से घिरे निर्जन नल्लामाला जंगल के मध्य में, नदी के ऊपर की ओर १५६३ फुट ऊँचा एक पठार है जहाँ कि "दक्षिण भारत का सबसे प्राचीन और पवित्र" प्रसिद्ध

---

८ ९१ क० ब०। परन्तु चितनिस (चिटनीस) ने लिखा है कि कुतुबशाह के इस प्रश्न का कि "आपके पास कितने प्रसिद्ध हाथी हैं?" शिवाजी ने अपने कई हजार हृष्ट-पुष्ट मावल सैनिकों का परेड करा के यह कहते हुए उत्तर दिया कि "ये हैं मेरे हाथी।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिव-मन्दिर श्री शैल स्थित है ।[६] कैलास द्वार नामक एक बड़े महराबदार द्वार (जो अब नहीं है) में जब वे प्रविष्ट हुए तो उन्हें एक मन्दिर का परकोटा दिखायी दिया था—६६० फुट लम्बा और ५१० फुट चौड़ा एक आयताकार स्थान जो भूरे रंग के तराशे हुए वर्गाकार पत्थरों के खण्डों से निर्मित २० फुट से २६ फुट ऊँची मोटी-मोटी दीवारों से घिरा हुआ था जिन पर हाथियों, घोड़ों, शेरों, शिकारियों, योद्धाओं व योगियों के अनेकानेक यथार्थ चित्र एवं हिन्दू वीर-काव्यों व धार्मिक पुस्तकों के आख्यानों के अनेक दृश्य प्रकीर्ण थे । इस घेरे के मध्य में मल्लिकार्जुन (लिंग) का एक वर्गाकार मन्दिर है, जिसकी दीवारें और छत विजयनगर के विजयी राजा कृष्ण देव द्वारा प्रदत्त (१५१३) सोने के पानी चढ़े पीतल के पत्रों से ढकी हुई थीं । वहाँ पर पार्वतीजी का एक छोटा मन्दिर है । विजयनगर की महारानी द्वारा बनवायी गयी पत्थर की सीढ़ियों की लम्बी पंक्ति पठार से कृष्णा के घेरे तक जिसे पाताल गंगा कहते हैं और जरा आगे नीलगढ़ नामक पाँझ तक ले जाती है—ये दोनों पवित्र स्नान-स्थान माने जाते हैं ।

शिवाजी इस विषम पठार पर चढ़े, कृष्णा में स्नान किया तथा धार्मिक अनुष्ठान पूरा करते हुए श्री शैल में दस दिन बिताये । वहाँ के दृश्य का प्रशान्त एवम् एकान्त सौन्दर्य तथा आध्यात्मिक वातावरण उनकी अन्तरात्मा में इस तरह समा गया कि उन्होंने सोचा कि महाप्रयाण के लिए इससे अच्छा स्थान और कोई नहीं हो सकता है । अतएव उन्होंने अपना सिर देवी को भेंट करने का विचार किया; परन्तु उनके मन्त्रियों ने उनके धार्मिक उद्‌गारों पर अंकुश डाला और उनका ध्यान अपनी प्रजा तथा समस्त हिन्दू संसार के प्रति उनके कर्तव्य की ओर आकर्षित किया । उन्होंने यहाँ पर श्री गंगेश नामक एक घाट, एक मठ और एक धर्मशाला का निर्माण कराया, तथा एक लाख ब्राह्मणों को भोजन कराया और उन्हें बहुत धन दान में दिया ।

१०. जिंजी पर अधिकार और वैलौर का घेरा—अप्रैल के पहले सप्ताह में पवित्र पहाड़ी के छोड़ने के पश्चात शिवाजी अनन्तपुर में ठहरी हुई अपनी सेना के पास पहुँच गये और शीघ्र ही दक्षिण की ओर चल दिये । वह स्पष्टतः नन्दियाल और कड़ापा होते हुए तिरुपटी गये । अन्तिम स्थान से वह पूर्व तट

---

६ श्री शैल : कर्नूल जिला मेनुएल, १४, १४४, १८१-१८३. शिवाजी का आगमन : सभा० ८६; ६१ क० ब० ८० में लिखा है कि उन्होंने चैत्र शुक्ल के प्रथम ६ दिन (२४ मार्च—१ अप्रैल, १६७७) वहाँ बिताये ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के मैदान पर उतरे और कलस्त्री होते हुए मई के प्रथम सप्ताह में पेड्डापोलम (मद्रास से लगभग सात मील पश्चिम में) पहुँचे। पेड्डापोलम में कुछ दिन ठहरकर वह दक्षिण-पश्चिम की ओर घूमे और उन्होंने कांजीवरम होते हुए (९ मई) जिंजी को ५००० घुड़सवारों का एक सैन्य दल भेजा। इस सैन्य दल का सेनाध्यक्ष जिले में नासिर मुहम्मदखाँ से मिला और उसको कुछ नकद रुपये के बदले जिंजी छोड़ देने पर तथा पचास हजार रुपये वार्षिक आय की जागीर स्वीकार करने पर राजी कर लिया (लगभग १५ मई)।[१०] इस सफलता को सुनकर शिवाजी स्वयं किले के लिए चल पड़े और अपने वादे के अनुसार उसे गोलकुण्डा को न सौंपकर उस पर स्वयं अधिकार कर लिया।

शिवाजी ने जिंजी के किले को रायाजी नागले नामक मावली कप्तान के चार्ज में रखा, और निकटवर्ती प्रदेश का गवर्नर विट्ठल पिलदेव आत्रे गरोडकर को बनाया जिसकी सहायता के लिए एक वेतन-अधिकारी (सबनिस) और एक भवन-अधिकारी नियुक्त किये गये। महाराष्ट्र का सैनिक और राजस्व प्रशासन यहाँ बिना परिवर्तन के स्थानान्तरित कर दिया गया। उसने जिंजी के चारों ओर नये प्राचीर बनाये, खाइयाँ खोदीं, मीनारें और बुर्ज निर्मित किये और इन सब कामों को इतनी पूर्णता से किया कि वे यूरोपीय मानदण्ड से किसी प्रकार कम न थे।" (एस० जे० आन्द्रे फ्रीयर, Mission du Madure में, ३. २७१. ९१ क० ब० ८१)

जिंजी से शिवाजी उत्तर की ओर वैलोर के लिए मुड़ गये, जहाँ वह लगभग २३ मई को पहुँचे। यह किला बीजापुर के लिए अब्दुल्लाखाँ नामक एक वीर अबीसीनियाई अधिकारी के हाथ में था जिसने उसकी डटकर रक्षा की। दक्षिण भारत में वैलोर उसके अत्यन्त शक्तिशाली किलों में एक है। उसके चारों ओर पानी से भरी एक गहरी खाई है जिसमें मगर भरे पड़े हैं। बाहर का परकोटा इतना चौड़ा है कि उस पर दो गाड़ियाँ बराबर चल सकती हैं। चार चहार-दीवारें उसकी रक्षा के लिए उसके चारों ओर एक दूसरी के बाद बनी हुई हैं।

---

[१०] मद्रास कोठी अभि०. मार्टिन २. ९३, इस सन्धि से नासिर मुहम्मद को संश्रित भागों में से एक जागीर प्रदान की गयी। परन्तु जब शिवाजी ने जिंजी पर अधिकार कर लिया, गोलकुण्डा के अधिकारियों ने स्वभावतः नासिर मुहम्मद को वादा की गयी भूमि का कब्जा नहीं दिया। बेचारा नासिर मारा-मारा फिरा और उसे वादा की गयी भूमि का एक अंश भी नहीं मिला। अपने पूर्व वैभव के दिन चले जाने की दशा में वह बहुत निराश हुआ और कुछ ही दिनों पीछे मर गया।" सभा० ९१

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इसलिए शिवाजी को नियमित घेरा डालना था जिसके लिए उनके पास पूरा सामान न था। उन्होंने दो निकटवर्ती टीलों पर अधिकार कर लिया, उनका नाम साजीरा और गोजीरा रखा, उन पर तोपें चढ़ा दीं और गोलाबारी शुरू कर दी। चौदह महीने तक किला मराठों का मुकाबला करता रहा।[११] परन्तु शिवाजी ने अधिक इन्तजार नहीं किया; २००० घुड़सवार और ५००० मावल पैदल सेना के चार्ज में नरहरि रुद्र (सबनिस) को लम्बे घेरे के लिए छोड़कर वह स्वयं दक्षिण की ओर (लगभग २० जून) शेरखाँ लोदी से लड़ने के लिए चल दिये (सभा० ९१; क० ब० ८१)

११. **आक्रमित देश की दशा**—मराठा आक्रमण की बाढ़ कर्नाटक के मैदान पर उमड़ पड़ी। केवल कुछ ही किलेबन्द स्थानों ने मुकाबला किया और वे कुछ समय तक पानी के निर्जन क्षेत्र पर मानो टापुओं की भाँति उठे हुए थे। एक सहस्र घुड़सवारों का अग्र-सेनादल मुख्य सेना से आगे एक या दो दिन की कूच पर चलता था जिसके साथ शिवाजी स्वयं रहते थे। उनकी जबरदस्ती वसूली और उनके सैनिकों के भयंकर रोष की बात उनके पहुँचने से पहले ही फैल जाती थी; और उनके आगमन का समाचार पाते ही लोग अपनी धन-दौलत को या तो निकटवर्ती वनों में पहुँचा देते थे अथवा यूरोपीय व्यापारियों के किलेबन्द समुद्री पत्तनों को भेज देते थे। धनी लोग सबसे पहले भागते थे जिससे वे निस्तार-धन के हेतु पकड़ न लिये जायँ।

शिवाजी को धन की आवश्यकता थी। जब उन्होंने इस क्षेत्र में सन्धि की शर्तों के अनुसार गोलकुंडा को विजित भाग नहीं सुपुर्द किये तो कुतुबशाही सरकार ने प्रतिदिन ३००० होनों की वादा की गयी धन-राशि को देने से मना कर दिया। इसलिए उन्होंने अपने कूच से पहले ही तटीय जिलों में पत्र भेज दिये और उनसे दो लाख होन कर्ज के बतौर माँगे, जिसमें से मद्रास और पुलीकत प्रत्येक से ५०,००० माँगे गये। कर्ज, जिसे दूसरे शब्दों में जबरदस्ती वसूली कहा जा सकता है, देने से मना कर दिया गया और मद्रास के प्रेसीडेंट को आशंका हुई कि "शिवाजी को अपनी पुरानी शरारत करने के लिए एक बहाना मिल जायगा।"

---

११ जेधे शकावली के अनुसार वैलोर का पतन श्रावण शुक्ल १४ (२२ जुलाई, १६७८) को हुआ। परन्तु 'मद्रास डायरी' के अनुसार वैलोर का पतन चौदह महीने के घेरे के पश्चात २१ अगस्त को हुआ। परन्तु यदि हम जेधे श० में श्रावण के स्थान पर भाद्र पढ़ें तो तारीख २१ अगस्त होगी। मार्टिन २, ९४

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इस भय की आशंका ठीक ही निकली। जैसे शिवाजी मद्रास के निकट होते हुए दक्षिण की ओर बढ़े उन्होंने उस प्रदेश के समस्त धनी मनुष्यों की एक विस्तृत सूची तैयार की जिससे उनके छुड़ाई के धन का ठीक-ठीक हिसाब लगाया जा सके। विजित क्षेत्र भर में उन्होंने घूस का रुपया वसूल करने वालों को नियत कर दिया।

यह अधिकृत या नियमित धन-संग्रह था। परन्तु उस अभागे प्रदेश के निवासियों के दुखों का अन्त धन देकर ही नहीं हुआ, जिनका कि केवल एकमात्र अपराध था कि उनके पास दौलत थी। शिवाजी की सेना के पीछे लगभग २०,००० असंलग्न मनुष्यों का दल आ गया था जो अधिकतर भूखे ब्राह्मण थे और जो नये विजित देश में रोजगार चाहते थे। उनकी निर्लज्ज लालसा और बेईमानी अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गयी थी। शिवाजी द्वारा नियुक्त प्रशासक और उनके सैनिकों ने बिना डर या दया के राहगीरों और नगर निवासियों को लूटा।

स्थानीय लुटेरों के कारण अव्यवस्था और भी बढ़ गयी। उस क्षेत्र के बहुत-से छोटे सरदारों (पोलीगारों) ने शिवाजी को कर भेजकर उनके साथ सन्धि कर ली और उनमें से कुछ लूट में हिस्सा पाने के लालच से उनकी सेना में भर्ती हो गये। इतना ही नहीं, मराठा आक्रमण के आतंक ने नागरिक शासन को समाप्त कर दिया और प्रत्येक व्यक्तिगत लुटेरे की लालसा बढ़ गयी कि वह अपने भिटे से अपने साथियों सहित निकल पड़े और मराठा सेना के पीछे लग जाय जिससे सिंह के बचे हुए भोजन का भाग उसको मिल सके।

१२. **शेरखाँ लोदी से संघर्ष**—बीजापुरी कर्नाटक मैदानों के दक्षिणी आधे भाग पर एक पठान सरदार शेरखाँ लोदी राज्य करता था जिसकी राजधानी वली-गंद-पुरम थी।[१२] स्वभाव से वह युद्ध की अपेक्षा असैनिक शासन के लिए अधिक उपयुक्त था। वह एकदम अपने ब्राह्मण सलाहकारों का निर्देशन

---

[१२] अब यह त्रिचनापल्ली के पिराम्बालुर ताल्लुके में एक नन्हा-सा गाँव है, परन्तु १७वीं तथा १८वीं शताब्दी में यह मद्रास से त्रिचनापल्ली जाने वाली मुख्य सड़क पर अति महत्त्वपूर्ण चौकी थी। (ओर्म : इन्दुस्तान, चौथा संस्करण, १.१७२)। किला रंजनगुदी था, वली-गंद-पुरम गाँव के ३० मील उत्तर में।

इस संघर्ष के वर्णन का मेरा आधार मार्टिन के संस्मरण और मद्रास कोठी अभि० खंड २७ हैं—"शिवाजी राजा के शिविर से हमारे ब्राह्मण वर्दप्पा के पत्र २७ जून और वैलोर रमण से, १६ जुलाई, १६७७।" जेधे शकावली में भूल से लोदी को बैरागी लिखा गया है!

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मानता था, जिन्होंने मूर्खता से उसे शिवाजी की सही शक्ति का ठीक अनुमान नहीं दिया था, और यही धोखा उसके पुत्र इब्राहीमखाँ को भी था यद्यपि फ्रांकोई मार्टिन ने चेतावनी दे दी थी।

१० जून को तिरुवादी पर कुड्डालोर के १३ मील पश्चिम में शेरखाँ मराठों के इन्तजार में आ जमा, उसके साथ केवल ४००० घुड़सवार और तीन-चार हजार घटिया प्रकार की पैदल सेना (फौजी प्रकार की) थी "जो केवल शिवाजी का नाम सुनकर ही काँपते थे।" शिवाजी ६००० घुड़सवारों को लेकर २६ जून को निकट आ पहुँचे। उनको देखते ही शेरखाँ ने अपने आदमियों को सैनिक व्यवस्था में रखा और आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ा। मराठे शान्तिपूर्वक आक्रमण की बाट जोहने लगे। उनके रुख से शेरखाँ ने महसूस किया कि उसने गलत कदम उठाया था और उसने सेना को वापस लौटने की आज्ञा दी। फिर शिवाजी ने वैरी की अस्तव्यस्त और अनिश्चित सेना को नष्ट कर दिया।

शेरखाँ अपनी बचीखुची सेना को पीछे तिरुवादी किले में ले गया। रात को उसने भागकर कुड्डालोर के उपनगर तेवेनापत्तन में शरण लेने का प्रयत्न किया। मराठा घुड़सवारों ने उसको जाते हुए देख लिया, उसका पीछा किया और उसे अकाल नायक के वन में भगा दिया जो मार्ग में पड़ता था। खान के ५०० घुड़सवारों ने मुकाबला किया और पीछा करने वालों को दो घण्टे तक रोके रखा। फिर चन्द्रमा अस्त हो गया और शेरखाँ जंगल में से निकलकर अपने कुछ घुड़सवारों और हाथियों सहित दक्षिण की ओर भाग गया। शिवाजी के आदमी पीछा करते रहे। शेरखाँ पूरे वेग से उनके सामने से भागा और दूसरे दिन (२७ जून) को उसे ठीक इतना समय मिल गया कि १०० घुड़-सवारों सहित बोनागिरि-पत्तन (या बोवानीगिरि) के निम्न कोटि के किले में घुस गया, जो तिरुवादी से २२ मील दक्षिण में वेल्लार नदी पर स्थित था; यहाँ तुरन्त ही मराठों ने उसे घेर लिया। इस मुठभेड़ में शिवाजी के आदमियों ने ५०० घोड़े, दो हाथी, बीस ऊँट और बहुत-से बैल, डेरे तथा लड़ाई के ढोल खान से छीन लिये।

तिरुवादी का गढ़ कुछ समय तक शेरखाँ के श्वसुर के नेतृत्व में मुकाबला करता रहा। शिवाजी ने बाबू साहिब को कुछ घुड़सवारों सहित उस स्थान पर आक्रमण करने के लिए छोड़ दिया, अपनी मुख्य सेना को तेवेनापत्तन के दक्षिण में तीन मील दूर ठहराया और स्वयं बोनागिरि-पत्तन किले के सामने आ गये। ३० जून को वलदौर, तेवेनापत्तन और खान के कई अन्य किले मराठों के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हाथ में आ गये, क्योंकि उनमें स्थित सेनाएँ भय के मारे भाग गयीं। इसके बाद शीघ्र ही शेरखाँ ने संघर्ष छोड़ दिया। ५ जुलाई को उसने शिवाजी से सन्धि कर ली, अपना समस्त राज्य-क्षेत्र दे दिया, २०,००० होन नकद छुड़ाई के रूप में देने का वचन दिया जिसके लिए उसने अपने सबसे बड़े पुत्र को बंधक के रूप में छोड़ दिया, और शिवाजी ने उसको किले से सकुशल जाने की अनुमति दे दी तथा गोंदेलुर में उसकी निजी सम्पत्ति को वापस दे देने का वचन दिया।

हम यहाँ शेरखाँ की कहानी को समाप्त करना चाहेंगे। वोनागिरि-पत्तन को छोड़ने के पश्चात तथा शिवाजी से भेंट करने के बाद उसने आरियालुर वन में शरण ली, जो वली-गंद-पुरम से १५ मील दक्षिण-पूर्व में एक गाँव था। इस गाँव के सरदार ने (जो जाति का कलार था) उसका हृदय से अभिनन्दन किया और जीविका के लिए उसे दो गाँव प्रदान किये जिनकी वार्षिक आय १५०० रुपये थी। खान ने वादा की गयी छुड़ाई की रकम के लिए अपनी असमर्थता प्रकट की और इसके फलस्वरूप उसके बंधक इब्राहीम लोदी को मराठों ने धन के लिए अनेक कष्ट दिये। अन्त में फरवरी १६७८ से उन भागों के हिन्दू राजाजों ने, जिनमें खान लोकप्रिय था और जिसका वे बहुत आदर करते थे, पूरा द्रव्य आपस में चन्दा करके जमा कर लिया और उसके पुत्र को छुड़ा लिया। अप्रैल में शेरखाँ मदुरा के नायक के दरबार में चला गया। (मार्टिन, २. १०३-१३३)

१३. शिवाजी कोलेरून नदी पर—शेरखाँ पर अपनी पूरी विजय होने के पश्चात शिवाजी ने जुलाई के प्रथम सप्ताह के अन्त में कुड्डालोर छोड़ दिया, दक्षिण में वैल्लार नदी को पार किया, और वर्षा ऋतु के लिए अपनी सेना की छावनी तिरुमलवादी में डाली, जो तंजौर के ठीक उत्तर में दस मील दूर कोलेरून नदी के उत्तरी किनारे पर है (वहाँ वह लगभग १२ जुलाई को पहुँचे)। यहाँ मदुरा के शासक चोक्कानाथ के एक दूत ने शिवाजी से भेंट की और उन्होंने "उस समय के लिए अपने खर्चे के लिए" उससे एक करोड़ रुपया माँगा और यह कहा कि नायक का मान नौ करोड़ रुपये का माना जा रहा है। दूत ने "उत्तर दिया कि उसके स्वामी के देश के एक भाग पर मैसूर के नायक ने अधिकार कर लिया है और एक अन्य भाग व्यंकोजी ने दवा लिया है, और यदि वह (अर्थात शिवाजी) इन भागों को वापस दिला दें तो मदुरा के नायक उनको सात लाख रुपये देंगे। नायक ने अपने समस्त परिवार को त्रिचनापल्ली से मदुरा को (सुरक्षा के हेतु) भेज दिया, जहाँ वे पहले भी थे; और जब तक कि कोलेरून नदी में बाढ़ थी उसे (मराठों से) कोई भय न था।" परन्तु

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इसके कुछ ही समय बाद रघुनाथ पंत महाराष्ट्र से वापस आया और शिवाजी ने उसका अभिनन्दन किया, और उन्होंने उसे नायक के दूत के साथ वार्ता द्वारा घूस का रुपया वसूल करने के लिए भेज दिया। नायक ने छह लाख होन देने का वचन दिया जिसमें से १½ लाख तुरन्त दे दिये, और शिवाजी ने अपनी सेना वापस ले जाने का वचन दिया। (नैलोर रमण का पत्र मद्रास के गवर्नर को, दिनांक १६ जुलाई १६७७)

१४. शिवाजी तथा व्यंकोजी की भेंट—इसी बीच शिवाजी तथा उनके सौतेले भाई व्यंकोजी के मध्य भेंट होने की बातचीत चल रही थी।[१३] शिवाजी के निवेदन पर तंजौर के राजा ने अपने मंत्रियों को प्रारम्भिक बातचीत के लिए भेजा। वे लोग शिवाजी के तीन मंत्रियों के साथ शिवाजी का निमंत्रण लेकर वापस हुए। उनकी सूचना तथा शिवाजी द्वारा दिये गये सुरक्षा के वादे से आश्वस्त होकर, व्यंकोजी २००० सवार अनुचरों के साथ लगभग जुलाई के मध्य में तिरुमलवादी आये। शिवाजी मार्ग में उसका स्वागत करने के लिए तिरुमानुर (६ मील उत्तर-पूर्व) आये। उपहारों का आदान-प्रदान करने तथा एक-दूसरे को दावतें देते हुए दोनों भाइयों ने आठ दिन बिताये। तब शिवाजी ने काम की बातचीत प्रारम्भ की। उन्होंने माँग की कि शाहजी ने अपने स्वर्गवास के समय जो कुछ भी छोड़ा था—धन, घोड़े, रत्न तथा भूमि—उसका आधा भाग उन्हें दे दिया जाय, और व्यंकोजी शेष भाग का उपभोग करे। व्यंकोजी ने इसके प्रत्युत्तर में पश्चिमी भारत के आधे भाग पर अधिकार माँगा। शिवाजी ने इस आधार पर आपत्ति की कि उन्होंने अपने दोनों के पिता से दाय में कुछ नहीं प्राप्त किया (सिवाय ४०,००० होन वार्षिक आय की पूना की जागीर के) और उनका विस्तृत राज्य जिसकी आय इससे सौ गुनी अधिक है उनकी स्वयं की प्राप्ति है जिस पर उनके भाई का कोई वैध अधिकार नहीं है। इस पर व्यंकोजी ने कहा कि शाहजी ने कठपुतली निजामशाही सुल्तान के

---

[१३] शिवाजी तथा व्यंकोजी की भेंट : कोठी अभि० फोर्ट सेंट जार्ज, खंड २७, नेल्लोर रमण का पत्र, २७ जुलाई, १६७७; मार्टिन २. ११२। Mission du Madure, ३. २६९; दिल० १. ११३. मराठी वर्णन बाद के हैं और कम विश्वसनीय हैं। सभा० ९०। मैंने ९१ क० ब० ८२-८३ और मार्टिन का अनुकरण किया है।

मार्टिन (२. ८५) ने जून १६७७ में लिखा कि शिवाजी ने व्यंकोजी से जिंजी के अधीन राज्य-क्षेत्रों को माँगा (जो शिवाजी ने हाल में जीते थे और जो अब व्यंकोजी के अधिकार में थे)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

राजप की हैसियत से १६३४ में महाराष्ट्र में २० लाख होन की आय का राज्य-क्षेत्र प्राप्त किया, और शिवाजी ने इसको केवल अनुचित अधिकार करने वालों से प्राप्त किया था, परन्तु तंजौर का राज्य अपने पिता की मृत्यु के बाद व्यंकोजी ने स्वयं जीता था और अपने राज्य में मिलाया था।

इस मनोवृत्ति के कारण दोनों भाइयों में समझौते द्वारा बँटवारा होना कठिन था। अन्त में जब शिवाजी ने धमकी दिखायी तो व्यंकोजी ने कहा कि इसका एक ही हल है कि लड़कर फैसला किया जाय जिसके लिए शिवाजी तैयार हो गये।

शिवाजी अपने भाई की हरकतों पर निगाह रखने लगे जिससे वह भाग न जाय। व्यंकोजी को मालूम हुआ कि वह वास्तव में बन्दी हो गया था; परन्तु था वह शाहजी का ही पुत्र और वह अपने छुटकारे की कला में शिवाजी से कम न था। वह प्रतिदिन नदीतीर स्नान करने के लिए एक नौकर को साथ लेकर जाया करता था; और जब उसके प्रहरी ढीले पड़ गये, एक रात वह आवश्यक काम के बहाने नदी के निकट चला गया, एक लट्ठों के ठाट पर कूदकर पहुँच गया जो उसके लिए पहले से ही तैयार कर दिया गया था, नदी पार करके वह अपने राज्य में दूसरे तट पर पहुँच गया, परन्तु उसके साथ केवल पाँच अनुचर थे (लगभग २३ जुलाई)।

शिवाजी को अपने भाई के भागने की बात सुबह मालूम हुई और यह कहकर कि यह सब तंजौर के मंत्रियों की सलाह से हुआ है उन्होंने जगन्नाथ पंत (दीवान), कोनहर महोदव तथा शिवाजी शंकर (दो मजमुआदार) और नीलोजी नायक (एक व्यापारी) को गिरफ्तार कर लिया और धमकी दी कि तंजौर राज्य का कब्जा करने के लिए वह जनार्दन नारायण हनुमन्ते को भेजेंगे। वह अपने भाई के चलन पर बहुत नाराज हुए और उन्होंने उसकी सुरक्षा के लिए अपने दिये हुए वचन की ओर संकेत करते हुए खुले दरबार में कहा, "क्या मैं उसे कैद करने वाला था? मेरी ख्याति चारों ओर फैली हुई है। मैंने अपने पिता की सम्पत्ति के लिए केवल इसलिए कहा था कि उनको अपनी विरासत तो रखनी ही चाहिए। यदि व्यंकोजी इसे नहीं देना चाहता तो उसके साथ कोई जबरदस्ती नहीं है। बिना किसी कारण के वह भागा क्यों? वह कम उम्र है और उसने बच्चे की तरह व्यवहार किया है।" शिवाजी ने अपने कुछ अधिकारियों को व्यंकोजी को बुलाने के लिए तंजौर भेजा, परन्तु वे असफल होकर लौट आये। (सभा० ९०)

कुछ समय बाद व्यंकोजी के बन्दी मंत्री छोड़ दिये गये तथा उपहारों और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आदरसूचक वस्त्रों सहित उन्हें तंजौर वापस भेज दिया गया। इस प्रकार शिवाजी ने जनता की निगाह में अपने को निर्दोष सिद्ध किया। किन्तु यद्यपि कोलेरून के दक्षिण में तंजौर के राज्य-क्षेत्र पर आक्रमण करने का इरादा उन्होंने छोड़ दिया, उस नदी के उत्तर में उन्होंने समस्त कर्नाटक, व्यंकोजी तथा शेरखाँ दोनों की जागीरों पर अधिकार कर लिया, केवल वैलोर और आर्नी ही अभी तक मुकाबला करते रहे।[१४]

फ्रांसीसी राजदूत जर्मेन ने, जिसने कोलेरून नदी पर स्थित शिवाजी के शिविर में तीन दिन व्यतीत किये, मराठा राजा की सादगी और सुव्यवस्था का सुस्पष्ट वर्णन किया है—"उनके शिविर में न कोई ठाट-बाट है और न अधिक सामान है और न स्त्रियाँ। वहाँ केवल दो डेरे हैं, परन्तु उनका कपड़ा मोटा है और वे बहुत छोटे हैं—एक अपने लिए, दूसरा अपने मन्त्री के लिए। शिवाजी के घुड़सवारों को प्रायः दो पेगोडा प्रतिदिन वेतन के रूप में मिलता है। समस्त घोड़े उनके ही माने जाते हैं और वही उनके लिए साईसों का वेतन देते हैं।...सामान्य रूप से प्रत्येक दो आदमियों की देखभाल में तीन घोड़े हैं, जिसके कारण उनकी सेना की गति ठीक रहती है। यह सरदार अपने दूतों को उदारतापूर्वक वेतन देते हैं जिससे उनके द्वारा प्राप्त की गयी सही खबरों से उनको अपनी विजयों में सहायता मिलती है।" (मार्टिन, २. ११३, ११९)

१५. शिवाजी का घर लौटना और विजय—व्यंकोजी को वापस बुलाने का कार्य विफल रहा, इसलिए शिवाजी ने कोलेरून में अपने शिविर को २७ जुलाई को तोड़ दिया। वहाँ से वलीगन्दपुरम (२८ मील उत्तर) में थोड़े समय के लिए रुकने के बाद उन्होंने वैलोर नदी (१० मील उत्तर) पार की और एक या दो दिन के लिए तुन्दुमगुर्ती में ठहरे। यहाँ पर उनसे तेवेनापतन का डच सरदार मिला जो अपने साथ अनेक प्रकार के उपहार लाया (लगभग ३१ जुलाई) और इस स्थान से उन्होंने अपनी सेना इलेवेंसुर (२२ मील आगे

---

१४ कोठी अभि० सेंट जार्ज, खण्ड १८, मद्रास से जेम्स और चेम्बरलेन को, २४ अगस्त, १६७७। वैलौर रमण के २ अगस्त में पत्र में (खण्ड २७) में लिखा है कि शिवाजी ने तिरूमलयादी से जाने के पश्चात तंजौर के मन्त्रियों को कुछ समय के लिए अपने पास रखा और जगन्नाथ ने इलेवेंसुर की गढ़-सेना को अपने अधीन होने के लिए राजी कर लिया। जेधे श० में लिखा है कि शिवाजी ने इसके पश्चात चिदाम्बरम, वृद्धाचलम और जग्देवगढ़ (कावेरीपत्तन) पर अधिकार कर लिया और कोल्हार का घेरा डाल दिया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उत्तर में भेजीं जिससे कि वह व्यंकोजी के आदमियों से उस किले को ले सकें, वह स्वयं सिमाजी नायक और अपने अन्य बड़े आदमियों के साथ उत्तर-पूर्व की ओर १६ मील वृद्धाचलम के शिवजी के विशाल मन्दिर में पूजा करने के लिए पहुँचा (१-३ अगस्त)।

२२ सितम्बर को शिवाजी वनिकमवादी (वैलोर से ४० मील दक्षिण-पश्चिम में) थे, और उन्होंने मद्रास के गवर्नर को लिखा, "कर्नाट प्रदेश में··· मेरा विचार कई किलों और गढ़ों में कई नये कार्य आरम्भ करने का है। आपके पास सम्भवतः ऐसे आदमी होंगे जो तोपों के वहन के लिए बड़ी गाड़ियाँ बनाना जानते हों तथा जिन्हें सुरंगें बनाने का ज्ञान हो। हमको इस समय ऐसे आदमियों की आवश्यकता है विशेषकर उनकी जो सुरंगे डालना और बारूद से पत्थर की दीवारें उड़ाना जानते हैं। यदि आपके पास ऐसे आदमी हों जो सुरंगें बनाना जानते हों तो कोई २० या २५ भेज दें अथवा कम से कम ५ से १० ऐसे आदमी अवश्य भेजें, क्योंकि मैं उनको अच्छा पारिश्रमिक दूँगा और अपने कई किलों में काम दूँगा।" अंग्रेजों ने इस प्रार्थना को नम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया और यह कहा कि व्यापारी होने के नाते हमको कठोर तटस्थता वरतने की आवश्यकता है। ३ अक्तूबर को शिवाजी मद्रास से केवल दो दिन की कूच की दूरी पर थे। इससे कुछ ही समय पूर्व वह दक्षिण आर्काट जिले के स्वामी बन गये थे। अक्तूबर में आर्नी ने उनकी अधीनता स्वीकार कर ली और इसी प्रकार उत्तर आर्काट के कुछ अन्य किलों ने भी।[१५]

शिवाजी अब अपने राज्य से लगभग दस महीने से अनुपस्थित थे, और स्वामी के निर्देशन के अभाव में वहाँ का प्रशासन ढीला पड़ रहा था। सितम्बर में उन्होंने अपने अधिकारियों की बड़ी परिषद बुलायी और उसमें महाराष्ट्र वापस जाने के लिए तय किया। इस प्रस्ताव को इस समाचार से और भी बल मिला कि औरंगजेब ने दकन के गवर्नर को आदेश दिया था कि वह कुतुबशाह को दण्ड दे क्योंकि वह परम विद्रोही शिवाजी से मिल गया था और उसने उनको सहायता दी थी, और बीजापुरी तथा मुगल संयुक्त सेना ने मालखेड़ के निकट गोलकुंडा राज्य पर आक्रमण कर दिया था (सितम्बर, १६७७)।[१६] अतएव नवम्बर १६७७ के प्रारम्भ में ही शिवाजी ४००० घुड़सवार लेकर

---

[१५] कोठी अभि० किला सेंट जार्ज, खण्ड २७, लव कृत *Vestiges* १. ३७१, ३५७

[१६] सरकार, औरंगजेब का इतिहास, ४ अध्याय, ४२, ७-८

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कर्नाटक के मैदान से चल दिये और अपने नये विजित क्षेत्रों के अधिकार में सेना के अधिकांश भाग को छोड़ दिया और "शीघ्र लौटने का वचन दिया।" पूर्वी घाट से पठार पर चढ़कर उन्होंने सुगमता से अपने पिता के जागीर-जिलों पर अधिकार कर लिया—कोलर, बंगलौर, बालापुर और सेरा एवं वर्तमान मैसूर राज्य के पूर्व और मध्य भागों में उस सीमान्त प्रदेश के उपद्रवी पोलीगरों को दबाया, और फिर बिलारी और धारवाड़ जिलों में होते हुए घर वापस आ गये, वह पन्हाला में अप्रैल १६७८ के आरम्भ में पहुँचे। (कोठी अभि० सूरत, १०७; सभा० ६१)

२१ अगस्त, १६७८ के लगभग, १४ महीने के घेरे के पश्चात, वैलोर शिवाजी के हाथ में आ गया; इस तमाम समय में कप्तान अब्दुल्लाखाँ ने किले को अधिकार में रखा और भीतर रहकर बड़ी बहादुरी से लड़ता रहा। परन्तु उसके मनुष्यों की संख्या जो पहले १८०० पैदल और ५०० घुड़सवार थी, घेरे की कठोरता और बीमारी के कारण घटकर २०० पैदल और १०० घुड़-सवार रह गयी थी, और बीजापुर से कोई मदद न आ सकी,·····अतएव वह अब किले की रक्षा न कर सका और इसलिए उसने इस शर्त पर किले को दे देना स्वीकार किया कि ३०,००० पेगोडा मुद्रा के रूप में दिये जायँ, एक छोटा किला दिया जाय और एक भूमिक्षेत्र दिया जाय जिसकी वार्षिक आय ३०,००० पेगोडा हो। (मद्रास डायरी और कन्सल्टेशन्स, १६७८-७६, पृ० १०५; बसातिन-उस-सलातिन, ४७६)

सभासद द्वारा किये गये अनुमान के अनुसार कर्नाटक में शिवाजी द्वारा विजित क्षेत्र की वार्षिक आय २० लाख होन थी और उसमें लगभग सौ किले थे जो शिवाजी ने जीते थे अथवा बनवाये थे। अगस्त १६७८ में मद्रास के व्यापारियों ने लिखा था, "जिंजी और वैलोर के दृढ़ गढ़ों के आसपास शिवाजी ने अपने अधिकारियों द्वारा इन प्रदेशों पर पूरा और शान्तिपूर्ण अधिकार कर रखा था, जिनसे वार्षिक आय २२ लाख परदो या ५५० हजार पाउण्ड थी जबकि एक परदो का मूल्य पाँच शिलिंग माना जाय; इनमें उसके मनुष्य और घुड़सवारों की संख्या काफी थी, ७२ मजबूत पहाड़ियाँ थीं और १४ किले (मैदान में) थे; यह क्षेत्र १८० मील लम्बा और १२० मील चौड़ा था।" परन्तु उनका मुख्य लक्ष्य सोना था न कि भूमि। उसकी "सुव्यवस्थित लूट" और वसूली ने पूरे कर्नाटक को 'हड्डियों तक चूस लिया' था जिसका सुस्पष्ट वर्णन मद्रास प्रेसीडेण्ट और फ्रांकोई मार्टिन ने भी किया

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

है। इस अभियान में[१७] जो लूट का माल हाथ लगा वह मराठा इतिहासकारों की कल्पना के बाहर था और उन्होंने उसका मूल्य लगाने का कोई प्रयत्न नहीं किया।

इस प्रकार जीते हुए कर्नाटक के मैदानों पर उन्होंने पहले शाहजी के वैध पुत्र शान्ताजी को वाइसराय के पद पर नियुक्त किया, उसका मुख्य स्थान जिंजी रखा, उसकी सहायता के लिए रघुनाथ नारायण हनुमन्ते राजनायिक सलाहकार और हिसाब-निरीक्षक (मजमुआदार) तथा हम्बीरराव इस विजित प्रदेश के सेनापति नियत किये गये। मैसूर का पठार रंगोजी नारायण वाइसराय के अन्तर्गत रखा गया, परन्तु जिंजी के अधिकार-क्षेत्र में माना गया। (सभा० ९१; मद्रास से सूरत, २० नवम्बर, १६७७; मिशन, ३. २६९)

१६. **व्यंकोजी के साथ पुनः संघर्ष, अन्तिम समझौता**—परन्तु उनके कुशल मस्तिष्क की अनुपस्थिति में नवीन विजय-क्षेत्र में शान्ति न रह सकी। तंजौर लौटने पर व्यंकोजी ने मदुरा तथा मैसूर के नायकों तथा अन्य पोलीगारों के साथ षड्यन्त्र रचना प्रारम्भ कर दिया और बीजापुर दरबार एवं पड़ोस के मुसलमान सामन्तों से भी अपनी "खोयी हुई भूमि प्राप्त करने के लिए एक संघ" बनाने की अपील की। किन्तु कुछ छोटे सरदारों को छोड़कर कहीं से भी सहायता न मिली।

नवम्बर, १६७७ में शिवाजी की सेनाओं ने कोलेरून नदी को पार करने का और तंजौर के राज्य में घुसने का विचार किया। व्यंकोजी ने उनका विरोध किया। कई दिन तक दोनों सेनाएँ नदी के दोनों ओर पड़ी रहीं और कोई सैनिक कार्रवाई नहीं की गयी। दोनों दलों के दूतों ने समझौते की कोशिश की, परन्तु सफलता नहीं मिली। व्यंकोजी ने युद्ध आरम्भ करने में विलम्ब किया क्योंकि कई दिन से लगातार उसके शिविर में गिद्ध मँडरा रहे थे जो अपशकुन था।

अन्त में १६ नवम्बर को व्यंकोजी ने कोलेरून नदी को ४००० घुड़सवार और १०,००० पैदल लेकर पार किया और शान्ताजी भोंसले के अधीनस्थ

---

[१७] "स्पेन में सीजर की महान सफलता की भाँति वह आये और विजय प्राप्त की तथा स्वर्ण, हीरों, पन्नों, लालों और कामदार मूँगों का अतुल कोष प्राप्त किया जिससे उनके भविष्य के विजय-अभियानों के लिए उनकी सेना बहुत मजबूत बन गयी (१६ जनवरी, १६७८ को एच० ग्रे द्वारा कम्पनी को लिखा गया पत्र मूल पत्र० ४३१४)। "हड्डियों तक चूस लिया गया" अक्तूबर, १६७७ के मद्रास अभियानों में। 'सुव्यवस्थित लूट' कैपेलिन में १६४. मार्टिन, २. १०९, ११४-११५, ११७

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी की १२,००० आदमियों की सेना पर आक्रमण किया।[१८] शान्ताजी ने सुबह से शाम तक बड़ी बहादुरी से मुकाबला किया, यद्यपि उसका रिसाला घटिया प्रकार का था। युद्ध बहुत जोर का हुआ, और बहुत-से मनुष्य हताहत हुए जिनमें कई प्रसिद्ध पुरुष भी थे। अन्त में शान्ताजी ने मैदान छोड़ दिया और दो मील तक भागा। तंजौर के घुड़सवारों ने उसका पीछा एक मील तक किया और वे दिन भर की थकावट के बाद अपने तम्बुओं में आराम करने के लिए लौट आये। अपने पड़ाव पर पहुँचने पर शान्ताजी ने "हार के अपमान का विचार करते हुए अपने कप्तानों से मन्त्रणा की, अपने घोड़ों को फिर से कसा तथा अन्य मार्गों द्वारा अर्ध-रात्रि की शान्ति को चीरते हुए, इतनी शीघ्रता से दुश्मनों पर, जो दिन भर के परिश्रम के बाद घोड़ों को बेसाज करके आराम में लीन थे, चढ़ आया कि वे आश्चर्यचकित हो गये। उसने शत्रु को बुरी तरह काट डाला तथा लगभग १००० घोड़े, तीनों मुख्य सेनापति, तम्बू और उनका सारा सामान उसके हाथ लगा; सौ घोड़े वनवासियों के हाथ लगे जो लूट में शामिल हो गये। शेष लोग कोलेरून नदी को पार करके तंजौर भाग गये।"[१९]

---

१८ मराठा अभिलेखों के अनुसार इस युद्ध में शिवाजी की सेनाओं का नेतृत्व हम्बीरराव ने किया परन्तु मद्रास कोठी अभि० और जेसुइट मिशनरी के अनुसार शान्ताजी ने यह कार्य किया। वास्तव में इन दोनों बातों में कोई विरोध नहीं है : दोनों उपस्थित थे, वाइसराय और मुख्य सेनापति। मार्टिन, २. ११९-१२०

१९ कोठी अभि०, खण्ड १०७, मद्रास पत्र, दिनांक २० और २९ नवम्बर, १६७७। पादरी आंद्रे फ्रीअर ने जिंजी जिले के एक नगर से १६७८ में लिखा, "व्यंकोजी के सैनिक क्रोध के आवेश में वैरी की सेना पर सिंहों की भाँति टूट पड़े, उनकी सेना को तितर-बितर कर दिया, आदि..... शान्ताजी भाग जाने पर विवश हुआ, परन्तु उसने बुद्धिमानीपूर्वक बहुत-सी सेना घात में लगा दी; विजयी लोग सफलता के मद में चूर, जाल में फँस गये, उन्होंने वैरी की लौटती हुई सेना पर पीछे से आक्रमण कर दिया; वैरी को मालूम हो गया कि भागे हुए लोग बड़े जोर-शोर से उन पर हमला करने के लिए लौट रहे हैं। कई घंटों के घमासान युद्ध के बाद वे हार गये और रणक्षेत्र से भाग निकले।...परन्तु हारे हुओं की अपेक्षा शान्ताजी की हानि बहुत अधिक हुई।" (मिशन ३. २७०)

सभासद, ९२, ने युद्ध का वर्णन इस प्रकार किया है : "व्यंकोजी की सेना हम्बीरराव से चार गुनी अधिक थी, परन्तु उसने व्यंकोजी को हरा दिया और उसने उसके ४००० घोड़े, इनके अलावा हाथी, रत्न, सामान्य अधिकारी और विकाजी व प्रतापजी (शाहजी के दो वैध पुत्र) तथा अन्य उच्चाधिकारी पकड़ लिये।" जेधे शकावली के अनुसार युद्ध

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दोनों ओर की सेनाओं की टुकड़ियों में भिड़न्त दिसम्बर भर होती रहीं और उन्होंने बराबरी की प्रचण्डता से देश लूटा और नष्ट किया। इसके बाद शीघ्र ही शिवाजी को आवश्यकता प्रतीत हुई और उन्होंने अपनी सेना के बड़े भाग को कर्नाटक से वापस बुला लिया क्योंकि उनके घर की भूमि पर आक्रमण की आशंका हो उठी थी। अतएव दोनों भाइयों में सुलह हो गयी—शिवाजी ने जिंजी क्षेत्र, कुछ अन्य किले, कुछ समय तक मैसूर का पठार (कोलर आदि) जो किसी समय उसके पिता के पास थे, पर अधिकार रखा, और व्यंकोजी के अधिकार में कोलेरून नदी के दक्षिण में उसका राज्य-क्षेत्र तथा कुछ भाग उसके उत्तर में जिसके बदले उसे ३ लाख पेरोड (६ लाख रुपये) नकद देने पड़े। हम्बीरराव के अधीनस्थ अधिकरण की सेना महाराष्ट्र को बुला ली गयी और रघुनाथ ने नये सूबे की सुरक्षा के लिए १०,००० घुड़-सवारों की स्थानीय सेना (पागा और सिलाहदार दोनों) तैयार की।[२०]

१७. शिवाजी के आक्रमण के दौरान यूरोपीय व्यापारी—जैसे ही शिवाजी कर्नाटक के मैदान में उतरे (मई १६७७ के आरम्भ में), उस तट पर यूरोपीय व्यापारियों ने उनको उपहार भेंट किये जिससे वह आरम्भ से ही उनकी ओर मैत्री भाव रखें। १४ मई को मद्रास के गवर्नर को उनके एजेंट महादजी पन्त ने उनको एक पत्र दिया जिसमें उन्होंने कुछ शक्तिवर्धक औषधियाँ और कुछ अच्छी विष-निरोधक दवाएँ माँगीं। अंग्रेजों ने इन्हें भेज दिया और साथ ही मालद्वीप के नारियल और ६० होन के मूल्य के उपहार भी भेज दिये। शिवाजी ने वैलोर से लिखे हुए अपने २५ तारीख के पत्र में इनको धन्यवाद सहित स्वीकार किया जिसमें कि अच्छी विष-निरोधक दवाएँ और माँगीं तथा साथ ही गवर्नर से प्रार्थना की कि "उनका मूल्य लेने में वह तनिक भी संकोच न करें," और साथ ही उन्होंने गवर्नर के लिए

अहीरी के निकट हुआ और हम्बीरराव ने ३००० घोड़े, अनेक हाथी तथा व्यंकोजी के कई 'सरदार' पकड़ लिये। ६१ क० ब० ८३

२० कोठी अभि० सूरत, १०७, मद्रास से सूरत, दिनांक २७ मई, १६७८; सभा० ६३। ६१ क० ब० ८३ में यह भी लिखा है कि आर्नी और वेनी दुर्ग उसके लिए शिवाजी द्वारा दिये गये अनुदान के विचार से वेदा जी भास्कर के पुत्र के पास छोड़ दिये गये। १६७८ के पश्चात शिवाजी ने पूर्वी मैसूर में अपनी विजयों में से कोई स्थान अपने अधिकार में नहीं रखा, जैसे कोलर और बंगलौर। बाद की किंवदन्ती के अनुसार एक नम्र समझौते द्वारा बंगलौर, ओसकोटा और शिलागट्टा परगने (अर्थात आधुनिक मैसूर और कोलर जिले) उनको वापस कर दिये गये—ये व्यंकोजी की स्त्री के लिए वस्त्रों के खर्च के लिए दिये गये!

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सम्मान-वस्त्र भी भेजे। परन्तु अंग्रेजों ने पुनः उनको ५२ होन के मूल्य के उपहार भेजे, (१८ जून)। अंग्रेजों की सेवा में दो ब्राह्मण शिवाजी के शिविर पर गये और वहाँ से वे शिवाजी के कार्य और इरादों के विषय में समाचार भेजते रहे। २२ सितम्बर को उन्होंने फिर गवर्नर को लिखा और उनसे २०-२५ आदमी माँगे जो तोपें ढोने की गाड़ियाँ बनाना, सुरंग लगाना और पत्थर की दीवारों को बारूद से उड़ाना जानते हों, और साथ ही यह भी वादा किया कि उनको वह अच्छा वेतन देंगे। गवर्नर अपनी तटस्थता पर जमा रहा। (मद्रास डायरी, १६७७, पृष्ठ ११२-११५; मूल पत्र० ४२६६; कोठी. अभि० मद्रास, २७)

मराठों के निकट आने और चारों ओर लोगों में घबराहट और आतंक फैल जाने के कारण, पांडिचेरी के गवर्नर फ्रेंको मार्टिन ने वैलोर में शिवाजी के पास एक ब्राह्मण को भेजा और उसे एक पत्र दिया जिसमें उनसे अपील की कि वह कर्नाटक में फ्रांसीसी कोठियों की उसी प्रकार रक्षा करें जैसी कि उन्होंने अपने राज्य में राजापुर की कोठी की रक्षा की थी। इस एजेण्ट ने शिवाजी से तीन बार भेंट की जिसने शेरखाँ के साथ युद्ध में फ्रांसीसी सहायता माँगी और अन्त में यह पूछा कि यदि उन्हें शान्तिपूर्वक रहने दिया जाय तो इसके बदले वे क्या देंगे। फ्रांसीसियों ने उत्तर दिया कि डच लोगों के साथ हाल के युद्ध के कारण और व्यापार बन्द हो जाने के कारण उनके पास पैसे की बहुत कमी है। २ जुलाई को मार्टिन ने डाइरेक्टर बैरन की ओर से फिर अपने ब्राह्मण एजेण्ट को भेजा और रक्षा के लिए पुनः अभ्यर्थना की। शिवाजी की इच्छा थी कि उनके पास कोई यूरोपीय दूत भेजा जाय। अतएव सिओर जर्मेन (और उसके साथ दुभाषिया ए० कैटल) कोलेरून में शिवाजी के शिविर में भेजे गये, जहाँ जनार्दन पन्त ने उनको पेश किया, और तीन दिन के बाद वे एक फर्मान लेकर वापस आये जिसमें पांडिचेरी की रक्षा का वचन दिया गया था (अगस्त)। परन्तु शिवाजी के स्थानीय अधिकारी जो नगर में पहुँचते थे लोगों से धन वसूल करते रहे। जैसा मार्टिन ने लिखा, "यह केवल उन मनुष्यों के लिए लगातार तलाश है जो उन्हें रुपये दे सकते हैं। अधीक्षक लोग इस सूबे के गवर्नर (सूबेदार) से मिले हुए हैं। रुपया जबरन वसूल करने के सभी तरीके स्वीकार कर लिये गये हैं। शिवाजी को लिखे गये पत्रों का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा।" (मार्टिन २. पृष्ठ ८३-११५)

३१ जुलाई को तेवेनापत्तन (कुड्डालोर) में स्थित डच कोठी का मुख्य अधिकारी तुंदुमगुर्ती में शिवाजी से मिला और अपने साथ अनेक उपहार ले

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

गया (लाल रेशम के कपड़े, चन्दन, गुलाब जल, मालद्वीप के नारियल, लौंग और तलवार के फल)। शिवाजी प्रसन्न हुए और आगतुंक दल को सम्मान-परिधान दिये। परन्तु उनकी कोठी का कुछ सामान लूट लिया गया था और उन्होंने उनका हर्जाना माँगा। स्पष्टतः उनको कोई मुआविजा नहीं दिया गया। जैसा मार्टिन ने लिखा है, "डच तेविनापत्तन में अपने घर पर ही कैदी की भाँति थे, और बिना शुल्क दिये हुए आने और जाने के लिए वे उपहार देने के लिए मजबूर थे।" (कोठी अभि० मद्रास २७; मार्टिन २. ११५)

१८. व्यंकोजी का वास्तविक चरित्र—बाद के मराठा लेखकों ने जैसे वाकनिस, चितनिस और दूसरों ने जानबूझकर इतिहास को गलत ठहराया है; इसका सबसे बड़ा उदाहरण यह मिलता है कि इन लेखकों ने व्यंकोजी को अयोग्य, काहिल व्यक्ति, बिना किसी उच्च महत्त्वाकांक्षा अथवा सैनिक मनोवृत्ति के और बिना इस योग्यता के कि वह रघुनाथ नारायण हनुमन्ते जैसे योग्य और उपयोगी मन्त्री का सही मूल्यांकन कर सके, बताया है। समकालीन अभिलेखों के अध्ययन से ये भ्रम दूर हो जाते हैं और व्यंकोजी के चरित्र का सही मूल्यांकन होता है जो शिवाजी का भाई होने के नाते उतना ही योग्य था। फारसी इतिहासों में जयसिंह द्वारा बीजापुर के आक्रमण (१६६५) के दौरान मुगलों से उसके वीरतापूर्ण युद्ध का वर्णन किया गया है। उसने स्वयं न कि उसके पिता ने तंजौर जीता (और इसलिए इस पर शिवाजी का कोई वैध अधिकार न था।) ईसाई पादरी आंद्रे फ्रीरे ने तंजौर के नये विजित राज्य के असैनिक शासन का इस प्रकार वर्णन किया है: "उस (व्यंकोजी) ने प्रयत्न किया कि निवासियों का वह प्रिय बने। उसकी सरकार के न्याय और बुद्धि-मत्ता ने पूर्व प्रशासन के घावों को भरा और देश के प्राकृतिक साधनों का विकास किया। नहरों और तालाबों की मरम्मत करा देने से खेत उपजाऊ हो गये जो अनेक वर्षों से जोते-बोये नहीं गये थे, और अन्तिम फसल तो सभी पूर्व फसलों से अच्छी हुई। (मिशन में १६७६ का पत्र, ३. २४६, ६१ क० ब० ७५)

रुपये-पैसे के मामले में रघुनाथ हनुमन्ते कदापि ईमानदार न था। मुझे पार्सनिस के इस कथन का कोई प्रमाण नहीं मिला है कि रघुनाथ ने १६७८ में शिवाजी की वापसी के बाद व्यंकोजी के राज्य का प्रशासन उसके वजीर के रूप में किया। किसी विश्वसनीय इतिहासकार ने इसका जिक्र नहीं किया है, और जाने हुए तथ्यों के अनुसार यह सही नहीं मालूम होता। इसलिए 'तंजावर-चें राजघराने', ३६-३८ और ४२-४३ में डी० बी० पार्सनिस का कथन कदापि नहीं माना जा सकता और वह ऐतिहासिक तथ्य नहीं हो सकता।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय १३

शिवाजी के अन्तिम वर्ष

१. कर्नाटक से लौटते समय साहसिक कार्य ।
२. १६७७ में मराठों के कार्य ।
३. तुंगभद्रा के उत्तरी तट की विजय ।
४. १६७८ में मुगल, बीजापुर और शिवाजी ।
५. शम्भूजी मुगलों से जा मिला ।
६. बीजापुर लेने के लिए मराठों का षड्यन्त्र ।
७. दिलेर का भूपालगढ़ पर अधिकार ।
८. धार्मिक सहिष्णुता पर शिवाजी का औरंगजेब को पत्र ।
९. दिलेर ने बीजापुर पर आक्रमण किया, १६७९ ।
१०. दिलेर द्वारा लूट-मार ।
११. शिवाजी का अन्तिम अभियान ।
१२. उनकी घरेलू कठिनाइयाँ ।
१३. शिवाजी की मृत्यु ।
परिशिष्ट—उनकी पत्नियाँ और सन्तान ।

१. **कर्नाटक से लौटते समय साहसिक कार्य**—कर्नाटक के आक्रमण की आश्चर्यजनक सफलता के पश्चात शिवाजी ने मद्रास के मैदान से प्रस्थान किया (लगभग नवम्बर १६७७ के आरम्भ में); तथा मैसूर के पठार में, वहाँ के पूर्वी तथा मध्य भाग को जीतते हुए, प्रविष्ट हुए।[1]

मैसूर में चलकर (जनवरी, १६७८) उन्होंने तुंगभद्रा नदी पार की और कोपल व गदग होते हुए वह धारवाड़ जिले में लक्ष्मीश्वर पहुँचे। खानगौदा नामक देसाई ने भयभीत होकर अपना किला खाली कर दिया, और उस पर मराठों ने अधिकार कर लिया। इसके बाद जनवरी १६७८ के मध्य में

---

[1] सभासद ९२ में उनके लौटने का मार्ग इस प्रकार दिया गया है : कोल्हार —बालापुर—कोपल—लक्ष्मीश्वर— खानगौद के देसाई को दण्ड दिया— सम्पगाँव जिला—बल्वदा देसाइन पर आक्रमण किया, अधिकार किया, और "सबक सिखाया"—पन्हाला। कोपल तुंगभद्रा नदी के उत्तर में, विजयनगर के खंडहरों से २२ मील पश्चिम में और बीजापुर के ठीक दक्षिण में १०५ मील दूर है। गदग कोपल से ३५ मील पश्चिम में है, लक्ष्मीश्वर गदग से २४ मील दक्षिण में है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बाँकापुर पर, लक्ष्मीश्वर के दक्षिण-पश्चिम में, आक्रमण किया गया। इस स्थान से शिवाजी उत्तर की ओर मुड़े और बेलगाँव जिले में सम्पगाँव के निकट पहुँचे। बेलवादी में, जो सम्पगाँव से १२ मील उत्तर-पूर्व में और बेलगाँव से ३० मील दक्षिण-पूर्व में एक छोटा-सा गाँव था, वहाँ की विधवा अधिकारी ने गुजरती हुई शिवाजी की सेना के कुछ परिवहन बैलों को लूट लिया। उसके किले का घेरा तुरन्त डाल दिया गया, परन्तु उसने २७ दिन तक उसकी बड़ी बहादुरी से रक्षा की और इसके बाद प्रबल आक्रमण द्वारा किला जीत लिया गया और वह गिरफ्तार कर ली गयी।[२]

एक छोटे मिट्टी के बने किले में एक स्त्री द्वारा इतने लम्बे मुकाबले से शिवाजी की प्रतिष्ठा को धक्का लगा। जैसे कि राजापुर के अंग्रेजी व्यापारियों ने २८ फरवरी, १६७८ को लिखा : "वह उस एक किले का घेरा डाले हुए हैं जहाँ उन्हें इतना अप्रतिष्ठित होना पड़ा है जितना कि मुगलों तथा दक्षिणियों (अर्थात बीजापुरियों) की समस्त शक्ति के सम्मुख भी कभी नहीं होना पड़ा था; और जिस व्यक्ति ने इतने राज्य जीत लिये थे, वह इस स्त्री देसाई को परास्त न कर सका!" (कोठी अभि० सूरत, १०७, २८ फरवरी १६७८)

इसके तुरन्त बाद शिवाजी को एक दूसरी—जीवन की सबसे बड़ी—निराशा मिली जो राजापुर के व्यापारियों ने ३ अप्रैल के अपने पत्र में इस प्रकार वर्णित की है : "जमशेदखाँ ने अपने स्वामी नवाब (बहलोलखाँ की मृत्यु, २३ दिसम्बर, १६७७) के बाद अधिक समय तक सामना करने के लिए अपने को असमर्थ पाया और शिवाजी के साथ इस बात पर राजी हो गया कि (बीजापुर के किले तथा सिकन्दर आदिलशाह को) ६,००,००० पगोडा लेकर उनको समर्पित कर दे। सिद्दी मसूद को इसका सुराग लग गया, और बीमारी

---

२ मूल पत्र० ४३१४. ६१ क० ब० ८३ में उसके भाग्य का वर्णन इस प्रकार दिया गया है : "सावित्री नामक स्त्री बेलवादी की पटेलनी (गाँव के मुखिया की पत्नी) थी। अपने किले में शरण लेकर वह शिवा से एक महीने तक लड़ी। जब उसकी सामग्री और गोला-बारूद खत्म हो गये तो उसने धावा कर दिया, घेरे की समस्त खाइयों को नष्ट कर दिया और अनेक घेरा डालने वालों को भगा दिया या मार डाला। एक दिन तो वह बहादुरी से लड़ी फिर अन्त में हारकर भागी, पकड़ी गयी और उसका बड़ा अपमान किया गया। इस बुरे काम का कर्ता साखूजी गायकवाड़ था। इस करतूत को मालूम करके शिवाजी ने उसकी दोनों आँखें निकलवा डालीं और इस प्रकार उसको अपने दुष्कर्म का फल मिल गया। उसे मनौली गाँव में कैद में डाल दिया गया।"

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

का बहाना करके तथा बाद में मृत्यु घोषित कराके उसका खूब प्रचार कराया तथा सार्वजनिक रूप से जनाजा सहित अपनी सेना का एक भाग अदोनी को भेजा और लगभग ४००० सैनिक जमशेद के पास आये और यह बहाना किया कि चूँकि उनके नेता की मृत्यु हो चुकी है, अतएव वह उन्हें रखेगा तो वे उसकी सेवा में रहेंगे। जमशेद ने उनकी सेवा स्वीकार कर ली और वे किले में दाखिल हुए। किन्तु दो दिन में ही उन्होंने जमशेदखाँ को पकड़ लिया, किले के दरवाजे खुलवा दिये तथा सिद्दी वहाँ जीवित आ पहुँचा (२१ फरवरी, १६७८)। शिवाजी अपनी कूच के दौरान यह खबर सुनकर वापस लौट पड़े और शीघ्र ही उनके पन्हाला में पहुँचने की आशा हो चली।" (कोठी अभि० सूरत, खण्ड १०७, ३ अप्रैल १६७८)

ऐसे युग में जब प्रत्येक व्यक्ति दिनदहाड़े रिश्वत लेता था, शिवाजी को घूस लेकर कार्य सिद्ध करने का दोषी नहीं ठहराया जा सकता। बीजापुर का किला बिक्री के लिए था और उन्होंने तो केवल अन्य प्रतियोगियों के साथ कठपुतली आदिलशाह के प्रतिरक्षक के स्थान के लिए बोली लगायी थी; ठीक इसी प्रकार शाहजी भी कठपुतली निजामशाह के संरक्षक थे। मसूद और बहलोल को भी कम दिलचस्पी नहीं थी, किन्तु वे लोग बीजापुर के राजप के रूप में शिवाजी की अपेक्षा अवश्य ही कम कुशल सिद्ध होते।

आदिलशाही राजधानी का सिद्दी मसूद को अर्पण होने (२१ फरवरी) का समाचार शिवाजी को तब मिला जब वह बेलवादी से तुर्गल होते हुए बीजापुर जा रहे थे, और वह पश्चिम की ओर मुड़ गये तथा अप्रैल १६७८ के प्रथम सप्ताह में अपने पन्हाला किले को वापस आ गये।

२. **१६७७ में मराठा कार्रवाई**—इस स्थान पर हम इस बात पर विचार कर सकते हैं कि कर्नाटक अभियान के कारण शिवाजी की अनुपस्थिति के समय महाराष्ट्र में क्या हुआ (जनवरी १६७७–मार्च १६७८)। शम्भूजी की अधीनता में एक सेना गोआ के पास कुछ पुर्तगाली क्षेत्र पर कब्जा करने के लिए भेजी गयी। उसने पुर्तगालियों से इस आधार पर ६० गाँवों की माँग की कि वे फोंदा के किले के अन्तर्गत हैं जो इस समय शिवाजी के अधिकार में था; किन्तु माँग अस्वीकृत कर दिये जाने पर उसने पुर्तगाली सेना पर जोर का धावा बोला परन्तु उन्होंने उनको पीछे हटा दिया। तब मराठे इस आशा में दमन पहुँचे कि वहाँ कम कड़ा मुकाबला मिलेगा (नवम्बर, १६७७)। किन्तु इस अभियान से कोई स्थाई लाभ न हुआ। (डच अभिलेख, खण्ड ३४, संख्या ८४४)। गोआ में मराठा राजदूतावास का वर्णन अध्याय १४ में किया जायगा।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इस काल में जो सेना उन्होंने अपने इलाके में 'देश' में मोरो त्रिम्बक तथा कोंकण में अन्नाजी दत्ते के अधीनस्थ छोड़ी थी वह सब स्वभावतः इधर-उधर छापे मारने में लगी रही और उन्होंने कोई दूरवर्ती अभियान नहीं किया। सूरत जिले में सदा की भाँति मराठा सेना कर वसूल करती रही जिसके मुख्य स्थान निकट ही नवसारी, गंडवी और पिंडवाल थे और पेशवा की अनुपस्थिति में त्रिम्बकजी वास्तविक कमान में था। उनके अधिकारी निधड़क सूरत के नगर में भी ४० या ५० सैनिक लेकर घुस पड़ते थे और खुल्लमखुल्ला गवर्गर से खाद्य-सामग्री तथा धन माँगते थे। नवम्बर १६७७ में दत्ताजी ने गोलकुंडा की सेना द्वारा दिलेर और बहलोल की करारी हार (दो महीने पूर्व) से लाभ उठाकर कन्नड़ के भीतरी भागों में घूमते फिरे और हुबली को लूट लिया। जनवरी १६७८ के आरम्भ में मोरोपन्त ने त्रिम्बक, नासिक तथा मुगल राज्य में अन्य अनेक स्थान लूटे।" दिलेरखाँ वहाँ अपनी विच्छिन्न सेना के शेष भाग को लेकर शीघ्रता से पहुँचा (फरवरी का मध्य)।[3]

३. तुंगभद्रा के उत्तरी तट की विजय—शिवाजी की वापसी (मार्च, १६७८) पर मराठा क्रियाशीलता फिर आरम्भ हो गयी। उनके कर्नाटक अभियान के परिणाम-स्वरूप मध्य तथा पूर्वी मैसूर में जो जिले उन्होंने अपने पास रखे उन्हें उन पुराने राज्य-क्षेत्रों से संयुक्त करना था जो बीजापुर के दक्षिणी कोने की विजय से प्राप्त हुए थे, अर्थात बिलारी जिले के सामने तुंगभद्रा नदी के उत्तर में कोपल क्षेत्र तथा कोपल एवं पन्हाला के बीच में आने वाले धारवाड़ और बेलगाँव के जिलों का भाग। इस क्षेत्र पर दो अफगानों—सम्पगाँव (बेलगाँव) के हुसेनखाँ मियाना तथा उसके भाई कोपल के कासिमखाँ—का अधिकार था। वे बहलोलखाँ के कबीले वाले थे और उस मुखिया की मृत्यु तथा उसके कुटुम्ब की समाप्ति के पश्चात इन इलाकों की रक्षा का भार, जो पहले उसकी जागीर में शामिल थे, उपर्युक्त दोनों भाइयों को सौंप दिया गया।

सभासद के अनुसार हुसेनखाँ उतना ही कुलीन और शक्तिशाली था जितना कि बहलोलखाँ और वह एक बहादुर सेनानी था जो अपनी वीरता के लिए विख्यात था, तथा ५००० पठान सैनिक, तीरन्दाजों, भालेवालों, बन्दूकचियों तथा तोपचियों की कमान में था। जनवरी, १६७७ में हम्बीरराव ने गदग जिले पर आक्रमण किया। हुसेनखाँ मियाना ने यलबर्गा के निकट उसका मुकाबला

---

[3] कोठी अभि० ८९, सूरत से बम्बई, २८ मई; खण्ड १०७ राजापुर से सूरत, ८ दिसम्बर, १६७७; बम्बई से सूरत, २१ फरवरी, १६७८

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

किया। लम्बे और खूनी युद्ध के पश्चात पठान हरा दिये गये। मोटे होने के कारण हुसेनखाँ घोड़े पर सवारी न कर सकता था। जिस हाथी पर चढ़कर वह भागने की कोशिश कर रहा था उसकी सूँड़ को नागोदी जेधे ने घायल कर दिया और इसलिए वह लौट जाने को मजबूर हुआ। नागोदी गोली से मार दिया गया, परन्तु खान २००० घोड़ों और कुछ हाथियों सहित पकड़ा गया। शिवाजी उसे मुक्त करने को तैयार हो गया इस शर्त पर कि वह कोपल का किला दे दे, परन्तु उसने मना कर दिया और वह कैद में डाल दिया गया। १६७८ के आरम्भ में शिवाजी ने गदग जिला जीत लिया। अन्त में दो वर्ष के पश्चात पेशवा मोरो पन्त ने हुसेन के लड़के के द्वारा कोपल के कमांडर कासिमखाँ से वार्ता की और धन लेकर उसे किला दे देने के लिए राजी कर लिया (३ मार्च, १६७९)। हुसेन अब मुक्त कर दिया गया और आजीविका के लिए उसने मराठों के यहाँ नौकरी कर ली।[४]

सभासद ने कोपल को "दक्षिण का द्वार" ठीक ही कहा है और इस पर अधिकार प्राप्त कर लेने से मराठा साम्राज्य तुंगभद्रा नदी के किनारे तक और इसके पार बिलारी और चित्तलदुर्ग के जिलों तक फैल गया। अनेक स्थानीय सरदार जिन्होंने लम्बे अरसे से बीजापुर सरकार की अवहेलना की थी तथा इस अर्द्ध-विजित क्षेत्र में कर अदा नहीं किये थे मराठों द्वारा दण्डित किये गये तथा आज्ञाकारी बनाये गये, जिनमें ये भी थे—कनकगिरि (कोपल से २५ मील उत्तर-पूर्व), हरपनहल्ली (कोपल से ४० मील दक्षिण), रायदुर्ग, चित्तलदुर्ग,

---

४ मैंने यहाँ जेधे के अनुसार लिखा है और कुछ बातें ६१ क० ब० ७४ से ली हैं। ये दोनों पुस्तकें विजयी का नाम बहीर राव बताती हैं, जबकि सभासद ने उसका नाम हम्बीर राव बताया है। (मोदी पांडुलिपि में हम्बीर आसानी से बहीर पढ़ा जा सकता है) जेधे ने युद्ध का स्थान 'यलगेदला के निकट' बताया है, जिसे मैं 'यलबर्गा' कहूँगा (गदग से ३० मील उत्तर-पूर्व में, अब लिंगसागर जिले में), और न कि येलगी में (२० मील बेलगाँव के दक्षिण में)। वाकनिस कहता है कि हुसेनखाँ कुकनूर का सरदार था—एक नगर जो कोपल से १५ मील उत्तर में है, और यह कि बहीर राव लड़ाई में मारा गया और हुसेन ने, अपमानित होकर शिवाजी से मुक्त किये जाने पर विष खा लिया (जो ऐतिहासिक दृष्टि से गलत है)। सभासद, ८०-८१ के अनुसार युद्ध सम्पगाँव में हुआ। ब० स० ४५१ में केवल यह लिखा है कि शिवा ने हुसेनखाँ को धोखे से कैद कर लिया।

कोपल को विजय कर लेने का सही इतिहास जवाबिते-आलमगीरी में दिया गया है (ब्रिटिश म्यूजियम पांडुलिपि ओर्म १६४१ एफ १४५ बी। देखिए मेरी पुस्तक 'शिवाजी का घराना', अध्याय ५)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

विद्यानगर (? पुराना विजयनगर) तथा बूँदीकोट (? गुदीकोटा, हरपनहल्ली से ४५ मील पूर्व) के पोलीगार। इस क्षेत्र को अब शिवाजी के राज्य का एक नियमित प्रदेश बना दिया गया और यहाँ एक वाइसराय नियुक्त किया गया। (सभासद ८१)

अप्रैल, १६७८ के अन्त में शिवाजी की सेनाओं ने मूँगीपेठन को लूटा, जो गोदावरी नदी पर, औरंगाबाद के ३० मील दक्षिण में था। कदाचित इससे अगले महीने में उन्होंने शिवनेर पर अधिकार करने का दूसरा प्रयत्न किया। उन्होंने उसकी तलैटी में स्थित (जुन्नार) गाँव पर आक्रमण किया, और रात को किले पर चढ़ने का प्रयास किया। "फंदों और रस्सी की सीढ़ियों के द्वारा रात को तीन हजार मराठों ने किले की दीवारों पर चढ़ने की कोशिश की। परन्तु अब्दुल अजीजखाँ अति कुशल किलेदार था। यद्यपि उसने अपने लड़कों और अनुगामियों को गाँव में फौजदार यहियाखाँ की सहायता के लिए भेज दिया था, फिर भी उसने स्वयं थोड़े-से आदमियों की सहायता से शिवाजी के उन समस्त पैदल सैनिकों को मार डाला जो किले में घुस गये थे। अगले दिन सवेरे उसने उन थोड़े-से आदमियों को भी ढूँढ़कर पकड़ लिया जो किले के अंचल में पहाड़ी के पार्श्व में और चट्टानों व सूराखों में छिपे बैठे थे, परन्तु उनको उपहार देकर छोड़ दिया, और शिवाजी के पास निम्न संदेशा भेजा—जब तक मैं किलेदार हूँ आप इस किले को कदापि नहीं ले सकते हैं।" (दिल० १५७, मसीरे-आलमगीरी, १६६)

४. **मुगल, बीजापुर तथा शिवाजी, १६७८**—अब शिवाजी तथा कुतुबशाह के बीच के सम्बन्ध बिगड़ गये, तथा मदन्ना पंडित द्वारा इतने परिश्रम से निर्मित राजनयिक प्रणाली ध्वस्त हो गयी। जब कुतुबशाह ने देखा कि कर्नाटक अभियान में उसे महज शतरंज का मोहरा बनाकर छोड़ दिया गया तो उसका क्षोभ बढ़ता गया। उसने इस अभियान का सारा खर्च बर्दाश्त किया था तथा इसके लिए तोपखाना और सहायक सेना दी थी। किन्तु न तो जीते हुए किलों में से एक भी किला उसे दिया गया और न ही उस स्वर्णभूमि से लाये गये अपार लूट के सामान में से ही उसे एक पैसा मिला। और अब धोखे से बीजापुर पर अधिकार करने से मराठा षड्यंत्र ने उसका सब्र बिलकुल तोड़ दिया, विशेषकर इसलिए कि गत कुछ वर्षों से वह नाबालिग आदिलशाह के वीर मित्र और रक्षक की खुशामदी भूमिका अदा कर रहा था। इसलिए अबुलहसन ने नये बीजापुरी राजप, सिद्दी मसूद तथा उसके प्रतिरोधियों (विशेषकर शरजाखाँ) के बीच शान्ति-स्थापना का प्रबन्ध किया, बिना वेतन दी गयी असंतुष्ट सेना को शान्त करने के लिए धन की सहायता दी तथा उसे शिवाजी के विरुद्ध युद्ध करने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तथा उन्हें "कोंकण तक सीमित रखने" के लिए तैयार किया । आदिलशाही सामन्तों ने आगामी अक्तूबर में २५,००० घुड़सवारों तथा बहुत बड़ी पैदल सेना लेकर अभियान की तैयारी आरम्भ की । किन्तु दिलेरखाँ ने समस्त योजना बेकार कर दी (मूल पत्रव्यवहार ४२६६; कोठी० अभि० सूरत, १०७)

सिद्दी मसूद ने दिलेरखाँ से जब (नवम्बर, १६७७) कुलबर्गा से सुलह की थी तो दिलेरखाँ ने उससे कठिन और अपमानकारी शर्तें मंजूर करवायीं । उस संधि का घृणापात्र बन गया नया राजप, और राज्य की सारी मुसीबतों का उत्तरदायित्व उसके सिर मढ़ा गया । अन्दरूनी झगड़ों से परेशानी, अफगानी सिपाहियों द्वारा प्रतिदिन बेइज्जती और धमकी, तथा नष्टप्राय, विभक्त व दिवालिया राज्य के साधनों से शिवाजी के लगातार आक्रमणों को रोकने में असफलता से तंग आकर सिद्दी मसूद शिवाजी से समझौता करना चाहता था । किन्तु दिलेरखाँ ने उसे यह विश्वास दिलाकर मना कर दिया कि शाही सेना मराठों से लड़ने में उसकी मदद करेगी । परन्तु राज्य में चारों ओर होने वाले उपद्रवों से मसूद इतना तंग आ गया था कि उसने यह सलाह मानने से इनकार कर दिया । उसमें शिवाजी को लिखा, "हम पड़ोसी हैं । हम वही नमक खाते हैं । राज्य (की भलाई) में आपकी उतनी ही गहरी दिलचस्पी है जितनी मेरी । शत्रु (अर्थात मुगल) रात-दिन इसे नष्ट करने का प्रयत्न कर रहे हैं । हम दोनों को एक होकर विदेशी को निकाल देना चाहिए ।" (बसातिन-उस-सलातिन, ४५२-४७०) । इस वार्ता का समाचार पाकर दिलेरखाँ क्रोधित हो गया तथा बीजापुर को जीतने की तैयारी करने लगा । इससे पूर्व उसने केवल पहले की सन्धियों के कारण ही ऐसा नहीं किया था; किन्तु मसूद के विश्वास-भंग ने उसे आदिलशाह को बख्शने की जिम्मेदारी से बरी कर दिया । और अब उसे नयी प्रत्याशित शक्ति मिल गयी; शिवाजी का सबसे बड़ा पुत्र मुगलों से जा मिला ।

५. शम्भूजी मुगलों से जा मिला—१६७६ के आरम्भ में शिवाजी की कठिन बीमारी ने उनकी अन्तरंग परिषद में बहुत ही गम्भीर प्रश्न उठा दिया : अपने दो बेटों के निर्वाह का वह किस प्रकार प्रबन्ध करें ? छोटा पुत्र राजाराम केवल छः वर्ष की वय का था और वह अपने बड़े भाई शम्भूजी के संरक्षण में नहीं छोड़ा जा सकता था जो अपने अति क्रोधी स्वभाव और आत्मनिरत चरित्र के लिए कुख्यात था । मुगल सम्राट का उदाहरण शिवाजी की मृत्यु के पश्चात उनके बेटों के लिए भलाई का कारण नहीं हो सकता था । उस वर्ष के पिछले भाग में, जब पूर्वी कर्नाटक पर आक्रमण करने की योजना पूरी कर ली गयी,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इस दूरवर्ती अभियान पर जाने से पहले राजा ने अपने प्रति स्वाभाविक युद्ध-जोखिमों का विचार करते हुए अपने दोनों उत्तराधिकारियों को अलग करने का निश्चय कर लिया। अतएव १ नवम्बर को उन्होंने विद्वान उप-पण्डितराव केशवदत्त उपाध्याय से हिन्दू धर्म और राज्य-कार्य में शिक्षा प्राप्त करने के लिए शम्भूजी को संगमेश्वर भेज दिया। उस जिले का उसे गवर्नर बनाकर, और उसकी सहायता के लिए नीलो मोरेश्वर (पेशवा के पुत्र) को उसका दीवान नियुक्त करके, उसे प्रशासन कार्य का प्रशिक्षण भी देना था। राजाराम राजमाता तथा मन्त्रियों की परिषद के चार्ज में राजधानी में ही रखा गया। संगमेश्वर में शम्भूजी ने संस्कृत, नीतिशास्त्र और राजनीति की शिक्षा प्राप्त की, परन्तु इनसे उसे कोई लाभ न हुआ। उसने अधिकारियों की प्रशासनिक कार्र-वाइयों में हस्तक्षेप करके तथा मन्त्री को आततायी कहकर लोगों को उसके विरुद्ध उभारकर अपने दीवान को अपना विरोधी कर लिया।

इस प्रकार डेढ़ वर्ष व्यतीत हो गये जब शिवाजी कर्नाटक से घर वापस लौटे, और तब अपने बाद अपनी विरासत का विभाजन एक अत्यावश्यक प्रश्न बन गया (अप्रैल, १६७८)। उन्होंने साम्राज्य के विभाजन का बहुत ही सुबुद्ध प्रस्ताव रखा—महाराष्ट्र आठ वर्ष के बच्चे राजाराम के हिस्से में जाना था जिसमें दीर्घकाल से शान्ति थी और जहाँ वंश परम्परागत मन्त्रियों और सेना-पतियों के राजभक्त परिवार रह रहे थे, और अब न तो मुगल सम्राट के दक्षिण आने की कोई चर्चा थी और न मराठों पर विजय प्राप्त करने के हेतु एक बड़ी सेना लेकर उनके किसी बेटे के आने की सम्भावना थी, और बीजा-पुर तथा गोलकुंडा अब भी शक्तिशाली थे तथा वे मराठा राजा के मित्र थे। नवविजित कर्नाटक (मैसूर—जिंजी) का प्रदेश शम्भूजी के हिस्से में दिया जा सकता था, क्योंकि उस अर्द्ध-परास्त क्षेत्र को काबू में रखने के लिए एक बल-शाली वयस्क शासक की आवश्यकता थी, और इस कार्य के लिए शम्भूजी ही समुचित व्यक्ति था तथा इसके लिए राजाराम का विचार ही नहीं किया जा सकता था।

यह स्वाभाविक ही था कि शम्भूजी ने इसकी शिकायत की कि भोंसलों की पैतृक जन्म-भूमि उसके छोटे भाई को मिले और उसे महाराष्ट्र से छह सौ मील दूर अर्द्ध-पराजित क्षेत्र का भयपूर्ण और अलाभकर शासन मिले, जहाँ अपरिचित जाति और भाषा थी और जहाँ पर उसको सहयोग देने के लिए कोई मराठा जनता नहीं थी वरन चारों ओर से उसे असन्तुष्ट स्थानीय सरदार घेरे रहते।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मराठा राज-परिषद में मतभेद की बात चारों ओर फैल गयी। दिलेर ने इस भेद से लाभ उठाकर शम्भूजी को गुप्त पत्र लिखे और यह वचन दिया कि यदि वह उसके साथ मिल जाय तो वह उसके लिए 'देश' और कोंकण का भाग मुगल सरकार की सेना के बल पर दिलवा देगा। महाराष्ट्र को मुगल-साम्राज्य में मिला देने की कोई बातचीत न थी; दिलेरखाँ का सहयोग केवल इस बात से प्राप्त हो सकता था कि शम्भूजी मुगल दकन के वाइसराय से मित्रता की नीति मान ले, जैसा कि शाहू ने १७१८ में वचन दिया था। (परमानन्द काव्य, भाग ३)

शम्भूजी के स्वयं के आचरण से संकटपूर्ण स्थिति उत्पन्न हो गयी। किसी धार्मिक पर्व पर महल में आयी हुई एक सुन्दर ब्राह्मण स्त्री के साथ बलात्कार करने के कारण राजकुमार शिवाजी के गुरु रामदास से नैतिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए पार्ली (सज्जनगढ़) भेज दिया गया। सज्जनगढ़ के सन्त को केवल उतनी ही सफलता मिली जितनी संगमेश्वर के पण्डित को। पार्ली में शम्भूजी शीघ्र ही अपने पिता के किलेदार पर हावी हो गया, उसने अपनी सेना तैयार की, और एक दिन अपनी स्त्री येसुबाई को मर्दाने वस्त्र पहनाकर व साथ लेकर, घोड़े पर सवार होकर भाग निकला और दिलेरखाँ से मिल गया। यह घटना १३ दिसम्बर, १६७८ को घटी। शिवाजी ने उसका पीछा करने के लिए सेना भेजी, परन्तु अब बहुत विलम्ब हो गया था। दिलेरखाँ ने शम्भूजी का पत्र पाकर अपने पड़ाव बहादुरगढ़ से ४००० सैनिक इखलासखाँ (अग्रणी सेना का सेनापति) तथा गैरतखाँ (अपना भतीजा) के अधीनस्थ उस भगोड़े को साथ लाने के लिए भेजे। वे उससे सूपा से आठ मील दक्षिण में मिले, और स्वयं दिलेरखाँ बारह मील आगे उत्तर-पूर्व में कारकम्ब में उससे मिला। शिवाजी के उत्तराधिकारी के उससे मिल जाने से दिलेरखाँ खुशी से फूला न समाया। "वह इतना खुश हुआ मानो उसने सारा दक्षिण जीत लिया हो!" "खुशी में उसने नगाड़े बजवाये और सम्राट को समाचार भेजा। शम्भू को सात-हजारी और राजा की पदवी दी गयी तथा एक हाथी उपहार में दिया गया।" खान अपने नये बहुमूल्य साथी के साथ बीजापुर पर हमले की तैयारी करने के लिए अकलुज (बहादुरगढ़ से ५० मील दक्षिण) में कुछ समय के लिए ठहरा। (ब० स० ४७१; दिल० १५६)

६. बीजापुर पर अधिकार करने का मराठा षड्यन्त्र—इस खतरे में सिद्दी मसूद ने तत्काल शिवाजी से सहायता माँगी जैसा कि समझौता हो चुका था। उन्होंने बीजापुर की रक्षा में लिए ६-७ हजार शस्त्र-सज्जित घुड़सवार

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

भेजे । मसूद अपने साथी पर पूरी तरह भरोसा नहीं कर सकता था । उसने मराठा सेना को इतंगीहल गाँव (शहर से पाँच मील उत्तर-पश्चिम) के नाले के किनारे ठहरने को कहा, किन्तु उन्होंने और निकट तथा खानपुर और खुसरोपुरा में पड़ाव डाला एवं माँग की कि किले का एक द्वार और मीनार उसके हवाले कर दिये जायँ । मसूद ने चतुराई से इनकार कर दिया । तब मराठा सेना जुहरापुर की ओर बढ़ी तथा किले की दीवारों के ठीक बाहर के मैदान में पड़ाव डाल दिया और इस प्रकार मसूद की शंका और बढ़ गयी । शीघ्र ही मित्रों में खुले रूप से झगड़ा शुरू हो गया ।[५] किले के अन्दर हथियार और सिपाही चोरी छिपे भेजते हुए मराठों का पता चल गया; वे अनाज के बोरों में हथियार छिपाकर और बैलों के हाँकने वालों के रूप में सैनिकों को किले के अन्दर भेज रहे थे ! तब शिवाजी खुले रूप से सामने आ गये । उन्होंने फिर से आदिलशाही राज्य को लूटना और नष्ट करना शुरू कर दिया । उनके आदमियों ने बीजापुर के गिर्द के इलाकों—दौलतपुरा (=खवासपुरा), खुसरोपुरा तथा जुहरापुरा—को लूटा और धनाढ्य बनियों को धन मिलने पर छोड़ने की शर्त पर ले गये । शेख अहमद खवास-खानी के मकबरे के पास उन्होंने अली-रजा की हत्या कर दी तथा सिद्दी याकूत को घायल कर दिया । किन्तु जब वे शहर के पश्चिम में आदिलशाह के मकबरे पर पहुँचे, किले की बन्दूकों की एक गोली से मराठा सेनापति की मृत्यु हो गयी और उसके सारे आदमी भाग गये । अब मसूद ने दिलेरखाँ से सन्धि कर ली ।

मुगल सेना को बीजापुर में आमन्त्रित किया गया, उसका शाही स्वागत किया गया तथा वेंकताद्री मुरारी (राजप का एक विश्वासपात्र) एवं अन्य अधिकारियों के अधीनस्थ एक बीजापुरी सेना को उसके साथ करके मराठों के विरुद्ध भेजा गया । वे लोग तिकोटा (बीजापुर से १३ मील पश्चिम) में पहुँचे जबकि जासूसों ने खबर दी कि शिवाजी स्वयं सात-आठ हजार सैनिकों सहित सेलगुर (बीजापुर से ५५ मील पश्चिम और पन्हाला से पूर्व में इतनी दूरी पर) पहुँच गये हैं तथा मुगल या बीजापुरी सेना पर, जो भी पहले आगे बढ़ेगी, रात

---

५ "यह कहा जाता है कि शिवाजी ने स्वयं बीजापुर के आसपास के भाग शाहपुर को लूटा और वे बीजापुर में प्रविष्ट होना चाहते थे जिसको विजय करना उनका एकमात्र ध्येय था क्योंकि उन्हें डर था कि यह कहीं मुगलों के हाथों में न पड़ जाय, और वह जानते थे कि ऐसा होने से वह खुद अधिक समय तक सुरक्षित नहीं रह सकते थे ।" (बम्बई से सूरत, ४ अप्रैल १६७९, ओर्म पांडुलिपि में, ११६)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

को हमला करना चाहते हैं। किन्तु मसूद और शरजाखाँ के बीच एक नये झगड़े ने बीजापुर की शक्ति को निष्प्राण कर दिया। (व० स०, ४७१–४७७)

७. **दिलेर की भूपालगढ़ विजय**—दिलेरखाँ फिर भूपालगढ़[६] के किले की ओर बढ़ा जिसे शिवाजी ने अपनी सम्पत्ति के भण्डार तथा मुगलों से युद्ध के समय अपनी आसपास की प्रजा के परिवारों के शरण-स्थान के लिए बनाया था। अत्यन्त परिश्रम के बाद दिलेरखाँ के आदमी कुछ तोपों को रात्रि के समय पास के एक ऊँचे स्थान पर चढ़ा सके तथा अगले दिन सुबह किले की दीवारों तथा मीनारों पर गोलाबारी शुरू कर दी। २ अप्रैल १६७९ को सुबह नौ बजे हमला बोला गया तथा मुगल सेना बड़े जोश-खरोश के साथ लड़ी। दोपहर तक उन्होंने किला फतह कर लिया, और दोनों ओर के आदमी बड़ी संख्या में मारे गये। विजेताओं द्वारा अनाज तथा अन्य सम्पत्ति एवं बड़ी संख्या में आदमी पकड़े गये (जिन्होंने निकटवर्ती जिलों से आकर वहाँ शरण ली थी)। ७०० बचे हुए दुर्ग-रक्षकों का एक-एक हाथ काट दिया गया और तब वे मुक्त कर दिये गये; अन्य लोगों को दास के रूप में बेच दिया गया।

इससे पूर्व शिवाजी ने १६,००० घुड़सवार किले की रक्षा के लिए भेजे थे। वे देर से पहुँचे, किन्तु मुगलों के चारों ओर मँडराते रहे। एकाएक उन्हें मालूम हुआ कि मुगलों के लिए इराजखाँ और बाजाजीराव (निम्बालकर) परेंदा से रसद ला रहे हैं और तुरन्त ही वे उन्हें रोकने के लिए पहुँचे। किन्तु दिलेरखाँ ने इखलासखाँ के १५०० घुड़सवार इराजखाँ की सहायता के लिए भेजे। भूपालगढ़ से १२ मील दूर वह मराठा सेना के पास पहुँच गया। इखलासखाँ की छोटी सेना घिर गयी और उसने परकोटे से घिरे एक गाँव में शरण ली और दीवार की ओर पीठ किये हुए वहाँ से बड़ी बहादुरी से मराठा आक्रमण को विफल कर दिया जिनके लगभग एक हजार आदमी काम आये। तब तक दिलेरखाँ ने बहुत-सी कुमुक भेज दी जिसके आने पर मराठा सेना भाग खड़ी हुई। तब दिलेरखाँ वापस भूपालगढ़ गया, जो कुछ वह अपने साथ नहीं ले जा

---

६ शम्भूजी का मुगलों से मिल जाना और भूपालगढ़ का ले लेना : जेधे श०; ब० स० ४७१, ४७७-४७८, ५००-५०१ (सर्वोत्तम)। दिल०, १५९-१६३ (विश्वसनीय)। कोठी अभि०, सूरत, खण्ड १०८, राजापुर से सूरत १६ दिसम्बर १६७९, बम्बई से सूरत, १ जनवरी १६८० (वापसी)। सभा० ९४. भूपालगढ़, जथ से २० मील उत्तर-पश्चिम, पंढरपुर से ४५ मील दक्षिण-पश्चिम और खनापुर से १० मील दक्षिण-पूर्व सतारा जिले में; गाँव का वर्तमान नाम बनूर है। (ऐटलस, ४०° उत्तर-पूर्व); बम्बई गजट १९. ४५५-४५६ में वर्णित। परमानन्द काव्यम्, खण्ड ३

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सका वह उसने जला दिया, किलाबन्दी तोड़ दी तथा धूलखेड़ को लौट गया। (ब० स० ४७७-४७८; दिल० १६०)

किन्तु भागते हुए मराठों को एक सफलता मिली। कारकम्ब में (परेंदा से तीस मील दक्षिण) वे इराजखाँ से भिड़ गये, उसके सैनिकों का सारा अनाज तथा सामान लूट लिया और उसे अपने कुछ आदमियों सहित पास के एक किले में भागकर शरण लेने को मजबूर किया जहाँ बाद में उसके एक रिश्तेदार, परेंदा के किलेदार, मीर मुहम्मदखाँ ने उसे विमुक्त कर दिया। (दिल० १६१)

भूपालगढ़ की विजय के बाद का समय मुगल बादशाह और बीजापुर के सरदारों के बीच षड्यन्त्र और प्रति-षड्यन्त्र तथा मसूद और शरजाखाँ, मसूद और दिलेर, तथा मसूद और उसके कृपापात्र वेंकटाद्रि के मध्य झगड़ों का रहा।

८. **धार्मिक सहिष्णुता पर शिवाजी का पत्र**—इस वर्ष के मध्य में शिवाजी ने औरंगजेब को जजिया नामक कर के विरोध में एक तर्कयुक्त और भावपूर्ण पत्र लिखा जिसको नीलाप्रभु ने प्रवाहपूर्ण और ओजस्वी फारसी में तैयार किया।

"सम्राट आलमगीर की सेवा में—

"यह सदा मंगल कामना करने वाला शिवाजी, ईश्वर के अनुग्रह तथा सम्राट की अनुकम्पा का धन्यवाद करने के बाद—जो सूर्य से भी अधिक स्पष्ट हैं—जहाँपनाह को सूचित करता है कि यद्यपि यह शुभेच्छु अपने दुर्भाग्य के कारण विना आपकी आज्ञा लिये आपकी खिदमत से चला आया, किन्तु फिर भी वह सेवक के रूप में पूरा कर्तव्य यथासम्भव उचित रूप से निभाने के लिए तैयार है···।

"हाल ही में मेरे कानों में यह बात पड़ी है कि मेरे साथ युद्ध में आपका धन समाप्त हो जाने तथा कोष खाली हो जाने के कारण आपने आदेश दिया है कि जजिया के रूप में हिन्दुओं से धन एकत्र किया जाय और उससे शाही आवश्यकताएँ पूरी की जायँ। श्रीमन्! साम्राज्य के निर्माता (जलालुद्दीन) पादशाह अकबर ने सर्वप्रभुता से पूरे ५२ (चन्द्र) वर्ष तक राज्य किया। उन्होंने सभी सम्प्रदायों जैसे ईसाई, यहूदी, मुसलमान, दादूपंथी, आकाश-पूजक (फलकिआ), मलकिया, अनात्मवादी (अंसरिया), नास्तिक (दहरिया), ब्राह्मण, और जैन साधुओं के प्रति सार्वलौकिक सामंजस्य की प्रशंसनीय नीति अपनायी थी। उनके उदार हृदय का ध्येय सभी लोगों की भलाई और रक्षा करना था। इसलिए उन्होंने 'जगत् गुरु' के नाम की ख्याति पायी।

"तत्पश्चात, सम्राट नूरुद्दीन जहाँगीर ने २२ वर्ष तक विश्व के लोगों पर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अपनी उदार छत्रछाया फैलायी, मित्रों को अपना हृदय दिया तथा काम में हाथ बँटाया और अपनी इच्छाओं की प्राप्ति की। सम्राट शाहजहाँ ने ३२ वर्ष तक अपनी मंगलमयी छत्रछाया पृथ्वी के लोगों पर डाली तथा सुखी समय के परिणामस्वरूप अनन्त जीवन-फल प्राप्त किया।

वह जो अपना नाम करता है,
चिरस्थायी धन प्राप्त करता है,
क्योंकि मृत्यु-पर्यन्त उसके सुकर्मों के आख्यान
उसके नाम को जीवित रखते हैं। (कविता में)

"इस उत्कृष्ट स्वभाव के परिणामस्वरूप उन्होंने (अकबर ने) जहाँ कहीं अपनी गौरवशाली इच्छा की दृष्टि डाली, विजय और सफलता ने स्वयं अग्रसर होकर उनकी अगवानी की। अपने राज्यकाल में उन्होंने अनेक राज्यों तथा किलों पर विजय पायी। इन सम्राटों की स्थिति तथा शक्ति का अनुमान बड़ी सरलता से केवल इसी बात से लगाया जा सकता है कि आलमगीर पादशाह केवल उनकी राजनीतिक प्रणाली का अनुसरण करने में भी असफल तथा गुमराह हो गये हैं। जजिया लगाने की शक्ति उनके पास भी थी; किन्तु उन्होंने अपने हृदय में धर्मान्धता नहीं आने दी क्योंकि भगवान द्वारा सर्जित छोटे-बड़े सभी लोगों को वे विभिन्न मतों और स्वभावों का जीता-जागता उदाहरण समझते थे। उनकी कृपा और उदारता समय के पृष्ठ पर सदा के लिए अंकित हैं और इसलिए छोटे और बड़े सभी लोगों के मुखों व हृदयों में इन (तीनों) विशुद्ध आत्माओं की प्रशंसा सदा विद्यमान रहेगी। समृद्धि मनुष्य की भावनाओं का फल होती है। इसीलिए उनका धन और सौभाग्य बढ़ता रहा, क्योंकि (उनके राज्य में) भगवान के सभी प्राणी शान्ति और सुरक्षा से रहे, तथा उनके उपक्रम सफल हुए।

"किन्तु श्रीमन्, राज्य में अनेक किले और प्रदेश श्रीमन् के कब्जे से बाहर निकल गये हैं और शेष भी निकल जायेंगे क्योंकि मैं उन्हें नष्ट और ध्वंस करने में कोई ढील नहीं डालूँगा। आपके किसान दयनीय दशा में हैं; हर गाँव की उपज कम हो गयी है—एक लाख की जगह पर केवल एक हजार और हजार की जगह पर केवल दस (रुपये) एकत्र किये जाते हैं, और वह भी बड़ी कठिनाई से। जबकि सम्राट तथा राजकुमारों के महलों में गरीबी और भीख ने घर कर लिया है तो सामन्तों और अमीरों की दशा की कल्पना आसानी से की जा सकती है। यह ऐसा राज्य है जहाँ सेना में उत्तेजना है, व्यापारी वर्ग को शिकायतें हैं, मुसलमान रोते हैं, हिन्दुओं को भूना जाता है, अधिकतर लोगों

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

को रात को भोजन नहीं मिलता और दिन में वे अपने गालों को (वेदना में) पीट-पीटकर सुजा लेते हैं। ऐसी शोचनीय स्थिति में आपका शाही स्वभाव किस तरह आपको जजिया लादने की इजाजत देता है ? यह बदनामी बहुत जल्दी पश्चिम से पूरब तक फैल जायगी तथा इतिहास की किताबों में दर्ज हो जायगी कि हिन्दुस्तान का सम्राट भिक्षा-पात्र लेकर ब्राह्मण और जैन साधुओं, योगियों, संन्यासियों, वैरागियों, दरिद्रों, भिखारियों, दीन-दुखियों तथा अकाल-ग्रस्तों से धन वसूल करता है—अपना पराक्रम भिक्षुओं के झोलों पर आक्रमण करके दिखाता है—उसने तैमूर वंश का नाम और मान मिट्टी में मिला दिया है।

"श्रीमन् ! यदि आप वास्तव में 'पवित्र पुस्तक और भगवान की वाणी' (अर्थात् कुरान) में विश्वास करते हैं तो आप उसमें देखेंगे कि भगवान को रब्ब-उल-आलमीन, सब मनुष्यों का स्वामी, कहा गया है, न कि रब्ब-उल-मुसलमीन, केवल मुसलमानों का स्वामी। वास्तव में, इसलाम और हिन्दू धर्म शब्दों में वैषम्य है। वे दिव्य (विभिन्न रंग हैं जिनके द्वारा) चित्रकर्मा ने रंग विन्यास करने तथा रूपरेखा बनाने के लिए (समस्त मानव वर्गों को अपना—चित्रकर्मा का—चित्र बनाने के लिए) प्रयुक्त किया है। मस्जिद में उसकी याद में अजान लगायी जाती है। मन्दिर में उसी की कामना हेतु घण्टा बजाया जाता है। किसी के मत अथवा प्रथा के प्रति कट्टरता दिखाना उस पवित्र पुस्तक के बदलने के बराबर है। किसी चित्र पर नयी रेखाएँ खींचना चित्रकार में दोष निकालना है···।

"न्याय की दृष्टि से, जजिया बिलकुल गैर-कानूनी है। राजनीतिक दृष्टि से, यह तभी अनुमोदित किया जा सकता है जबकि एक सुन्दर स्त्री सोने के आभूषण पहने हुए बिना किसी डर के एक प्रदेश से दूसरे प्रदेश में जा सकती हो। (किन्तु) आजकल शहर भी लूटे जा रहे हैं, खुले हुए देहातों की तो बात ही क्या ? जजिया लगाना न केवल न्याय-संगत ही नहीं है अपितु केवल भारत में ही की गयी एक नयी सर्जना है और अनुचित है।

"यदि आप हिन्दुओं को धमकाने और सताने को ही धर्मनिष्ठा समझते हैं तो सर्वप्रथम जजिया आपको राना राजसिंह पर लगाना चाहिए जो हिन्दुओं के प्रधान हैं। तब मुझसे वसूल करना इतना कठिन नहीं होगा, क्योंकि मैं आपका अनुचर हूँ। किन्तु चींटियों और मक्खियों को सताना शूरवीरता नहीं है।

"मुझे आपके अधिकारियों की स्वामिभक्ति पर आश्चर्य होता है क्योंकि वे वास्तविकता को आपसे छिपाते हैं और प्रज्ज्वलित अग्नि को फूंस से ढकते हैं !

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मेरी कामना है कि जहाँपनाह का राजत्व महानता के क्षितिज से ऊपर चमके !" (सरकार, औरंगजेब का इतिहास, ३, अध्याय ३४ अनुक्रमणिका)

९. **दिलेरखाँ का बीजापुर पर आक्रमण—शिवाजी की आदिलशाह को सहायता**—दिलेरखाँ ने १८ अगस्त को बीजापुर से ४० मील उत्तर में धूलखेड़ पर भीमा नदी को पार किया तथा मसूद के विरुद्ध एक नया मोर्चा जमाया। उस असहाय राजप ने शिवाजी से सहायता माँगी और इसके लिए हिन्दूराव नामक दूत के द्वारा निम्न दयनीय अपील भेजी : "इस राज्य की दशा आपसे छिपी नहीं है। किले की रक्षा के लिए यहाँ न कोई सेना है, न धन और न मित्र और न ही कोई खाद्य-सामग्री है। दुश्मन शक्तिशाली है और युद्ध करने पर तुला हुआ है। आप वंशानुगत सेवक हैं जिनको इस दरबार ने ही ऊँचा उठाया है। और इसलिए इस घराने के लिए जितनी आप के मन में जगह हो सकती है और किसी के नहीं हो सकती। हम बिना आपकी सहायता के राज्य और उसके किलों की रक्षा नहीं कर सकते। आशा है कि आप नमकहलाली करेंगे; आप हमारा पक्ष लें। जो आप उचित समझें उसकी आज्ञा दें, और हम वही करेंगे।" (ब० स० ४९३)

शिवाजी बीजापुर की रक्षा[७] के लिए तैयार हो गये। उन्होंने मसूद की सहायता के लिए १०,००० घुड़सवार भेजे, अपने किलों से नगर के लिए २००० बैलों पर लादकर भोजन-सामग्री भेजी और अपनी प्रजा को आज्ञा दी कि वे बीजापुर में बिक्री के लिए अन्न तथा अन्य आवश्यक सामान ले जाकर बेचें जिससे वहाँ के निवासी तथा सैनिक कमी न महसूस करें। उनका दूत बीसाजी नीलकंठ निम्न आनन्दकारक समाचार लाया : "आप किले की रक्षा करें। मैं चलूँगा और दिलेरखाँ को सजा दूँगा जिसका वह अधिकारी है।" बीसाजी ने राजप को रिपोर्ट दी कि ५००० मराठा सेना ऐनापुर (मीराज से २० मील दक्षिण-पूर्व) पहुँच गयी है और ५००० अन्य भूपालगढ़ को, और ये दोनों सेनाएँ आवश्यकतानुसार उसकी आज्ञा की बाट देख रही हैं

मुगल सेनापति सुजानसिंह ने शिवाजी के आदमियों से सितम्बर के लगभग

---

७ शिवाजी, बीजापुर का मित्र, १६७९ में : ब० स० ४९३-४९७, ५०४; सभा० (खामोश)। कोठी अभिलेख, फोर्ट सेंट जार्ज, खण्ड २८ पृष्ठ ३४, वीर राघव गोलकुण्डा से मद्रास, १४ जनवरी, १६८० (कुतुबशाह को मुगल राजदूत ने बीजापुर की सहायता के लिए सेना भेजने से रोक लिया, परन्तु उसकी रक्षा के लिए सेना में भर्ती के लिए शिवाजी को छिपकर धन भेजा।)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मंगलविदी छीन लिया (म० आ० १८२), और बीजापुर के अधिक निकट आ गया। मसूद ने साबाजी घाटगे को तुष्ट किया और हुरगल की सेना के साथ उसे इन्दी (बीजापुर से २८ मील उत्तर) भेजा। इस सेना की शम्भूजी से भिड़न्त हो गयी जो लूटमार करने के लिए निकल पड़ा था; प्रत्येक पक्ष के लगभग १५ आदमी खेत रहे; साबाजी घायल हो गया। परन्तु उसने वैरी से १५ घोड़े, ५० बैल और ४ ऊँट छीन लिये। शिवाजी का दूत अब आनन्दराव के साथ २५०० घुड़सवार लेकर बीजापुर पहुँच गया। मसूद ने उनका स्वागत किया और उनको नौरसपुरा उप-नगर में ठहरा दिया। बाजाजी (निम्बालकर) ने, जो अब मुगल सेवा में था, आकलुज किले का घेरा डाला, परन्तु बहादुर नाम का एक बीजापुरी सेनापति संगुला (३२ मील दक्षिण) से चला और उसे भगा दिया।

परन्तु १५ सितम्बर को दिलेरखाँ अपने धूलखेड़ के शिविर से चल दिया और बीजापुर के बहुत निकट पहुँच गया, वह नगर से ६ मील उत्तर-पूर्व में ७ अक्तूबर को बरतगी पहुँचा। यहाँ वह रुक गया और उसने मसूद के दूतों से वार्ता की। शिवाजी ३० अक्तूबर को १०,००० का रिसाला लेकर पन्हाला और बीजापुर के मध्य सिलगूर में आये। उनका पहला खण्ड अगले दिन नौरसपुरा में उसके स्वागत के लिए पहुँचा। शिवाजी आदिलशाह से मिलना चाहते थे; और मसूद ने उनको केवल ५०० आदमियों के साथ आने की अनुमति भी दे दी थी। परन्तु पेशवा मोरो त्रिम्बक ने शिवाजी को रोक दिया जिससे वह किले में प्रवेश करने पर मसूद के फन्दे में न फँस जायँ।

अतएव, ४ नवम्बर, १६७९ को मराठा राजा ने अपनी सेना को दो भागों में विभाजित किया—वह स्वयं ८-९ हजार आदमी लेकर मुसलाह और आलमला की सड़क से चल पड़े, और आनन्दराव १०,००० घुड़सवार लेकर मान[८] और संगूला के मार्ग से चला; उसका उद्देश्य था मुगल राज्य को लूटना और बीजापुर के निकट से दिलेर का ध्यान बटाना। परन्तु दिलेरखाँ को बीजापुर का ले लेना सरल प्रतीत होता था. उसने उन सूबों में मराठों द्वारा लूट और ध्वंस पर कोई ध्यान न दिया क्योंकि ये बातें तो प्रतिवर्ष हुआ करती थीं, और वह आदिलशाही राजधानी को लेकर सर्वोच्च पुरस्कार की आशा

---

८ मान नदी संगूला (पंढरपुर के ५० मील दक्षिण) से कुछ दक्षिण में बहती है। क्या नकलनवीस ने जाट (नगर) के स्थान पर गलती से मान लिख दिया है?

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कर रहा था। अतएव वह पीछे न लौटा और बीजापुर पर आक्रमण की तैयारी में जुट गया। (व० स० ४९३-४९५)

१०. **दिलेर द्वारा लूट-मार; शम्भूजी की वापसी**—परन्तु दिलेर का बीजापुर का घेरा असफल रहा। मसूद से सुलह करने की कोशिश में वह सफल नहीं हुआ और १४ नवम्बर को वह नगर के निकट से चला गया और पश्चिम की ओर कूच किया, उसने मीरज-पन्हाला क्षेत्र पर आक्रमण करने का इरादा किया जिससे शिवाजी बहुत शीघ्र लौटकर घर वापस आ जायँ। योजना सफल होती दिखायी देती थी, क्योंकि शम्भूजी को गर्व था कि वह अपने मराठा अनुगामियों की सहायता से किलों को बहुत जल्द ले सकेगा और इस प्रकार वह शाही सेना की गति को सुगम कर सकता था और मीरज के छोटे सरदारों (नायकवाड़ों) को मुगल प्रतिनिधि ने पहले से ही अपनी ओर कर रखा था।

परन्तु दिलेर का मुख्य कार्य बीजापुर राज्य-क्षेत्र को अत्यन्त निर्दयता से लूटना था। बाहमनहली, मकनापुर और जलगेरी होते हुए वह तिकोटा पहुँचा (बीजापुर से १३ मील पश्चिम में), जो एक धनी और घना बसा गाँव था जहाँ पड़ोस के धनी लोगों ने अपने कुटुम्बों सहित शरण ले रखी थी। "यहाँ मुगलों के आने की जरा भी आशंका न थी। जब इखलासखाँ (और दिलेर) की अग्रसेना वहाँ पहुँची और उसने उसे लूटना आरम्भ किया तो वहाँ के हिन्दू और मुसलमानों की पत्नियाँ अपने बच्चों को लेकर अपने मकानों के निकट कुओं में कूद पड़ीं और आत्महत्या कर ली। गाँव बुरी तरह लूटा गया। लगभग ३००० आदमी, हिन्दू और मुसलमान (गुलाम बनाने के लिए), कैद कर लिये गये। ···१८ नवम्बर को तिकोटा से चलकर होनवाद और तेलसंग होता हुआ वह आठनी (बीजापुर से ४३ मील पश्चिम) में पहुँचा और मार्ग में देश को खूब लूटा और लोगों को दास बनाने के लिए ले गया।" यहाँ अंग्रेज कोठी अभिलेखों के अनुसार मुगल सेनापति और मराठा मित्र के बीच अनबन हो गयी। आठनी, एक "बहुत बड़ी मण्डी", में आग लगा दी गयी और दिलेर ने गाँव के निवासियों को, जो सभी हिन्दू थे, बेचना चाहा। शम्भूजी ने इस पर आपत्ति की, परन्तु उसकी बात नहीं मानी गयी, और वह अपने साथियों से तंग आ गया (कोठी अभि० १०८, बम्बई से सूरत, १ जनवरी १६८०)। २१ नवम्बर को दिलेर आठनी से ऐनापुर के लिए, १२ मील पश्चिम की ओर, चल दिया, परन्तु रास्ते में उसे मालूम हुआ कि शम्भूजी बीजापुर को भाग गया था।

दिसम्बर १६७८ में मुगलों से मिल जाने के बाद शिवाजी के आदमी शम्भूजी से बराबर मिलते रहे और उसे सब प्रकार के प्रलोभन देते रहे तथा

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

वादे करते रहे कि वह अपने पिता के पास वापस चला जाय। उसके साले महादजी निम्बालकर ने भी, यद्यपि वह मुगलों की सेवा में था, उसके इस धोखे के कार्य की निन्दा की। (शम्भूजी ने इस बात की रिपोर्ट दिलेर को दी जिसने महादजी को कुछ समय के लिए बन्दी रखा। दिल० १६०)। परन्तु अब शम्भूजी ने मुगलों का साथ छोड़ने का पक्का विचार कर लिया था।[६] २० नवम्बर की रात को वह अपनी स्त्री येसुबाई सहित मरदाने वेश में और केवल कुछ सैनिकों को साथ लेकर चुपके से निकल भागा और दूसरे दिन बड़े वेग से चलकर बीजापुर जा पहुँचा जहाँ मसूद ने उसका अभिवादन किया। २१ तारीख को दिलेर को शम्भू के भाग जाने का हाल मालूम हुआ और वह तुरन्त बीजापुर लौट आया और अपने प्रतिनिधि ख्वाजा अब्दुर रज्जाकखाँ को उस शहर को भेजा कि वह राजप (रीजेंट) को घूस देकर मराठा राजकुमार को पकड़वा दे (२८ तारीख)। शम्भूजी को इसका पता लग गया और वह ३० तारीख की रात को बीजापुर से चुपके से निकल भागा, आगे वह अपने पिता द्वारा भेजे गये अनुरक्षक घुड़सवारों से मिला, और बड़े वेग से चलकर ४ दिसम्बर को पन्हाला पहुँचा। (ब० स० ५०१)

११. **शिवाजी का अन्तिम अभियान**—अब हम ४ नवम्बर १६७९ से आगे शिवाजी की कार्रवाइयों के इतिहास पर दृष्टिपात करेंगे जब वह सेलगुर (बीजापुर से ५५ मील पश्चिम) से आगे बढ़े। १८,००० घुड़सवारों के मराठा रिसाला शिवाजी और आनन्दराव दो के अधीनस्थ दो भागों में उत्तर की ओर आगे बढ़ा और मुगल दकन के जिलों में बाढ़ की भाँति चढ़ दौड़ा, तथा मार्ग में जितने स्थान मिले उन्हें लूटता गया और जलाता गया और वहाँ से बहुत-सा लूट का माल नकद और जिन्स के रूप में ले लिया। महीने के मध्य में जालना नामक जनपूर्ण व्यापारिक नगर, औरंगाबाद से ४० मील पूर्व, ले लिया गया और लूट लिया गया।

यहाँ सैयद जान मुहम्मद नामक ईश्वरनिष्ठ फकीर ने उपनगर के एक बाग में अपनी कुटिया बना रखी थी। चूँकि अपनी लूट के दौरान शिवाजी

---

६ सभासद ९४ के अनुसार औरंगजेब ने दिलेर को लिखा कि वह शम्भू को गिरफ्तार करके दिल्ली भेज दे; परन्तु मुगल सेनापति ने अपने अतिथि को दिये गये वचन के अनुसार, मराठा राजकुमार को उस पत्र का समाचार दे दिया और उसके भागने की उपेक्षा की। यह बात ठीक नहीं मालूम होती। ब० स० ५०१ के अनुसार औरंगजेब ने शम्भू को अपने दरबार में बुलाया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सभी धर्मों के पवित्र आदमियों तथा पवित्र स्थानों को बख्श देते थे, अतएव जालना के अनेक धनी मनुष्यों ने अपना धन और रत्न लेकर इस कुटिया में शरण ले ली थी। नगर से आक्रमणकारियों के हाथ बहुत कम सामान पड़ा और यह मालूम करके कि फकीर के निवास-स्थान पर बहुत-सा धन छिपा हुआ है, वे वहाँ घुस गये, उन्होंने शरणार्थियों को लूटा और बहुतों को घायल किया। फकीर ने उनसे ऐसा न करने के लिए कहा, परन्तु उन्होंने उसको बुरा-भला कहा और उसको धमकी दी। तब उस ईश्वरीय मानव ने "जिसकी प्रार्थना में बहुत बड़ी शक्ति थी," शिवाजी को अभिशाप दिया और जनसाधारण के विश्वास के अनुसार इसके फलस्वरूप पाँच महीने पीछे ही शिवाजी का देहान्त हो गया। (खाफीखाँ २.२७१, दिल० १६५; ६१ क० ब० ८८)

मराठा सेना को भी बहुत शीघ्र बदला मिला। जालना का नगर और उसके आसपास की बस्ती दोनों चार दिन तक खूब लूटे गये और नष्ट किये गये। परन्तु जब लूट का सामान लेकर मराठे वापस लौट रहे थे—"अपार सोना, चाँदी, जवाहरात, वस्त्र, घोड़े, हाथी और ऊँट"—एक साहसी मुगल अधिकारी रनमस्तखाँ[१०] ने उनकी सेना के पिछले भाग पर आक्रमण कर दिया। सिद्धोजी निम्बालकर अपने ५००० आदमियों की सहायता से उसे तीन दिन तक रोके रहा, परन्तु अन्त में अपने बहुत-से आदमियों सहित वह मारा गया। इस बीच में निकट ही औरंगाबाद से केसरीसिंह और सरदारखाँ के अधीनस्थ बहुत बड़ी संख्या में सैनिक सहायता आने लगी। जब इन्होंने आक्रमणकारियों से छः मील दूर पड़ाव डाला तो केसरीसिंह ने एक हिन्दू के नाते शिवाजी को गुप्त संदेशा भेज दिया कि मुगलों के घेरा पूरा करने से पहले ही शिवाजी भाग जायँ। वहाँ से भाग निकलने का कार्य शिवाजी ने अपने मुख्य गुप्तचर बहीरजी को सौंपा जिनकी सावधानी और निर्देशन के कारण मराठा सेना तीन दिन और तीन रात लगातार चलने के पश्चात एक अज्ञात मार्ग से निकल भागी। परन्तु उन्हें अपने बहुत-से लूट के माल से हाथ धोना पड़ा तथा ४००० घुड़सवार मारे गये और हम्बीरराव घायल हो गया।

---

१० रनमस्तखाँ, खिजिरखाँ पानी के भाई, को सम्राट् की ओर से १८ सितम्बर, १६८२ को एक सम्मान-परिधान मिला और आगामी अगस्त में उसे बहादुरखाँ का पद दिया गया (म० आ० २२२, २३५)। वाकनिस के अनुसार वह इस समय जालना का थानेदार अर्थात किलादार था। बाद को वह अकलुज का थानेदार बनाया गया (दिल०)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

इस भीषण अभियान से शिवाजी पट्टगढ़[११] वापस हुए (लगभग २२ नवम्बर) और वहाँ अपनी थकी हुई तथा आघातिक सेना को कुछ दिन के लिए विश्राम दिया और फिर दिसम्बर के आरम्भ में रायगढ़ चले गये जहाँ उन्होंने वह पूरा महीना व्यतीत किया ।

चूँकि दिलेरखाँ लगभग नवम्बर के मध्य में बीजापुर से पश्चिम की ओर बढ़ रहा था, और शायद उसका इरादा पन्हाला का घेरा डालना था, और दुश्मन के शिविर में शम्भूजी की उपस्थिति से मराठा राज्य में घरेलू युद्ध की आशंका हो गयी थी, शिवाजी ने पन्हाला को एक अजेय स्थान में बदलने का प्रयत्न किया और इस उद्देश्य से वहाँ अन्य अनेक किलों की तोपें पहुँचा दीं और इनके अलावा वहाँ के लिए फ्रांसीसियों से चालीस तोपें खरीदीं । २४ नवम्बर को ही उन्होंने सोमाजी, अन्नाजी दत्तो के भाई, को अंकोला, कारवार, सोमेश्वर और फौंदा को तोपें लाने के लिए भेजा जिन्हें "मनुष्यों और भैंसों के द्वारा" पन्हाला तक खींच-

---

[११] पट्टा, नासिक से २० मील दूर दक्षिण में और थाल घाट से इतनी दूर पूर्व में (भारत एटलस, पुराना शीट ३८), १९°४२′ उत्तर ७३°५४′ पूर्व । किले का पुनः नामकरण किया गया और वह अब विश्रामगढ़ कहलाया जाने लगा । बम्बई से लिखा गया (२९ नवम्बर) कि वह "यहाँ भागकर ५०० घोड़े लेकर आया, उसकी सेना का अधिकांश भाग बीजापुर में नष्ट हो गया जहाँ दिलेरखाँ ने उसको ध्वंस कर दिया और कैदियों के अलावा २००० घोड़े उससे छीन लिये ।" (कोठी अभि० सूरत १०८) । यहाँ युद्ध का स्थान और मुगल सेनापति का नाम अशुद्ध दिये गये हैं । राजापुर (३० दिसम्बर) के पत्र के अनुसार "हानि ४००० घोड़ों से अधिक" हुई और सेनापति हुम्मेदबाऊ (हम्बीरराव) स्वयं काफी घायल हुआ । उपर्युक्त बम्बई के पत्र में यह भी लिखा है कि "पेशवा सूरत को जाने का विचार कर रहा था, परन्तु रनमस्तखाँ नामक एक व्यक्ति ने उसे बहुत हानि पहुँचाई जिसने २००० आदमी मार डाले और ४०० घोड़े छीन लिये, जिससे उसे अपना विचार बदलना पड़ा ।" परन्तु बम्बई में जो समाचार पहुँचा स्पष्टतः उसने शिवाजी और उनके पेशवा दोनों के अभियानों पर कुप्रभाव डाला; और सूरत से १३ दिसम्बर को लिखा गया कि "आपने (अर्थात् बम्बई से) जो यह समाचार भेजा है कि शिवाजी और उनके पेशवा को बादशाह की सेना ने कई मुठभेड़ों में नष्ट कर दिया उसकी रिपोर्ट यहाँ बिलकुल विपरीत दी जा रही है ।" सभा० ९३, जे० शं० और ९१ क० ब० ८८ सब ने लिखा है कि रनमस्त खाँ ने शिवाजी को हराया । नवम्बर, १६७९ से शिवाजी के स्वर्गवास तक दिलेर और मराठों के बीच बीजापुर के निकट कोई मुठभेड़ नहीं हुई और यह 'वसातिन-उस-सलातिन' से बिलकुल स्पष्ट है ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कर लाने का आदेश दिया। (कोठी अभि० सूरत १०८, राजापुर से सूरत, ३० दिसम्बर, कारवार, से सूरत, २४ नवम्बर १६७९)

नवम्बर के अन्त के निकट १२,००० आदमियों की नयी मराठा सेना राजापुर के समीप, दक्षिण कोंकण में एकत्र हुई। उसने नगर पर गोलाबारी की (२६ तारीख को) और (२८ तारीख को) बुरहानपुर के लिए कूच किया, परन्तु फिर विचार बदल दिया और मल्कापुर की ओर चल दी, जहाँ कहा जाता है कि शिवाजी ने २०,००० अतिरिक्त घुड़सवारों सहित उनसे मिलने का वचन दिया। स्पष्टतः उन्होंने ऐसा नहीं किया और नवम्बर के अन्तिम सप्ताह में खानदेश पर आक्रमण करने वाली मराठा सेना का नेतृत्व उन्हीं के एक सेनापति ने किया था, जिसने "धरनगाँव, चोपरा और निकटवर्ती अन्य अनेक नगरों को जलाया और लूटा।" (कोठी अभि० १०८, राजापुर से सूरत, ६ दिसम्बर; खण्ड ४, सूरत कन्सल्टेशन्स, ८ दिसम्बर १६७९)

१२. **शिवाजी की घरेलू कठिनाइयाँ**—दिसम्बर के आरम्भ में शिवाजी को इस समाचार से बड़ी सान्त्वना मिली कि उनके विद्रोही पुत्र शम्भूजी ने मुगलों का साथ छोड़ दिया है और अब वह पन्हाला आ गया है (लगभग ४ दिसम्बर)। यहाँ शिवाजी महीने के अन्त में अपने लौटे हुए लापरवाह लड़के से मिलने तथा उसे समझा-बुझाकर सुधारने की कोशिश में आये।

शम्भूजी के हाल के विद्रोह से नये स्थापित मराठा राज्य में गम्भीर खतरे का आभास मिला। अपने सबसे बड़े लड़के के चरित्र से शिवाजी को भविष्य के अंधकारमय होने की आशंका होने लगी। महाराष्ट्र का एकमात्र स्वामी ऐसा मनुष्य नहीं बनाया जा सकता था जो दुराचारी, सनकी व निर्दयी था और जिसमें सम्मान, देश-प्रेम तथा धार्मिक भावनाओं का लेशमात्र भी अंश न था। परन्तु शम्भूजी का एकमात्र विकल्प राजाराम था, दस वर्ष का लड़का, जिसको सिंहासन पर बैठाने का अर्थ था राजप-समिति की नियुक्ति। परन्तु राज्य के पुराने मन्त्रियों में परस्पर इतनी ईर्ष्या और द्वेष था, विशेषकर मोरो त्रिम्बक प्रधान मन्त्री और अन्नाजी दत्तो में, जो पश्चिमी प्रदेश का वाइसराय था, कि राजप-समिति अवश्य ही ध्वंस हो जाती और घरेलू युद्ध आरम्भ हो जाता और उस दशा में निश्चय ही राज्य नष्ट हो जाता जैसा कि एक शताब्दी बाद पूना की मन्त्रिसमिति ने किया। दोनों राजकुमारों के मध्य राज्य के विभाजन का प्रश्न उठा कि शम्भूजी को महाराष्ट्र दिया जाय और राजाराम को तुंगभद्रा नदी से आगे तक कर्नाटक प्रदेश दिया जाय; परन्तु यह योजना कार्यान्वित नहीं की गयी। (सभा० ९४, १०३)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी ने शम्भूजी को शान्त करने तथा उसे तर्क द्वारा समझाने की बहुत कोशिश की। उन्होंने उसकी श्रेष्ठ प्रवृत्तियों तथा उसकी स्वार्थ के प्रति अभ्यर्थना की, अनेक बुद्धिमानों के लेख सुनाये, अपना राजकोष दिखाया, राजस्व से आय बतायी, किलों की सूची तथा सेना और घोड़ों की संख्या बतायी और उससे आग्रह किया कि वह ऐसी यशस्वी परम्परा का श्रेष्ठ उत्तराधिकारी बने एवं उच्च आशाओं का वास्तविक प्रतीक बने जो कि उनके राज्य ने हिन्दू संसार के मनों में उत्पन्न की थीं। परन्तु शिवाजी जैसे मानव-चरित्र के जन्मजात ज्ञाता ने शीघ्र जान लिया कि उनके सारे उपदेश व्यर्थ हैं और इसलिए उनके अन्तिम दिन दुख और निराशा से आच्छादित रहे। (सभा० ९५, १०३-१०४)

दिसम्बर १६७९ के बाद शिवाजी का स्वास्थ्य गिरता गया और ऐसा प्रतीत होता है कि उन्हें अपनी मृत्यु के विषय में पूर्व-आभास मिल गया था। (सभा० १०३)। इस तथ्य के कारण उत्तराधिकारी का निर्णय अति आवश्यक हो गया, और इसके फलस्वरूप उनके रनिवास तथा मन्त्रि-मण्डल में षड्यन्त्र और प्रतिषड्यन्त्र बहुत बढ़ गये।

१३. **शिवाजी की मृत्यु**—२३ मार्च, १६८० को राजा को ज्वर हो आया और खून के दस्त। बीमारी बारह दिन तक रही। अन्त में स्वस्थ होने की सारी आशाएँ जाती रहीं और तब उन्होंने अपने सरदारों तथा अफसरों को गम्भीर आदेश और बुद्धिमान परामर्श देकर तथा रोती हुई भीड़ को दिलासा देकर कि शरीर नाशवान है परन्तु आत्मा अमर है, मराठा जाति के सृजनकर्ता ने अन्तिम धार्मिक अनुष्ठान किया, और संज्ञाहीन हो गये, और फिर सदा के लिए इस संसार से विदा हो गये। यह समय ४ अप्रैल, १६८० का दोपहर था और उस दिन चैत्र मास की पूर्णमासी थी।[१२]

---

[१२] शिवाजी की अन्तिम बीमारी और परलोकवास : सभा० १०३-१०५; कोठी अभि० सूरत १०८, बम्बई से सूरत २० अप्रैल, १६८० (मैंने यही माना है); म० आ० १९४; दिल० १६५ (केवल एक वाक्य); खा० खाँ २. २७१ (एक वाक्य); स्टोरिया २.२३१. ९१ क० ब० ८९ और दिग० ४६२-४६७ "अविश्वसनीय परम्परागत पुस्तकें" हैं और सोयराबाई पर हत्या का दोष लगाती हैं। ओर्म की कहानी (खंड ८९) को मैंने अस्वीकार कर दिया है, इंडियन हिस्ट्री क्वार्टरली, ४. ६०५। १६८० में चैत्र पूर्णिमा ३ और ४ अप्रैल (शनिवार और रविवार) दोनों दिन रही। मैंने सभासद को माना है जिसने रविवार लिखा है और जो अंग्रेज कोठी अभि० से सहमत है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उनकी अवस्था अभी ५३ वर्ष की पूरी नहीं हो पायी थी। मुस्लिम संसार ने उनकी असमय मृत्यु का कारण जालना के फकीर सैयद मुहम्मद जान को बताया। महाराष्ट्र में कुछ ऐसी चर्चा भी थी कि उनकी पत्नी सोयराबाई, राजाराम की माता, ने उनको विष दे दिया जिससे वह शम्भूजी को राज-सिंहासन से वंचित रखें।

सभासद द्वारा लिखा गया पुराना मराठी बखर इस बात पर खामोश है और इसका कारण भी ठीक ही है। राजाराम के नौकर ने राजा की आज्ञा से एक पुस्तक लिखी और वह उन्हीं के देखने के लिए लिखी, ऐसी दशा में वह उनकी माता द्वारा अपने पति की हत्या का कैसे जिक्र कर सकता था, भले ही यह घटना सत्य ही होती। अपने सिंहासनारोहण के एक वर्ष बाद शम्भूजी ने सोयराबाई को इस अपराध के लिए मार डाला कि उसने अपने पति को विष देकर मार डाला था, परन्तु सम्भवतः इसका कारण था अपनी विमाता से इस बात का बदला लेना कि वह अपने स्वयं के पुत्र को सिंहासन पर बैठाना चाहती थी। मैकाले द्वारा लिखित चार्ल्स द्वितीय के वध का वर्णन पढ़ने वालों को अवश्य याद होगा कि यूरोप में उस समय कोई ऐसा शासक शायद ही होगा जिसकी मृत्यु का कारण विष न बताया गया हो।

यह सही है कि शिवाजी अपने समस्त जीवन भर (पूर्व के सभी शासकों की भाँति) सदा ही विष दिये जाने से सावधान रहते थे। कर्नाटक अभियान के दौरान उन्होंने कई बार अंग्रेजों को निम्न सामान भेजने के लिए लिखा—मालद्वीप के नारियल, बेजोर रत्न और अन्य "अच्छी विष-निरोधक औषधियाँ" अर्थात विष उतारने की औषधियाँ, परन्तु यह केवल सतर्कता थी।

परिशिष्ट

शिवाजी की रानियाँ और सन्तान

पत्नियाँ—१. साईबाई (निम्बालकर की पुत्री)
मृत्यु ५ सितम्बर, १६५९ (जेधे श०); शम्भूजी की माता (जन्म १४ मई, १६५७)

२. सोयराबाई (शिर्के की पुत्री)
१६८१ में शम्भूजी द्वारा हत्या की गयी; राजाराम की माता (जन्म २४ फरवरी, १६७०)

३. पुतलाबाई (मोहिते की पुत्री)
शिवाजी के शव के साथ सती हो गयी, १६८०

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

४. साकवारबाई (गायकवाड़ की पुत्री)
विवाह जनवरी, १६५६ (जे० श०); १६६९ में रायगढ़ के पतन के पश्चात मुगलों के यहाँ कई वर्ष तक कैद रही।

५. काशीबाई जिसकी मृत्यु लगभग १ मार्च, १६७४ में हुई, (रायगढ़ से लिखित नारायण शेनवी के दिनांक ४ अप्रैल के पत्र के अनुसार और राज्याव कल्पतरु)

प्रथम चार पत्नियों का जिक्र लगभग सभी स्रोतों ने किया है। जेधे श० में लिखा है कि (क) जादवराय की पुत्री, और (ख) इंग्ले की पुत्री के विवाह क्रमशः ८ अप्रैल और १५ अप्रैल १६५७ को हुए, परन्तु उन्होंने वर का नाम नहीं दिया है! सभासद पृष्ठ ७१ पर लिखा है कि शिवाजी की सात पत्नियाँ थीं। अन्य रायों के लिए देखिए राजवाड़े का 'संकीर्ण लेख संग्रह'।

सन्तान—(१) शम्भूजी। (२) राजाराम। (३) साखूबाई, महादजी नायक निम्बालकर (बाजाजी के पुत्र) से विवाहित। (४) अम्बिका बाई, हरजी महादिक से विवाहित। (५) राजकुमारी बाई, गनोत्री राज शिर्के से विवाहित।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय १४

शिवाजी के अंग्रेजों और पुर्तगालियों से सम्बन्ध

१. अंग्रेजों से पहली भिड़न्त, १६६०।
२. राजापुर के कैदियों में अंग्रेज व्यापारी।
३. राजापुर की कोठी में हानि के हर्जाने के लिए वार्ता।
४. लेफ्टिनेंट ऊस्टिक के मिशन की असफलता, १६७२।
५. टी० निकोल्स का दौत्य, १६७३।
६. एच० ऑक्सिनडन का दौत्य, १६७४।
७. अंग्रेज व्यापारियों की शिवाजी से भेंट।
८. राजापुर हर्जाने का इतिहास।
९. शिवाजी और पुर्तगाली।

१. शिवाजी की अंग्रेजों से पहली भिड़न्त, १६६०—जनवरी १६६० के आरम्भ में ही शिवाजी के सेनापति दोरोजी ने राजापुर के पत्तन पर अधिकार कर लिया और उन्होंने अफजलखाँ के चौरस पेंदी वाले तीन पोतों का पीछा किया जिनमें, मराठों द्वारा दाभोल पत्तन पर अधिकार किये जाने पर, वहाँ पर स्थित अफजलखाँ का एजेंट अपने और अपने स्वामी के सामान सहित भागा जा रहा था। इस घटना ने अंग्रेज और मराठों के मध्य पहली मुठभेड़ को जन्म दिया, परन्तु इसका वास्तविक कारण ईस्ट इण्डिया कम्पनी अथवा उसके नौकरों के वैध व्यापार में शिवाजी द्वारा कोई रुकावट न था। इसका एकमात्र कारण था राजापुर की कम्पनी के मुख्य अधिकारी हैनरी रैविंगटन का लालच और उसका कुटिल व्यवहार। उसके एक भारतीय दलाल ने रुस्तमे-जमाँ को कुछ रुपया उधार दिया और उसकी रसीद कम्पनी के नाम से धोखा देकर ले ली। जब राजापुर का रुस्तम का गवर्नर आक्रमण के कारण दाभोल के पोतों में भाग जाने के प्रयत्न में था तो दलाल ने रैविंगटन से प्रार्थना की कि वह उसे वह रुपया वापस दिला दे। रैविंगटन ने गवर्नर के जहाज के रोकने के लिए डाइमंड नाम का अंग्रेजी जहाज भेजा और उससे वह रुपया देने को कहा जो झूठ-मूँठ को 'कम्पनी को वाजिब' दिखाया गया था। रकम का कुछ भाग तुरन्त ही सामान के रूप में अदा कर दिया गया। परन्तु उसी समय शिवाजी के आदमी अफजलखाँ के जहाजों को पकड़ने के लिए तट पर आ पहुँचे और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उन्होंने तो अंग्रेजों से उस जहाज को छोड़ देने के लिए कहा जिसमें गवर्नर था। अंग्रेजों ने मना कर दिया और गवर्नर ने प्रसन्नतापूर्वक इस युक्ति से लाभ उठाया जिससे वह मराठों के चंगुल से बच जाय और उसने अंग्रेजों से आग्रह किया कि "वे इनमें दो जहाजों को ले लें और उन्हें अपना घोषित कर दें।" रैविंगटन ने उनमें एक जहाज ले लिया, उसका नया नाम 'राजापुर मर्चेण्ट' रख दिया और उसे एक अंग्रेज कप्तान के अधीनस्थ रख दिया।

मराठा सेनापति डोरोजी से बातचीत के दौरान में अंग्रेजों ने जहाज के सामान को देने से मना कर दिया जब तक कि वह अदायगी की आज्ञा न दे दे कि रुपया नगर के राजस्व से वसूल कर लिया जाय। सबसे बड़े जहाज ने, जो अंग्रेजों ने नहीं लिया था, लंगर डाल दिया और वह सकरी खाड़ी में गिर गया जहाँ मराठा तोपों की मार नहीं पहुँच सकती थी; इस जहाज ने इससे पूर्व दोनों तटों पर शिवाजी के आदमियों पर गोलाबारी की थी। इससे निराश होकर मराठों ने जैतपुरा में (खाड़ी के मुहाने पर, राजापुर से ११ मील पश्चिम में) अंग्रेजों के दलाल बालजी को पकड़ लिया कि "अंग्रेज अपने लिए जहाज को न लेंगे, वरन उसे चला जाने देंगे।" (कोठी अभि० खण्ड ८५)

दलाल के छुटकारे के लिए मराठा शिविर में फिलिप गाइफर्ड भेजा गया, परन्तु उन्होंने उसे भी पकड़ लिया, और दोनों कैदियों को उसी रात को खारेपत्तन में भेज दिया, और उनसे कहा कि जब तक कि अंग्रेज उस जहाज को पकड़कर उसके सामान को उन्हें न सौंप देंगे जो वे गवर्नर के जहाज पर ले जा रहे थे, वे मुक्त नहीं किये जायँगे (१८ जनवरी, १६६०)।

रैविंगटन ने १३ फरवरी को शिवाजी को एक पत्र लिखा जिसमें उसने दाँदा-राजपुरी पर आक्रमण करने में अंग्रेजों की मैत्रीपूर्ण सहायता का वचन दिया, और दोनों कैदियों की मुक्ति के लिए प्रार्थना की, क्योंकि वे केवल इसलिए बन्दी बना लिये गये थे कि अंग्रेजों ने "राजापुर नदी में पड़े हुए जहाजों को नहीं पकड़ा और अपने दोस्तों के दुश्मन हो गये।" परन्तु इससे पूर्व ही दलाल अपने छुटकारे के लिए शिवाजी से और रुस्तमे-जमाँ से प्रार्थना कर चुका था, और दोनों कैदियों की मुक्ति के आदेश आ गये। बालजी तुरन्त मुक्त कर दिया गया, "परन्तु गाइफर्ड को एक दुष्ट ब्राह्मण ने खारेपत्तन गढ़ में रोक लिया क्योंकि वह घूस की आशा कर रहा था।" रैविंगटन ने इसके प्रतिवाद में शिवाजी और रुस्तम को लिखा। (राजापुर से सूरत, १५ फरवरी, १६६०)

शिवाजी से उत्तर आने से पहले ही रैविंगटन ने, यह मालूम करके कि खारेपत्तन का मराठा गवर्नर गाइफर्ड को वहाँ से सातवली (राजापुर से उत्तर-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पश्चिम में ९ मील) अथवा खेलना किले को भेज रहा है, ३० सैनिकों का एक दस्ता भेजा, जिसने राजापुर से १० मील दूर एक नगर में मराठा अनुरक्षकों को घेर लिया और गाइफर्ड को जबरदस्ती छुड़ा ले गये। (वही, २३ फरवरी १६६०)

२. **शिवाजी के राजापुर कैदियों में अंग्रेज व्यापारी, १६६१-१६६३**— अंग्रेजों पर दूसरा मराठा आक्रमण अगले वर्ष मार्च के आरम्भ में हुआ, और इस अवसर पर भी अंग्रेजों की सरासर गलती थी, यद्यपि कम्पनी की अधिकारिक मनोवृत्ति सही और तटस्थ थी।

१६६० में, जब सिद्दी जौहर बीजापुर सरकार की ओर से पन्हाला किले में शिवाजी का घेरा डाले हुए था, राजापुर के अंग्रेज व्यापारियों ने उसे कुछ हथगोले दिये "जिनके विषय में (लेने वाले ने कहा कि) वे अवश्य ही घेरा डालने वालों के लिए सबसे अधिक घातक होंगे।" राजापुर के कुछ अंग्रेजों को रिश्वत भी दी गयी कि वे पन्हाला के बाहर बीजापुरी शिविर में पहुँचें और "झण्डे की सहायता से गोलों को उछालकर जो अवश्य ही अंग्रेजों का था" किले की गोलाबारी में सहायता दें। (अध्याय ४, परिच्छेद २)

शिवाजी ने इस अमैत्रीपूर्ण कार्य का दण्ड लगभग ३ मार्च, १६६१ को दिया, जब उन्होंने राजापुर पर अचानक आक्रमण कर दिया, अंग्रेजी कोठी को लूट लिया, और चार व्यापारियों को पकड़कर बन्दी बनाकर ले गये—हैनरी रैविंगटन, रिचार्ड टेलर, रेंडोल्फ टेलर, और फिलिप गाइफर्ड।

राजापुर पर इस दूसरे आक्रमण का सुस्पष्ट वर्णन विंगुर्ला के डच मुख्य-अधिकारी ने दिया है: "राजापुर के लेने के लिए शिवाजी ने १००० घुड़-सवार और लगभग ३००० पैदल भेजे। नगर में पहुँचकर इस सेना ने, पूर्व परम्परा के अनुसार, प्रमुख निवासियों से बस्ती से बाहर आने के लिए और उनसे उसकी रक्षार्थ नगर के भीतर साथ जाने के लिए कहा और वचन दिया कि उनको कोई हानि नहीं पहुँचाई जायगी। ये सरल प्रकृति वाले मनुष्य कोई क्षति की आशंका न करते हुए, मुलाकात के स्थान पर गये और उनके साथ अंग्रेज प्रेसीडेण्ट रैविंगटन भी था तथा दो या तीन अन्य अंग्रेज, जिन्होंने उनके सम्मान में वहाँ जाना उचित समझा। वे तुरन्त पकड़ लिये गये और उनको दारुण वेदनाएँ देकर उनकी सारी धन-दौलत जब्त कर ली गयी। रैविंगटन और उसके साथी सभी शिवाजी के एक गढ़ में बन्द कर दिये गये।···कोठी को खूब खखोला गया, और छिपे हुए खजाने को प्राप्त करने के लिए नीचे का फर्श भी खोद डाला गया। लुटेरों ने अनेक विदेशी

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

व्यापारियों को भी लूटा, जो प्रतिवर्ष फारस और मसकत से राजापुर को माल लाया करते थे।"[१]

जब अंग्रेज कैदी राजापुर में ही थे, शिवाजी के ब्राह्मण एजेंट ने उनसे कहा कि उसके स्वामी उनको तट पर एक बढ़िया नमक-पत्तन ('मीत बन्दर') देंगे, यदि उनसे दाँदा-राजपुरी के लेने में मदद मिल जायगी; परन्तु उन्होंने जब तक वे मुक्त न कर दिये जायँ उनसे "इस विषय में बातचीत करने" को मना कर दिया। तब शिवाजी ने कैदियों को मुक्त करने के लिए धन माँगा, और उन्हें वैसाती किले में भेज दिया। अन्य अनेक मनुष्य—हिन्दू व्यापारी (बनिये), भारतीय मुसलमान, फारस वाले और अरब—उनके कैदखाने में बहुत बुरी दशा में रखे गये और छुड़ाई का धन वसूल करने के लिए उन्हें पीटा गया।

अंग्रेजों ने छुड़ाई देने के लिए एकदम मना कर दिया और वे मुक्त होने के लिए धोखे की वार्ता करते रहे कि यदि उन्हें छोड़ दिया गया तो वे मराठों को दाँदा-राजपुरी लेने में अंग्रेजी जहाजों से मदद कर देंगे, परन्तु साथ ही उन्होंने सावधानी रखी और ऐसी शर्तें दीं कि मुक्त होने के बाद "अपने वचनों से बाहर निकलने का मार्ग रहा आये।" तब उन्होंने धमकी से काम लिया और कहा कि यदि वे मुक्त नहीं किये गये तो सूरत में उनके साथी औरंगजेब की इस इच्छा को पूरी कर देंगे कि दकन में समुद्र द्वारा मुगल सेना आ जाय (अर्थात कोंकण जिले में)। (ओर्म पांडुलिपि, खण्ड १५५, पृष्ठ १.२१)

शिवाजी ने रावजी पण्डित को सोनगढ़ में समस्त कैदियों का चार्ज लेने के लिए भेजा और आदेश दिया "इनके साथ जैसा व्यवहार उचित समझो करो।" चारों अंग्रेजों के साथ अच्छा व्यवहार किया गया। परन्तु उनकी कैद का काल इतना बढ़ा दिया गया कि अब सहन नहीं हो सका। छुड़ाई की माँग

---

[१] बटेविया दाग-रजिस्टर, १६६१, पृष्ठ २१५, फोस्टर में उद्धृत, ११. ४-५। दी गयी तारीख "मार्च के मध्य के लगभग" (नयी प्रणाली), जो पुरानी प्रणाली के अनुसार लगभग ५ मार्च के बराबर थी, और जिसका अनुशीलन इस पुस्तक में किया गया है। अंग्रेजी की रिपोर्ट खो गयी है।

डच लोगों का कथन कि, "अंग्रेज जो राजापुर में पीछे रह गये उसी प्रकार कैद कर लिये गये और उनमें से एक यातनाओं के कारण मर गया," झूठी अफवाहों पर आधारित था, क्योंकि रैविंगटन के अतिरिक्त केवल तीन व्यापारी ही और कैद किये गये और उस व्यापारी के विषय में, जो राजापुर में मरा, स्पष्टतः रिचार्ड नेपियर, १६ फरवरी को यह रिपोर्ट दी गयी कि वह "सख्त बीमार है और उसके जीवित रहने की कोई आशा नहीं है।" (कोठी अभि०, राजापुर से कम्पनी)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पर उन्होंने यह उत्तर दिया कि वे कुछ नहीं दे सकते क्योंकि उन्होंने राजापुर की लूट में सब कुछ खो दिया था। कल्याण को वापस लेने के लिए योजना-बद्ध अभियान के कारण (जून, १६६१) शिवाजी की अनुपस्थिति में सिद्दियों के विरुद्ध अंग्रेजों से मैत्री के विषय में वार्ता की प्रगति में विलम्ब हुआ। एक वर्ष की कैद के बाद "रायगढ़ के असन्तुष्ट कैदी" अपना सन्तुलन खो बैठे और उन्होंने सूरत के प्रेसीडेण्ड और काउंसिल को बहुत अपमानजनक और असंयत भाषा में उन पर दोषारोपण किया कि वे उनके छुटकारे के लिए कुछ नहीं कर रहे थे। सूरत काउंसिल का उत्तर जो १० मार्च १६६२ को लिखा गया दृढ़ तथा उपयुक्त झिड़की थी : "आप लोग भली-भाँति जानते हैं कि आप बन्दीगृह में कैसे आ गये। ऐसा कम्पनी के माल की रक्षा करने के कारण नहीं हुआ, यह पन्हाला के घेरे में जाने के कारण और वहाँ पर अंग्रेजों के झण्डे की सहायता से गोले हटाने के कारण हुआ। आप लोगों की कैद का कारण यही है जिसके जिम्मेदार आप खुद हैं।"[२]

ऐसा प्रतीत होता है कि इन चार अंग्रेजों ने सोनगढ़ से भाग निकलने की कोशिश की, परन्तु वे पकड़े गये और रायगढ़ को अधिक 'कड़ी निगरानी' में रखने के लिए भेज दिये गये। १६६२ के मध्य में, जब उनकी कैद को डेढ़ वर्ष हो चुके थे, सूरत की काउंसिल ने शिवाजी के प्रति समस्त अभ्यर्थना का कोई परिणाम न निकलते देखकर, बदला लेने की दृष्टि से कुछ अंग्रेजी जहाजों को खुले समुद्रों में दक्षिण के जहाजों को पकड़ने के लिए भेजा—चाहे वे बीजापुर के शासक के हों अथवा शिवाजी के अथवा दकन के किसी व्यापारी के हों—उन्होंने विशेषकर उस जहाज को पकड़ लिया जो विधवा रानी बड़ी साहिबा को मक्का से वापस ला रहा था। उन्होंने आशा की कि इस सफलता के कारण बीजापुर सरकार अंग्रेजों को मुक्त करने के लिए शिवाजी पर दबाव डालेगी। परन्तु अंग्रेज सैनिकों के हाथ कुछ न लगा। सूरत की काउंसिल ने सूरत के मुगल गवर्नर को भी प्रभावित किया कि वह शाइस्ताखाँ को लिखे कि वह उनके छुटकारे का यत्न करे, जो इस समय शिवाजी को बहुत दबा रहा था (लगभग नवम्बर १६६२)।[३]

---

२ वही, और सूरत से रायरी गढ़ में कैदियों को पत्र, दिनांक १० मार्च, १६६२, कोठी अभि०, खण्ड ८५

३ सूरत से आर० टेलर के पत्र दिनांक १७ मई, १६६२ कोठी अभि० सूरत खण्ड ८५; सूरत कन्सलटेशन्स १२ जुलाई कोठी अभि० सूरत, खण्ड २; खण्ड ८५ में भी तारीख २१ जुलाई, १६ अगस्त और १४ नवम्बर।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

३ फरवरी, १६६३ को काउंसिल ने कानवर्टाइट नामक जहाज के कप्तान को भेजा कि वह उन दो बड़े लदे हुए जहाजों को पकड़ लाय जिन्हें शिवाजी जैतापुर से मोचा के लिए भेज रहे थे और जिन पर "ऐसा सामान लदा हुआ था जो तूफान से उनके तट पर आ लगा था और जो काफी मूल्यवान था।" परन्तु इस कदम की आवश्यकता न रही, क्योंकि रावजी पण्डित, राजापुर के मराठा गवर्नर, ने रायगढ़ के चारों कैदियों को बुलवा भेजा और उनको मुक्त कर दिया (लगभग ५ फरवरी), तथा साथ ही यह पक्का वचन दिया कि भविष्य में अंग्रेजों को उनकी रक्षा मिलती रहेगी। सूरत की काउंसिल ने कहा कि "उन्होंने दुष्ट द्रोही (शिवाजी) से बदला इसलिए नहीं लिया कि उनके पास न तो इतनी शक्ति ही थी और न समय ही अनुकूल था।" वे अपने स्वामी की सम्पत्ति की हानि तथा अपने "प्रिय भाइयों" के कष्ट का बदला अब भी लेना चाहते थे, परन्तु उन्होंने दुखी होकर महसूस किया कि "जहाजों तथा मनुष्यों के अभाव में ऐसे अभियान के लिए हम नितान्त असमर्थ हैं; अतएव हमको सब्र से काम लेना चाहिए।"[४]

अतएव बल से काम लेने के बजाय, उन्होंने अपनी राजापुर की कोठी में की गयी हानि के मुआवजे के लिए शिवाजी से वार्ता आरम्भ की। यह कई वर्षों तक चलती रही जिससे अंग्रेज तंग आ गये। जब शिवाजी हर्जाने की रकम देने को तैयार हो गये और उन्होंने अपना दायित्व स्वीकार कर लिया तब भी वास्तविक अदायगी बराबर स्थगित होती रही और कभी पूरा हर्जाना नहीं दिया गया। लन्दन के इण्डिया आफिस में सुरक्षित कोठी के अभिलेखों की सहायता से हम इन वार्ताओं की विभिन्न अवस्थाओं के क्रमों को देख सकते हैं—अंग्रेजों की विकल्प में आशाएँ तथा निराशाएँ, उनकी विभिन्न चतुराइयाँ, उनके अनेक दौत्य और उनकी अन्तिम धारणा, शिवाजी की मृत्यु होने पर, कि उन्हें अब उनसे कुछ न मिल सकेगा। इस लम्बी राजनयिक वार्ता के अभिलेख अंग्रेज व्यापारियों के धैर्य और सहनशीलता के द्योतक हैं, यद्यपि हमको हँसी आये बिना नहीं रह सकती जब यह पाते हैं कि वार्ता के विभिन्न स्तरों पर शिवाजी के चरित्र और मनोभावों के विषय में उनके एकदम विपरीत मत थे, जैसे कि वे अपने दावों के निर्धारण के विषय में आशा अथवा निराशा प्रकट करते थे। हमारी मनोवृत्ति पर स्वभावतः हमारे मनोवेगों का प्रभाव पड़ता है।

---

[४] कोठी अभि० सूरत, खण्ड १०३, राजापुर से सूरत, ६ फरवरी ; खण्ड २, सूरत से आर० टेलर, ९ अक्तूबर, १६६३

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सूरत पर दो आक्रमणों (१६६४ और १६७० में) के दौरान शिवाजी से अंग्रेजों की भिड़न्त तथा दोनों के मध्य खंदेरी टापू की किलेबन्दी के सम्बन्ध में उनके बीच के झगड़े का वर्णन पूर्व के अध्यायों में किया जा चुका है।

३. **राजापुर की कोठी में हानि के हर्जाने के लिए वार्ता**—अंग्रेज व्यापारियों की नीति, बम्बई के डिप्टी गवर्नर और काउन्सिल द्वारा सूरत के प्रेसीडेण्ट और काउन्सिल को दिनांक २५ नवम्बर, १६६८ के पत्र में, इस प्रकार स्पष्ट की गयी है :

"आपके आदेशों के अनुसार, अवसर मिलने पर हम जब कभी शिवाजी के आदमियों से मिलेंगे, उनके साथ शिष्टता का व्यवहार करेंगे, परन्तु साथ ही उनके साथ कोई समझौता नहीं करेंगे, किन्तु उन्हें यह अवश्य बता देंगे कि माननीय कम्पनी को कितनी हानि पहुँची है और किस प्रकार अनेक अवसरों पर हमारे आदमियों को बुरा-भला कहा गया है और उसके लिए उनके स्वामी से मेल करने से पहले हम सन्तोष और हर्जाना चाहते हैं—इनके विषय में हमारा विचार है कि ये बातें एक-एक करके उनके आदमियों के द्वारा उसके कानों में पड़ जायेंगी, यद्यपि हमारी राय यह है कि वह जब तक मजबूर न हो जायँगे, कभी शान्तिपूर्ण सन्धि के लिए तैयार न होंगे।" (कोठी अभि० सूरत, खण्ड १०५)

एक अन्य पत्र में, दिनांक १७ मार्च १६६९, बम्बई काउन्सिल ने लिखा, "शिवाजी राजा ने अपने आदमियों के द्वारा हमसे ३०० रुपये माँगे, जो बड़ी रकम नहीं है···और हमको···मुख्य भूमि पर उनके आदमियों से काफी पत्र-व्यवहार करने के बहुत मौके पड़े हैं जहाँ से हमको भोजन, लकड़ी (अर्थात ईंधन) विशेष रूप से (जो अन्य कहीं नहीं उपलब्ध हैं) मिलते हैं, अतएव हम शिवाजी राजा को विशेष रूप से सन्तुष्ट करना चाहते हैं।" (वही)

५ मार्च, १६७० को सूरत काउन्सिल ने बम्बई को इस प्रकार निर्देश भेजा। शिवाजी और मुगलों में युद्ध छिड़ जाने से हमारी उन माँगों से कुछ पर रोक लग गयी है जो प्रेसीडेण्ट से शिवाजी के साथ कम्पनी की माँगों के विषय में समझौते के बारे में की जा रही थीं; परन्तु हमें आशा है कि इस कार्य में प्रगति जारी रहेगी·····किन्तु हम चाहेंगे कि आप बहुत आगे न बढ़ें जिससे कि हमारी आकांक्षाओं (वैध माँगों) का अल्पमूल्यन न कर दिया जाय और उनका (शिवाजी का) उत्साह ठंडा पड़ जाय। (कोठी अभि० खण्ड ३)

अक्तूबर में शिवाजी ने बम्बई के अंग्रेजों को परेशान करने की कोशिश की, इसका कारण यह मालूम होता है कि उन्होंने दाँदा-राजपुरी के विरुद्ध

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

संघर्ष के लिए उनको युद्ध-सामग्री (विशेषकर सीसा) देने को मना कर दिया। बम्बई ने सूरत को १४ अक्तूबर, १६७० को लिखा कि, "कुछ दिन के बाद हमने सदा के अनुसार, अपनी नावों को मुख्य भूमि पर अपना चूना तैयार करने के लिए लकड़ी लाने के लिए भेजा; परन्तु···हमारी नावें खाली लौट आयीं, क्योंकि शिवाजी के आदमियों ने उन भागों में भविष्य के लिए लकड़ी काटने को मना कर दिया।" १२ अगस्त, १६७१ को बम्बई ने सूरत को लिखा, "बम्बई के डिप्टी गवर्नर को शिवाजी से जो उत्तर मिला है,···उससे आप देखेंगे कि वह हमारी मित्रता का किस प्रकार निरादर करता है।" (कोठी अभि० सूरत, १०५)

परन्तु सितम्बर, १६७१ में शिवाजी ने अंग्रेजों से बातचीत करने के लिए एक दूत भेजा। उनका मुख्य उद्देश्य था दाँदा-राजपुरी के विरुद्ध अंग्रेजों से सहायता लेना, विशेषकर "हथगोले, छोटी तोपें और गोला-बारूद।" बम्बई काउन्सिल ने तुरन्त ही समझ लिया कि यदि उनको युद्ध-सामग्री न दी जायगी तो वह उनकी राजापुर की कोठी की लूट के मुआवजे का "एक धेला भी न देंगे।" सूरत के प्रेसीडेण्ट ने बम्बई के व्यापारियों को निम्न निर्देश भेजे, "हमें उनको बता देना चाहिए कि यदि वह हमको कुछ सुविधाएँ अपने बन्दरगाह में देते हैं तो हम उनको वे सब सहूलियतें दे देंगे जो अन्य जातियाँ हमको अपने बन्दरगाहों में देती हैं। परन्तु हम नहीं चाहेंगे कि वे (अर्थात इस वार्ता में भाग लेने वाले अंग्रेज प्रतिनिधि) उन हथगोलों, छोटी तोपों और गोला-बारूद के लिए जिन्हें वह चाहते हैं, देने का पक्का वादा न करें और न साफ-साफ इनकार ही कर दें, क्योंकि इस युद्ध-सामग्री को वह दाँदा-राजपुरी को लेने में प्रयोग करना चाहते हैं, जो उनके अधिकार में चले जाने पर बम्बई के पत्तन के लिए बड़ी परेशानी पैदा कर देगी; और दूसरी ओर इस समय हमारी अस्वीकृति और हमारी रुचि में कोई संगतता नहीं है, क्योंकि हमारा विश्वास है कि यदि उनको संदिग्ध दशा में रखा जायगा तो संधि जल्दी हो सकेगी जिससे वह यह आशा करने लगेंगे कि उनकी इच्छानुसार उनको सामान मिल जायगा।" (कोठी अभि० सूरत, ८७)

परन्तु, चूँकि दोनों दलों के उद्देश्य भिन्न थे, इसलिए यह आशा नहीं की जा सकती थी कि वार्ता के अन्त में अनुबन्ध हो ही जाय। वे दिसम्बर तक चलती रहीं, जब शिवाजी अपने धावों के लिए गये हुए थे और "अब न वह आसानी से मिल सकते थे और न ही उनसे सफल वार्ता की जा सकती थी।" अंग्रेजों का प्रस्ताव था कि उनसे सीधी वार्ता करने के लिए लैफ्टिनेंट स्टेफेन ऊस्टिक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

को भेजा जाय । इस दूत को आदेश दिया गया कि वह कम्पनी के दुभाषिये राम शेनवी को लेकर "कम्पनी के सम्मान के अनुकूल अच्छी साज-सज्जा सहित जाय ।" (कोठी अभि०, १०६ और ८७)

नवम्बर के अन्त में ही सूरत की काउन्सिल ने समझौते की आशा छोड़ दी । उन्होंने बम्बई को लिखा (३० नवम्बर, १६७१), "राम शेवनी ने हमसे निजी तौर पर इस विषय पर वार्ता की है कि शिवाजी किन बातों पर समझौता चाहते हैं और दाँदा-राजपुरी के प्रति युद्ध करने के लिए वह हमसे क्या सामान चाहते हैं; इन दोनों बातों में हमको उनकी ओर से इतना रहस्य, स्वार्थ और असंगतता मालूम होती है और कम्पनी की ओर से उनसे इन शर्तों पर बातचीत करने में इतनी कठिनाइयाँ और खतरा मालूम होता है कि हम निराश हो रहे हैं कि यदि वार्ता इसी ढंग से चलती रही तो उसका कोई परिणाम नहीं निकलेगा ।···हम अपने पूर्व प्रस्ताव का समर्थन करते हैं कि जब तक कम्पनी को सन्तोष न हो जाय और हमारी पूर्व क्षति की पूर्ति निश्चित रूप से तय न हो जाय, हम उनकी माँग के अनुसार किसी भी बात को सम्मान सहित अथवा सुरक्षा की दृष्टि से स्वीकार नहीं कर सकते, जिनका वह प्रस्ताव रखते हैं ।"

लैफ्टिनेंट ऊस्टिक को निम्न निर्देश दिये गये थे कि "वह उनसे गत हानियों का हर्जाना माँगें और उनसे (अर्थात शिवाजी से) हमारे लिए सामान्य कौल या फर्मान प्राप्त करें और हमको उनके देश के समस्त पत्तनों और भीतरी नगरों में २ प्रतिशत कर देकर स्वतन्त्रतापूर्वक और शान्तिपूर्वक व्यापार करने की सुविधा दें ।" (कोठी अभि० सूरत, ८७)

मराठा दूत अपने साथ बम्बई में अक्तूबर, १६७० में सूरत में लूटा गया ६,००० रुपये के मूल्य का कपड़ा लाया, जिसमें काढ़नी (=घोड़ों की झूलें), रूमाल (=छोटे साफे) आदि थे; और अंग्रेजों से उन्हें खरीदने को कहा, परन्तु उन्होंने कहा कि "माननीय कम्पनी के व्यापार के लिए यह समुचित वस्तुएँ नहीं हैं", अतएव हम इनको नहीं खरीद सकते । परन्तु चूँकि शिवाजी के पास देने के लिए नकद रुपया न था, अंग्रेज इस सामान को लेने के लिए राजी हो गये "इस शर्त पर कि उनकी पूर्व क्षति का यह अंश-भुगतान होगा और दी जाने वाली वस्तुओं का मूल्य अधिक न होगा वरन वे सस्ती होंगी और उनकी किस्म अच्छी होगी ।" परन्तु मराठा दूत के साथ समझौता हो गया; अंग्रेजों ने उसे उसके माल के बदले १५०० रुपया उधार देने का वचन दिया जो दो महीने की अवधि में अदा किये जाने थे । लैफ्टिनेंट ऊस्टिक दौत्य कार्य पर १५ जनवरी, १६७२ को जा रहा था, परन्तु शिवाजी से यह समाचार पाकर वह बम्बई में रुक गया

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कि शिवाजी पूना और बगलाना में मुगल सेनापति का मुकाबला करने में अति व्यस्त थे और उनको उस समय दूत से भेंट करने का अवकाश न था। (कोठी अभि० सूरत, ८७ और १०६)

४. **लैफ्टिनेंट ऊस्टिक के मिशन की असफलता, १६७२**—अन्त में लैफ्टिनेंट ऊस्टिक अपने मिशन पर १० मार्च, १६७२ को गया, और १३ मई को असफल होकर लौट आया। "अपनी लम्बी और कष्टप्रद उपस्थिति के पश्चात शिवाजी और उनके ब्राह्मणों के साथ आधा घण्टे तक वार्ता चली, परन्तु उसका परिणाम कुछ न निकला; फिर अन्त में शिवाजी ने हमारी क्षति पूरी करने के लिए ५००० पेगोडा दिये और वचन दिया कि यदि हम राजापुर में कोठी स्थापित करना चाहें तो कोठी के लिए हर प्रकार की कृपा और शिष्टता बरती जायगी।" (कोठी अभि० सूरत, १०६, १३ मार्च और १४ मई १६७२)

हर्जाने की रकम देने के प्रश्न पर वार्ता समाप्त हो गयी। २१ दिसम्बर, १६७२ को कम्पनी को बम्बई से भेजे गये पत्र में लिखा था, "हमने एक लाख रुपया माँगा, परन्तु उन्होंने २०,००० देना चाहा और कहा कि अंग्रेजों का सामान लूट लेने से शिवाजी ने इससे अधिक लाभ नहीं उठाया;···और यह कि व्यक्तिगत मनुष्यों (अर्थात यूरोपीय निजी व्यापारियों) की सन्दूकों, ट्रंकों और कोठों से जो लिया गया वह सम्भव है कि उनके सैनिकों ने लूट लिया हो, परन्तु इसका कोई अंश उनको नहीं मिला और इसलिए वह उसका मुआवजा नहीं देंगे; परन्तु जो (लूट का माल) प्राप्त हुआ और उनके रजिस्टरों में दर्ज है उसको वह वापस देने को तथा उसका मुआवजा चुकाने को तैयार हैं।···जब यह वार्ता चल रही थी शिवाजी कोली प्रदेश पर हमला करने की योजना बना रहे थे और इसलिए उन्होंने उस ब्राह्मण मन्त्री को बुला लिया जो बातचीत कर रहा था, और इसलिए मिस्टर ऊस्टिक को भी वापस लौट आना पड़ा।" परन्तु अंग्रेज व्यापारियों ने जानबूझकर इस बात को पसन्द नहीं किया कि वार्ता अभी समाप्त कर दी जाय। जैसा उन्होंने लिखा, "हमको बड़ी सावधानी और चतुराई से काम करना है, क्योंकि बादशाह (औरंगजेब) शिवाजी से बहुत रुष्ट हैं और अगर उनको यह मालूम हो गया कि हमारा···पत्र-व्यवहार शिवाजी से चल रहा है तो आपके सामान्य मामलों में वह कठिनाई उपस्थित कर सकते हैं न केवल इन भागों में वरन बंगाल में भी। इसके विपरीत, हमको शिवाजी से भी सद्व्यवहार रखना आवश्यक है, क्योंकि उनके प्रदेशों से ही हमको भोजन-सामग्री, लकड़ी और ईंधन मिलते हैं और इसी प्रकार आपके बम्बई के निवासी मुख्य भूमि से बहुत-सा व्यापार करते हैं, जिसमें यदि बाधा

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पड़ी तो बम्बई टापू को बड़ी हानि पहुँचेगी। इन बातों का विचार करते हुए हम कह सकते हैं कि आपके हित में है यदि इस समय सन्धि को टाल दिया जाय।···हमको उन सज्जनों (अर्थात व्यक्तिगत व्यापारियों) के लिए कुछ वसूल करने में बड़ी कठिनाई होगी जिन्होंने शिवाजी के कारण राजापुर में हानि उठाई क्योंकि उन्होंने यह भलीभाँति समझ लिया है कि कम्पनी का सामान क्या था और व्यक्तिगत मनुष्यों का कौनसा; पिछलों को हर्जाना देने के लिए वह बिलकुल मना करते हैं···यदि हम उनके लिए कोई हर्जाना नहीं माँगते होते, तो यह मामला अब तक कभी का तय हो गया होता।" (मूल पत्र० ३७२२)

५. टॉमस निकोल्स का दौत्य, १६७३—मई और दिसम्बर १६७२ के बीच में शिवाजी ने बम्बई में अंग्रेज व्यापारियों के पास दो दूत भेजे। फरवरी १६७३ में शिवाजी के यहाँ से तीसरा दूत पीलाजी आया, परन्तु वह कुछ न कर पाया। मई में बम्बई काउंसिल ने "टॉमस निकोल्स को एक बनिया दलाल के साथ, राजापुर में हमारी हानि का तथा हुबली में उनकी सेना द्वारा हमारी हानि का मुआवजा माँगने के लिए भेजा।"[५]

१९ मई को निकोल्स बम्बई से कुल ३७ आदमी लेकर राइरी गढ़ी के लिए चला, जिसमें दाखिल होने के लिए उन्हें २३ तारीख को आज्ञा मिल गयी। उन्होंने शम्भूजी से २४ तारीख को भेंट की, क्योंकि शिवाजी तीर्थयात्रा के लिए गये हुए थे। २ जून को शिवाजी गढ़ी को वापस लौट आये और दूसरे दिन निकोल्स की पेशी हुई। राजा अंग्रेजी दूत को हाथ पकड़कर ले गये और उनको वह स्थान बताया जहाँ उनको बैठना था जो उनके बायीं ओर बगल के तकिये के निकट था, और तब उनसे आने का उद्देश्य पूछा। परन्तु उसके द्वारा बहुत शिष्टाचार दिखाने पर भी, झगड़े को तय करने के लिए शिवाजी ने कुछ नहीं किया, और ६ तारीख को निकोल्स को विदा करते हुए यह कह दिया, "मैं एक या दो दिन में ही भीमाजी पण्डित के हाथ प्रेसीडेण्ट को इसका उत्तर भेज दूँगा।" इस प्रकार निकोल्स बिना कुछ किये हुए बम्बई वापस आ गया (१७ जून)। (मूल पत्र० निकोल्स की डायरी, ३७८७)

शीघ्र ही भीमाजी बम्बई आ पहुँचा (२१ तारीख), और कुछ वार्ता करने के पश्चात नारायण शेनवी (अंग्रेजी दुभाषिये) के साथ अपने स्वामी को कुल बातें बताने के लिए लौट पड़ा। सितम्बर के अन्त में दोनों निम्न पत्र लेकर बम्बई वापस आये :

---

५ पिछली हानि ७८९४ पेगोडा, अथवा ३५०० पाउण्ड की थी। (कोठी अभि० सूरत, खण्ड ३, सूरत कन्सल्टेशन्स, २४ मई, १६७३)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी राजा से बम्बई के गवर्नर माननीय जिराल्ड औंगियर की सेवा में "मैंने श्रीमान का पत्र भीमाजी पण्डित और नारायण शेनवी द्वारा प्राप्त किया जिन्होंने उन आदरसूचक शब्दों की ओर मेरा ध्यान दिलाया जो आपने मेरे लिए प्रयोग किये; इसी प्रकार उन्होंने मुझे राजापुर सम्बन्धी कार्य से अवगत किया जिसका मैंने उत्तर दे दिया और जिसे मैं आपके अवलोकन के लिए पुनः भेजता हूँ। मेरी इच्छा यह है कि मैं आपके साथ वैसा व्यवहार रखूँ जो आप मेरे साथ रखते हैं। मैं इस अवसर पर अधिक नहीं कहना चाहता हूँ, परन्तु मेरी इच्छा है कि मेरी और आपकी मित्रता में कोई अन्तर नहीं पड़ने पाये, क्योंकि मैं आपकी बुद्धिमानी के विषय में भलीभाँति जानता हूँ। मैं आपको एक उपहार भेजता हूँ जो मेरी प्रार्थना है कि आप कृपा करके अवश्य स्वीकार करें।" (मूल पत्र०, ३९५२)

बम्बई काउंसिल की एक बैठक १ अक्तूबर को हुई और उसके सामने कम्पनी की माँगों के सम्बन्ध में शिवाजी की आपत्तियाँ रखी गयीं। ३ अक्तूबर को मराठा दूत ने ७००० पेगोडा देने के लिए कहा जो मना कर दिये गये। बाद को इन्होंने इनको बढ़ाकर १०,०२५ पेगोडा कर दिया जिनका मुजरा कर आदि में दे दिया जाने को था। (मूल पत्र-व्यवहार; कोठी अभि० खण्ड १०६, बम्बई से सूरत, २९ सितम्बर, १६७३)

सूरत काउंसिल बम्बई से सहमत हो गयी कि "इतनी छोटी रकम, आठ से दस हजार पेगोडा, भी स्वीकार कर ली जाय, यद्यपि यह राजापुर में होने वाली क्षति का चौथाई अंश भी नहीं है।" इस रकम में से ८००० पेगोडा मुद्रा या माल के रूप में दिये जाने थे, और शेष राजापुर पत्तन पर पाँच या कम से कम तीन वर्ष तक समस्त करों से मुक्ति के रूप में दिये जाने थे। (कोठी अभि० सूरत, खण्ड ३, पत्र दिनांक १० जुलाई, १६७३)

शिवाजी की इस बार-बार की उपेक्षा से अंग्रेज व्यापारी बहुत असन्तुष्ट हो गये। जैसा कि सूरत काउंसिल ने लिखा (१९ जुलाई, १६७३)—"क्योंकि ऐसे काफिर से सुरक्षा की कोई आशा नहीं की जा सकती, जिसने राजापुर में हमारी क्षति को पूरा करने के लिए संधि कर ली है परन्तु साथ ही हुबली में स्थित हमारी कोठी को लूटने का आदेश दे दिया है, हमारे पास माननीय कम्पनी और राष्ट्र के अधिकारों को पुनः प्राप्त करने का और कोई साधन नहीं बचा है सिवाय इसके कि हम उसके उन जहाजों पर अधिकार कर लें जो उसके पत्तनों में हैं।" कुछ पहले २४ मई को वे इस परिणाम पर पहुँचे थे, "यह नितान्त आवश्यक है कि उससे मैत्री छोड़ दी जाय, परन्तु इसके लिए

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

यह समय उपयुक्त नहीं है जब डच लोगों से हमारा युद्ध चल रहा है।" परन्तु १ अक्तूबर को एक मैत्रीपूर्ण समझौता होता हुआ मालूम पड़ा, "ऐसा प्रतीत होता है कि शिवाजी का मतैक्य हमारे साथ है और हमारा उनके साथ; हमारा और उनके बीच का राजापुर सम्बन्धी पुराना मतभेद ऐसी शर्तों पर दूर हो गया है कि वे हमारे पक्ष और ख्याति के अनुकूल हैं।" अंग्रेजों को बहुत आशाएँ बँध गयी; २३ अक्तूबर को बम्बई ने सूरत को इस प्रकार लिखा, "राजापुर में की गयी पुरानी क्षति के संदर्भ में हम अपने पड़ोसी शिवाजी से समझौता करने ही वाले हैं।···हुबली के सम्बन्ध में नये विवाद को हमने दूसरे समय के लिए छोड़ रखा है,···जिससे कि यदि शिवाजी सूरत से झगड़ा करें तो आप लोग कुछ सीमा तक सुरक्षित रहें, यद्यपि हम आपको यही परामर्श देंगे कि उन पर भरोसा न किया जाय, तथापि हम यही कहेंगे कि यदि उनके दिल में किसी जाति के लिए कृपा का स्थान है तो वह अंग्रेजों के लिए है और हमको विश्वास है वह किसी ऐसे मकान पर आक्रमण नहीं करेंगे जिस पर अंग्रेजी झण्डा फहरा रहा है।"

किन्तु उस संधि पर, जो शिवाजी के दूत और अंग्रेजों के मध्य अक्तूबर के तीसरे सप्ताह में तय हो गयी थी, बाद को दो महीने से अधिक काल तक शिवाजी ने न तो हस्ताक्षर किये और न उसकी पुष्टि की, क्योंकि वह लम्बे अभियान के लिए बाहर गये हुए थे। (मूल पत्र० ३७७९, ३८७० और ३९१०)

६. हैनरी ऑक्सिनडन का दौत्य, १६७४—इसलिए अंग्रेजों ने निश्चय किया कि कार्य को पूरा करने की दृष्टि से शिवाजी के पास एक औपचारिक दौत्य भेजा जाय, विशेषकर इसलिए कि उनका महान राज्याभिषेक जून १६७४ में होने को था। इस कार्य के लिए हैनरी ऑक्सिनडन को चुना गया और नारायण शेनवी रायगढ़ को भेजा गया (जहाँ वह २४ तारीख को पहुँचा) कि "वह उनसे हैनरी ऑक्सिनडन से मिलने के लिए पूर्व-कार्य की तैयारी करे।" (कोठी अभि० खण्ड ३, सूरत कन्सल्टेशन्स, १६ अप्रैल १६७४)

शिवाजी से ऑक्सिनडन से मिलने की पूरी कहानी, १३ मई से १६ जून तक उसके 'पत्र और स्मरण-लेखों' (Letters and Memorial or Narrative) में विस्तारपूर्वक बतायी गयी है, जिनमें शिवाजी के राज्याभिषेक, समझौते की गति व क्रम, और अन्तिम अनुबन्ध का पूरा विवरण दिया गया है।

अंग्रेजों के जहाज उनको वापस करने के सम्बन्ध में अथवा बम्बई के निवासियों के जहाज उनके तट पर नष्ट होने के सम्बन्ध में शिवाजी कुछ समझौता न कर सके, परन्तु ११ जून को नीराजी पंडित ने (जो शिवाजी के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मंत्री थे और जिनको अंग्रेजों, उनके स्वामी और अपने मध्य बिचौलिया के रूप में रख लिया था) ऑक्सिनडन के पास समाचार भेजा कि "राजा ने हमारी सब माँगों और वस्तुओं को देना मान लिया है सिवाय उस मुद्रा के जो उनके देश में चल रही है।" १२ तारीख को समस्त मंत्रियों (अष्ट प्रधान) ने संधि पर हस्ताक्षर किये जो औपचारिक रूप से नेताजी पंडित के मकान पर ऑक्सिनडन को दी गयी। (कोठी अभि० खण्ड ८८)

नवम्बर में शिवाजी की प्रार्थना को, कि उनको ४० से ५० हंड्रेडवेट भार की ५० बड़ी तोपें और २ बड़ी पीतल की तोपें चाहिएँ, अंग्रेजों ने नम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया, क्योंकि उन्होंने कहा कि "इतना खुला कार्य औरंगजेब को अवश्य उत्तेजित कर देगा।" (सूरत से बम्बई, १३ नवम्बर, १६७४)

७. राजापुर के अंग्रेज व्यापारियों की शिवाजी से भेंट, १६७५—उपर्युक्त अनुबन्ध की शर्तों के अनुसार कुछ कठिनाइयों के पश्चात राजापुर की अंग्रेजी कोठी १६७५ में फिर खोल दी गयी, जैसा कि राजापुर के व्यापारियों से सूरत को लिखित ६ फरवरी १६७५ के निम्न पत्र से ज्ञात होता है :

"यह उचित समझा गया कि दलाल को प्रेसीडेंट के पत्र सहित अन्नाजी पंडित और सूबेदार के पास भेजा जाय जिससे उनको हमारे पहुँचने की पूर्व सूचना मिल जाय। वार्ड महोदय हमारे पुराने मकान को प्राप्त करने के बहुत इच्छुक थे परन्तु अन्नाजी ने कहा यह उनको नहीं मिलेगा, और उसको परवाह नहीं है कि हम यहाँ ठहरें या नहीं; यदि हम यहाँ नहीं ठहरेंगे तो इससे उनके स्वामी को १००० पेगोडा की बचत हो जायगी; और आगे हम यह भी देखेंगे कि हमारी हानि की पूर्ति के लिए दिये गये द्रव्य में हमको वह मकान भी उनके स्वामी से मिल जाय। वह केवल शिवाजी का अति कृपापात्र ही नहीं है वरन समस्त कोंकण का मुख्य गवर्नर भी है, अतएव हम कहीं भी बसेंगे वह स्थान उनके क्षेत्राधिकार में अवश्य रहेगा।" (कोठी अभि० सूरत, ८८)

आगामी मार्च में राजापुर के अंग्रेज व्यापारियों की शिवाजी से भेंट हुई जिसका विस्तृत और बहुत रोचक प्रतिवेदन सुरक्षित है।

"राजा २२ तारीख (मार्च) को मध्याह्न के लगभग आये, और उनके साथ विपुल संख्या में घुड़सवार और पैदल तथा लगभग १५० पालकियाँ थीं। अतएव जैसे ही हमने उनके आगमन का समाचार सुना, हम अपने डेरे से बाहर निकले और उनके पास पहुँच गये। उन्होंने पालकी रुकवा दी, हमको अपने बहुत निकट बुलवाया, हमसे मिलकर बहुत प्रसन्नता प्रदर्शित की और बहुत

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

खुश हुए कि हम लोग उनसे मिलने आये, और कहा कि चूँकि उस समय धूप बहुत तेज थी वह उन्हें अब नहीं रोकेंगे और शाम को वह उनको बुलवा भेजेंगे।

"(२३ मार्च ?) (शिवाजी) राजा आये। उन्होंने अपनी पालकी रोकी और हमको अपने पास बुलाया। जब उनके काफी निकट पहुँच गये, हम रुक गये, परन्तु उन्होंने हाथ के इशारे से अपने पास बुलाया और मैं उनके बिलकुल पास आ गया। उन्होंने थोड़ा प्रसंग बदलकर अपने हाथ में मेरी छोटी टोपी के बाल पकड़ कर मुझसे कई प्रश्न पूछे; अन्त में उन्होंने पूछा कि हमको राजापुर कहाँ तक पसन्द था और यह भी कहा कि उन्होंने सुन रखा है कि हम वहाँ पर खुश नहीं है, परन्तु हमको आदेश दिया कि जो कुछ भी हो गया है उसके लिए हम तनिक भी असन्तुष्ट न हों। वह भविष्य के लिए ऐसी योजना कर देंगे जिससे हम पूर्ण रूप से संतुष्ट रहें और हमको यह विश्वास दिलाया कि···हमारी प्रत्येक उचित प्रार्थना मान ली जायगी···।

"अगले दिन (२५ मार्च) सवेरे राजा ने हमको फिर बुलवा भेजा। हम उनके सामने पेश किये गये। मैं उनके दाँयें हाथ से इतना निकट बैठाया गया कि मैं उनको छू सकता था। उनके साथ हमने दो घंटे व्यतीत किये, जिसमें से अधिकांश समय उनके बहुत-से प्रश्नों के उत्तर देने में व्यतीत हुआ। अन्त में हमने अपनी इच्छाओं का कागज उनको पेश किया (जो पहले ही "देशी भाषा में अनूदित कर दिया गया था")। इनको उन्होंने पढ़वाकर सुना और कुछ ठहर कर और हमारी ओर गम्भीरतापूर्वक देखकर उन्होंने आश्वासन दिया कि हमारी सब माँगें स्वीकार कर ली गयीं। इन सबके लिए हमको फरमान दे दिया जायगा।" परन्तु फौंदा के घेरे के कारण, जो इसके तुरन्त बाद ही आरम्भ कर दिया गया था, इस फरमान के देने में विलम्ब हो गया। (कोठी अभि० ८८, २० अप्रैल १६७५ का राजापुर का पत्र)

८. **राजापुर हर्जाने का इतिहास**—खानदेश में स्थित धरनगाँव की कोठी की क्षति का हर्जाना तय करने के लिए सितम्बर १६७५ में सेम्युअल आस्टिन दौत्य कार्य के लिए बम्बई से रायगढ़ पहुँचे। शिवाजी ने इसे देने को यह कह कर मना कर दिया कि "न उनके सेनापति की आज्ञा से और न ही उनकी जानकारी में कुछ बदमाशों और सिपाहियों ने कोठी लूट ली।" परन्तु "बहुत विवाद के बाद" उन्होंने अपना 'कौल' (सुरक्षा का वचन) सब अंग्रेज कोठियों को दिया कि "इस प्रकार की दुर्घटनाएँ भविष्य में न होंगी।" (मूल पत्र-व्यवहार, ४१०६)

परन्तु राजापुर में की गयी हानि का बहुत दिनों तक कोई हर्जाना नहीं

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मिला। १६ जुलाई, १६७६ को सूरत से बम्बई लिखा गया कि गिरधरदास के साथ एक "विवेकशील और गम्भीर अंग्रेज भेजा जाय जो राजा से रुपये की माँग करे, क्योंकि नारायण शेनवी ढिलमिल था।

११ अक्तूबर को मराठा दरबार में नारायण शेनवी से समाचार मिला कि शिवाजी कम्पनी को उनका ऋण "वरात या पट्टी" (राज्याधिकारी के प्रति धन का अदायगी-पत्र) के रूप में देने को तैयार हैं और काउंसिल उनको स्वीकार करने को तैयार हो गयी यदि इससे अधिक अच्छी शर्तें न मिल सकें। छह दिन बाद सूरत की काउंसिल ने निराश होकर राजापुर कोठी को बन्दकरने का निश्चय किया क्योंकि "जब तक वह समुद्री लुटेरा और व्यापक डाकू (शिवाजी) जीवित है, जिसे मित्र या वैरी, ईश्वर या मनुष्य का कोई लिहाज नहीं, उसके देश में व्यापार की कोई सुरक्षा रह ही नहीं सकती।" यह शिवाजी के मंत्रियों के लिए केवल एक धमकी थी, और कोठी का खात्मा आगे १६८२ के अन्त में कर दिया गया।

१६७७ के आरम्भ में ही अंग्रेजों का साहस टूट गया। २६ जनवरी को सूरत से बम्बई को लिखा गया, "यदि शिवाजी अब भी आपको परेशान करते हैं, तो हम चाहेंगे कि आप दाभोल, चौल, या कल्याण, या उसके अन्य किसी पत्तन में स्थित उसके कुछ पोतों पर अधिकार कर लें परन्तु उनके आदमियों को स्वतन्त्र छोड़ दें और यह भी सावधानी रखें कि उनका कोई माल न जब्त किया जाय और न ही लूटा जाय, क्योंकि केवल यही एक तरीका है जिससे कि उनकी अक्ल ठिकाने आ सकती है।" परन्तु इस धमकी पर अमल नहीं किया गया। बम्बई के लोग पूर्ण रूप से मुख्य भूमि पर शिवाजी के राज्य-क्षेत्र पर अपने लिए निम्न वस्तुओं के लिए निर्भर थे—ईंधन, लकड़ी, ताजा भोजन सामग्री, और ढोर; और वह कोंकण और कनारा तटीय पट्टी पर उनके निर्यात के सामान को एकदम सफलतापूर्वक रोक सकते थे जो अब पूर्ण रूप से उनके अधिकार में थे। वह, अपनी ओर से, नमक और यूरोपीय बने माल पर बम्बई पर निर्भर थे।[६]

जनवरी १६७८ में, जैसा सूरत के पत्र से मालूम होता है, "पहले ऋण के लिए उनको (अर्थात राजापुर के व्यापारियों को) शिवाजी से सुपाड़ियाँ लेने को मजबूर होना पड़ता है जिनका मूल्य शिवाजी के मंत्री निर्धारित करते हैं।" परन्तु इस प्रकार भी हर्जाना न चुक पाया। अप्रैल, मई व जून में सूरत

---

[६] कोठी अभि० सूरत, ८६। राजाराम के विवाह के अवसर पर (१५ मार्च, १६८०) उन्होंने बम्बई से २००० मोमबत्तियाँ मँगायीं। (पेशवा का दफ्तर)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

काउंसिल ने शिवाजी के मंत्रियों द्वारा किये गये उचित परन्तु धोखाधड़ी के वादों पर और राजा से की गयी माँगों की टालमटूल पर अपना रोप प्रदर्शित किया, और निर्णय किया कि यदि परिस्थिति अच्छी न हो पाए तो कारवार, हुबली और राजापुर की कोठियाँ बन्द कर दी जायँ। १८ मार्च, १६८० को बम्बई से सूरत को लिखा गया, "हमको बड़ी प्रसन्नता है कि शिवाजी के साथ वार्ता आपकी पसन्द के अनुसार हो रही है। उन्होंने सब बातों को मान लिया है।...हमको सुपाड़ियों की सौ खाँडी भेज दी गयी हैं जो हमारे दो जहाजों के नष्ट किये जाने के बदले में भेजी गयी हैं।" आगामी १४ अप्रैल को राजा का स्वर्गवास हो गया। (कोठी० अभि० सूरत, ८६ और १०८)

शिवाजी जब तक जीवित रहे उन्होंने पूरा आश्वस्त हर्जाना कभी नहीं चुकाया, और राजापुर की कोठी शम्भूजी के शासन-काल में दिसम्बर १६८२, या जनवरी १६८३ में उठा दी गयी। (कोठी अभि० सूरत, ६१)

१६८४ में जब बम्बई के बलाद्ग्राही गवर्नर ने शम्भूजी से सुलह कर ली थी तो उन्होंने राजापुर में उनके सूबेदार को लिखा, "अंग्रेजों की ओर से राजदूत कप्तान हैनरी गेरी और टामस विल्किन्स तथा दुभाषिया राम शेनवी मुझसे मिले और उन्होंने मेरे साथ सुलह की बहुत इच्छा प्रकट की, और मुझसे कहा कि मेरे पिता शिवाजी ने उनसे माल लेने के बदले १०,००० पेगोडा देने का वचन किया था जिसमें से ३३६७ पेगोडा उनको मिल चुके थे और शेष ६६३३ उन्होंने मुझे देने की याचना की।.....मैंने उनको वचन दिया है कि १०,००० पेगोडा में से जो शेष देना है वह मैं अवश्य दूँगा।" (इस धनराशि को जिन्स के रूप में क्रमशः चुकाना था—राजापुर की कोठी पुनः बनाकर और नारियल, सुपाड़ी आदि के रूप में।) (कोठी अभि० सूरत, १०६)

६. **शिवाजी और पुर्तगाली**—पुर्तगाली भारत का सम्बन्ध शिवाजी के कार्यों से बहुत ही कम रहा, और उसका प्रभाव उनकी नीति अथवा इतिहास पर बहुत थोड़ा ही पड़ा। उपनिवेशीय साम्राज्य को कायम रखने के लिए पुर्तगाल की आबादी की न्यूनता, स्पेन वालों के प्रभुत्व-काल (१५८०-१६४०) के ६० वर्षों में राष्ट्रीय शक्ति का दमन, हॉलैण्ड के साथ विनाशकारी समुद्री युद्ध (१६५०-१६६३), और एशिया में उनके अधिवासियों का तेजी से नैतिक पतन—इन सब बातों ने शिवाजी के समय भारत में पुर्तगालियों को पतोन्मुख शक्ति बना दिया, जो केवल अपनी बचीखुची शक्ति को ही कायम रखना चाहते थे, और दोस्ताना अपील, धैर्यपूर्ण सहनशीलता तथा राजनयिक कपट के द्वारा

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

डरपोक बनकर प्रत्येक राज्य के साथ सशस्त्र मुठभेड़ से बचना चाहते थे। उनका गोआ का राज्य-क्षेत्र इस समय (अर्थात् सन् १६५९ के लगभग) से तब बहुत छोटा था,[७] क्योंकि उसमें उस समय फौंदा, बिचोलिम, परनम अथवा सेंक्विलिम नहीं सम्मिलित थे। परन्तु उनके कोंकण के भाग, जिनको उत्तर का सूबा कहते हैं, तट पर चौल से दमन तक और कुछ दूर भीतर तक फैले हुए थे। इनमें से बम्बई टापू १६६२ में अंग्रेजों को दे दिया गया था। इनसे लगे हुए पूर्व में मुगल और आदिलशाह के राज्य थे और शिवाजी द्वारा इनकी विजय ने तट पर पुर्तगाली राज्य-क्षेत्र से टकराने का अवसर दिया। परन्तु यद्यपि कभी-कभी दोनों के मध्य लूटमार और मुठभेड़ हो जाया करती थीं, किन्तु इनके कारण शम्भूजी के समय से पूर्व कभी नियमित युद्ध नहीं हुआ।

शिवाजी और पुर्तगालियों का समय संघर्ष निम्न चार बातों से उत्पन्न हुआ—

(क) पुर्तगालियों का दावा था कि भारतीय समुद्रों पर उनका आधिपत्य है और वे आग्रह करते थे कि वहाँ चलने वाले समस्त एशियाई जहाजों को शुल्क देकर उनसे पार-पत्र (पासपोर्ट) लेना आवश्यक था। परन्तु यद्यपि उन्होंने जंजीरा के सिद्दी को शिवाजी के प्रति उसके प्रारम्भिक युद्धों में सहायता दी थी किन्तु स्वयं मराठा सरदार के साथ उनका कोई समुद्री युद्ध नहीं हुआ था।

(ख) शिवाजी ने जब दक्षिण रत्नगिरि जिले के देसाइयों की भूमि ले ली थी तो वे गोआ में जा बसे थे और उसे आधार बनाकर उनके विरुद्ध कार्रवाई करते रहते थे, और इस प्रकार उन्होंने पुर्तगाली क्षेत्र की तटस्थता का उल्लंघन किया था।

(ग) शिवाजी के अधिकारी उच्च भागों से गोआ में होने वाले व्यापार (विशेषकर चावल, पशु आदि) में बाधा डालते थे।

(घ) शिवाजी ने दमन के गाँवों से चौथ माँगी जो कभी कोली राजाओं की प्रजा थे।

परन्तु पुर्तगाली वाइसराय बहुत बुद्धिमानीपूर्वक उनसे युद्ध करने से बचते रहे, और उनके तथा मुगलों व बीजापुर के बीच युद्ध के समय वह बिलकुल तटस्थ रहे यद्यपि दोनों ही पक्ष उनकी सहायता के इच्छुक रहे।

जब, १६५९ में, शिवाजी के कुछ प्रथम पोत, जो भिवाँदी, कल्याण और

---

[७] सन् १९६० में गोआ का पुर्तगाली क्षेत्र भारत में मिला लिया गया। —अनु०

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पेन में निर्मित किये थे, समुद्र पर चलने लगे, तो पुर्तगाली वाइसराय ने बेसीन में अपने डिप्टी को उनकी यात्रा रोकने के लिए लिखा। परन्तु जैसे-जैसे शिवाजी की शक्ति बढ़ती गयी गोआ-सरकार ने उनके प्रति अधिक मैत्रीपूर्ण भावना अंगीकार कर ली। जून १६५९ के अन्त में शिवाजी ने गोआ के वाइसराय को लिखा कि उनके और दाँदा के सिद्दी तथा उस पत्तन के अन्य अबीसीनियाइयों के बीच भेदभाव और झगड़े बढ़ जाने के कारण उन्होंने सिद्दी के विरुद्ध घुड़सवार और पैदल सेना भेजी थी, और चौल तथा बेसीन के पुर्तगाली कप्तानों को लिखा कि उनके प्रति मैत्रीभाव दिखाने के लिए वे उनकी सेना को भोजन-सामग्री द्वारा सहायता करें तथा अबीसीनियाइयों को खाद्य-वस्तुएँ देना बन्द कर दें। इस पर वाइसराय ने अपनी काउंसिल के परामर्श से यह निश्चय किया कि दाँदा के अबीसीनियाइयों को 'खुले रूप से' न कोई सहायता दें और न उनके साथ कोई रियायत करें, परन्तु 'गुप्त रूप से' जो कुछ उनके लिए कर सकें अवश्य करें, केवल यह सावधानी रखें कि अन्य लोग इस बात को बिलकुल न जान पायें जिससे वे शिवाजी को इसकी खबर न दे दें।

लाखम सावंत और गोआ के ठीक उत्तर के प्रदेश के अन्य देसाइयों ने १६६४ के अन्त में शिवाजी की प्रगति का विरोध किया, परन्तु वे बुरी तरह हरा दिये गये, उनकी भूमि छीन ली गयीं और उन्होंने मजबूर होकर बारदस के पुर्तगाल जिले में शरण ले ली, जहाँ से वे अपने पहले अधिकृत भागों को पुनः प्राप्त करने के हेतु अभियानों की तैयारी करते रहे। (अध्याय १०, परि० ४)। वाइसराय ने उनसे बारबार शान्त रहने के लिए चेतावनी दी, परन्तु इसका उन पर कोई असर नहीं हुआ और अन्त में (लगभग १९ नवम्बर, १६६७ को) इन देसाइयों को दंड देने के लिए शिवाजी की सेना बारदस में अकस्मात घुस पड़ी। तीन दिन तक उन्होंने विभिन्न गाँवों को लूटा और वे बहुत बड़ी संख्या में पुर्तगाली प्रजा और पशुओं को उठा ले गये।[८] तीन पादरी और

---

८ १७२२ में गोआ के कुछ फ्रांसिसकन साधुओं ने अपनी रिपोर्ट में इस प्रकार लिखा, "१६६७ में हिन्दू जाति के शिवाजी नामक एक छोटे-से राजा ने बहुत सेना लेकर बारदस (राज्य) में प्रवेश किया, क्योंकि हमने केशव नायक नाम के उनके एक (विद्रोही) देसाई को बारदस के कोलवाल जिले में शरण दे दी थी। कोलवाल के उस देसाई को तलाश करने में वे सफल हुए और मार्ग में उन्होंने अनेक विरोध करने वाले ईसाइयों को तलवार के घाट उतार दिया,···यह कार्य उन्होंने पुर्तगालियों से बदला लेने के लिए किया क्योंकि उन्होंने उस देसाई को शरण दे दी थी।" (डा सिल्वा रिगो, 'डौक्यूमैंटेकाओ' *Documentacao*, खण्ड ५)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कुछ भारतीय ईसाइयों के उन्होंने सिर उड़ा दिये जिसका कारण यह मालूम होता है कि शिवाजी की कुछ प्रजा, विशेषकर ब्राह्मणों, को वह लोग भगा ले गये थे और उनको ईसाई बना लिया था। वाइसराय ने शिवाजी से इस युद्ध-कार्य की शिकायत की जबकि वह मैत्री बनाये हुए था। उन्होंने (लगभग २४ नवम्बर) मराठा राजा के पास रामोजी शेनवी कोठारी को अपना दूत बनाकर भेजा, जिन्होंने मैत्रीपूर्ण शब्दों में उत्तर दिया। इसके पश्चात शिवाजी का प्रतिनिधि साखो पन्त गोआ में आया और शान्ति की सन्धि व्यवस्थित की गयी (जिस पर वाइसराय ने ५ दिसम्बर को हस्ताक्षर किये और शिवाजी ने ११ तारीख को अपनी मुहर लगायी)। सन्धि पर हस्ताक्षर कराने के लिए तथा छोड़े गये कैदियों को लेने के लिए शिवाजी के दरबार में वाइसराय ने पादरी एस० जे० गोनसलो मार्टिन्स को भेजा। इस सन्धि-पत्र में यह निर्धारित किया गया कि घाटों के ऊपर शिवाजी के क्षेत्र और पुर्तगाली भारत के मध्य होने वाले व्यापार में उसके अधिकारी कोई बाधा न डालेंगे। (पिसुरलेंकर, 'ऐंटीगुलहास' आई. १. १. १२०-१३१ 'एजेंटिस ड डिप्लोमेशिया')

परन्तु देसाई लोग गोआ की तटस्थता को निरन्तर भंग करते रहे और वे बराबर शिवाजी के आदमियों पर आक्रमण करते रहे, और इसलिए जून १६६८ के आरम्भ में वाइसराय ने उनको पुर्तगाली राज्य से बाहर निकाल दिया।

शिवाजी के साथ मैत्री और शान्ति की सन्धि को १० फरवरी १६७० को पुनः पक्का किया गया और यह तय किया गया कि उनके हाल के झगड़े में एक पक्ष के जो जहाज दूसरे पक्ष ने ले लिये हैं वे लौटा दिये जायँ। इसके अतिरिक्त,

(क) वाइसराय ने दोनों में समानता लाने के लिए आज्ञा दे दी कि मुगल पोतों के समान शिवाजी के जहाजों को भी नियमित शुल्क देकर पुर्तगाली पास दे दिये जायँ, और इस प्रकार इस सम्बन्ध में मनमुटाव का निरन्तर स्रोत सदा के लिए हटा दिया गया। छोटे मराठा जलपोतों (विशेषकर खाद्य पदार्थों के जलयानों) को पास लेने की आवश्यकता न रही।

(ख) वाइसराय ने, जिसने पहले १६६९ में शिवाजी के जंजीरा के महान आक्रमण के दौरान में सिद्दियों को सहायता दी थी, अब दोनों शक्तियों के मध्य में दोनों के मित्र के रूप में मध्यस्थ बनने, तथा उनके झगड़े मिटाने के लिए उन्होंने अपनी सेवाएँ अर्पित कीं। शिवाजी का दूत वित्तल पंडित अपने स्वामी के लिए युद्ध के लिए पुर्तगाली सहायता प्राप्त करने के लिए आया।

(ग) शिवाजी ने पुनः वचन दिया कि गोआ और पश्चिमी घाट के ऊपर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के प्रदेश के बीच में होने वाले व्यापार में उनके अधिकारी किसी प्रकार बाधा न डालेंगे और न अनुचित कर ही वसूल करेंगे।

(घ) शिवाजी ने वादा किया कि पुर्तगाली सीमा पर, जहाँ यदि दोनों राज्यों के बीच में कोई नदी नहीं है तो वहाँ उनके राज्य में कोई किला अथवा पत्थर का मकान नहीं बनाया जायगा।

रामनगर के राजा (उपद्रवी कोली कौम के) बहुत पूर्व काल से ही अपने पड़ोस के दमन जिले से वार्षिक रुपया ऐंठा करते थे। इस रुपये को 'चौथ' अर्थात मालगुजारी का एक-चौथाई भाग कहा करते थे, परन्तु वास्तव में यह अनुपात विभिन्न गाँवों में १० प्रतिशत से २५ प्रतिशत होता था, और राजा को 'चौथिया राजा' कहते थे (स्टोरिया डो मोगोर, २.१३२)। शिवाजी के रामनगर पर कब्जा करने (१६७६) के पश्चात उन्होंने इस राजा के वैध अधिकारी के रूप में यह कर पुर्तगालियों से माँगा। गोआ के वाइसराय ने अनेक राजनयिक युक्तियों द्वारा इसका सीधा उत्तर देने से बचने की कोशिश की, जैसे अपने स्थानीय अधिकारियों से रिपोर्टें माँगना, पुराने कर के लेखों का परीक्षण करना, प्रत्येक गाँव के विषय में ब्यौरा निश्चित करना, इत्यादि, परन्तु साथ-साथ ही वह शिवाजी के प्रति अखण्ड मित्रता का दावा करते रहे और उनको हर प्रकार से सन्तुष्ट करने की बात करते रहे। इस प्रकार समझौते की वार्ता दो वर्ष से अधिक समय तक चलती रही। शिवाजी का दूत पीताम्बर शेनवी जो दिसम्बर, १६७७ में अपने कार्य के हेतु पहुँचा था, अगले अगस्त में मर गया, और उसका उत्तराधिकार उसके नाती जीवाजी को मिला और फिर गणेश सेठी को। अन्त में शिवाजी का सन्तोष खत्म हो गया और उन्होंने युद्ध की धमकी दी, परन्तु उनकी असमय मृत्यु से पुर्तगालियों को थोड़ा विराम मिल गया।[६]

हम यहाँ कहना चाहेंगे कि शैवेलियर पिसुरलेंकर का यह निश्चित मत है कि शिवाजी के समय में गोआ राज्य में किसी भी हिन्दू को बलात ईसाई

---

६ मैं पुर्तगालियों और मुगलों तथा शिवाजी के मध्य विफल वार्ता के विषय में कुछ नहीं कह रहा हूँ क्योंकि उससे कोई विशेष परिणाम नहीं निकला। उसका विवरण पी. एस. पिसुरलेंकर के सावधान और पूर्ण प्रलेखों सहित निम्न पुस्तकों में दिया गया है—*Portugueses e Maratas i. Shivaji* और *Antiguathas I. I.* ११६-१३१; ६२-७१ (चौथ) और *A. B. de Braganca Pereira* ने *O Oriente Portugues* संख्या २४-२५ (१९३९), और इन्हीं के आधार पर मैंने यह अध्याय लिखा है। कई सन्धियाँ और पत्र बीकर ४ में दी गयी हैं। *Pissurlencar* कृत *Agentes da Diplomacia* भी देखिए (विशेषकर पूरी टिप्पणियाँ)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नहीं बनाया गया। हिन्दुओं द्वारा पुर्तगालियों पर अत्याचार (अधिकतर १६वीं शताब्दी में) ड कुन्हा कृत 'बेसीन' तथा गोज में वर्णित हैं। गिरजों के बनाने के लिए हिन्दू मन्दिर और मस्जिदें ढायी गयीं। परन्तु काफिरों का बलात धर्म-परिवर्तन नहीं किया गया; अकाल के वर्षों में कैथोलिक पादरी, हिन्दू बच्चों को उनके अभिभावकों से मोल ले लेते थे और उनको ईसाई बना लेते थे। विशेषकर हिन्दू और मुसलमान अनाथ बालक राज्य के पाल्य समझे जाते थे, उनको भोजन मिलता था और उनका लालन-पालन ईसाई मत के अनुसार होता था। जब शिवाजी किसी हिन्दू लड़के (विशेषकर ब्राह्मण) को उसके पूर्व अभिभावक की प्रार्थना पर माँगते थे जो ईसाई बना लिया गया था, तो पुर्तगाली गवर्नर यह कहकर मना कर देता था कि यह हमारे राज्य के नियमों के विरुद्ध है कि किसी ईसाई को इसलिए दूसरे काफिर राज्य को दे दिया जाय कि वह उसे फिर काफिर बना ले। यह मनमुटाव का वास्तविक कारण था। (बम्बई गजेटियर, १४, थाना, ३२, ३४६; आई. २. ५६)

पुर्तगाली पुस्तक *Vergel de Plantas* में, जो १६८० से पहले लिखी गयी थी, वर्णित है कि "सन् १६६७ में वाइसराय कोंडे डि एस० विसेंटे की कृपा से बारदस में गणना करने से मालूम हुआ कि सेंट थामे के सूबे के पादरियों द्वारा धर्म-परिवर्तित ४६,४५० ईसाई मिले और ७००० हिन्दू देखे गये जिनमें से ४,००० को बप्तिस्मा मिल चुका था और शेष ३००० को ईसाई बनाने में वे बड़ा परिश्रम कर रहे थे और उनको सफलता की आशा भी थी।" (पिसुरलेंकर)। शब्द "वाइसराय की कृपा से" बल का आशय नहीं है, वरन केवल यह मतलब है कि हिन्दुओं को ईसाई पादरियों के अतिरिक्त अन्य किन्हीं लोगों को दास की भाँति न बेच दिया जाय, जो (अर्थात ईसाई पादरी) उनका धर्म-परिवर्तन कर देते थे।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय १५

सरकार, संस्थाएँ और नीति

१. राज्य और अधीन क्षेत्रों का विस्तार।
२. राजस्व और छिपा हुआ खजाना।
३. सेना की शक्ति।
४. आठ मन्त्रियों की काउंसिल।
५. सेना का संगठन।
६. राजस्व की व्यवस्था और प्रशासन।
७. धार्मिक नीति।
८. शिवाजी के शासन का प्रभाव।

१. शिवाजी के राज्य और अधीन क्षेत्रों का विस्तार—शिवाजी की मृत्यु के समय उनका राज्य उत्तर में रामनगर (सूरत एजेंसी में वर्तमान धामपुर राज्य) से लेकर समस्त देश (पुर्तगाली क्षेत्रों को छोड़कर), दक्षिण में बम्बई के कनारा (कन्नड़ ?) में, कारवाड़ या गंगावती नदी तक सम्मिलित था। पूर्वी सीमा में उत्तर की ओर बगलाना था, फिर दक्षिण की ओर पूना और नासिक जिलों के मध्य में होती हुई एक अनियमित बदलती हुई रेखा थी और वह समस्त सतारा तथा कोल्हापुर जिले के अधिक भाग को घेरे हुए थी। मराठा प्रलेखों के अनुसार यह क्षेत्र स्वराज्य या 'निजी राज्य' था और फारसी वर्णन के अनुसार उनका 'मुल्क-ए-कदीम' (पुराना राज्य) था। इन पर उनका अधिकार वैध रूप से और असंदिग्ध रूप से माना जाता था। परन्तु बाद को किन्तु स्थायी रूप से प्राप्त पश्चिमी कर्नाटक अथवा कन्नड़ भाषा-भाषी क्षेत्र था जो मद्रास प्रेसीडेंसी के बिलारी जिले से सामने बेलगाँव से तुंगभद्रा नदी तक फैला हुआ था।

यह उनके राज्य का समेकित भाग था, और इसमें तीन सूबे थे और उनमें से प्रत्येक एक वाइसराय के अधीनस्थ था। उत्तरी भाग का गवर्नर मोरो त्रिम्बक पिंगले था, जिसमें डाँग और बगलाना, सूरत के दक्षिण में कोली देश, बम्बई के उत्तर में कोंकण, दकन का पठार अथवा दक्षिण की ओर पूना तक 'देश' थे। दक्षिण के भाग में बम्बई के दक्षिण का कोंकण और उत्तरी कनारा तट थे—इसका वाइसराय अन्नाजी दत्तो था। दक्षिण-पूर्वी भाग पर दत्ताजी पन्त शासन करता था और इसमें देश के सतारा और कोल्हापुर जिले तथा तुंगभद्रा नदी के पश्चिम में

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कोपल तक बेलगाँव व धारवाड़ के जिले थे। (सभासद, ७७; पार्सनिस पांडुलिपि, वी० के० राजवाड़े का फारसी पांडुलिपि प्रलेख; जर्नल बम्बई शाखा ब्रिटिश रायल एशियाटिक सोसाइटी में, मावजी का अंग्रेजी संक्षेप।)

शिवाजी का सबसे बाद का संयोजन निम्न क्षेत्र था—तुंगभद्रा के मुकाबले कोपल से वैलोर और जिंजी तक अर्थात वर्तमान मैसूर राज्य के उत्तरी, मध्य व पूर्वी भाग व मद्रास के बिलारी, चित्तूर और आर्काट जिले। अपनी मृत्यु के पहले उन पर उनके केवल दो वर्ष के अधिकार का समय इतना कम था कि वह यहाँ इन भागों पर अपने अधिकार को दृढ़ न कर सके, और यह सूबा वास्तव में एक अधिकरण-सेना के अधिकार में था और १६८० तक यह अव्यवस्थित रहा; केवल वे किले जिनमें उनकी सेनाएँ थीं और वह निकटवर्ती भूमि जिस पर उन किलों का प्रशासन सम्भव था, मराठा शासन को स्वीकार करते थे।

इन स्थानों के अतिरिक्त एक क्षेत्र था जहाँ उनकी मृत्यु के समय स्वामित्व के लिए संघर्ष अभी अनिश्चित था। यह क्षेत्र कनारा उच्च भूमि थी जिसमें धारवाड़ जिला और सूँडा तथा बेदनूर की जागीरें भी शामिल थीं। शिवाजी ने स्थानीय नवाब को कई बार हराया था जो बीजापुर का सामन्त था; परन्तु सूबे की राजधानी बंकापुर को वह नहीं जीत पाये थे जबकि उनका स्वर्गवास हो गया। इसी प्रकार बेदनूर था जो उनको केवल कर देता था।

राज्य के इन स्थिर तथा अर्द्ध-स्थिर भागों के अलावा भूमि की एक विस्तृत और बहुत डाँवाडोल पेटी थी जो उनकी शक्ति को मानती थी, परन्तु उनके स्वामित्व को नहीं मानती थी। इसमें मुगल साम्राज्य के निकटवर्ती भाग थे (मराठी भाषा में 'मुगलई') जो उनके घुड़सवारों के लिए आनन्दकारी लूट के क्षेत्र का काम देते थे। इनसे वह छुड़ाई (मराठी में 'खानदानी' अर्थात विस्तार-धन) अपनी सेना के द्वारा यथासम्भव वार्षिक वसूल करते थे। जो रुपया वसूल किया जाता था उसे जनसाधारण 'चौथ' कहते थे, क्योंकि वह प्रत्येक स्थान पर धरती के प्रमाणित कर-निर्धारण के राजस्व का एक-चौथाई होता था।[1] परन्तु चूँकि यह कागजी निर्धारण सदा वास्तविक वसूली से अधिक होता था, इसलिए चौथ की असली वसूली सदा उसकी एक-चौथाई से अधिक होती थी जो किसान अपने वैधानिक राजा को देते थे।

---

[1] 'चौथ' के मूल स्रोत के सर्वोत्तम वर्णन के लिए देखिए—पिसुरलेंकर का 'ऐंटीगुलहास', १. १. ६२-७१

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चौथ देने से वह स्थान केवल मराठा सेनानियों तथा उनके असैनिक साथियों के आगमन से बच जाता था, परन्तु इससे शिवाजी पर यह उत्तरदायित्व न था कि वह उस जिले की रक्षा विदेशी आक्रमण अथवा आन्तरिक अव्यवस्था से करें। मराठे केवल अपने लाभ को देखते थे, और वहाँ से चले जाने के बाद प्रजा के हित की ओर कोई ध्यान न देते थे। चौथ केवल एक लुटेरे को शान्त करने का साधन था, न कि समस्त वैरियों से रक्षा के लिए कोई सहायक प्रणाली थी। अतएव चौथ की वसूली के क्षेत्रों को सही अर्थ में प्रभाव-क्षेत्र (spheres of influence) नहीं कह सकते।

शिवाजी के अधीन पुराने और नये राज्य-क्षेत्र में २४० किले थे जिनमें १११ उन्होंने बनाये थे और ७९ मद्रास में स्थित थे। (सभासद, ९९-१०२; 'शिवाजी सूवरनीर', १९२७ में डी० वी० काले ने एक सूची दी है जो सहायक है।)

२. **शिवाजी का राजस्व और खजाना**—शिवाजी के दरबारी सभासद ने उनका राजस्व लगभग एक करोड़ होन बताया है जबकि चौथ से, पूरी वसूली होने पर, ८० लाख होन और प्राप्त हो जाता था। इस प्रकार यदि इन अ कड़ों को सही मान लिया जाय तो शिवाजी की अधिकतम आय सिद्धान्त रूप से सात करोड़ रुपये थी। जो रुपया वास्तव में वसूल होता था, वह इस कागजी तखमीना से बहुत कम था—और सम्भवतः कभी-कभी यह इसका दशमांश ही रह जाता था। (सभा०, पृष्ठ १०४; ९१ क० ब० ७५)

सभासद (९६-९७) और तारीखे-शिवाजी (विशेष रूप से ४२-४४) ने शिवाजी द्वारा छोड़े हुए कोष तथा अन्य मूल्यवान वस्तुओं का विस्तृत ब्यौरा दिया है। परन्तु हम नहीं कह सकते कि इन दो पुस्तकों की पांडुलिपियों में जो हमको उपलब्ध हैं, इन अंकों की ठीक-ठीक नकल की गयी है अथवा नहीं। फिर, सोने और चाँदी के सिक्के इतने विभिन्न मूल्य, देश और काल के थे कि उनसे यह तो अवश्य पता लगता है कि शिवाजी के लूटमार के अभियान बहुत व्यापक तथा पूर्ण थे, परन्तु किसी वर्तमान मुद्रा के रूप में उनका पूरा मूल्यांकन करना नितान्त असम्भव है। जिज्ञासु पाठक मेरी पुस्तक 'शिवाजी का घराना' में अध्याय ११ देखें।

३. **सेना की संख्या**—उनकी सेना का विकास इस प्रकार बताया जाता है—आरम्भ में उनके पास १२०० निजी 'पागा' (घुड़सवार) और २००० 'सिलाहदार' या भाड़े के घुड़सवार थे जो अपने निजी हथियार और घोड़े लाते थे। जावली की विजय के पश्चात उनकी संख्या ७००० पागा, ३०००

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सिलाहदार और १०,००० मावली पैदल सेना हो गयी। बीजापुर की बर्खास्त की गयी सेना के ७०० पठान भी भर्ती कर लिये गये थे। अफजलखाँ के नष्ट होने के बाद उनकी सेना की संख्या ७००० पागा, ८००० सिलाहदार, और १२,००० पैदल हो गयी। उनकी मृत्यु के समय उनकी सेना में ४५,००० पागा (२९ कर्नलों के अधीनस्थ), ६०,००० सिलाहदार (३१ कर्नलों के अधीनस्थ) और एक लाख मावली पैदल (३६ कर्नलों के अधीनस्थ) थे। परन्तु तारीखे-शिवाजी के अनुसार उन्होंने अपने अस्तबलों में ३२,००० घोड़े छोड़े थे; इनके अतिरिक्त ५००० और थे जो बारगीरों को दिये गये थे। (सभा० ५, ८, २३, ९७-९८; ता० शि० विशिष्ट रूप से ४३ बी)

अतएव उनकी मुख्य सेना ३० से ४० हजार के बीच नियमित और स्थायी रूप से भर्ती रिसाला उनकी निजी सेवा में था, और इससे दूनी संख्या पैदल सेना ('हशम') की थी जिनको वह अभियान के समय ही कृषि-कार्य से बुला लेते थे (जैसा कि इंग्लैण्ड में राजा एल्फ्रेड किया करता था)। उनके किलों की रक्षा के लिए पैदल सेना स्थायी रूप से भर्ती थी, यद्यपि उनको उनके निकट ही खेत दे दिये गये थे। सिलहदारों की संख्या, जो भाड़े पर काम करते थे और जिनके घोड़े भी भाड़े पर लिये जाते थे, प्रतिवर्ष बदलती रहती थी—यह संख्या उनकी आवश्यकता, आने वाले अभियान में लूट की आशा, और किसी विशेष समय पर पड़ोस के राज्यों में उनकी सेवाओं की माँग पर निर्भर थी। उनके जीवन के प्रारम्भिक दिनों में, स्थानीय सरदार अपने अनुचरों सहित लूट में शामिल हो जाते थे (जैसे, १६६४ में सूरत की लूट) और उनकी सेना की संख्या को अनियमित सैनिक के रूप में बढ़ा देते थे। यही उनकी मद्रास की लूट में १६७७ में हुआ।

उनके हाथियों की संख्या सभासद ने १२६० बतायी है, परन्तु ता० शि० में यह संख्या १२५ और चितनिस ने ३०० बतायी है, जो अधिक सही मालूम होती है। ऊँट ३००० थे (ता० शि०) अथवा १५०० (चितनिस)। उनकी तोपों की संख्या नहीं बतायी गयी है। चितनिस (एक संदिग्ध साक्षी) के अनुसार २०० तोपें क्षेत्र-कार्य के लिए तैयार रखी जाती थीं और शेष किलों में रहती थीं; प्रत्येक हलकी तोप के साथ कुछ हाथी और पैदल सेना का दस्ता रहता था।

४. **आठ मन्त्रियों की समिति**—उनकी सबसे पहले की प्रशासन समिति में, दादाजी कोणदेव के समय में, केवल चार अधिकारी थे, अर्थात पेशवा, मजमुआदार, दबीर और सबनिस। जब, १६४७ में, शिवाजी बिलकुल स्वतन्त्र

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हो गये तो उन्होंने दो अधिकारी और बढ़ा लिये, सरेनौवत (घोड़ों का स्वामी) और एक अतिरिक्त दबीर। १६५६ में, जावली की विजय के पश्चात (जिससे उनका राज्य-क्षेत्र दूना हो गया), एक सुरनीस और एक वाक़नीस की नियुक्ति द्वारा समिति और बढ़ा दी गयी, और पैदल एवं रिसाले के सेना-पक्षों के लिए दो कमांडर नियुक्त किये गये। आगरे से वापस आने के पश्चात उन्होंने राज्य में संस्कृत की कानूनी पुस्तकों के अनुसार मुकदमों का फैसला करने के लिए एक न्यायाधीश की नियुक्ति की। १६७४ में मन्त्रियों की कुल संख्या आठ हो गयी थी जो उनकी मृत्यु तक रही। (सभा० ३, ५, ७-८, ५५, ८३-८४)

आठ मन्त्रियों की इस समिति को 'अष्ट प्रधान' कहते थे परन्तु इसे हम मन्त्रिमण्डल (cabinet) के रूप में नहीं मान सकते। चौदहवें लूई और फ्रैड्रिक महान के समान शिवाजी स्वयं ही अपने प्रधान मन्त्री थे और प्रशासन की पूरी बागडोर उनके हाथ में ही थी। अष्ट प्रधान केवल उनके सचिवों के रूप में थे—किसी कार्य में उनकी पहल न थी, और उनकी नीति के अनुसार उनको आदेश देने का अधिकार न था; उनका कार्य केवल सलाह देने का था जब वह सलाह को सुनने के लिए तैयार रहते थे, और अन्य समय पर उनके सामान्य आदेशों का पालन करना था और अपने-अपने विभागों में पूरे विवरण का निरीक्षण करना था। यह सम्भवतः ठीक ही है कि शिवाजी धर्म और लेखा विभागों में कभी हस्तक्षेप न करते थे, परन्तु इसका एकमात्र कारण उनकी निम्न जाति और निरक्षरता थी। दरबार में पेशवा की स्थिति अवश्य ही अन्य दूसरे प्रधानों से ऊँची थी, क्योंकि वह राजा के अधिक निकट था और स्वभावतः वह उनका अधिक विश्वासपात्र था; परन्तु वे किसी अर्थ में उनके मातहत न थे। मराठा अष्ट प्रधान समिति में न तो ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल का समैक्य था और न उसकी-सी शक्ति थी।

आठ मन्त्री निम्न थे :

(१) **प्रधान-मन्त्री** (फारसी पद **पेशवा** और संस्कृत पद **मुख्य प्रधान**)। उसके कर्तव्य निम्न थे—सामान्य रूप से राज्य के कल्याण की देखभाल, राजा की अनुपस्थिति में उनका प्रतिनिधित्व करना, और अन्य अधिकारियों में मेल-जोल बनाये रखना जिससे प्रशासन में सामंजस्य रहे। प्रत्येक पत्र और प्रपत्र पर राजा की मुहर के नीचे उसकी मुहर लगती थी।

(२) **लेखा परीक्षक** (फारसी **मजमुआदार** और संस्कृत **अमात्य**)। उसका कार्य सार्वजनिक आय और व्यय के समस्त लेखाओं को जाँचना और राजा को

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

उनके विषय में रिपोर्ट देना था तथा हिसाब व लेखा के सब ब्यौरों पर प्रति-हस्ताक्षर करना था, राज्य के तथा प्रत्येक जिले के।

(३) **अभिलेखक** (फारसी **वाकयानवीस**, संस्कृत **मंत्री**)। उसके कार्य निम्न थे—राजा के कृत्यों और दरबार की घटनाओं का दैनिक अभिलेख तैयार करना और राजा द्वारा निमन्त्रित मनुष्यों, भोजन, साथियों आदि पर निगरानी रखना जिससे राजा के जीवन के विरुद्ध कोई षड्यन्त्र न रचा जा सके।

(४) **अधीक्षक** (फारसी **शुरू-नवीस**, संस्कृत **सचिव**)। उसका कार्य था यह देखना कि समस्त राजा के पत्र उचित शैली में लिखे जाते हैं, उनको पुनः देखना और प्रत्येक प्रपत्र (चार्टर) में 'शुरू शुद' (अर्थात 'यहाँ आरम्भ') लिखना। महाल और परगनों के लेखाओं को जाँचना भी उसका कार्य था।

(५) **विदेशी सचिव** (फारसी **दबीर**, संस्कृत **सुमन्त**)। इसका कार्य विदेशी राज्यों के सम्बन्ध में सलाह देना था, युद्ध और शान्ति के विषय में। उसका यह भी कार्य था कि वह दूसरे देशों के विषय में जानकारी रखे, विदेशी दूतों से मिले या मिलने को मना कर दे, और अन्य देशों में राज्य के गौरव को बनाये रखे।

(६) **प्रधान सेनापति** (फारसी **सर-ए-नौबत**, संस्कृत **सेनापति**)।

(७) **मुख्य धर्माधिकारी** (फारसी **सदर** और **मुहतसिब**, दोनों संयुक्त, मराठी **'पंडित राव'** और **'दानाध्यक्ष'**)। उनके कार्य थे राजा की ओर से विद्वान ब्राह्मणों का सत्कार करना और उन्हें पारितोषिक देना, धर्म-सम्बन्धी समस्याओं और जाति-सम्बन्धी झगड़ों को तय करना, धार्मिक अनुष्ठानों की तिथियाँ नियत करना, अनैतिकता व अधर्म के लिए लोगों को दण्ड देना, जप-तप के लिए आदेश देना, इत्यादि। वह संयुक्त रूप से धर्म-विधि का निर्णायक, दान-वितरक, और जनता के आचार का नियन्त्रक था।

(८) **मुख्य न्यायाधीश** (फारसी **काजी-उल-कुजात**, संस्कृत **न्यायाधीश**)। वह हिन्दू कानून के अनुसार सब दीवानी और फौजदारी के मुकदमों का फैसला करता था, और प्रत्येक न्याय सम्बन्धी फैसलों पर हस्ताक्षर करता था, विशेष-कर धरती पर अधिकार, गाँव के मुखिया की नियुक्ति, इत्यादि।

न्यायाधीश और कभी-कभी अभिलेखक को छोड़कर ये सभी ब्राह्मण जाति के होते थे, और अन्तिम दोनों के सिवाय सभी को सेनाओं की कमान करनी पड़ती थी और आवश्यकता पड़ने पर अभियानों में जाना पड़ता था। प्रत्येक राज-पत्र, शासन-पत्र (चार्टर) और संधियों पर राजा और पेशवा की मुहरें लगायी जाती थीं और उनके बाद के चार मन्त्रियों के प्रति-हस्ताक्षर होते थे, अर्थात

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सेनाध्यक्ष, मुख्य धर्माधिकारी और मुख्य न्यायाधीश के अतिरिक्त अन्य मन्त्रियों के।[२]

राज्य के पत्र-व्यवहार का वास्तविक कार्य कायस्थ करते थे जिनमें दो प्रसिद्ध थे, अर्थात बालाजी आवजी 'चितनिस' और नीलोजी (नीलकंठ येशाजी) 'मुंशी' या फारसी सचिव। सेना की नामावली अंकित की जाती थी और वेतन-पत्र तैयार करने वाले अधिकारी सबनिस कहलाते थे जो मुगल सेना के बख्शी या वेतन-अधिकारी के समकक्ष होते थे, परन्तु इनका पद अधिक नीचा होता था।[३]

५. **सेना की व्यवस्था**—अब हम शिवाजी के असैनिक और सैनिक विनियमों पर दृष्टिपात करेंगे।

प्रत्येक किला या थाना (बाहरी चौकी) के चार्ज में तीन अधिकारी समान पद के रहते थे—**हवलदार, सबनिस** और **सरे-नौबत**—जो संयुक्त रूप से काम करते थे। "कोई किला केवल एक हवलदार के अधीनस्थ नहीं छोड़ा जाता था जिससे कहीं एक मनुष्य गद्दार बनकर उसे वैरी को न सौंप दे। हवलदार और सरे-नौबत मराठा जाति से चुने जाते थे और सबनिस ब्राह्मण होते थे,"—इस प्रकार एक जाति दूसरी जाति पर निरोध का काम करती थी। किले में खाद्य-सामग्री तथा अन्य सामान एक कायस्थ अधिकारी के चार्ज में थे, जिसे 'कारखाना-नवीस' कहते थे, और जो उनकी आमद तथा खर्च का हिसाब रखता था। बड़े किलों में, जहाँ चहारदीवारी बहुत बड़ी थी, दीवारें पाँच या छह भागों में बाँट दी जाती थीं और प्रत्येक एक विशेष **तट-सरे-नौबत** के संरक्षण में रखा जाता था। किले के निकटस्थ भागों की देख-भाल करने वाले परवाड़ी और रामुशी जाति के थे।

किले के **हवलदार** को निम्न अधिकारियों को स्थानान्तरित करने तथा सरकारी पत्रों को लिखने व उन पर अपनी निजी मुहर लगाने का अधिकार था। सरकार के समस्त पत्र उसी के नाम से आते थे। संध्या के समय उसको ही किले के द्वार बन्द करने पड़ते थे और प्रातः खोलने पड़ते थे, उनकी चाभियाँ वह स्वयं अपने पास रखता था और उन्हें अपने तकिये के नीचे रख कर सोता था। उसे निरीक्षण के लिए किले के भीतर और बाहर अनेक

---

२ यह चितनिस का कथन है। परन्तु ऑक्सिनडन के पत्रों के अनुसार अंग्रेजों से सुलहनामे पर सभी मन्त्रियों के हस्ताक्षर हुए थे।

३ सभा० ८४; चितनिस, १६७-१६८; 'सनद और पत्र' १२३-१३०; भौंसल्याँचे कलाचार (१८२३), 'इतिहास संग्रह' में संकलित।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

चक्कर लगाने पड़ते थे। वह पहरेदारों का अकस्मात निरीक्षण करता था, परन्तु 'सरे-नौबत' को गश्त के दलों और रात के पहरेदारों के काम की निगरानी करनी पड़ती थी। प्रत्येक किले में समुचित चौकसी रखने के लिए तथा उसके आकार के अनुसार गोला-बारूद, खाद्य-सामग्री, इमारती सामान और अन्य आवश्यक सामग्री रखने के लिए शिवाजी ने ब्यौरेवार और विस्तृत आदेश दे रखे थे; और इन सब अधिनियमों का कठोरता से पालन किया जाता था।

समस्त सैनिक, बन्दूकची, भाले वाले, तीरन्दाज अथवा तलवारबाजों की भर्ती शिवाजी स्वयं सावधान निजी निरीक्षण के बाद और प्रत्येक नये सैनिक से किसी सेवारत मनुष्य से जमानत लेने पर ही करते थे।

राज्य के रिसाले (पागा) में २५ सैनिक ('बारगीर') की एक टुकड़ी होती थी; २५ आदमियों से अधिक के ऊपर एक **हवलदार** होता था और पाँच हवलदारों पर एक **जुमलादार**[४] और १० जुमला या १२५० आदमियों पर एक **हजारी**। इससे भी ऊपर के पद **पंच-हजारी** और रिसाले का **सरे-नौबत** अथवा सर्वोच्च कमांडर थे। प्रत्येक पच्चीस सेनानी से संलग्न एक पानी वाला और एक अश्व-चिकित्सक था।

सिलाहदार अथवा उन सैनिकों की व्यवस्था जो अपने ही घोड़े और हथियार लाते थे, दूसरे ही प्रकार से थी, परन्तु वे रिसाले के उसी 'सरे-नौबत' के अधीनस्थ कार्य करते थे और उनका पद 'पागा' घुड़सवारों से नीचे समझा जाता था।

पैदल सेना में, किले की सेना अथवा मावल सेना में, प्रत्येक नौ पायकों (सैनिकों) पर एक **नायक** था; ५ नायकों पर एक **हवलदार;** दो या तीन हवलदारों पर एक **जुमलादार** और दस जुमलादारों पर एक **हजारी** होता था।[५] पैदल सेना में पंज-हजारी न थे, वरन केवल 'सात-हजारी' थे जिनके ऊपर पैदल सेना का **सरे-नौबत** था। शिवाजी के गारद ब्रिग्रेड में २००० चुनीदा मावल पैदल थे जो वैभवशाली पोशाक पहनते थे और शस्त्र-सुसज्जित थे, जिस पर राज्य का बहुत व्यय होता था। (सभा० ५६)

पागा जुमलादार का वेतन प्रतिवर्ष ५०० होन था और उसे पालकी में

---

४ चित० ८१ के अनुसार एक बीच का अधिकारी भी था जिसे 'सूबादार' कहते थे और जो ५ जुमलाओं की कमान में था, परन्तु यह 'हजारी' के नीचे था।

५ चितनिस, ८३ में पाँच हवलदारों पर एक जुमलादार तथा पाँच जुमलादारों पर एक हजारी लिखा है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बैठने का अधिकार था। उससे संलग्न १०० या १२५ होन वेतन पर 'मजमुआदार' था। 'हजारी' को १००० होन प्रतिवर्ष दिया जाता था; उसके अधीन एक 'मजमुआदार' था जो मराठा 'कारभारी' या प्रबन्धक था, और कायस्थ जाति का एक 'जामा-नवीस' (अर्थात राजस्व लेखक) था जिसका वेतन ५०० होन था। सैनिक आय और वितरण के लेखा पर चारों के हस्ताक्षर होते थे। ५००० का कमांडर २००० होन वेतन पाता था, और उसके कार्यालय के साथ भी वही तीन असैनिक अधिकारी संलग्न थे। 'कारकुन' (लिपिक), रिपोर्टर, समाचार-वाहक और भेदिये प्रत्येक उच्चतर अधिकारी से 'हजारी' तक के साथ थे, और वे सरे-नौबत के अधीन थे।

पैदल सेना के जमादार को १०० होन प्रतिवर्ष वेतन दिया जाता था और उसके नीचे 'सबनिस' (अथवा नामावली-लेखक) था जिसे ४० होन मिलते थे। हजारी को ५०० होन तथा उसके सबनिस को १०० या १२५ होन दिये जाते थे।

यह शिवाजी की निश्चित नीति[६] थी कि वह प्रतिवर्ष विदेशी राज्यों से

---

[६] एक समाकालीन अंग्रेज अधिकारी द्वारा वर्णित १८१०-१६ में जो तरीका पिंडारियों ने ग्रहण किया वही विधि शिवाजी के समय में मराठा सेनाओं द्वारा मानी जा सकती है, यद्यपि यह पेशवाओं की अधिक विकसित सेनाओं के विषय में नहीं स्वीकार की जा सकती—"वर्षा ऋतु के अन्त तक और नदियों में पानी के उतार के समय तक उनके घोड़े बड़ी सावधानी से प्रशिक्षित किये जाते थे जिससे वे लम्बी मुहिम और कठोर कार्य के लिए तैयार रहें। दशहरे तक नदियाँ प्रायः पार करने के योग्य हो जाती थीं। तब घोड़ों को नालें लगायी जाती थीं।·····और जो लूट के लिए जाना चाहते चल पड़ते थे।·····सब सुसज्जित थे परन्तु सभी भली भाँति अथवा एक ही प्रकार नहीं,·····उनका प्रिय हथियार प्रायः बाँस का भाला होता था, १२ से १८ फुट लम्बा।·····इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि इस प्रकार का दल और जो बिना शिविर के सामान के आगे बढ़ता था, वह उसी मार्ग पर उनका पीछा करने वाली अति सक्रिय नियमित सेना को चुनौती देता हुआ समस्त भारत को पार कर जाता था।···चूँकि उनको एक ही स्थान पर कुछ घंटों से अधिक ठहरना असम्भव था, अतएव किन्हीं नगरों अथवा गाँवों को लूटने में, जहाँ वे जबरदस्ती घुस सकते थे, उन्हें बहुत शीघ्रता करनी पड़ती थी; प्रत्येक मनुष्य को जो देखने में धनवान मालूम होना था, उसे तुरन्त ही अति क्रूरतापूर्वक कष्ट दिया जाता था।···उनका यह सामान्य तरीका था कि जो कुछ वे नहीं ले जा सकते थे उसे जला देते थे अथवा नष्ट कर देते थे।" (पिन्सैप कृत मारक्विज आव हेस्टिंग्ज का इतिहास, १.३८-३९)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रसद प्राप्त करें। वर्षा ऋतु (जून—सितम्बर) में सेना को अपने ही राज्य में छावनियों में रहना पड़ता था। घोड़े के लिए अन्न, चारा और दवाएँ भंडार में रखी जाती थीं, और सैनिकों की झोंपड़ियों पर फूँस के छप्पर थे। दशहरा को (अक्तूबर के आरम्भ में) सेना शिविर से उस क्षेत्र के लिए कूच कर देती थी जिसे राजा चुनते थे। कूच से पहले उस सब सामान की सूची बनायी जाती थी जिसे सेना का प्रत्येक आदमी उच्च पद वाला अथवा नीचे पद का अपने साथ ले जाता था। सेनाओं को अपरिचित क्षेत्रों में आठ महीने तक रहना पड़ता था और वहाँ से कर वसूल करने पड़ते थे। सेना के साथ कोई स्त्री, दासी या नर्तकी ले जाने की बिलकुल मनाही थी। यदि कोई सेनानी किसी स्त्री को अपने साथ ले जाता था तो उसे सूली पर लटका दिया जाता था। केवल पुरुषों को ही कैद किया जाता था, किसी स्त्री या बच्चे को नहीं। गायें नहीं पकड़ी जाती थीं, परन्तु बैलों का प्रयोग परिवहन के लिए किया जा सकता था। ब्राह्मणों को पीड़ा नहीं दी जाती थी, और न उनको लुढ़ाई के रूप में पकड़ सकते थे। अभियान के दौरान कोई सैनिक दुराचरण नहीं कर सकता था।

ऐसे अभियानों में आठ महीने व्यतीत हो जाते थे। वैशाख (अप्रैल) के महीने में अपनी सीमा पर लौटने पर पूरी सेना की तलाशी ली जाती थी, जो सामान मिलता था उसका मिलान पूरी सूची से किया जाता था और कम हो जाने वाले सामान का मूल्य उनके वेतन से काट लिया जाता था। यदि कोई आदमी लूट के माल को छिपाता था तो सेनाध्यक्ष द्वारा मालूम पड़ने पर उसे दंड दिया जाता था।

वापस लौटने पर सेनाध्यक्ष लूट का माल राजा को दे देते थे, जैसे सोना, चाँदी, रत्न, मूल्यवान कपड़ा आदि, वे अपनां-अपना हिसाब बताते थे, और अपना वेतन आदि कोष से ले लेते थे। पिछले अभियान में अपने-अपने आचरण के अनुसार अधिकारियों और अन्य आदमियों को तरक्की मिलती थी अथवा सजा। तब वे फिर चार महीने तक शिविर में रहते थे। (सभा० २५-२८)

६. राजस्व-व्यवस्था और प्रशासन—प्रत्येक सूबे में धरती नापी जाती थी और क्षेत्रफल 'चावरों' में निकाला जाता था। मापन-दण्ड लम्बाई में ५ क्यूबिट और ५ मुट्ठी था। एक क्यूबिट या हाथ में १४ 'तंसू' होते थे और इस प्रकार मापन-दण्ड ८० तंसू लम्बा होता था। बीस 'काठी' (दण्ड) वर्ग का एक बीघा होता था और १२० बीघे का एक 'चावर' होता था। इस प्रकार प्रत्येक गाँव का क्षेत्रफल ब्यौरेवार नापा जाता था। प्रत्येक बीघा की प्रत्याशित उपज का

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

तखमीना लगाया जाता था, जिसका तीन भाग किसान को छोड़ दिया जाता था और दो भाग राज्य ले लेता था।[७]

"नये किसान जो बसने के लिए आ जाते थे, उनको बीज और ढोरों के लिए रुपया दिया जाता था, और यह रुपया उनसे दो या चार वार्षिक किश्तों में वसूल किया जाता था। राजस्व जिन्स के रूप में फसल के समय वसूल किया जाता था।"

शिवाजी जमींदारों के मध्यवर्ग को नहीं रहने देने चाहते थे और वे भूमि को जोतने वालों से सीधे सम्पर्क में आना चाहते थे। "किसान लोग जमींदार, देशमुख या देसाइयों के आधिपत्य में न थे, और उन्हें राजनीतिक वरिष्ठ होने का अधिकार न था और न ही किसानों पर अत्याचार करने का।"

"जीते हुए निजामशाही, आदिलशाही और मुगल क्षेत्रों में, किसान पहले 'पटेल', 'कुलकर्णी' और 'देशमुखों' के अधीनस्थ थे, जो कर एकत्र करते थे और राज्य-कोष में मनमाना जमा करते थे, कभी-कभी दो हजार होन वसूली वाले गाँव की ओर से २०० या ३०० होन ही देते थे। ये 'मिरासदार' (वंशानुगत जमींदार) इस प्रकार धनी होते जाते थे, वे किले बनवा लेते थे, सेना भर्ती कर लेते थे और शक्तिशाली हो जाते थे। वे सरकार के राजस्व-अधिकारी की पेशी में कभी नहीं पहुँचते थे और उससे लड़ते थे यदि वह कहता कि अमुक गाँव से राज्य के लिए अधिक रुपया वसूल होना चाहिए। यह वर्ग उच्छृंखल हो गया था और इसने देश पर आतंक जमा रखा था। परन्तु शिवाजी ने उनके गढ़ों को नष्ट कर दिया, शक्तिशाली स्थानों में अपनी निजी सेना रख दी, और 'मिरासदारों' से समस्त शक्ति छीन ली। पहले वे किसानों से मनमाना वसूल करते थे। अब यह बन्द कर दिया गया। गाँव की मालगुजारी निश्चित करने पर उनकी वसूलयाबी निश्चित

---

७ कप्तान राबर्टसन ने १८२० और १८२५ में शिवाजी की राजस्व-व्यवस्था का भिन्न और अधिक पेचीदा वर्णन दिया है। (बम्बई गजेटियर, १८. भाग २. पृष्ठ ३२१-३२२)। यह बहुत सम्भावना है कि प्रणाली इतनी सीधी-सादी और एक सम नहीं थी जैसा कि सभासद ने बताया है; परन्तु हम नहीं कह सकते कि कप्तान के पास कौन-कौनसे प्रमाण हैं और हमारे पास उनके वर्णन को जाँचने का कोई साधन नहीं है—दो शताब्दी पुरानी व्यवस्था के सम्बन्ध में और वह भी ऐसे वंश की जो समाप्त हो गया है और जिसकी परम्परा अब नष्ट हो चुकी है। 'तंसू' दूसरी और तीसरी उँगलियों को मिलाकर उनकी चौड़ाई का नाप था (अथवा मुगल भारत में ८ जौ की चौड़ाई)।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कर दी गयी और उनको गढ़ बनाने के लिए मना कर दिया गया।" (सभा० २९-३१)

इसी प्रकार सैनिक जागीरदारों को उनके काश्तकारों पर कोई अधिकार न थे। "सरे-नौबत, मजमुआदार, कारकुनों और राजा की निजी सेवा के अधिकारियों को उनको वेतन के रूप में राजस्व में से अंश ('तनखा बरात') दिया जाता था। जिस भूमि की काश्त वे स्वयं करते थे उस पर काश्तकारों के खेतों के समान उनसे भी कर वसूल किया जाता था, और मालगुजारी का रुपया उनके वेतन से काट लिया जाता था। शेष धन के लिए उनको राजधानी के कोष या जिलों के कोष से रुपया लेने की आज्ञा मिल जाती थी। केवल कारकुनों को छोड़ कर भूमि और किसी के अधिकार-क्षेत्र में न थी। सेना, नागरिक सैन्य या किलों में नौकरी करने वालों को किसी पूरे गाँव पर स्वाम्याधिकार ('मोकासा') नहीं प्राप्त होता था। उनको वेतन मालगुजारी से हस्तांतरण द्वारा अथवा राज-कोष से नकदी के रूप में मिलता था। केवल कारकुनों का ही भूमि पर अधिकार-क्षेत्र था। कारकुन ही सेना को वेतन आदि देते थे। 'मोकासा' अधिकार मिल जाने से किसानों में अव्यवस्था फैल जाती; वे शक्तिशाली हो जाते और सरकारी वसूलयाबी करने वालों के आदेशों की उपेक्षा करने लगते; और किसानों की बढ़ती हुई शक्ति के कारण विभिन्न स्थानों पर विद्रोह हो जाते। मोकासा-भूमि के स्वामी और जमींदार मिलकर बेकाबू हो जाते। अतएव किसी को मोकासा नहीं प्रदान किया जाता था।" (सभा० २७-२८)

दो 'महालों' पर, जिनकी मालगुजारी ७५,००० से १,२५,००० होन थी, ४०० होन के वार्षिक वेतन पर एक सूबेदार और १०० से १२५ होन वेतन पर मजमुआद्दार की नियुक्ति की जाती थी। सूबेदार को ४०० होन पालकी का भत्ता भी दिया जाता था। १२५ होन या अधिक वेतन पाने वाले समस्त असैनिक और सैनिक अधिकारियों को अपने सिरों पर छत्र ('आफताब-गीर') लगाने का अधिकार था और वाहकों को राज्य की ओर से भत्ता मिलता था। आवश्यकतानुसार सूबेदार की नियुक्ति ऐसे क्षेत्र में भी कर दी जाती थी जिसकी आय केवल एक लाख रुपये थी। सीमा के पार उपद्रवी सूबों में, घूस का रुपया एकत्र करने वालों के साथ एक सैनिक टुकड़ी भी भेजी जाती थी। समस्त सूबेदार ब्राह्मण थे और वे पेशवा की निगरानी में काम करते थे। (सभा० २८ और ७७)

७. **धार्मिक नीति**—शिवाजी की धार्मिक नीति बहुत उदार थी। अपने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अभियानों के दौरान वह प्रत्येक मत के धार्मिक स्थानों का आदर करते थे और हिन्दू मन्दिर और मुस्लिम फकीरों के मकबरों तथा मस्जिदों को धर्मादा देते थे। वह न केवल वेदों के ज्ञाता ब्राह्मण विद्वानों, ज्योतिषियों और संन्यासियों को पेंशन देते थे, वरन इस्लाम के फकीरों, विशेषकर किलोशी (रत्नगिरि तट पर वंकोत से चार मील दक्षिण में) के बाबा याकूत को अपनी ओर से सहायता देते थे। "उन्होंने भूले हुए वैदिक अध्ययन को पुनः जागरित किया। एक वेद के ज्ञाता ब्राह्मण को वह एक मन चावल (वार्षिक) दिया करते थे, दो वेदों के ज्ञाता को दो मन, और इसी प्रकार अन्य को। प्रतिवर्ष पंडितराव श्रावण (अगस्त) के महीने में विद्वानों की परीक्षा लेते थे, और अध्ययन में उनकी उन्नति के अनुसार उनकी वृत्तिका बढ़ा या घटा देते थे। विदेशी पंडितों को वस्तुओं के रूप में पुरस्कार दिये जाते थे और स्थानीय पंडित को भोजन दिया जाता था। प्रसिद्ध विद्वान एकत्र किये जाते थे, उनका सम्मान किया जाता था और उनको द्रव्य के रूप में पुरस्कार दिये जाते थे। किसी ब्राह्मण को दूसरे राज्यों में जाकर याचना करने की आवश्यकता न पड़ती थी।" (चित० ८५, ४३; सभासद ३०. ६१ क० ब० ७४)

शिवाजी के धार्मिक गुरु रामदास स्वामी थे जो महाराष्ट्र के सबसे बड़े संन्यासियों में थे (जन्म १६०८, स्वर्गवास १६८१)। वर्तमान पीढ़ी के कुछ लोगों ने यह साबित करने का प्रयास किया है कि मराठा राष्ट्रीय वीर के हिन्दू राजा के स्वतन्त्र राजनीतिक आदर्श को रामदास से प्रेरणा मिली; परन्तु इसके जो प्रमाण दिये गये हैं वे न पर्याप्त हैं और न संदेह से मुक्त हैं।[८] शिवाजी पर संन्यासी का प्रभाव आध्यात्मिक था न कि राजनीतिक। सतारा के ले लेने के पश्चात (१५७३), शिवाजी ने अपने गुरु को पार्ली या सज्जनगढ़ के निकटवर्ती किले पर अधिष्ठापित किया और श्रद्धालु पर्यटक को प्रदर्शक अब भी बताते हैं कि सतारा पहाड़ी की चोटी से चार मील दूर पर संन्यासी से शिवाजी वार्ता किया करते थे! एक आकर्षक आख्यायिका अब भी बतायी जाती है कि शिवाजी न समझ सके कि रामदास प्रति दिन भिक्षा माँगने के लिए क्यों निकलते हैं, यद्यपि उनके राजा-शिष्य (अर्थात शिवाजी) ने उनको याचना की आवश्यकता के परे दे रखा था, और यह कि अगले दिन उन्होंने

---

८ शिवाजी और रामदास : चित० ४४-५३, और उनका 'शम्भूजी बखर', ५-६; प्रोफेसर भाटे का 'शिवाजी आणि रामदास'; धूलिया के रामदास पंती (विशेषकर श्री राजवाड़े) द्वारा प्रकाशित पुस्तकें और उनकी समाप्त मासिक पत्रिका।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

गुरु के आगे अपने समस्त राज्य का दान-पत्र रख दिया। रामदास ने उपहार स्वीकार कर लिया, शिवाजी को उसका कार्यकर्ता नियुक्त किया और उनको आदेश दिया कि भविष्य में वह राज्य पर निरंकुश रूप से शासन न करें, वरन एक सेवक की भाँति राज्य करें जो अपने समस्त कार्यों के लिए किसी उच्चतर अधिकारी के प्रति उत्तरदायी हो। तब शिवाजी ने, हिन्दू संन्यासी के वस्त्रों के समान, अपने राज्य का भगवा झंडा स्वीकार किया और अपने संन्यासी स्वामी के परिधान को धारण करके राज्य किया मानो "सदा उनके स्वामी उनको देख रहे हों।"

८. **शिवाजी के शासन का प्रभाव**—सिद्धान्त रूप से शिवाजी के ये विनियम थे। परन्तु व्यवहार में, सिवाय उस दशा के जब वह स्वयं उपस्थित रहते थे, इनकी प्राय: अवहेलना की जाती थी। इस प्रकार सभासद और चितनिस के कथन, कि उनके सैनिकों को लूट की प्रत्येक वस्तु जमा करनी पड़ती थी का निराकरण धरनगाँव की लूट (१६७९) में मिलता है, जबकि अंग्रेज व्यापारियों की बहुत-सी वस्तुएँ लूट ली गयीं और मराठा सेना की अधिकृत सूची में वे दर्ज नहीं की गयीं और न वे शिवाजी के कोष में जमा की गयीं (अध्याय १४)। शिवाजी हर जगह हर समय उपस्थित नहीं रह सकते थे; अतएव उनकी सेना तथा शिविर-अनुगामियों द्वारा निजी लूट को रोकना उनके लिए असम्भव था। मराठा सेना के फलस्वरूप ही निजी लुटेरों के दल भी लूटमार शुरू कर देते थे। पिंडारी मराठा सैनिकों का ही स्वाभाविक परिणाम थे जिनके लिए लूट-मार सामान्य कर्तव्य हो गया था।

शिवाजी ने अपने पड़ोसियों को लूटना न्यायसंगत बताया था, जैसा कि उन्होंने सूरत के मुगल गवर्नर से कहा (१६७२), "आपके सम्राट ने मुझे अपनी प्रजा तथा देश की रक्षा करने के लिए सेना रखने को मजबूर कर दिया है। उस सेना का खर्च उनकी प्रजा को देना चाहिए।" यह तर्क उनके जीवन के आरम्भ में और केवल मुगल राज्य-क्षेत्र के सम्बन्ध में सही हो सकता था, परन्तु बीजापुर और गोलकुण्डा, कनारा और तंजौर में उनके अभियानों को इसके द्वारा नहीं समझाया जा सकता। पेशवाओं की विदेशी नीति के पक्ष में भी यह तर्क बिलकुल गलत है।

परन्तु उनके द्वारा प्रयुक्त साधनों की नैतिकता के विषय में जो कुछ भी कहा जाय, उनकी सफलता एक चमत्कारपूर्ण वास्तविकता थी। जागीरदार का यह पुत्र मुगल राज्य और उसके समस्त उपलब्ध साधनों के प्रति एक गैर-जिम्मेदार विरोधी सिद्ध हुआ। इस तथ्य ने भारत और विदेशों के समकालीन

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मनुष्यों पर गहरा प्रभाव डाला। औरंगजेब परेशान था कि वह किस प्रकार शिवाजी पर काबू करे। उसके दरबार के एक पत्र में १६७० में सम्राट ने दकन से आने वाले एक सरकारी पत्र को पढ़ा जिसमें शिवाजी की लूटमारों का जिक्र था और इसके बाद वह "खामोश हो गया।" दरबार की अंतरंग सभा में वह उत्सुक होकर पूछा करता था कि वह आगे शिवाजी के विरुद्ध किसको भेजे, क्योंकि उसके सभी बड़े सेनाध्यक्ष दकन में विफल रहे थे, और महाबतखाँ ने सम्राट पर काजी अब्दुल वहाब के प्रभाव पर व्यंग्य करते हुए कहा, "किसी सेनापति की आवश्यकता नहीं है। मुख्य काजी का एक फरमान ही शिवाजी को खत्म कर देगा!" फारस के शाह अब्बास द्वितीय ने औरंगजेब की खिल्ली उड़ाते हुए एक पत्र लिखा, "आप अपने को पादशाह कहते हैं परन्तु आप शिवा जैसे मामूली जमींदार को भी नहीं दबा सकते। मैं भारत में एक सेना लेकर आपको आपका कर्तव्य बताने के लिए आ रहा हूँ।" (खा० खाँ, २. २१६)

उस युग में हिन्दुओं पर पुनः अत्याचार आरम्भ हो गये थे, अतएव उनके लिए शिवाजी एक नयी आशा की किरण के रूप में थे, हिन्दुओं के माथे पर तिलक के रक्षक और ब्राह्मणों के उद्धारकर्ता (भूषण की कविताएँ)। उनके दरबार में, और बाद को उनके पुत्र के दरबार में भी, औरंगजेब के समस्त विरोधी शरण पाते थे। दोनों विरोधी अतिमानव थे, परन्तु चरित्र में एक-दूसरे से बिलकुल विपरीत थे।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अध्याय १६

शिवाजी के कार्य, चरित्र और इतिहास में स्थान

१. शिवाजी की नीति कहाँ तक परम्परागत थी।
२. चिरस्थायी राज्य न बना सकने में उनकी असफलता के कारण।
३. वास्तविक राष्ट्रीयता में रुकावटें।
४. मराठों द्वारा आर्थिक पक्ष की उपेक्षा।
५. छल और षड्यन्त्र की अतिता।
६. शिवाजी का चरित्र।
७. शिवाजी की प्रतिभा का विश्लेषण।
८. उनका राजनीतिक आदर्श और कठिनाइयाँ।
९. लोक-मानस पर उनका प्रभाव।

१. शिवाजी की नीति कहाँ तक परम्परागत थी—शिवाजी की राज्य की नीति, उनकी प्रशासन व्यवस्था[1] के समान, बहुत नयी न थी। अत्यन्त प्राचीन काल से आदर्श हिन्दू राजा का लक्ष्य रहता आया है कि प्रत्येक शरद् ऋतु के आरम्भ में वह अपने पड़ोसियों के राज्यों को छीनकर "अपने राज्य का विस्तार करे।" वास्तव में संस्कृत के विधान ग्रन्थों में लिखा है कि यह चर्या एक सच्चे क्षत्री राजा का कर्तव्य है (मनु ७. ९९-१०३, १८२)। हाल के समय में उत्तरी भारत के मुसलमान शासकों और दकन में भी यह परम्परा रही। परन्तु ये विजेता अपनी राज्यलिप्सा को धार्मिक उद्देश्यों पर आधारित करते थे। कुरान के अनुसार, मुसलमान शासक और उसके पड़ोसी "काफिर" राज्यों के बीच शान्ति रह ही नहीं सकती। ऐसे राज्य "दार-उल-हरब" अथवा युद्ध के वैधानिक क्षेत्र हैं और मुस्लिम शासक का कर्तव्य है कि उनमें मार-काट व लूट-पाट जारी रखे जब तक कि वे सही धर्म को न मान लें और "दार उल-इस्लाम" न बन जायँ, इसके बाद ही उनको उनकी संरक्षता में आने का अधिकार होगा।[2]

---

[1] पूर्व के समकक्षी और सम्भावित नमूने के लिए आदिलशाही नियम देखिए, बसातिन सलातीन, पृ० ३४८-३५२

[2] विस्तृत वर्णन और प्रामाणिक पुस्तकों व लेखकों के लिए य० ना० सरकार कृत अंग्रेजी में 'औरंगजेब का इतिहास' देखिए, ३. अध्याय ३४, अनु० १

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शिवाजी की विदेशी नीति और कुरानी शासन के बीच समैक्य इतना पूर्ण है कि उसके दरबारी कृष्णाजी अनन्त लिखित शिवाजी का इतिहास और बीजापुर के फारसी अधिकृत इतिहास दोनों ने ही पड़ोस के देशों में ऐसे धावों को नियमित राजनीतिक आदर्श बताने के लिए "मुल्क-गीरी" शब्द का प्रयोग किया है। दोनों में अवश्य ही सिद्धान्त रूप में केवल यह अन्तर है कि कट्टर मुसलमान शासक अपने मार्ग में आने वाले अन्य मुस्लिम राज्यों की रक्षा करने को बाध्य है और मजहब पर ईमान लाने वालों को न लूटता है और न ही उसका खून बहाता है, परन्तु शिवाजी ने (और उनके बाद पेशवाओं ने भी) अपनी 'मुल्क-गीरी' नीति को सभी पड़ोसी राज्यों में अपनाया, हिन्दू या इस्लामी, और धनी हिन्दुओं को उतनी ही निर्दयता से लूटा जितना मुसलमानों को। फिर, कट्टर इस्लामी शासक, कम से कम सिद्धान्त में, दूसरे राज्यों को जीतते थे और उनका धर्म-परिवर्तन करते थे; इस प्रकार उनकी अल्पकालीन कष्टदायक विजय के पश्चात उन स्थानों पर उनके राज्य के अन्य नियमित भागों की भाँति शान्ति हो जाती थी। परन्तु शिवाजी के सैनिक अभियानों का उद्देश्य, और मुझे आशा है कि उनके दरबारीय इतिहासकार ने गलत नहीं लिखा है, राज्य हड़प लेना न था वरन केवल लूट-मार था, जैसा कि उन्हीं के शब्दों में, "मराठा सेनाओं को प्रतिवर्ष आठ महीने तक विदेशों को लूटकर और घूस का रुपया वसूल करके अपना पेट भरना था।" (सभा० २६)[3]

इसलिए स्रोत और सिद्धान्त के अनुसार शिवाजी की शक्ति भारत या अन्य देशों के मुस्लिम राज्यों के ठीक समान थी, और वह केवल उस शक्ति के प्रयोग में उनसे भिन्न थे। अपने राज्य में स्थायी रूप से अधिकृत क्षेत्रों में व्यापक सहिष्णुता और समान न्याय और समस्त प्रजा की सुरक्षा उनकी विशिष्ट नीति के अंग थे, जैसा कि हम अन्य स्थान पर दिखा चुके हैं।

---

[3] एक मराठा सरदार, बजाय इसके कि मौजूदा सरकार को खत्म करके समस्त शासनाधिकार सामान्य रूप से अपने हाथ में ले ले, वह फसल के अवसर पर आ धमकता था और जो लूटमार वह कर सकता था उसको न करने के बदले वह धन माँगता था। प्रतिवर्ष वह वहाँ पहुँचता रहता था और उसकी माँग भी अनुपात में बढ़ जाती थी। इस प्रकार जो वसूल किया जाता था उसे **चौथ** कहते थे और वसूलयाबी की इस प्रक्रिया को **मुल्क-गीरी** अभियान कहते थे।" (पिनसेप कृत मारक्विज हेस्टिंग्ज का···इतिहास, १. २२)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

२. चिरस्थायी राज्य बनाने में शिवाजी की असफलता के कारण—शिवाजी एक टिकाऊ राज्य क्यों न स्थापित कर सके ? मराठा जाति अपने एकलन को अन्तिम रूप क्यों न दे सकी और एक सुसम्बद्ध राजनीतिक समुदाय बनने से पहले ही वह क्यों छिन्न-भिन्न हो गयी ?

निस्सन्देह इसका एक स्पष्ट कारण उनके शासन का अल्पकाल था—मुगलों से १६७० में अन्तिम विच्छेद के बाद उनको मुश्किल से दस वर्ष ही मिल पाये थे। परन्तु उनकी असफलता का यह सही कारण न था। यह संदिग्ध है कि यदि उनको इससे काफी अधिक समय मिल जाता तो भी वह उस नाश को रोक लेते जो पेशवाओं के अधीनस्थ मराठा राज्य का हुआ, क्योंकि अठारहवीं शताब्दी में भी वही नैतिक सड़न उनके लोगों में जारी रही जो सत्रहवीं शताब्दी में थी। दकन में उनके द्वारा स्थापित नवीन हिन्दू राज्य को पहला खतरा यह तथ्य था कि शिवाजी और बाजीराव प्रथम की विजयों के फलस्वरूप राष्ट्रीय गौरव और समृद्धि ने हिन्दू कट्टरता के पक्ष में प्रतिक्रिया उत्पन्न कर दी; इससे जाति-बन्धन और दैनिक अनुष्ठानों की पवित्रता ने बल पकड़ा जो प्रारम्भिक मराठा समाज की निर्धनता और राजनीतिक दृष्टि से दलित मराठा समाज की समरूपता और सरलता के विरुद्ध थीं। इस प्रकार उनकी राज नीतिक सफलता ने उनकी उस सफलता की मुख्य नींव को हिला दिया।

उनकी स्वतन्त्रता के फलस्वरूप सुरक्षा, शक्ति और धन-दौलत की उत्पत्ति के कारण अठारहवीं शताब्दी के मराठे मुस्लिमों के पूर्व अत्याचारों को भूल गये; उनके सामाजिक वर्ग एक दूसरे के विरुद्ध उठ खड़े हुए। सह्याद्रि पर्वत-श्रेणी के पूर्व के ब्राह्मण उसके पश्चिम के रहने वाले ब्राह्मणों से घृणा करने लगे, पहाड़ियों पर रहने वाले लोग मैदानों पर रहने वाले अपने भाइयों से नफरत करने लगे क्योंकि अब वे ऐसा विना किसी दण्ड के भय के कर सकते थे। राज्य के मुखिया को, ब्राह्मण होते हुए भी, उसके अन्य ब्राह्मण सेवक जो जाति के दूसरे वर्गों में से थे, घृणा की दृष्टि से देखने लगे, क्योंकि प्रथम पेशवा के पूर्वजों को 'देश' के ब्राह्मण के पूर्वजों की अपेक्षा समाज में पहले निम्न स्थान प्राप्त था। एक ओर चितपावन ब्राह्मण देशस्थ ब्राह्मणों के विरुद्ध सामाजिक युद्ध कर रहे थे, तो दूसरी ओर ब्राह्मण मन्त्रियों और गवर्नरों तथा कायस्थ मन्त्रियों के मध्य घोर ईर्ष्या चल रही थी। शिवाजी के शासन-काल में भी हमको इसके निश्चित चिह्न मिलते हैं। "जाति विभाजन से बढ़ती है।" यह राष्ट्रीय एकता की शत्रु है। शिवाजी का 'हिन्दू स्वराज्य' का आदर्श

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जिस अनुपात में कट्टरता पर आधारित था उसी अनुपात में उसकी मृत्यु के बीज उसी में मौजूद थे। जैसा रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने लिखा है—

"देश में एक अस्थायी जोश दिखायी पड़ता है और हम समझते हैं कि उसमें एकता हो गयी; परन्तु हमारे समाज-समुदाय में दरारें और छेद गुप्त रूप से अपना काम करते रहते हैं; हम किसी उच्च विचार को देर तक नहीं रख सकते।

"शिवाजी ने दरारों को बनाये रखा; उन्होंने मुगल आक्रमण से हिन्दू समाज की रक्षा करना चाहा, जिसके जीवन का मूल स्रोत ही अनुष्ठानिक भेद और जातियों की पृथकता है। वह इस विषम समाज को **समस्त** भारत में विजयी बनाना चाहते थे। उन्होंने रेत से रस्सी बटना चाहा; उन्होंने असम्भव कार्य करने का प्रयत्न किया। जाति बन्धन में लिप्त, एकाकी तथा भीतर से पोले समुदाय के स्वराज को उन्होंने भारत जैसे विशाल महाद्वीप पर स्थापित करना चाहा—परन्तु यह कार्य किसी एक मनुष्य की शक्ति के बाहर है और विश्व के दैवी नियम के विरुद्ध है।"[४]

शिवाजी और उनके श्वसुर गायकवाड़ **मराठे** थे, अर्थात एक तिरस्कृत जाति के सदस्य। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम वर्षों में दकन में राष्ट्रीय आन्दोलन के आरम्भ से पूर्व महाराष्ट्र के किसी ब्राह्मण को यदि मराठा कहा जाता था तो वह इसे अपना अपमान समझता था। वह कुछ व्यग्रता से उत्तर देता था "नहीं, मैं दक्षिणी ब्राह्मण हूँ।" शिवाजी ने ब्राह्मणों द्वारा किये गये अपने अपमान को बहुत महसूस किया, जिनकी सुरक्षा और समृद्धि के लिए उन्होंने अपना जीवन ही लगा दिया था। वे बारबार उनको शूद्र मानते थे और इसलिए उन्होंने बालाजी आवजी का सहारा लिया, जो कायस्थों का नेता था और ब्राह्मणों के गर्व का शिकार था। ब्राह्मण कायस्थों की बुद्धि और साहित्यिक योग्यता के प्रति डाह करते थे, जो शिक्षा और सरकारी नौकरी में उनके एकमात्र प्रतिद्वन्द्वी थे, और इतना कहकर सान्त्वना प्राप्त कर लेते थे कि कायस्थ निम्न जाति के हैं और उनको वेदों के अनुसार अनुष्ठान करने का कोई अधिकार नहीं है, तथा उन्होंने बालाजी आवजी का सामाजिक बहिष्कार भी घोषित कर दिया क्योंकि उसने अपने लड़के को यज्ञोपवीत धारण करा दिया था। स्वाभाविक ही था कि बालाजी की सहानुभूति अपने स्वामी के प्रति थी और उन्होंने गागा भट्ट के द्वारा शिवाजी को सामाजिक उच्चता

---

४ उनकी 'सिक्ख शक्ति के उत्थान व पतन' नामक पुस्तक से, जिसका अनुवाद मैंने अप्रैल १९११ के मॉडर्न रिव्यू में प्रकाशित किया था।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

प्रदान करवाई जिसने "शिवाजी को शुद्ध क्षत्री बना लिया।" उच्च पुरोहित ने बालाजी के प्रति अपना आभार प्रदर्शित किया और उसने एक (या दो) पुस्तिकाएँ लिखीं जिनमें कायस्थ जाति के गौरव का वर्णन किया, परन्तु इनको उनके समकालीन ब्राह्मणों ने नहीं माना।[५]

समाज की सुचिन्तित और सुव्यवस्थित उन्नति, शिक्षा के विस्तार अथवा लोगों के एकीकरण के लिए, न शिवाजी के समय में और न ही पेशवाओं के अधीनस्थ कोई प्रयत्न किया गया। मराठा राज्य में लोगों का संश्लेषण प्रांगरिक न था वरन कृत्रिम, आकस्मिक और इसलिए अनिश्चित था। वह शासक के असाधारण व्यक्तित्व पर ही आश्रित था और वह समाप्त हो गया जबकि देश ने अपने शासकों में अतिमानव उत्पन्न करना बन्द कर दिया।

एक व्यक्ति के व्यक्तित्व पर आधारित सरकार स्वभावतः अनिश्चित होती है। यह अनिश्चितता प्रशासन पर घातक प्रभाव डालती थी। व्यवस्था और नियम कितने ही सुनियोजित क्यों न होते, अयोग्यता, कर्मचारियों के अकस्मात परिवर्तन और उनमें भ्रष्टाचार के कारण प्रशासन का वास्तविक कार्यकरण, दोषपूर्ण ही रहता, क्योंकि कोई भी अपने पद अथवा योग्यता के सही मूल्यांकन के कारण अपने को सुरक्षित नहीं समझता था। पूर्व और पश्चिम के सभी स्वेच्छाकारी राज्यों में यह दोष रहा, केवल उन देशों को छोड़कर जहाँ निरंकुश शासक "राजा के रूप में वीर" माना जाता था अथवा वहाँ

---

५ और न इससे भावी सन्तति ही प्रभावित हुई। इस पुस्तिका के सम्पादन के अवसर पर १९१६ में एक ब्राह्मण लेखक श्री राजवाड़े ने कायस्थों के अधिकार का निराकरण किया (चतुर्थ सम० वृत्त)। उनके जवाब भी प्रकाशित हुए जिनमें एक के० टी० गुप्ते का 'राजवाड़े कृत गागा भट्ट' था, जिसमें उन्होंने साक्ष्य प्रस्तुत की है और तर्क पेश किये हैं, और दूसरा के० एस० थाकड़े का द ट्वेंगिंग ऑव द बो (The Twanging of the Bow) था, जिसमें वैसी ही भाषा का प्रयोग गया है जिसका मिल्टन ने टैट्राकोर्डन' (Tetrachordon) अथवा 'अगेंस्ट सैल्मेसियस' (Against Salmasius) में प्रयोग किया है। यह बीसवीं शताब्दी में हो रहा है, और फिर भी श्री राजवाड़े या प्रोफेसर बीजापुरकर (जिन्होंने शिवाजी के वंशजों को शूद्र बताया) राष्ट्रीय माने जाते हैं, और अतिराष्ट्रीय भी।

ऐसे विशृंखल समाज में १८वीं शताब्दी के पूना के ब्राह्मणों ने यह आशा की वे एक अखिल भारतीय मराठा साम्राज्य की नींव डालने में समर्थ हो सकेंगे, और आज बीसवीं शताब्दी में पूना में ऐसे ब्राह्मण मौजूद हैं जो यह विश्वास करते हैं कि यह आशा केवल अंग्रेजों की मक्कारी औरधिअक अच्छे भाग्य के कारण ही पूरी न हो सकी!

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जहाँ कि लोगों में शिक्षा के ऊँचे स्तर, सभ्यता और राष्ट्रीय भावना ने दोष को बढ़ने नहीं दिया है।

३. शिवाजी के युग में वास्तविक राष्ट्रीयता में रुकावटें—शिवाजी के युग और देश का समाज आधुनिक समाज से इतना भिन्न था कि उनको जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था उन्हें समझने के लिए कुछ ऐतिहासिक कल्पना की आवश्यकता है।

सदैव परिवर्तनशील संसार में केवल भूमि ही एकमात्र स्थायी वस्तु थी, यद्यपि यह भी प्रकृति की महान शक्तियों के अधीन थी, जो कभी-कभी मनुष्य और उसके कार्य का विनाश बात की बात में कर देती थीं, और राजनीतिक क्रान्ति के अधिक तीव्र रूपान्तरों का भी। परन्तु नये विजेता भूमि को पुराने कृषक के हाथ में ही छोड़ देते थे क्योंकि उस बिखरी जनसंख्या के युग में केवल वही जीत सकता था, और वे पुराने वंशागत बिचौलियों के हाथ में ही माल-गुजारी की वसूली छोड़ देते थे, क्योंकि केवल वे ही उस स्थान का ब्यौरा जानते थे और वे ही भूमि से दूरस्थ शासक के लिए कुछ रुपया वसूल कर सकते थे, जिन्हें स्वयं प्रत्येक छोटे किसान से अपने कर सीधे वसूल करना असम्भव था। अतएव भूमि-सम्बन्धी पद प्रायः मौरूसी हो जाते थे और माल-गुजारी वसूल करने वाला प्रायः वंशगत हो जाता था और कुछ समय के पश्चात वह स्वयं जमींदार बन जाता था तथा अपने गाँव अथवा जिले की उपज के एक भाग को अपने परिवार के लिए ले लेता था। न्यून व्यापार और केवल छोटे उद्योग-धन्धों के उस युग में अपने पूर्वपुरुषों की भूमि से लगाव सबसे अधिक प्रबल भावना थी। मैं एक ब्राह्मण परिवार को जानता हूँ जो रत्नगिरि जिले से अहमदाबाद में छह पीढ़ियों पहले बस गया था, और उनके पुराने आवास-स्थान में अब उनके पास एक इंच भूमि भी नहीं है और न उस स्थान से उनका कोई व्यापार-सम्बन्ध है, परन्तु फिर भी उन्होंने दो शताब्दियों से अपनी दीर्घकाल से छोड़ी हुई भूमि के पुराने पट्टों को सुरक्षित रख छोड़ा है।

और उस युग में धरती पर स्वामित्व अनिश्चित और जटिल था, क्योंकि एक ही भूमि-खण्ड के कई दावेदार होते थे जिनके दावों में विभिन्नता और जटिलता होती थी। ऐसी परिस्थिति दकन में प्रायः सभी जगह मिलती है। मैं यहाँ एक सावन्तवादी का उदाहरण देता हूँ, जो मुझे उपलब्ध है। इस छोटे-से क्षेत्र में सोलहवीं शताब्दी में बीजापुर के सुल्तान की ओर से मालगुजारी जमा करने के लिए कुदाल में प्रभू जाति का एक देसाई (या जमींदार) था, और उसकी अधीनता में उसकी सेना का नेतृत्व करने के लिए राजपूत जाति का

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

एक आदमी 'दलवी' या कप्तान था। दलवी ने अपने देसाई स्वामी के विरुद्ध विद्रोह किया, और पड़ोस के एक सावन्त या मराठा जाति के मुखिया की सहायता ली। पहले तो उस देसाई ने अपने राजा की सहायता से उसे दबा दिया। परन्तु तीसरी पीढ़ी में एक योग्य सावन्त शक्तिशाली हो गया, उसने आदिलशाह से बाँदा का देसाई-पद प्राप्त कर लिया, और अधिकांश देसाइयों को नष्ट करके कुदाल परगना पर अधिकार कर लिया। परन्तु उस वंचित परिवार के कुछ सदस्य निकल भागे और उन्होंने भूमि पर दावा कर दिया। फिर उस सावन्त को निकालने के लिए शिवाजी स्वयं आये ! साथ-ही उसी परिवार की दो शाखाओं (प्रायः दो भाइयों) के कारण और भी उलझनें पैदा हो गयीं, और फिर इन्होंने अपने झगड़ों को अपने लड़कों और नातियों को स्थानान्तरित किया।

भूमि पर अधिकार और मालगुजारी के पदों की इस अति अव्यवस्था के संसार में—जहाँ कोई भी बात निश्चित नहीं थी और न कोई तथ्य अन्तिम रूप से निर्णय हो पाता था—शिवाजी का प्रादुर्भाव (अन्य समस्त विजेताओं के समान) एक नयी द्रवकारी शक्ति के रूप में हुआ। इन दावों पर उनको अपना निर्णय देना पड़ता था। वे लोग जो उनके सामने मुकदमों में हार जाते थे, वे जिन्हें उनके प्रतिनिधि उनको पदों से हटा देते थे, तुरन्त उनके विरुद्ध हो जाते थे और अपने दावों को सिद्ध करने के लिए उनके वैरियों से मिल जाते थे अथवा उनकी सरकार का विरोध करने लगते थे। राष्ट्रीय भावना का एकदम अभाव था और न देश के कानून को मानने की भावना थी चाहे उसमें पूरी ईमानदारी क्यों न बरती जाती थी।

उस युग में प्रत्येक मनुष्य की अपनी भूमि (**वतन**) ही एकमात्र वास्तविकता थी, वही मनुष्य के आजन्म प्रयत्न का लक्ष्य था, वही इस धरती पर सर्वोच्च पुरस्कार था, परन्तु पितृभूमि (**पित्रीय**), यदि कभी भी उसका विचार किया जाता था, तो वह एक अमूर्त विचार था, केवल एक भावना थी। **वतन** से सम्मान और जीवन के सुख प्राप्त होते थे, परन्तु **पित्रीय** एक शब्द मात्र था और कल्पना की एक कृति थी।

देश-प्रेम के विकास में एक और रुकावट थी—समाज का बहुत छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजन, जिससे समिष्ट जीवन, विचार और रुचियों से प्रभावित एक राष्ट्र का निर्माण अथवा मनुष्यों का एक संगठित समूह असम्भव था, और कल्पना से परे था। उसी भूमि पर और उन्हीं शासकों के अन्तर्गत रहने वाले हिन्दू और मुसलमानों के बीच न पटने वाली खाई के अलावा, हिन्दू स्वयं अनगिनतिन परस्पर संघर्ष करने वाले खण्डों में विभाजित थे (अथवा वे एक-

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

दूसरे से तिरस्कारपूर्ण पृथक थे और एक-दूसरे को उपेक्षा की दृष्टि से देखते थे)। एक जाति दूसरी जाति को न केवल हेय दृष्टि से देखती थी और उस पर अत्याचार करती थी, वरन एक ही जाति के सदस्यों में ऐसे प्रबल भेद थे जैसे मुसलमानों या हिन्दुओं के बीच में हैं अथवा शूद्र और ब्राह्मणों के मध्य हैं। कुछ परिवार अपने को उसी जाति और उसी स्थान के अन्य सब लोगों की अपेक्षा 'कुलीन' (शुद्ध रक्त का) मानते थे, वे अन्य लोगों का समाज में तिरस्कार करते थे और उनको अपमानित करते थे। उस युग में एक हिन्दू का सर्वोच्च लक्ष्य—और वर्तमान काल में भी—सामाजिक क्रम में अपने परिवार को ऊँचा उठाना था; यह कार्य ब्राह्मणों और अपनी जाति के उच्चवर्गीय लोगों को उदारतापूर्वक दान देकर, ऊँचे कुलों में विवाह करके तथा द्विजों की भाँति जीवन व्यतीत करके सम्पन्न किया जाता था। परन्तु प्रबल परिवार (अथवा जातियाँ) नवीन अथवा निम्न परिवारों को उनके विरुद्ध सामाजिक अत्याचार करके उनको अधःपतन के पूर्व स्तर पर ही रहने देते थे। इस प्रकार के अभिलाषियों और प्राचीन रूढ़िगत रीति-रिवाज और परम्पराओं में बाधा डालने वालों को वे न केवल पुरोहित वर्ग के लाभ वरन सामाजिक जीवन की सुविधाओं और गाँव के सार्वजनिक सेवकों की सेवा से भी वंचित कर देते थे। यह 'ग्रामण्य' अर्थात जाति-बहिष्कार मृत्यु से भी अधिक कष्टप्रद और भयानक दण्ड होता था।

यह केवल मानवी प्रकृति का तकाजा था कि तिरस्कृत परिवारों अथवा जातियों के भद्र सदस्य समाज के इन अन्यायों और अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाते थे, और सार्वजनिक अपमान की कठोरता से दुखी होकर, अत्याचार करने वाले पुरोहितों तथा राज्य से बदला लेने की दृष्टि से अपने देश और धर्म के वैरियों से जा मिलते थे। अत्याचारियों और पीड़ितों दोनों की ओर से ऐसा कार्य होना असम्भव है जहाँ राष्ट्रीयता की सच्ची भावना ने जड़ पकड़ ली हो। भारतीय भूमि पर देश-प्रेम की भावना का विकास नहीं हो सका (सिवाय उन राजपूतों में जिनमें रक्त के कारण सुसम्बद्ध और ठोस फिरके बन गये थे)। हिन्दू भारत के शासक जिनका एकमात्र ध्येय अपना निजी लाभ था और पूरे समाज का हित न था—ऐसे राज्य की कल्पना नहीं करते थे, जिसका अस्तित्व अवैयक्तिक सतत सत्ता के रूप में हो—जो हमारे व्यक्तिगत अहं से अधिक टिकाऊ हो।

जैसा कि एक सूक्ष्म दृष्टि वाले अंग्रेज ने १८०३ में लिखा था—'साम्राज्य में प्रत्येक मराठा राजा और हरएक जागीरदार या सैनिक सरदार के पास खजाना (अर्थात धन का संग्रह) होता है जिसमें सोने-चाँदी के सिक्के और

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

रत्न होते हैं और जो राज्य में किसी दुर्गम पर्वत पर स्थित सुदृढ़ किले की दीवारों के भीतर गुप्त स्थान पर गाड़ दिया जाता है, जो इसी उद्देश्य से निर्मित किया जाता है। उसकी महत्त्वाकांक्षा का प्रथम और निरन्तर लक्ष्य इस निजी कोष की वृद्धि होता है।.....युद्ध की सहायता के लिए धन की कमी, भले ही वह अपने ही देश की प्रतिरक्षा के लिए आवश्यक हो, मराठा सरदार अपने निजी कोष से कभी नहीं पूरा कर सकता है—इसकी हानि उसके लिए देश की पराधीनता से कहीं अधिक बड़ी विपत्ति है।"[६]

ऐसे आदमी थे वे जिनके मध्य शिवाजी को एक स्वतन्त्र राष्ट्रीय राज्य का भवन निर्मित करना था, वे आदमी जो उसके साधन थे और ये ही वे थे जिनके हाथ में उन्होंने अपना अपूर्ण कार्य छोड़ा। नेताओं को उच्च कुल में उत्पन्न होने का अनुचित गर्व था, गौरव प्राप्त करने की महान ईर्ष्या थी, महत्त्वाकांक्षा थी जिसके आगे वे किसी परिणाम की चिन्ता न करते थे, कानून और संघीय निष्ठा के प्रति व आत्म-अधीनता के प्रति उपेक्षा थी जो निम्न वर्ग के लोगों की विशिष्टता है, और उनमें राजनीतिक दूरदर्शिता व व्यावहारिक वास्तविकता का अभाव था। जन समुदाय तो मनुष्य के रूप में भेड़ों का समूह था जो इसी योग्य था कि उसके नेतृत्व के लिए ऐसे गड़रिये मिलें; उनका दृष्टिकोण उनके दैनिक कार्यों की कठिन दशाओं से सीमित था, और एक सरल भावपूर्ण विश्वास ही उनकी एकमात्र सान्त्वना थी।

ऐसी दशा में एक अति-मानव भी राष्ट्र नहीं बना सकता था और अपने पीछे टिकाऊ राज्य नहीं छोड़ सकता था। शिवाजी अपनी श्रेष्ठ प्रतिभा के द्वारा भी इनकी दृढ़ नींव नहीं डाल सकते थे भले ही उनको राज्य के भीतर शान्ति का लम्बा शासन प्राप्त हो जाता और भले ही उनके उत्तराधिकारी भी योग्य होते। परन्तु वह अपने राज्याभिषेक के बाद छह वर्ष से कम जीवित रहे और उनका राज्य उनके लड़कों के साथ नष्ट हो गया।

४. **मराठों द्वारा आर्थिक तत्त्वों की अवहेलना**—मराठा शासकों ने राज्य

---

६ 'एशियाटिक ऐनुअल रजिस्टर' १८०३, पृष्ठ ३। हाल का उदाहरण कप्तान ब्राउटन द्वारा वर्णित दौलतराव सिंधिया का है : "सिंधिया (अपने अदत्त सैनिकों द्वारा) प्रतिदिन यह अपमान सहन करता रहता है, उसके निजी कोष में ५० लाख रुपया है; इस धन को उसकी कोई आपदा, चाहे वह स्वयं की हो अथवा उसकी सेना की हो, उस धन-राशि से उसे कुछ अंश लेने को नहीं मजबूर कर सकती।" ('मराठा शिविर के पत्र' Constable संस्करण, पृष्ठ १६०)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के आर्थिक विकास की अवहेलना की। उनमें कुछ ने अवश्य अवैध वसूलियों से किसानों की रक्षा की, और इस सीमा तक उन्होंने कृषि में उन्नति की। परन्तु स्थानीय अधिकारी वाणिज्य में सदा बाधा डालते थे, और व्यापारी कभी भी केवल वैध कर देकर आने-जाने की स्वतन्त्रता और अपने अधिकारों की रक्षा नहीं प्राप्त कर सकते थे। छोटे-से राज्य के भीतरी साधन—जिसमें उद्योग न थे, व्यापार नहीं के बराबर था, मिट्टी अनुपजाऊ थी, और कृषि न्यून और अनिश्चित वर्षा पर निर्भर थी—उस बड़ी सेना को पोषित नहीं कर सकते थे जो शिवाजी रखते थे, अथवा उस राजसी स्थिति और संसार पर आधिपत्य कर सकते थे जिसके पेशवा इच्छुक थे।

राज्य के आवश्यक खर्चे करने ही पड़ते थे, और राज्य के समस्त भागों को एक साथ रखने का एक ही उपाय था और वह यह कि अपनी सीमा के पार के क्षेत्रों से निरन्तर द्रव्य मिलता रहे, अर्थात नियमित लूट-पाट द्वारा। स्वर्गीय श्री गोपाल कृष्ण गोखले ने बम्बई प्रेसीडेन्सी के वर्तमान भूमि-कर निर्धारण की कठोरता का जिक्र करते हुए मुझसे हँसकर कहा, "देखिए, मराठा शासन के अधीनस्थ धरती की मालगुजारी की दर का कोई विशेष महत्त्व न था। उस पुराने समय में, जब फसलें नहीं उगती थीं तो हमारे आदमी घोड़े और भाले लेकर दौड़ पड़ते थे और अगले दो-तीन वर्षों के लिए अपने खाने के लिए पर्याप्त ले आते थे। अब वे अपनी ही भूमि पर भूखे रहते हैं।"

इस प्रकार अपने राज्य की परिस्थिति के कारण मराठे प्रत्येक अन्य के विरोधी रहते थे और प्रत्येक अन्य मनुष्य उनका विरोध करता था। क्रीग-स्टाट (Krieg-staat)[७] स्वभावतः दूषित वातावरण में ही जीवित रहती है। उसे भोजन की प्राप्ति के लिए समय-समय पर युद्ध करना पड़ता है; परन्तु जो युद्ध पूर्ति के सामान्य नियमों के अनुसार लड़ा जाता है वह आक्रामक देश तथा आक्रमित देश दोनों में एक समान उद्योग और धन-दौलत को नष्ट कर देता है, और अन्ततः ऐसे युद्धों के उद्देश्य को पूरा नहीं होने देता। शान्ति 'क्रीग-स्टाट' राज्य के लिए मृत्यु है; परन्तु शान्ति ही धन का प्राण है। अतएव, युद्ध पर आधारित राज्य सोने का अंडा देने वाली मुर्गी की हत्या कर देता है। उदाहरण के लिए, शिवाजी की बारम्बार सूरत की लूट ने उस नगर के व्यापार और धन को वहाँ से भगा दिया, और उसकी दूसरी

---

७ एक सरकार जो आक्रामक युद्धों के बल पर ही जीवित रहती और विकसित होती है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लूट में (१६७० में) पहली लूट की अपेक्षा बहुत कम माल मिला, और कुछ वर्षों के उपरान्त मराठा आक्रमण के निरन्तर भय ने सूरत को एकदम धनहीन बना दिया और पूर्ति का यह स्रोत बिलकुल सूख गया। इस प्रकार, आर्थिक दृष्टि से, मराठा राज्य का कोई स्थायी आधार न था, और स्वयं अपने में ही विकास करने का कोई सामान्य साधन न था।

५. **छल और षड्यन्त्र की अतिता**—अन्ततः मराठा नेता छल और कपट में अति अधिक विश्वास रखते थे। वे नहीं समझते थे कि पुरुषोचित निष्कपटता और वचनबद्धता के पर्याप्त अंश के बिना कोई समाज संगठित नहीं रह सकता। कूटनीति और झूठ उनके राज्य की उत्पत्ति के समय भले ही आवश्यक रहे हों, परन्तु उनके शक्तिशाली होने पर भी ये जारी रहे। मराठा मन्त्री के वादे पर अथवा मराठा सेनापति के आश्वासन पर कोई भरोसा न कर सकता था। अंग्रेजों की राजापुर कोठी की क्षति के लिए उनको मराठों के साथ लम्बी और असफल वार्ता को ही देखिए। सुलह की शर्तों के अनुसार कार्य करने के लिए मराठा सरकार पर सदैव भरोसा नहीं किया जा सकता था।

शिवाजी ने, और कुछ कम सीमा तक बाजीराव प्रथम ने, युद्ध और राजनयिकता के मध्य उत्तम संतुलन बनाये रखा। परन्तु बाद के मराठों ने इस व्यावहारिक योग्यता को भी खो दिया। उन्होंने राजनयिक कपट पर अत्यधिक विश्वास किया, मानो साम्राज्य शान्तिमय शतरंज का खेल था। सैनिक कुशलता की उपेक्षा की गयी, ठीक समय पर और ठीक प्रकार से युद्ध से बचा गया, अथवा इससे भी खराब बात यह रही कि असमय के अभियानों और लूटों में, जो निरन्तर होती रहीं, उनकी सेना का ह्रास हो गया, और 'राज-करन' अथवा राजनयिक कपट में ही सर्वोच्च राजनीतिक बुद्धिमता समझी गयी। इस प्रकार जबकि मराठे चिरन्तन सारहीन मैत्री और राजनयिक प्रति-षड्यन्त्रों में संलग्न थे, वेलेजली ने उनके प्रयासपूर्ण व निर्बल राजनयिक ताने-बाने पर एक प्रहार किया और कुछ तेज और कुशलतापूर्ण चोटों से उनकी प्रतिरक्षा समाप्त हो गयी और उनकी शक्ति अपने नग्न रूप में और निस्सहाय देख पड़ने लगी। लगातार और शीघ्र, निजाम निहत्था कर दिया गया, टीपू दबोच दिया गया और पेशवा को वश में कर लिया गया। जब सिंधिया और होलकर समस्त भारत के स्वामी बनने का स्वप्न देख रहे थे उन्हें अकस्मात मालूम हुआ कि उनकी स्थानीय स्वतन्त्रता भी समाप्त हो गयी थी। कार्यशील मनुष्य व सैनिक-राजनीतिज्ञ सदा केवल योजना बनाने वाले मनुष्य पर विजय प्राप्त करता है। आतंकपूर्ण विश्वासघात अन्त में कभी नहीं सफल होता है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

६. **शिवाजी का चरित्र**—शिवाजी के निजी जीवन में नैतिकता का बड़ा ऊँचा स्थान था। वह निष्ठावान पुत्र थे, स्नेहमय पिता थे और विनम्र पति थे। परन्तु वह अपने युग के विचारों और रिवाजों से ऊपर न उठ सके, जिसमें वीरों और राजाओं की बात तो अलग रही पुरोहित वर्ग में भी कई पत्नियाँ और उप-पत्नियाँ रखने की प्रथा थी। वह अपने बचपन से ही प्रवृत्ति तथा प्रशिक्षण दोनों ही रूप से अति धार्मिक, जीवन भर संयमी, व्यसनों से मुक्त, साधु-संतों के प्रति आदरपूर्ण, और धार्मिक ग्रन्थों और धार्मिक कथाओं तथा भजनों के सुनने के भावुक प्रेमी रहे। किन्तु धर्म उनके लिए ठीक आचरण और उदारता का स्रोत था; इससे उनके मन में न उद्विग्नता हुई और न उनमें कट्टरता आयी। धर्म में सच्ची श्रद्धा, प्रत्येक धर्म के साधु-सन्तों (हिन्दू और मुसलमान दोनों) और सभी मतों के प्रति उनकी उदारता से मालूम होती है। स्त्रियों के प्रति उनका वीरोचित व्यवहार और अपने शिविर में नैतिकता का कठोर पालन उस युग का एक आश्चर्य है, और खाफीखाँ जैसे विरोधी आलोचक ने भी इस मामले में उनकी प्रशंसा की है।

उनमें एक जन्मजात नेता का व्यक्तिगत आकर्षण था और जो उन्हें जानते थे उन पर उनका जादू हो जाता था, और इस प्रकार वे देश के सर्वोत्तम तत्त्वों को अपनी ओर आकर्षित कर लेते थे और अपने अधिकारियों से अतिनिष्ठ सेवा प्राप्त कर लेते थे, तथा अपनी चमत्कारपूर्ण विजयों और चेहरे पर भीनी-भीनी मुसकुराहट के कारण वह अपने सैनिकों के लिए देवतुल्य थे। उनकी सफलता का एक मुख्य कारण था मानव-चरित्र की परख, क्योंकि सेनापतियों और गवर्नरों, राजनयिकों और सचिवों का उनका चुनाव कभी दोषपूर्ण न सिद्ध होता था, और उनका प्रशासन पूर्व प्रशासन की अपेक्षा बहुत उत्तम था।

उनकी सेना का संगठन निपुणता का नमूना था, प्रत्येक वस्तु पहले से ही एकत्र कर ली जाती थी और एक समुचित कारिन्दा के सुपुर्द कर दी जाती थी; गुप्तचरों की श्रेष्ठ व्यवस्था द्वारा उनको प्रस्तावित अभियान के क्षेत्र के विषय में अति सूक्ष्म जानकारी पहले से ही प्राप्त हो जाती थी; लम्बी दूरियों पर भी सेना के प्रभाग (डिवीजन) सफलतापूर्वक और इच्छानुसार मिला दिये जाते थे अथवा पृथक कर दिये जाते थे; वैरी का पीछा अथवा उसके मार्ग में रुकावट सफलतापूर्वक की जाती थी, और लूटा हुआ माल भी तेजी से और बिना किसी हानि के नियत स्थान पर पहुँचा दिया जाता था। उनकी जन्मजात सैनिक प्रतिभा इस बात से सिद्ध होती है कि उन्होंने युद्ध की वह प्रणाली सहज ही तैयार की जो उनके सैनिकों के जातीय चरित्र, देश की प्रकृति, उस युग के

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

हथियारों और उनके वैरियों की भीतरी दशा के अनुकूल थी। उनका शीघ्रगामी रिसाला, जो तीव्रगामी पैदल-सेना से संयुक्त था, औरंगजेब के उस युग में अजेय था। उनकी मृत्यु की एक शताब्दी बाद, उनकी अन्धाधुन्ध नकल करने वाले दौलतराव सिन्धिया ने वही युद्ध-कौशल अंग्रेजों के प्रति प्रयोग किया जब कि उनके पास अति तीव्र तोपें थीं और दक्षिण के अनेक नगरों में चहार-दीवारी थी[८] और वे रक्षक तोपों से सुसज्जित थीं, और फलतः वह नितान्त असफल रहा।

७. **शिवाजी की प्रतिभा का विश्लेषण**—शिवाजी की प्रतिभा का सही-सही मूल्यांकन न तो उनके राज्य के विस्तार से किया जा सकता है जो उन्होंने अपने आप निर्मित किया, और न ही उस संचित कोष के मूल्य से किया जा सकता है जो वह अपने पीछे छोड़ गये, वरन वह केवल उन दशाओं के सर्वेक्षण द्वारा ही किया जा सकता है जिनमें वह एक सम्पूर्ण-प्रभुत्व-सम्पन्न शासक बने।

वह एक सच्चे अन्वेषक और भारतीय इतिहास में नये मार्ग के निर्माता थे, यद्यपि उनके सामने कोई पूर्व उदाहरण या निर्देशन न था। जब उन्होंने अपने को स्वतन्त्र घोषित किया मुगल साम्राज्य अपने पूर्ण वैभव पर मालूम होता था। प्रत्येक स्थानीय सरदार जिसने उसके विरुद्ध बलवा किया, कुचल दिया गया। एक छोटे जागीरदार के लड़के के लिए उसकी शक्ति को चुनौती देना पागलपन का कार्य मालूम होता था और निश्चित विनाश को आवाहन देना था। परन्तु शिवाजी ने यह मार्ग चुना, और वह सफल हुए।

उनकी सफलता केवल उनकी राजनीतिक प्रतिभा के विश्लेषण द्वारा ही समझाई जा सकती है। सबसे प्रथम उनमें राजनीति में वास्तविकता की निश्चित विवेकशीलता थी, उनमें अपने समय की सही सम्भाव्यताओं का ज्ञान था जिसको कैवूर (Cavour) ने राजमर्मज्ञता का तत्त्व बताया है। उनकी वीरता और दिलेरी निम्न बातों से संयमित और अनुप्राणित होती रही—यह सहज भास कि उसके वास्तविक साधन कहाँ तक उपयोगी हो सकते थे, कोई कार्य-विधि या नीति कब तक अपनाई जाय और कब रुक जाना आवश्यक है। इस राजनीतिक अन्तर्दृष्टि के अभाव के कारण ही उनके उतावले लड़के शम्भूजी का दुखमय अन्त हुआ और उसने शिवाजी के जीवन भर के काम पर पानी फेर दिया।

यह शिवाजी की प्रतिभा थी कि वह मनुष्य को देखकर ही उसके चरित्र

---

[8] Owen's Selections from Wellington's Despatches, 284, 289.

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

को समझ जाते थे और अपने कार्य के लिए सबसे उपयुक्त साधन ही जुटाते थे। इसका प्रमाण यह है कि उनके कर्मचारी उनकी अनुपस्थिति में भी उनकी आज्ञाओं का सफलतापूर्वक निर्वाह करते थे। उनके शासन-काल के अनेक अभियानों का नेतृत्व उन्होंने स्वयं नहीं किया वरन उनके सेनापतियों ने किया जो लगभग सदा ही योजना के अनुसार उनके आदेशों का पालन करते थे। एशियाई राजा के शासन में यह एक नया कमाल है, जहाँ प्रत्येक बात स्वामी की उपस्थिति पर निर्भर रहती है। शिवाजी की सेवा में प्रशिक्षण प्राप्त करने से और इसके साथ ही मराठा चरित्र में निजी स्वतन्त्रता और उपक्रम के कारण विशृंखल मराठा जाति शम्भूजी की हत्या के बाद भी अठारह वर्ष तक शक्तिशाली औरंगजेब के समस्त साधनों का मुकाबला करती रही और अन्त में उसको पराजित कर दिया, यद्यपि उसका न कोई राजा था और न राजधानी थी जो राष्ट्रीय प्रतिरक्षा का केन्द्र होती।

उनके राज्यकाल ने अपने देश को शान्ति और व्यवस्था प्रदान की, स्त्रियों के सम्मान की रक्षा की, बिना मतभेद के प्रत्येक सम्प्रदाय को अपने धर्म पर आचरण करने की स्वतन्त्रता दी, प्रत्येक मत (मुसलमान व हिन्दू) के धर्मपरायण साधु व फकीरों को राज्याश्रय दिया, और सार्वजनिक सेवा के द्वार बिना किसी मत या जाति के भेद के अपनी समस्त प्रजा के लिए एक-समान खोल दिये।[९] यह ऐसे राज्य के लिए आदर्श नीति थी जिसमें भारत की भाँति मिश्रित जनसंख्या निवास करती थी।

उनकी मुख्य देन शान्ति तथा विवेकपूर्ण भीतरी प्रशासन थे। इन उत्तम दशाओं की केवल स्थिरता ही शिवाजी के कार्य को स्थायी करने के लिए और राष्ट्रीय ऐक्य तथा विकास के लिए आवश्यक थी। परन्तु उनकी राजनीतिक कृतियों को यह स्थिरता न प्राप्त हो सकी। केवल उनका नाम और उदाहरण आने वाली पीढ़ियों के सर्वोत्तम मस्तिष्कों को जीवन और प्रसाशन के आदर्शों के लिए प्रेरणा देते रहे, यद्यपि इनके साथ निरर्थक सन्ताप भी मिश्रित थे।

---

९ वह स्वयं हिन्दू थे, विश्वास में निश्छल और व्यवहार में कट्टर, और फिर भी उन्होंने अनेक मुसलमान अधिकारियों को सर्वोच्च पद दिये जैसे कि मुंशी हैदर (जो औरंगजेब की सेवा में पहुँचकर मुगल साम्राज्य का मुख्य न्यायाधीश बना), सिद्दी सम्बल, सिद्दी मिस्त्री और दौलतखाँ (नौ-सेनापति) और इनके अतिरिक्त सिद्दी हलाल और नूरखाँ जैसे सेनापति। (दिल० १. १००)। उन्होंने अपने राज्य में मुस्लिम 'काजियों' को वैधानिक मान्यता दी।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

८. **शिवाजी का राजनीतिक आदर्श और उनकी कठिनाइयाँ**—क्या शिवाजी ने केवल क्रीग-स्टाट (Krieg-staat) की नींव डाली ? (देखिए पृष्ठ ३७३) । क्या वह लूट-खसोट के एक उपक्रमी उद्यमकर्ता मात्र थे—अलाउद्दीन खिलजी या तैमूर के हिन्दू संस्करण ?

मेरे विचार में यह मत ठीक न होगा । एक बात अवश्य माननी पड़ेगी कि उनको अपने राजनीतिक विचारों को कार्यान्वित करने के लिए शान्ति नहीं मिली । उनके लघु जीवन का समस्त काल अपने वैरियों के साथ एक संघर्ष रहा जो तैयारी का काल था न कि उपभोग का । उनका समस्त ध्यान दैनिक युक्तियों सहित दैनिक खतरों का मुकाबला करने में व्यतीत होता था और उनको शान्तिपूर्वक सुनियोजित राजनीतिक भवन निर्माण करने का अवसर ही नहीं मिला ।

विस्तृत गंगा के मैदान में और 'देश' क्षेत्र में जो पूर्व की ओर दक्षिण भारत में जाता है, प्रकृति ने राज्यों के मध्य कोई सीमाएँ निश्चित नहीं की हैं । यहाँ किसी राज्य का विस्तार अपने पड़ोसियों के मुकाबले में उसकी शक्ति के अनुरूप प्रतिदिन बदलता रहता है । उनमें एक पीढ़ी से अधिक काल के लिए स्थिर संतुलन नहीं रह सकता । प्रत्येक अन्य दूसरे को यथाशक्ति आत्मरक्षा तथा आक्रमण के विचार से धकेलता है । यदि वह चाहता है कि उस पर आक्रमण न हो और दूसरे उसे हड़प न कर जायँ, तो उसे शस्त्रास्त्र से सुसज्जित और दूसरों पर आक्रमण करने के लिए तैयार रहना चाहिए । जहाँ पड़ोसियों के साथ संघर्ष सामान्य दशा है वहाँ किसी राज्य के केवल अस्तित्व के लिए ही आवश्यक दशाएँ ये हैं—विशाल सशस्त्र सेना, चौबीस घण्टे के लिए सजगता, और प्रथम आक्रमण करने की तैयारी । इस बुराई का केवल एक इलाज है कि सम्पूर्ण देश में एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक व्यापक साम्राज्य स्थापित कर दिया जाय ।

शिवाजी एक क्षण के लिए दिल्ली की सरकार की शान्तिपूर्ण मनोवृत्ति अथवा सन्धि के समुचित पालन के विषय में निश्चित नहीं हो सकते थे । अकबर के समय से दकन में मुगल विस्तार के पूर्व-इतिहास के कारण शिवाजी को सतर्क रहना आवश्यक था । सम्पूर्ण दक्षिण भारत को राज्य में मिलाने की शाही नीति शिवाजी के लिए उतनी ही स्पष्ट थी जितनी आदिलशाह या कुतुबशाह के लिए । उसके कार्यान्वित करने में केवल समय का प्रश्न था, और दक्षिण की प्रत्येक शक्ति को केवल अपने जीवन के लिए मुगलों से स्थायी युद्ध जारी रखना मजबूरी की बात थी । अतएव शिवाजी ने दकन में मुगल राज्य-क्षेत्र लूटने का कोई अवसर हाथ से न निकलने दिया ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

बीजापुर से उनके सम्बन्ध कुछ भिन्न थे। केवल बीजापुर राज्य पर ही आक्रमण करके वह अपना सिर उठा सकते थे अथवा अपने राज्य का विस्तार कर सकते थे। अपने पूर्व-स्वामी के विरुद्ध विद्रोह करना ही उनके अस्तित्व की आवश्यक शर्त थी। परन्तु जब, लगभग १६६२ में, उनके और आदिल-शाही मन्त्रियों के बीच समझौता हो गया, तो उन्होंने बीजापुर राज्य के मुख्य भाग को परेशान करना बन्द कर दिया। बीजापुरी जागीरदारों के प्रति जिनकी जागीरें उनके राज्य के निकट थीं, उनको युद्ध जारी रखना अनिवार्य था जब तक उन्होंने कोल्हापुर, उत्तर कनारा और दक्षिण कोंकण उनके हाथ से न छीन लिये। कर्नाटक क्षेत्र में, अर्थात धारवाड़ और बेलगाँव जिलों में, उनकी मृत्यु के समय तक यह संघर्ष अनिर्णीत था। उन सूबों के साथ जो उनके स्वाभाविक विस्तार के मार्ग में थे वह शान्तिपूर्वक नहीं रह सकते थे, यद्यपि वह बीजापुर की केन्द्रीय सरकार को चुनौती नहीं देना चाहते थे। सन् १६७२ में अली द्वितीय की मृत्यु, बालक आदिलशाह के सिंहासनारोहण, राजधानी में विभिन्न विरोधी सामन्तों में संघर्ष, और सरकार के विघटन के कारण यह मनोवृत्ति बदल गयी। किन्तु १६७९ में मुगल आक्रमण के दौरान शिवाजी ने बीजापुर की बहुत सहायता की।

९. **जनमन पर उनका प्रभाव**—शिवाजी का वास्तविक बड़प्पन उनके चरित्र और व्यावहारिक योग्यता में था, न कि विचारों की मौलिकता अथवा राजनीतिक दूरदर्शिता में। दूसरों के चरित्र में सही और अचूक अन्तर्दृष्टि, व्यवस्था की कुशलता, और परिस्थितियों में जो व्यावहारिक अथवा सबसे अधिक लाभप्रद होता उसका सहज आभास—ये कारण थे जीवन में उनकी सफलता के। इनमें हम उनकी व्यक्तिगत नैतिकता तथा लक्ष्य की महानता भी शामिल कर सकते हैं, जिनके कारण उनकी ओर उनके समाज के सर्वोत्तम मनुष्य आकर्षित हो जाते थे, और उनकी व्यापक सहिष्णुता तथा सबके लिए समान न्याय पर बल ने उनके शासन में सभी वर्ग के लोगों को सन्तुष्ट रखा। उन्होंने उत्साहपूर्वक व्यवस्था स्थापित की और अपने राज्य में सर्वत्र नैतिक नियमों का पालन कराया, और अन्य कहीं की अपेक्षा उनके राज्य में लोग अधिक सुखी थे।

उनकी शानदार सफलताओं ने उनके समकालीनों पर गहरा प्रभाव डाला, और उनका नाम मराठा जाति में नवीन जीवन पैदा करने में जादू का काम कर गया। उनका राज्य उनकी मृत्यु के नौ वर्ष के भीतर ही समाप्त हो गया, परन्तु उनके जीवन का अनश्वर और अमर कार्य था मराठों को स्वतन्त्र और आत्म-निर्भर जाति बनाना जिसमें उनके ऐक्य और उच्च प्रारब्ध का बोध हो

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

और उनकी सबसे अधिक मूल्यवान देन थी वह भावना जो उन्होंने उस जाति में फूँकी।

दकन की तीन मुस्लिम शक्तियों के परस्पर संघर्ष और भीतरी दुर्बलता अवश्य ही शिवाजी के उत्थान के सहायक कारण थे। परन्तु उनकी सफलता का उच्चतर स्रोत उनके वैरियों की अयोग्यता की अपेक्षा कुछ और ही था। मैं उनको अन्तिम महान रचनात्मक प्रतिभाशाली व्यक्ति और राष्ट्र-निर्णायक मानता हूँ जो हिन्दू जाति ने उत्पन्न किया। उनकी प्रणाली उनके ही मस्तिष्क की उपज थी और, रणजीतसिंह के विपरीत, उन्होंने अपने प्रशासन में कोई विदेशी सहायता नहीं ली थी। उनकी सेना को उन्हीं के आदमी कवायद कराते थे और वे ही उसकी कमान में थे, न कि फ्रांसीसी। जो कुछ उन्होंने निर्मित किया बहुत दिनों तक रहा; एक शताब्दी बाद भी पेशवाओं के समृद्ध काल में उनके कार्य और उनके द्वारा स्थापित संस्थाओं की प्रशंसा और स्पर्द्धा की जाती थी।

शिवाजी पढ़े-लिखे न थे; उन्होंने पढ़कर कुछ नहीं सीखा। उन्होंने किसी शाही दरबार, सुसभ्य नगर तथा व्यवस्थित शिविर का अवलोकन किये बिना ही अपना राज्य और सरकार बनायी। उन्होंने किसी अनुभवी मन्त्री अथवा सेनापति से कोई सहायता अथवा परामर्श नहीं प्राप्त किया। परन्तु वे अपनी सहज प्रतिभा के कारण ही, अन्य किसी सहायता के बिना, एक सुसम्बद्ध राज्य, एक अजेय सेना, और प्रशासन की एक व्यावहारिक एवं कल्याणकारी व्यवस्था स्थापित कर सके।

उनके उत्सर्ग से पहले मराठा जाति कई दक्षिणी राज्यों में परमाणुओं की भाँति बिखरी हुई थी। उन्होंने उसको एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में संघनित किया। और उन्होंने यह कार्य चार बड़ी शक्तियों—मुगल साम्राज्य, बीजापुर, पुर्तगाली भारत और जंजीरा के अबीसीनियाइयों—के घोर विरोध के बावजूद किया। किसी अन्य मध्यकालीन हिन्दू ने इतनी कार्यक्षमता नहीं प्रदर्शित की।

उनके उदय से पूर्व, मराठे केवल भृत्य थे, विदेशियों के नौकर मात्र। वे राज्य की सेवा में थे, परन्तु उसके प्रबन्ध में उनका कोई हाथ न था; वे सेना में अपना खून बहाते थे, परन्तु युद्ध अथवा शान्ति की व्यवस्था में उनका कोई भाग न था। वे सदा अधीन थे, नेता कभी नहीं।

शिवाजी प्रथम महापुरुष थे जिन्होंने बीजापुर और दिल्ली को चुनौती दी और इस प्रकार अपने देशवासियों को सिखाया कि वे युद्ध में स्वतन्त्र रूप से नेतृत्व कर सकते हैं। फिर, उन्होंने एक राज्य स्थापित किया और अपने

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

आदमियों को सिखाया कि उनमें राज्य के सभी विभागों में प्रशासन करने की क्षमता है। उन्होंने अपने ही उदाहरण द्वारा अपने लोगों को सिखाया कि हिन्दू जाति एक राष्ट्र का निर्माण कर सकती है, एक राज्य की नींव डाल सकती है, वैरियों को हरा सकती है; वे अपनी प्रतिरक्षा स्वयं कर सकते हैं; वे साहित्य और कला, वाणिज्य तथा उद्यम का संरक्षण और उन्नयन कर सकते हैं; वे स्वयं अपनी नौ-सेनाएँ और महासागर पर चलने वाले जहाजी बेड़े रख सकते हैं, तथा विदेशी के प्रति बराबर के दर्जे पर समुद्री युद्ध लड़ सकते हैं। उन्होंने आधुनिक हिन्दुओं को सिखाया कि वे अपने पूर्ण विकास को प्राप्त करने की क्षमता रखते हैं।

उन्होंने साबित किया कि हिन्दू जाति अब भी केवल जमादार (अ-राजादिष्ट अधिकारी या नान-कमिशंड आफिसर्स) और चितनिस (लिपिक) ही नहीं वरन मनुष्यों के शासक और राजाओं का राजा (छत्रपति) भी उत्पन्न कर सकती है। सम्राट जहाँगीर ने इलाहाबाद का अक्षयबट वृक्ष जड़ से कटवा डाला और उसके शेष ठूँठ पर बहुत गरम लोहे का हंडा ठुकवा दिया। वह प्रसन्न हुए कि उन्होंने उसे समाप्त कर दिया। परन्तु क्या हुआ? एक ही वर्ष के भीतर वृक्ष फिर उग आया और उसने अपने भारी अवरोध को एक ओर फेंक दिया!

शिवाजी ने सिद्ध कर दिया कि हिन्दू जाति का वृक्ष वास्तव में मृत नहीं है और वह राजनीतिक बन्धन, प्रशासन से विलगाव और कानूनी दमन के सदियों के भारी बोझ से दबकर भी उठ सकता है; वह नयी पत्तियाँ और शाखाएँ विकसित कर सकता है; वह अपना सिर फिर आकाश तक ऊँचा कर सकता है।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

सहायक ग्रन्थ

बखर

मराठा इतिहास का राजकाल, जिससे हमारा अभिप्राय शिवाजी और उनके दो पुत्रों के शासनकाल (१६६०-१७००) से है, पेशवा काल (१७०७-१८०२) से मूलतः भिन्न है, न केवल ऐतिहासिक अभिलेखों के विस्तार वरन उनके रूप में भी। पेशवाओं के शासन के समय में हमको अंग्रेजी, फारसी और मराठी समकालीन प्रपत्रों की बहुल और विभिन्न राशि उपलब्ध है जो पेशवाओं के शासन पर प्रकाश डालती है। परन्तु जब हम शिवाजी और उनके पुत्रों की जीवनियों का अध्ययन करते हैं, तो हम ज्ञात करते हैं कि राजकीय प्रपत्रों, ब्यौरेवार सरकारी इतिहासों, निजी संस्मरणों और सार्वजनिक पत्रों की बहुत ही कमी है जो हम मुगल इतिहास के सम्बन्ध में पाते हैं। इसका कारण यह भी है कि व्यस्त राजा और उनके दो लड़कों के समय में ऐसी ऐतिहासिक सामग्री बहुत ही कम लिखी गयी; और दूसरे, राजकाल के अन्त में मराठा राजधानी और प्रत्येक मराठा किले पर मुगलों का अधिकार हो गया और वहाँ के राज्य-अभिलेख जला दिये गये अथवा फेंक दिये गये। मराठी भाषा में इस राजकाल के मूल अभिलेख, जो हमको वर्तमान काल में उपलब्ध हैं, वे कुछ अपवादों को छोड़कर निजी कानूनी प्रपत्र हैं—जैसे अनुदान के पत्र, मुकदमों के फैसले, विभाजन-पुरस्कार, प्रतिवेदन पत्र, आज्ञाएँ आदि जिनको निजी परिवारों ने व्यक्तिगत दस्तावेजों (अधिकार-पत्रों) के बतौर इतने दिनों तक सुरक्षित रखा है। इसलिए शिवाजी और शम्भूजी से सम्बन्धित वास्तविक ऐतिहासिक समकालीन अभिलेख केवल वे हैं जो अंग्रेजी, फारसी, पुर्तगाली और राजस्थानी भाषाओं में उपलब्ध हैं, परन्तु मराठी भाषा में एक भी नहीं है।

यह लगभग ठीक ही है कि मराठी भाषा में शिवाजी की जीवनी का प्रथम विवरण उनके सरकारी इतिहासकार और अभिलेखक वाकनिस ने तैयार किया। परन्तु उसकी मूल प्रति जो लगभग १६८५ में पूरी की गयी अब खो गयी है, और आधुनिक समय में केवल उद्धरण ही हमको प्राप्त हैं जो खांडोजी अनाजी मलकरे ने सम्भवतः एक पीढ़ी बाद तैयार किये, जिसने इस स्रोत में शिवाजी के समय में अपने पिता अनाजी रंगनाथ मलकरे की नियुक्ति और प्रत्येक हरकत जैसी अनावश्यक बातें ठूंस दी हैं और उनका जिक्र उतनी ही बार करना आवश्यक समझा है जितनी बार कि स्वयं प्रधान मन्त्री का—ठीक यही हमको **बखर** के वर्तमान रूप में मिलता है। मेरी राय में उसको वाकनिस-मलकरे बखर कहना अधिक उपयुक्त होगा, क्योंकि यह दो मनुष्यों का संयुक्त

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कार्य है—वाकनिस ने मूल केन्द्र-विन्दु की पूर्ति की और मलकरे ने परिवर्धन और सज्जा को जोड़ दिया ।

इस ग्रन्थ को प्रायः **९१ कलमी बखर** के नाम से पुकारते हैं, अर्थात् ९१ खण्डों में विवरण । वी. एस. वाकसकर ने मूल पाठ की विभिन्न आवृत्तियों का अति महत्त्वपूर्ण सटिप्पण संस्करण (बड़ौदा, १९३०) प्रकाशित किया है जो पहले पार्सनिस ने 'भारतवर्ष' नामक पत्रिका में, राजवाड़े ने 'प्रभात' में तथा साने ने 'काव्य-इतिहास संग्रह' में छापा था, जिसके साथ राजगढ़ पांडुलिपि का अंग्रेजी अनुवाद है जिसे लेफ्टिनेन्ट फ्रिसेल ने १८०६ में पूरा किया (और जो सर्वप्रथम फोरेस्ट ने सैलेक्शन्स—Selections—में छापा·····मराठा पुस्तकमाला, खण्ड १), और **तारीखे शिवाजी** नाम का फारसी का मेरा अनुवाद (इण्डिया आफिस लाइब्रेरी पांडुलिपि फारसी १९५७, ब्रिटिश म्यूजियम की रयू की कैटेलॉग, १ पृष्ठ ३२७) और जो सर्वप्रथम 'माडर्न रिव्यू' १९०७ में प्रकाशित हुआ ।

शिवाजी का सर्वप्रथम मराठी विवरण **सभासद बखर** में ज्यों का त्यों सुरक्षित है, जो १६९७ में पूरा किया गया (वाई. आर. गुप्ते के पास एक प्राचीन पांडुलिपि के विवरण अनुसार) । इसको कृष्णाजी अनन्त (सभासद) दरबारी ने शिवाजी के पुत्र राजाराम की प्रार्थना पर लिखा । फ्रांकोई मार्टिन (Francois Martin) के संस्मरण (*Memoires*) से हम ज्ञात करते हैं कि कृष्णाजी राजाराम के मन्त्रियों में महत्त्व के विचार से पेशवा से दूसरे नम्बर पर ही था और यह कि पांडिचेरी के फ्रांसीसियों ने राजाराम के दरबार में उसे अपना संरक्षक बना लिया था । उसकी पुस्तक अनेक उपाख्यानों और दैवी तत्त्वों से मुक्त है जो **९१ कलमी बखर** की साख को कम करते हैं, और मलकरे की अपेक्षा उसका लेखक उच्चतर बुद्धि को प्रदर्शित करता है । परन्तु **सभासद बखर** भी यद्यपि शिवाजी के एक समकालीन ने लिखी है, राजकीय प्रपत्रों और लिखित टिप्पणों पर आधारित नहीं है, क्योंकि यह तब लिखी गयी जब राजाराम जिंजी किले में बेतरह घिरा हुआ था, और वहाँ वह सब कुछ पीछे छोड़कर बाल-बाल बचकर और पकड़े जाने के भय से इधर-उधर मारा फिरता हुआ महाराष्ट्र से भागकर आया था । यह आशा नहीं की जा सकती है कि ऐसे स्वामी और उसके नौकर, जो अपनी जान हथेली पर लेकर निर्दयी पीछा करने वालों से बचकर भाग रहे थे, पूरे दक्षिण के प्रायद्वीप को पार करते हुए इतने खतरे के समय अपने साथ कागज भी रखते । अतएव सभासद की पुस्तक केवल उसकी स्मृति पर आधारित है—वह स्मृति जो एक वृद्ध पुरुष की थी और जो अनेक कष्ट और यातनाओं को सहन कर रहा था । परन्तु वह शिवाजी का समकालीन और उनकी सेवा में था, और मल्हार रामराव चितनिस ने उस राजा की मृत्यु के १३० वर्ष पीछे लिखा और उसके पास शिवाजी या शम्भूजी के समय के कोई सरकारी प्रपत्र न थे, क्योंकि उसने एक भी प्रपत्र से उद्धरण नहीं दिया है, जिससे साबित होता है कि उसने समस्त तथ्य सभासद से लिये हैं और उसके पास सूचना का कोई स्वतन्त्र स्रोत न था । इसलिए मैंने चितनिस को एकदम अस्वीकार कर दिया है ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

परन्तु फिर भी सभासद शिवाजी का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण मराठी विवरण है और मराठा पक्ष की ओर से वर्णन का मुख्य स्रोत है। उस भाषा में बाद के जीवन-चरित्रों ने अधिकांश में **सभासद बखर** को आधार माना है और उनमें संस्कृत उद्धरण, चमत्कार, अलंकृत भाषा, सामान्य प्रकरण, और विषय की दृष्टि से कल्पित विवरण, और कहीं-कहीं जाली पत्रों का समावेश कर दिया है।

इन मिथ्या **बखरों** में से केवल एक का परीक्षण आवश्यक है, क्योंकि कुछ आधुनिक मराठा लेखकों ने उसको विश्वसनीय माना है। यह **शिव-दिग्विजय** है जिसे पी० आर० नन्दुरबार्कर और एल० के० डाँडेकर ने प्रकाशित किया (बड़ौदा १८९५); इसको खाँडो बल्लाल (शिवाजी के मन्त्री बालाजी आवजी) द्वारा १७१८ में लिखित गलत बताया गया है, वास्तव में इसे किसी एक ऐसे आधुनिक लेखक ने मनगढ़न्त लिखा है जो यूरोपीय शैली पर लिखित देशी भाषाई उपन्यासों से परिचित है और जिसने बंकिम चन्द्र चटर्जी की पद्धति को अपनाया है। अति भावावेश (विशेषकर पृष्ठ ४५३, २०८, ४४४ पर), अलंकृत भाषा का शब्दाडम्बर और विषयान्तर, तथा अति हास्यास्पद ऐतिहासिक कालभ्रम बहुत पाये जाते हैं (विशेषकर पृष्ठ ५८, ५९, १३८, १९९, ३५७, ४४७, ४३४, ४४७)। लेखक ने बताया है कि शिवाजी के राज्याभिषेक के अवसर पर एक अंग्रेज 'सेनापति' उपस्थित था और सन १६७४ में उनके वृहद कक्ष को सजाने के लिए 'कलकत्ते से' कारीगर बुलाये गये ! शिवाजी ने अपनी माता के देहान्त के 'दो वर्ष बाद' उनके सामने मस्तक नवाया (पृष्ठ २५६)। तानाजी मालूसरे अपनी मृत्यु के सात वर्ष बाद हैदराबाद आया (पृष्ठ ३०१)। मिर्जा राजा जयसिंह १६६७ में जयपुर आ गये और वहीं उनकी मृत्यु हो गयी, जबकि जयपुर नगर की स्थापना वास्तव में १७२७ में हुई (पृष्ठ ३५७)। अनेक अंशों से यह साबित होता है कि आधुनिक प्रभू कायस्थों ने, जो शिवाजी की सेवा में थे, अपनी जाति के लोगों को गौरवान्वित करने के लिए ऐसी मनगढ़न्त की है (पृष्ठ १७२-१७६, ३४७, ३६८)। इसमें कथित अनेक घटनाओं को ज्ञात इतिहासों ने झूठा सिद्ध कर दिया है।

मराठी में संक्षिप्त कालक्रम

जेधे शकावली या संक्षिप्त कालक्रम, जितना वह वर्तमान समय में हमको उपलब्ध है, १६१८ से १६९७ तक है, और उसमें न कोई औपचारिक भूमिका है अथवा न कोई उपसंहार है। उसकी यथार्थता तीन बातों पर निर्भर है, अर्थात (क) जेधों का उनके विषयों में निजी ज्ञान जो उन्होंने लिखा, (ख) प्रत्येक घटना के घटित होने के बाद ही उसको अंकित करने में उनकी तत्परता और न कि उसे केवल बहुत आगे चलकर अपनी धूमिल और दूरवर्ती स्मृति द्वारा याद रखना और फिर अंकित करना, और (ग) उसकी एकमात्र पांडुलिपि, (जिसकी प्रतिलिपि १८वीं शताब्दी में की गयी) जो हमको आज उपलब्ध है, के लिपिकार की शुद्धता। इस परिवार ने क्रमबद्ध घटनाओं को एक सिली हुई जिल्ददार पुस्तक के रूप में नहीं लिखा (अथवा एक बड़े परिवार में बाइबिल, जैसा कि प्राचीन अंग्रेज परिवारों में किया जाता था), परन्तु अलग-अलग कागजों पर लिखा जो बाद को एकत्र कर दिये गये, किन्तु जिनके विषय में हम नहीं जानते

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कि उनमें कितनी शुद्धता है अथवा कितने अंश छूट गये हैं। १६६० के पूर्व के काल के लिए—जिस वर्ष में शिवाजी ने सबसे पहले अपने पैरों पर स्वयं खड़े होने की शक्ति का प्रदर्शन किया, और जबकि बीजापुर के पूर्व सामन्तों ने जेधे सामन्तों के समान, यह महसूस किया कि अलग रहने से या दोनों ओर टाँग अड़ाये रखने की अपेक्षा (जो कान्होजी जेधे के विरुद्ध भावे का आरोप है, शिवाजी के साथ हो लेना अधिक सुरक्षित है—जेधे कालक्रम की तारीखें प्रायः स्पष्टतः अशुद्ध हैं (उदाहरणार्थ, इब्राहीम आदिलशाह की मृत्यु, दौलताबाद का पतन, इत्यादि)। बाद के समय के लिए भी कुछ महीने और वर्ष गलत दिये गये हैं, अथवा उनकी नकल गलत की गयी है (जैसे, औरंगजेब से भेंट और वैलौर का पतन)। कई इन्दराज, विशेषकर मुस्लिम राज्यों के सम्बन्ध में, जेधे के लिपिकारों ने अन्य स्रोतों से केवल ले लिये, क्योंकि हम जानते हैं कि ऐतिहासिक तारीखों के संक्षिप्त फारसी गुटके अठारहवीं तथा पूर्व-उन्नीसवीं शताब्दियों में उच्च कुलों में परिचालित थे। अतएव जेधे द्वारा दी गयी किसी संदिग्ध तारीख पर हम उसी दशा में विश्वास कर सकते हैं जबकि किसी दूसरे अधिकारी व्यक्ति ने उसे माना हो।

सामान्य रूप से हम यों कह सकते हैं कि यदि जेधे ने एक वर्ष में तीन घटनाओं का उल्लेख किया है तो उनमें एक की तारीख सही है, दूसरी की बिलकुल अशुद्ध है, और तीसरी की तारीख ऐसी है जिस पर अन्य अधिकृत व्यक्ति चुप हैं। यह तीसरी तारीख केवल इस आधार पर ही कैसे स्वीकार की जा सकती है कि दी हुई तारीखों में से एक शुद्ध है? एक प्रकार से उसको अस्वीकार करना भी तर्कसंगत है, क्योंकि उस वर्ष में दूसरी तारीख अवश्य ही अशुद्ध है (देखिए पूर्व में पृष्ठ १५६)।

ऐसी संक्षिप्त **शकावलियाँ** (कालक्रम) अठारहवीं शताब्दी में महाराष्ट्र के उच्च कुल के परिवारों में प्रयुक्त की जाती थीं, और ये अब केवल अंशों में ही उपलब्ध हैं, पूर्ण नहीं। उनमें सभी में सामान्य रूप से प्रमुख घटनाओं का एक सार होता था; परन्तु प्रत्येक परिवार उनमें ऐसे इंदराज कर देता था जो उनके स्वयं के पूर्वजों के सम्बन्ध में थे अथवा जो घटनाएँ उनके निकटवर्ती स्थानों में घटित होती थीं, और इसलिए हम उनको एक-दूसरे की जाँच के रूप में नहीं प्रयुक्त कर सकते। मूल पांडुलिपियों की मोदी की प्राचीन हस्तलिपि के पढ़ने में भी अनेक अशुद्धियाँ की गयीं।

संस्कृत की प्रशंसात्मक कविताएँ

शिवाजी के काल की कुछ संस्कृत कविताएँ बच रही हैं और वर्तमान शताब्दी में वे प्रकाशित कर दी गयी हैं। इनमें से केवल दो का ऐतिहासिक महत्त्व है, यद्यपि यह केवल एक छोटे-से प्रसंग के लिए हैं, और ये हैं जयराम पिंडे कृत 'परनाल-पर्वत-ग्रहण-आख्यानम्' और निश्चल पुरी कृत 'शिवराज-राज्याभिषेक-कल्पतरु'। शेष का कोई महत्त्व नहीं है।

शिवाजी के राजकवि परमानन्द ने भोंसले राज-परिवार पर एक संस्कृत महाकाव्य लिखा; एस० एम० दिवेकर ने १९२७ में **शिव-भारत** नामक शीर्षक

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के अन्तर्गत मराठी अनुवाद करके उसका सम्पादन किया। यह खंड-काव्य है और ३१ सर्गों तथा ९ छन्दों में समाप्त हुआ है, और वह अप्रैल, १९६१ तक का वर्णन देकर एकदम समाप्त हो जाता है। अभिज्ञ लोग इसे एक समकालीन व्यक्ति द्वारा लिखित उत्तम श्रेणी का ऐतिहासिक प्रामाणिक ग्रंथ मानते हैं। परन्तु स्वयं लेखक ने ऐसा कोई दावा नहीं किया है। उन्होंने अपनी कविता का शीर्षक **सूर्य-वंशम्** दिया है जिससे यह स्पष्ट होता है कि उनका साहित्यिक आदर्श कालिदास का काव्य **रघुवंशम्** था जिसमें प्रागैतिहासिक काल के पौराणिक राजाओं की गाथाएँ हैं। परमानन्द ने भी अपनी कविता को **अनु-पुराण** का नाम दिया है, जिससे उसकी गणना पौराणिक कथाओं के अन्तर्गत की जा सकती है और उन्होंने उसके लिए ऐतिहासिक सत्य का दावा नहीं किया है।

वास्तव में यह केवल एक दरबारी खुशामदी द्वारा लिखित प्रशंसात्मक कविता है। भारत में हिन्दू राजाओं के दरबार में ब्राह्मण कवि उनकी प्रशंसा में साहित्य द्वारा मिथ्या-कार्य की अतिता कर देते थे, मुगल-सम्राटों के फारसी इतिहासकार भी ऐसा ही करते थे; इन व्यक्तियों का प्रशिक्षण, जीवन की विधि और साहित्य के नमूने सभी उन्हें तथ्यों को सही तौर पर लिखने से दूर रखते थे। अधिक से अधिक वे अपने वर्ग की सर्वोत्तम परम्पराओं को दुहराते थे। परमानन्द ने अपने संरक्षक की अतिरंजित प्रशंसा में अबुल फजल को भी मात कर दिया है। उन मुस्लिम लेखकों ने अकबर की प्रशंसा करने में उसे आसमान पर चढ़ा दिया है, परन्तु साथ ही ऐसी बातों का समावेश नहीं किया है जो मानवी शक्ति के बाहर हैं; परन्तु हिन्दू चापलूसों ने अपने वीर में दैवी शक्तियाँ भी बतायी हैं! जब हम उनको समकालीन फारसी इतिहासों की कसौटी पर जाँचते हैं तो परमानन्द के तथ्यों सम्बन्धी अनेक कथन झूठे सिद्ध होते हैं। (महाराष्ट्र में एक विचारधारा के लेखक अब उसे हाल की तंजौर की कल्पित मनगढ़न्त मानते हैं।)

यूरोपीय कोठी अभिलेख और अन्य गैर-मराठी स्रोतों का महत्त्व

बम्बई तट पर और भीतर की ओर स्थित अंग्रेजी कोठी अभिलेख तारीखों और तथ्यों के विचार से सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। कहीं-कहीं अंग्रेज व्यापारियों ने स्पष्ट उल्लेख कर दिया है कि जो बातें उन्होंने सुनी और जिनका उल्लेख उन्होंने तुरन्त ही बाद कर दिया एक-दूसरे की इतनी विरोधी हैं कि उनकी समझ में नहीं आता कि वे उनमें से किस पर विश्वास करें। परन्तु, इसके विपरीत, राजापुर और कारवार के अंग्रेजों ने वैतनिक भेदियों को सेवा में रखा था जो शिवाजी के राज्य-क्षेत्र में घूमते रहते थे और उनकी कृतियों तथा योजनाओं के समाचार लाते थे; विभिन्न कोठियों द्वारा प्राप्त सूचना से वे एक-दूसरे को ठीक कर लेते थे; और किसी झूठी अफवाह का प्रायः आगे की तारीख में विरोध करके उसे गलत बता दिया गया है। फिर, इन कोठी अभियानों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इनकी मूल पांडुलिपि सुरक्षित है और बाद को उसमें कोई मिलावट या परिवर्द्धन नहीं किया गया है।

पांडीचेरी के फ्रांकोई मार्टिन (Francois Martin) के *Memoires* (संस्मरणों) का महत्त्व शिवाजी के कर्नाटक अभियान के सम्बन्ध में बहुत

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अधिक है। उसके प्रतिनिधि प्रायः शिवाजी के शिविर में उपस्थित रहते थे और जो रिपोर्टें वे देते थे उनको तुरन्त ही उसकी दैनिकी में अंकित कर लिया जाता था। मद्रास के अंग्रेजों ने भी एक बुद्धिमान ब्राह्मण को दो या तीन बार शिवाजी के पास भेजा। ऐसे गवाहों की रिपोर्टें मराठी पुस्तकों में दिये गये कर्नाटक अभियान के वर्णन का निराकरण करती हैं। जेसुइट पादरियों का १६७७ (मदुरा) का वार्षिक विवरण अधिकतर अशुद्ध है और अफवाहों पर आधारित है।

पुर्तगाली सरकार के अभिलेख अपने सीमित क्षेत्र के लिए तथा शिवाजी और उनके पड़ोसियों के प्रति अपने सम्बन्धों के लिए बहुत सही हैं। उनके सरकारी पत्रों और दैनिकियों की तुरन्त नकल कर ली जाती थी और उसी समय से वह अपरिवर्तित दशा में ज्यों की त्यों सुरक्षित हैं। डचों ने शिवाजी के राज्य के केवल एक छोटे-से भाग को छुआ है और उनकी रिपोर्टें उनसे इतनी दूरी से लिखी गयी थीं कि किसी एकल घटना अथवा विवरण को छोड़ कर उनका कोई महत्त्व नहीं है।

शिवाजी के इतिहास के लिए फारसी और राजस्थानी स्रोतों का मूल्य अत्यधिक है। फारसी में हमको राज्य-संग्रहालय के अभिलेखों पर आधारित शाहजहाँ और औरंगजेब के ब्यौरेवार ऐतिहासिक विवरण, जयसिंह के प्रपत्र और औरंगजेब के पत्र, अनेक उच्चतर दरबारियों का पत्र-व्यवहार, और इस समय दक्षिण में रहने वाले भीमसेन और खाफीखाँ के निजी संस्मरण मिलते हैं। तारीखों और घटनाओं के लिए सबसे अधिक शुद्ध वृत्तान्त फारसी के समाचार के पत्रों में मिलता है जिन्हें **अखबारात** के नाम से पुकारते हैं, और जो जयपुर और लन्दन (रायल एशियाटिक सोसाइटी) में सुरक्षित हैं। ये सब पूर्णतः समकालीन हैं और इनमें मिलावट नहीं है। यही गुण उन पत्रों में है जो जयपुर के राजाओं के अधिकारियों ने डिंगल या राजस्थानी बोली में लिखे। (देखिए इस पुस्तक के पृष्ठ १३६, १३७)। सामग्री के इन दो समूहों से स्पष्ट है कि उनके लेखक सही बातों को ही सीधी भाषा में लिखते थे अथवा यों कहना चाहिए कि वे यथार्थवादी थे, परन्तु हमारे विषय के मराठी, हिन्दी और संस्कृत के लेखक अधिकतर भावुकता में बह जाते थे।

स्रोत

मराठी

हम नीचे मराठी के अत्यन्त विश्वसनीय और उपयोगी स्रोतों की सूची देते हैं। मैंने यहाँ उन समस्त ग्रंथों के नाम नहीं लिखे हैं जिन पर हाल में पुस्तकें लिख दी गयी हैं अथवा जो अशुद्ध मानकर अस्वीकृत कर दिये गये हैं; मैंने उस भाषा के उन विवेचनों को भी छोड़ दिया है जो निष्पक्ष व्यक्ति के लिए अधिकांश में अतिदीर्घ, असंगत और अविश्वसनीय हैं।

शिव-छत्रपति-चें चरित्र, कृष्णाजी अनन्त सभासद कृत, के० एन० सेनी द्वारा सम्पादित, चौथा संस्करण, १९२३।

१०६ पृष्ठ की छोटी-सी पुस्तक, जो बिना लिखित प्रपत्रों और ज्ञापनों

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

की सहायता के स्मृति द्वारा ही लिखी गयी। घटनाएँ कालक्रम के अनुसार व्यवस्थित नहीं हैं। कुछ कथन अशुद्ध हैं। स्थान-निरूपण में दुर्बल, तारीखों का अभाव। भाषा अति संक्षिप्त।

९१ कलमी बखर, बी० एस० बाकस्कर द्वारा सम्पादित (बड़ौदा १९३०)।

शिवकालीन-पत्र सार-संग्रह, ३ खंड (पूना)—पत्रों और अन्य प्रपत्रों की अति उपयोगी तालिका, पूर्ण कालक्रम और अनुक्रमणिका सहित, जो अनुशीलन-कर्ता के श्रम को हलका करते हैं। तीसरे खंड के बाद के प्रकाशित प्रपत्रों के लिए **शिव-चरित्र-साहित्य** देखिए, जिसके ९ खंड प्रकाशित हो चुके हैं। **शिव-चरित्र-साहित्य** समाज और प्रशासन के लिए उपयोगी है, केवल उस दशा में जब नीर-क्षीर-विवेक बुद्धि से काम लिया जाय।

श्री शिव-शाहिचा लेखनालंकार, जोशी और चाँदोरकर द्वारा लिखित, (पूना, १९३४) में एक पत्र की अन्तिम पंक्ति (हस्ताक्षर-रहित) का विवेचन है, जो शिवाजी के हाथ की लिखी बतायी गयी है।

शिव-चरित्र प्रदीप, डी० बी० आप्टे और एस० एम० दिवेकर द्वारा सम्पादित, (पूना, १९२५), प्रपत्रों और गम्भीर अध्ययन का अच्छा संग्रह।

शिवाजी-सोवरनीर (स्मारक), जी० एस० सरदेसाई द्वारा सम्पादित (बम्बई १९२७), अंग्रेजी, मराठी और गुजराती में।

अस्वीकृत—चित्रगुप्त बखर (लगभग १७६० में लिखित), **शिव-दिग्विजय** (प्रकाशित १८९५), **चिटनीस बखर** (१८१० में लिखित), **शिव प्रताप** (बड़ौदा), **शेदगाँवकर बखर** (१९१७) **मोरेयाँची बखर, जेधे करीना, पोवाड़ा, तंजवुर चा शिलालेख** (१८०३), इत्यादि।

संस्कृत

परनाल-पर्वत-ग्रहण-आख्यानम्, जयराम पिण्डे कृत, एस० एम० दिवेकर द्वारा सम्पादित। कामकाजी सरल स्पष्ट विवरण, कवियों की सामान्य अति-रंजता और पुनरावृत्ति के दोषों से मुक्त। केवल १६७३ का विवरण है।

शिव-राज-राज्यभिषेक-कल्पतरु, २३४ छन्दों की छोटी कविता, शिवाजी का राज्याभिषेक वर्णित (१६७४), गोविन्द और निश्चल पुरी के मध्य वार्ता के रूप में अनिरुद्ध सरस्वती द्वारा लिखित (दोनों के कोंकण के तीर्थों को जाते समय)। रायल एशियाटिक सोसाइटी ऑव बंगाल पाण्डुलिपि ३०८८, जी १०१८५।

सूर्य-वंशम्, परमानन्द कृत (जिसे आधुनिक मराठे इतिहासकारों ने गलती से **शिव-भारत** बताया है), एस० एम० दिवेकर द्वारा सम्पादित (१९२७)। इस काव्य के अन्य सर्ग जो बाद को खोजे गये, गायकवाड़ ओरियंटल सीरीज बड़ौदा १९५२, जी० एस० सरदेसाई द्वारा सम्पादित, **परमानन्द काव्य** के नाम से प्रकाशित हुए हैं। शम्भूजी पर तान्त्रिक प्रभाव के लिए बहुत उपयोगी।

१३ सर्गों का तीसरा खण्ड बड़ा उपयोगी है, क्योंकि उसमें शम्भूजी के विद्रोह और शिवाजी की उत्तराधिकार की योजनाओं का आन्तरिक इतिहास

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

है। शम्भूजी और शाहू के पक्ष वाले व्यक्ति द्वारा लिखित। अपनी **शिवाजी के वंश** (House of Shivaji) नामक पुस्तक में और **परम-काव्य** के आमुख में मैंने इसकी आलोचनात्मक समीक्षा की है।

राधामाधव-विलास-चम्पू, जयाराम पिंड्ये कृत, वी० के० राजवाड़े द्वारा सम्पादित (१९२२)—बालक शिवाजी की चाटुकारीपूर्ण प्रशंसा।

भूषण की हिन्दी कविताएँ अ-ऐतिहासिक मानकर अस्वीकृत कर दी गयी हैं; वास्तव में अब यह मान्यता है कि भूषण का जन्म शिवाजी की मृत्यु के दो वर्ष पश्चात हुआ और उन्होंने उनके नाती राजा शम्भू को प्रसन्न करने के लिए लिखा! लाल कवि का **छत्र-प्रकाश** भी बाद को तथा रूढ़िगत लिखा गया।

फारसी

आलमगीर-नामा, मिर्जा मुहम्मद काजिम कृत।

मसीर-ए-आलमगीरी, साकी मुस्तादखाँ द्वारा लिखित मेरे द्वारा अंग्रेजी अनुवाद (रायल एशियाटिक सोसाइटी ऑव बंगाल)।

मुन्तखा-उल-लुबाब, खाफीखाँ कृत।

नुस्खा-ए-दिल्कशा, भीमसेन बुरहानपुरी द्वारा लिखित, (निजी संस्मरण)।

अखबाराते-दरबारे-मुअल्ला, अनेक वर्षों के लिए (लन्दन और जयपुर पांडुलिपियाँ)।

मुहम्मद-नामा, (अथवा मुहम्मद आदिलशाह का इतिहास), मुहम्मद जहूर—जहूरी के पुत्र—कृत, (मेरी स्वयं की प्रतिलिपि कपूरथला पांडुलिपि से की गयी है)।

तारीख-ए-अली आदिलशाह द्वितीय, (उनके राज्य के केवल प्रथम दस वर्ष) लेखक सैयद नूरुल्ला (मैंने अपने लिए प्रतिलिपि इण्डिया आफिस पांडुलिपि से करवाई)।

बसातिन-उस-सलातीन, लेखक मुहम्मद इब्राहीम अली जुबैरी। इस संस्करण में लिथोग्राफ संस्करण (हैदराबाद) का उल्लेख किया गया है।

आदाब-ए-आलमगीरी, लेखक काबिलखाँ।

हल्फ अंजुमन, लेखक उदयराज ताला-यार पेरिस पांडुलिपि और बनारस पांडुलिपि।

फय्याज-उल-कवानीन

खतूत-ए-शिवाजी, रायल एशियाटिक सोसाइटी पाण्डुलिपि।

पारसनिस पाण्डुलिपि—एक पुस्तक जिसमें सतारा के राजा की आज्ञा से शिवाजी और उनके वंशजों को मुगल सरकार द्वारा भेजे गये फारसी पत्रों की नकल की गयी थी (स्पष्टतः ग्राण्ट डफ के प्रयोग के लिए)। कुछ तिथियाँ अशुद्ध हैं। एक अन्य प्रति में हस्त-लिखित अंग्रेजी अनुवाद है।

अंग्रेजी

मूल पत्र-व्यवहार (Original Correspondence—O. C.) इण्डिया आफिस पाण्डुलिपि अभिलेख। इस पत्रमाला में सूरत से बम्बई को ईस्ट इण्डिया कम्पनी लन्दन के लिए पत्र और सूरत व बम्बई तथा उनके अधीन कोठियों

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

के बीच पत्र-व्यवहार सम्मिलित है। इनकी एक सूची भी है जिसमें लेखक, स्थान और तारीख दी गयी हैं, परन्तु उनके विषय का कोई संकेत नहीं है। अधिकतर प्रत्येक वर्ष के लिए एक पुस्तक है। मूल पत्र-व्यवहार (*O. C.*) पुस्तक में भारत के उन सभी भागों का अव्यवस्थित ब्यौरा है जहाँ कम्पनी की कोठियाँ थीं। १६८२ से १६८९ तक इनमें केवल जो कुछ **कोठी अभिलेख** (*F. R.*) में दिया गया है उसी की प्रतिलिपियाँ हैं।

कोठी अभिलेख *(Factory Records—F. R.)*, इण्डिया ऑफिस पाण्डुलिपि अभिलेख। प्रत्येक मुख्य कोठी के लिए अलग-अलग पुस्तक-मालाएँ हैं, जैसे राजापुर, सूरत, बम्बई, फोर्ट सेंट जार्ज, इत्यादि। इनमें निम्न सम्मिलित हैं: (क) इन कोठियों में परामर्श (Consultations) और (ख) उनसे भेजे गये और प्राप्त पत्रों की नकलें (कुल **मूल पत्र-व्यवहार** *O. C.* में दुहराये गये हैं।) १६६०-१६८९ के काल में कुछ व्यवधान (रिक्त स्थान) भी है और वर्तमान पुस्तकों में अनुक्रमणिका नहीं है।

सूरत परामर्श *(Surat Consultations)*—१६३६-६० ६४, ६७, ६८, ७१, ७३, ७५, ७६, ७८, ८०, ८१ और ८४-९६ के लिए कोई नहीं हैं, परन्तु रिक्त वर्षों की पूर्ति कुछ अंश तक **प्राप्त और प्रेषित पत्रों** (Letters received and despatched) द्वारा और **मूल पत्र-व्यवहार** *(O.C.)* द्वारा हो जाती है। १६६०-१६८३ के लिए केवल चार पुस्तकें ही बची हैं।

सूरत के पत्र *(Surat Letters)*—इस काल के लिए केवल २० पुस्तकें।

फोर्ट सेंट जार्ज के अभिलेख: डायरी और कन्सल्टेशन बुक, १६७२-७८ और १६७८-७९ के लिए, मद्रास में छपी, (१९१० और १९११)। कुछ अन्य पत्र लव के **वेस्टीजस ऑव ओल्ड मद्रास** (Love's *Vestiges of Old Madras*), तीन खंडों में दिये गये हैं।

ओर्म *(Orme)* पाण्डुलिपियाँ इण्डिया ऑफिस पुस्तकालय में (एस० सी० हिल द्वारा सूचीबद्ध की गयीं)। इनमें कई कोठी अभिलेखों की प्रतिलिपियाँ हैं जिनकी मूलप्रतियाँ नष्ट हो चुकी हैं।

डब्ल्यू० हेजेज की दैनिकी *(Diary of W. Hedges)* यूल (Yule) द्वारा सम्पादित (Hakluyt Society) खण्ड २, पृष्ठ २२६ पर सूरत से कम्पनी को दिनांक २० नवम्बर १६७० का पत्र दिया गया है।

शिवाजी पर अंग्रेजी अभिलेख, १६५९-१६८२ (*English Records on Shivaji*, 1659-1682) बी० जी० परांजपे द्वारा दो खण्डों में सम्पादित (पूना १९३१), उपयोगी संक्षेप उन लोगों के लिए जो इंगलैंड के मूल अभिलेखों का अनुशीलन करने में असमर्थ हैं।

डच फैक्टरी अभिलेख *(Dutch Factory Records)*, इण्डिया आफिस लन्दन में सुरक्षित। खण्ड २३-२९, काल १६५९-७०, अंग्रेजी अनुवाद के रूप में हैं और खण्ड ३०-४२, काल १६७०-८९, डच भाषा में हैं। वे शिवाजी के इतिहासकार के लिए बड़े निराशाजनक हैं और उनमें मराठों के विषय में बहुत ही कम है। १६७१ से आगे के खण्डों में पूर्व भारत के मामलों पर लगभग

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

नहीं के बराबर लिखा है। "१६६४ अथवा लगभग इस वर्ष तक संकलनकर्ता ने भारत से आने वाले पत्र की नकल लगभग ज्यों की त्यों 'दाग रजिस्टर' में कर दी है। लगभग १६६५ से माला के अन्त तक भारतीय पत्रों की नकल दूसरे रजिस्टर में मिलती है, अर्थात् **आने वाले पत्र** (*Incoming Letters*); **दाग रजिस्टर** में ब्यौरे के लिए प्रायः इनका उल्लेख पाया जाता है और इसमें अक्सर समाचारों का अति संक्षेप ही मिलता है। यह हो सकता है, परन्तु कम ही सम्भावना है कि *Register of Incoming Letters* अथवा उनमें से कुछ बटेविया में हों।" (मोरलैण्ड)

स्टोरिया डो मोगोर (*Storia do Mogor*) अथवा मनुक्की (Manucci) की यात्राएँ, अनुवाद इरविन द्वारा, ४ खण्ड।

बर्नियर की **यात्राएँ** (Bernier's *Travels*), कॉंस्टेबल द्वारा सम्पादित।

टेवर्नियर की **यात्राएँ** (Tavernier's *Travels*) बॉल द्वारा सम्पादित, दो खण्ड।

जे० फ्राइयर कृत *New Account of East India*, W. Crooke द्वारा सम्पादित, दो खण्ड (१९०९)।

ओर्म कृत (Orme's) *Historical Fragments of the Moghul Empire*, etc., लन्दन (१८०५)।

जे० ग्रांट डफ कृत **मराठों का इतिहास** (J. Grant Duff's *History of the Mahrathas*) तीन खंड (१८२६)।

यदुनाथ सरकार कृत **शिवाजी का घराना** (*House of Shivaji*), अध्ययन, प्रपत्र (अनूदित) और आलोचनात्मक विवेचन का संग्रह। *Shivaji and His Times* (**शिवाजी और उनका युग**) नामक इस पुस्तक की अपरिहार्य साथी पुस्तक।

पुर्तगाली

Chavalier Panduranga S. S. Pissurlencar *Portugueses e Maratas*, i. Shivaji (Boletim do Instituto Vasco da Gama द्वारा पुनः मुद्रित, १९२६), उसके *Antigualhas*, Vol. 1 fasc. ? द्वारा परिवर्द्धित और संशोधित तथा पत्रिकाओं में अनेक छोटे लेख। *Agentes da Diplomacia* (1952)।

A. B. de Braganca Pereira—*O Oriente Portugues*, संख्या २४ और २५ (१९३९)।

J. F. J. Biker—*Colleccao* de *Tratados*..., tomo iv (लिस्बन १८८४) में सुलहनामे और राजनयिक पत्र-व्यवहार है।

Cosme da Guarda—*Vida e accoens do famoso e felicissimo Sevagy* (लिस्बन १७३०), १६९५ में लिखित, १६८ पृष्ठ। भयंकर अशुद्धियाँ, मनुष्यों की भूलें, व्यर्थ के विचलन, और बाजारू गपशप से पूर्ण। तथ्यों, तारीखों और नामों की बहुत कमी है, और शब्दों तथा सामान्य विवरण की बहुलता है। इसमें कोई नयी बात नहीं है जिसका ऐतिहासिक महत्त्व हो। लेखक का वास्तविक नाम C. da Guarda नहीं था।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

फ्रांसीसी

Voyage des Indes Orientales, par M. Carre, २ खंड, (पेरिस, १६६९)। १६७१-७२ में शिवाजी का वर्णन है। जनस्तुतियाँ। *Hakluyt* में अंग्रेजी अनुवाद।

La Mission du Madure, par J. Bertrand tome$_3$ (पेरिस, १८५०) इसमें मदुरा मिशन से जेसुइट पादरियों के वार्षिक पत्र हैं।

Memoires (संस्मरण) of Francois Martin, १६६५-१६९४, ३ खंड (१९३१-४)।

The *Journal* of B. Deslandes (पेरिस पांडुलिपि से) का अनुवाद अंग्रेजी में मैंने किया है जो पूना मंडल की पत्रिका में प्रकाशित हुआ है।

La Campagnie Indes Orientales et Francois Martin, par Paul Kaeppelin (पेरिस, १९०८)। अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विवरण जिसमें मूल प्रपत्रों के यथार्थ प्रसंग (और उनके उद्धरण भी हैं।)

The Histoire de Sevagi et de son successeur, par J. D' Orleans S. J., उनकी *Histoire des Deux conquerans Tartares*, (Paris, 1688) के साथ संलग्न, यद्यपि प्रारम्भिक जीवनी जो छपने वाली है, बेकार है। मैंने इसका अंग्रेजी अनुवाद 'माडर्न रिव्यू', मई १९२४ में प्रकाशित किया है।

अन्य फ्रांसीसी और डच अभिलेख जो शिवाजी से सम्बन्धित हैं—बहुत कम महत्त्व के—Orme के *Fragments* में वर्णित हैं (१८०५ का संस्करण), पृष्ठ १७१-१७९।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

कालक्रम

[इस पुस्तक में सब तारीखें पुरानी प्रणाली अर्थात बिना सुधरे हुए पंचाग (कैलेंडर) के अनुसार दी गयी हैं, जिसका प्रयोग इंगलैण्ड में १७५२ तक रहा। नयी प्रणाली के अनुसार तारीखों को (शिवाजी के जीवनकाल के लिए प्रायः दस दिन बाद की), जो फ्रांसीसी, पुर्तगाली तथा डच लेखों और पुस्तकों में प्रयुक्त गयी हैं, मैंने पुरानी प्रणाली में परिवर्तित कर दिया है। कुछ बातों में एक दिन की भूल पड़ गयी है, परन्तु इसका कारण है ईसाई सन को हिन्दू चन्द्रमास तथा हिजरी तारीखों में बदलने में विभिन्न ज्योतिषीय ग्रन्थों में भेद। मैंने स्वामी कन्नू पिल्ले की भारतीय पंचाग *(Indian Ephemeris)* की परिवर्तन-तालिकाओं का अनुसरण किया है।]

१६२६, १४ मई	मलिक अम्बर की मृत्यु; फतहखाँ का निजामशाही वजीर बनना।
१६२७, १० अप्रैल	शिवाजी का जन्म।
१२ सितम्बर	इब्राहीम आदिलशाह की मृत्यु, मुहम्मद आदिलशाह का पदारूढ़ होना।
२९ अक्तूबर	जहाँगीर की मृत्यु।
१६२८, ४ फरवरी	शाहजहाँ का सम्राट बनना।
लगभग नवम्बर	शाहजी ने मुगल खानदेश को लूटा और खदेड़ दिया गया।
१६३०, लगभग दिसम्बर	शाहजी का मुगलों से मिलना, जून १६३२ में उनको छोड़ देना।
१६३३, १७ जून	मुगलों का दौलताबाद पर कब्जा (उसमें हुसेन निजामशाह का भी पकड़ा जाना)।
अगस्त	शाहजी द्वारा कठपुतली निजमशाह का सिंहासनारूढ़ किया जाना।
१६३५, जनवरी-फरवरी	खाने-दौरान द्वारा शाहजी का पीछा करना।
लगभग अक्तूबर	खवासखाँ की बीजापुर में हत्या।
१६३६, जुलाई-अक्तूबर	खाने-जमाँ ने, बीजापुर की सहायता से शाहजी का पीछा महूली तक किया और उसे बुरी तरह परास्त किया। शाहजी ने कठपुतली निजामशाह की नौकरी छोड़ी और बीजापुर की सेवा में प्रवेश किया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१६३७, २५ फरवरी	आदिलशाह का शाहजी को पूना की जागीर प्रदान करना।
१६३८	शिवाजी और उनकी माता का शिवनेर से पूना लाया जाना।
१६४०	शिवाजी का अपने पिता से बंगलौर में मिलना, परन्तु शीघ्र ही पूना वापस भेजा जाना।
१६४६	मुहम्मद आदिलशाह का सख्त बीमार पड़ना और अपनी मृत्यु (१६६५) तक असहाय रहना। शिवाजी द्वारा तोर्ना किले पर कब्जा।
१६४७, ७ मार्च	दादाजी कोंणदेव का देहावसान। शिवाजी का कोन्दाना प्राप्त करना।
१६४८, २५ जुलाई	जिंजी में आदिलशाही मुख्य सेनाध्यक्ष द्वारा शाहजी की गिरफ्तारी।
१५ जुलाई	मुरादबख्श की मुगल दकन के वाइसराय के पद पर नियुक्ति।
९ अक्तूबर	शिवाजी का पुरन्दर किले पर अधिकार।
१६४९, सितम्बर	शाइस्ताखाँ की दक्षिण के वाइसराय के पद पर नियुक्ति, मुराद के स्थान पर (जो बनारस होकर वापसी में दिसम्बर में दिल्ली पहुँचा।)
१६ मई	शाहजी का छुटकारा।
१६५६, १५ जनवरी	शिवाजी का जावली पर कब्जा।
६ अप्रैल	शिवाजी का रायगढ़ आगमन और उस पर अधिकार।
२८ अगस्त	वाजी चन्द्रराव मोरे का शिवाजी के चंगुल से निकल भागना।
२४ सितम्बर	शिवाजी का मोहते को गिरफ्तार करना, तथा सूपा पर अधिकार।
४ नवम्बर	मुहम्मद आदिलशाह की मृत्यु, अली द्वितीय का सिंहासनारूढ़ होना।
१६५७, २८ फरवरी	औरंगजेब का बीदर के निकट आगमन, उसका घेरा आरम्भ, २ मार्च, और उस पर कब्जा, २९ मार्च।
२७ अप्रैल	औरंगजेब का कल्याणी के लिए प्रस्थान, जिसका पतन १ अगस्त को हुआ।
लगभग २७-२९ अप्रैल	मराठों द्वारा अहमदनगर लूटने का प्रयत्न विफल।
३० अप्रैल	शिवाजी ने जुन्नार लूटा।
१४ मई	शम्भूजी का जन्म।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

४ जून	नासिरीखाँ ने शिवाजी को अहमदनगर के निकट हराया ।
२४ अक्तूबर	शिवाजी ने कल्याण-भिवाँदी लिया ।
११ नवम्बर	खानमुहम्मद वजीर की बीजापुर में हत्या ।
१६५८, ८ जनवरी	शिवाजी का महूली पर कब्जा ।
१४ जनवरी	शिवाजी का राजगढ़ के लिए प्रस्थान । औरंगजेब का राजसिंहासन के लिए युद्ध के हेतु औरंगाबाद से प्रस्थान, बुरहानपुर को छोड़ा २० मार्च ।
२१ जुलाई	औरंगजेब का प्रथम राज्याभिषेक ।
३० अगस्त	शिवाजी द्वारा सोनाजी को दिल्ली में दूत के रूप में भेजा जाना ।
१६५९, १० मार्च	शिवाजी का राजगढ़ से शिवपत्तन के लिए प्रस्थान ।
लगभग अप्रैल	आदिलशाह ने मावल देशमुखों का अफजलखाँ के साथ मिल जाने का आदेश दिया ।
११ अप्रैल	शिवाजी का जावली के लिए प्रस्थान ।
५ सितम्बर	साई बाई (शिवाजी की पत्नी) का देहान्त ।
१० नवम्बर	अफजलखाँ का मारा जाना, उसकी सेना की पराजय ।
२८ नवम्बर	शिवाजी का पन्हाला पर कब्जा, और उसमें प्रवेश २ दिसम्बर । शिवाजी का दाँदा (डाँडा) नगर पर अधिकार ।
२८ दिसम्बर	शिवाजी द्वारा कोल्हापुर के निकट रुस्तम और फजलखाँ की पराजय ।
१६६०, लगभग ५ जनवरी	शिवाजी ने दाभोल लूटा ।
लगभग १० जनवरी	शिवाजी ने राजापुर लूटा (प्रथम बार) ।
१४ जनवरी	शिवाजी ने बीजापुर राज्य-क्षेत्र को (गदग) के निकट लूटा ।
२५ फरवरी	शाइस्ताखाँ का अहमदनगर के बाहर जाना ।
२ मार्च	शिवाजी का पन्हाला में प्रवेश, जौहर द्वारा उसका घेरा डाला जाना ।
९ मई	शाइस्ताखाँ का पूना में प्रवेश ।
६ जून	शाइस्ताखाँ का वसोता पर अधिकार ।
२१ जून	शाइस्ताखाँ का चाकन के सामने आगमन, उसका घेरा डालना, और उस पर अधिकार १५ अगस्त ।
१३ जुलाई	शिवाजी पन्हाला से भाग निकले ।
लगभग २६ अस्त	शाइस्ताखाँ की चाकन से पूना को वापसी ।
२२ सितम्बर	पन्हाला जौहर के अधिकार में ।
२० नवम्बर	बीजापुरी किलेदार गालिब ने परेंदा मुगलों को बेचा ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१६६१, ३ फरवरी	शिवाजी ने कार तलबखाँ को अम्बरखिंद पर हराया।
फरवरी	शिवाजी द्वारा निजामपुर की लूट और दाभोल-प्रभावली पर कब्जा।
लगभग ३ मार्च	शिवाजी का राजापुर पर कब्जा और अंग्रेज व्यापारियों की कैद। वे छोड़े गये लगभग ५ फरवरी, १६६३।
२९ अप्रैल	शिवाजी का शृंगारपुर में प्रवेश।
लगभग मई	मुगलों ने शिवाजी से कल्याण लिया।
लगभग ३ जून	शिवाजी महाद में तीन दिन के लिए।
	शिवाजी ने वर्धनगढ़ में गर्मी की ऋतु व्यतीत की।
२१ अगस्त	बुलाकी द्वारा डीरी के घेरे कावजी कोथलकर ने हटा दिया।
१६६२, जनवरी-मार्च	शिवाजी ने नामदारखाँ को मीरा डोंगर में हराया और पन्हाला को लूटा।
१६६३, मार्च	मुगलों ने नेताजी का दूर तक पीछा किया।
३० मार्च	शिवाजी रायगढ़ में (सम्भवतः रामगढ़)।
५ अप्रैल	शिवाजी ने शाइस्ता को पूना में अकस्मात घेर लिया।
मई	शिवाजी कुदाल होते हुए विंगुर्ला को गये (लगभग १८ मई), शीघ्र वापस लौटे।
नवम्बर	जसवन्त ने कोंदाना का घेरा डाला।
	वेदनूर के राजा, भद्रप्पा की हत्या।
१६६४, ६-१० जनवरी	शिवाजी द्वारा सूरत की पहली लूट।
लगभग	शाइस्ताखाँ औरंगाबाद से चला गया, मुअज्जम
१५ जनवरी	वाइसराय बनाया गया।
२३ जनवरी	शाहजी की मृत्यु।
५ फरवरी	शिवाजी की राजगढ़ को वापसी।
२८ मई	जसवन्त ने कोंदाना का घेरा हटा लिया, शिवाजी वहाँ ३० तारीख को गये।
जुलाई	शिवाजी ने अहमदनगर लूटा।
लगभग	शिवाजी ने खवासखाँ को खदेड़ा, जिसने अपनी
१५ अक्तूबर	स्थिति मजबूत की और कुदाल पर पुनः अधिकार जमा लिया (लगभग २८ ता०)।
२० अक्तूबर	शिवाजी ने मुधोल के घोरपड़ों का वध किया।
नवम्बर	शिवाजी ने सावन्तवादी को जीता।
२४ नवम्बर	सिन्धुदुर्ग (मालवन) किले का निर्माण प्रारम्भ।
लगभग	
५ दिसम्बर	शिवाजी ने विंगुर्ला लूटा।
लगभग	
१० दिसम्बर	मराठों ने हुबली को लूटा, प्रथम बार।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१६६५, ८ फरवरी	शिवाजी ने मालवन से नौ-यात्रा की, बसरूर लूटा और वापसी में गोकर्ण में स्नान किया, कारवार पहुँचे (२२ फरवरी) और घर के लिए वापस चल दिये (२३ फरवरी)।
१४ मार्च	शिवाजी भीमगढ़ (कारवार से २५ मील उत्तर) पहुँचे।
३ मार्च	जयसिंह पूना पहुँचा।
३० मार्च	दिलेरखाँ पुरन्दर के निकट उतरा और उसका घेरा डाला।
१४ अप्रैल	रुद्रमाल का पतन।
११ जून	शिवाजी पुरन्दर के सामने जयसिंह से मिले, दिलेर से मिले (१२ ता०)
१२-१३ जून	पुरन्दर की सन्धि।
१४ जून	शिवाजी जयसिंह के शिविर से राजगढ़ के लिए रवाना।
१८ जून	शम्भूजी जयसिंह के शिविर में पहुँचे।
जून-जुलाई	बहलोल प्रथम (बीजापुर के मन्त्री) की मृत्यु।
२७ सितम्बर	शिवाजी जयसिंह के शिविर (पुरन्दर) में लौटे, फरमान प्राप्त किया (३० सितम्बर को)।
अक्तूबर-नवम्बर	शिवाजी ने बीजापुरियों से दक्षिण कोंकण पुनः लिया (कुदाल और विंगुर्ला को छोड़कर)।
२० नवम्बर	जयसिंह और शिवाजी बीजापुर के आक्रमण के लिए चल दिये।
२५ दिसम्बर	बीजापुरियों के साथ पहला युद्ध, दूसरा युद्ध २८ दिसम्बर को।
१६६६, ५ जनवरी	जयसिंह ने बीजापुर की उप-बस्तियों से पीछे हटना शुरू किया।
११ जनवरी	जयसिंह ने शिवाजी को पन्हाला पर आक्रमण करने के लिए भेजा।
१६ जनवरी	शिवाजी का पन्हाला पर आक्रमण विफल हुआ।
५ मार्च	शिवाजी का आगरे के लिए प्रस्थान।
२० मार्च	नेताजी बीजापुरी पक्ष को छोड़कर जयसिंह की ओर फिर आ मिला।
फरवरी-मार्च	शिवाजी का फौंदा पर पहला आक्रमण विफल।
११ मई	शिवाजी आगरे के निकट पहुँचे।
१२ मई	शिवाजी की औरंगजेब के सामने पेशी।
१९ अगस्त	शिवाजी आगरे से निकल भागे।
२० अगस्त	रघुनाथ कोर्डे आगरे में गिरफ्तार किया गया।
१२ सितम्बर	शिवाजी राजगढ़ को वापस हुए (शिवापुर यादी के अनुसार ११ दिसम्बर)।
दिसम्बर	पीर मियाँ और ताजखाँ देवरुख में मारे गये।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१६६७, २३ मार्च	जयसिंह दकन से वापस बुलाये गये; मुअज्जम की नियुक्ति वाइसराय के पद पर ।
अप्रैल	शिवाजी ने औरंगजेब को अपनी अधीनता के विषय में लिखा ।
३ अप्रैल	त्रिम्बक और रघुनाथ आगरे से निकल भागे ।
लगभग १८ मई	बहलोल और ब्यंकोजी ने रंगना का घेरा डाला; शिवाजी ने उसे छोड़ दिया ।
२८ अगस्त	जयसिंह की बुरहानपुर में मृत्यु ।
अगस्त	शिवाजी ने आदिलशाह के साथ सन्धि की ।
२७ अक्तूबर	शम्भूजी औरंगाबाद पहुँचा, जसवन्तसिंह से (२८ को) और मुअज्जम से (४ नवम्बर को) मिला, वापसी में औरंगाबाद से प्रस्थान, ५ नवम्बर ।
१६६८, ९ मार्च	मुअज्जम ने शिवाजी को लिखा कि सम्राट ने उनका राजा का पद मान लिया ।
५ अगस्त	प्रतापराव सेना की टुकड़ी लेकर औरंगाबाद में नौकरी के लिए चला गया ।
अक्तूबर	गोआ पर अकस्मात् आक्रमण करने का शिवाजी का षड्यन्त्र पकड़ा गया ।
लगभग २० अक्तूबर	शिवाजी अष्टमी (चौल के निकट) में ।
नवम्बर	शिवाजी ने रत्नगिरि जिले में अपने किलों का निरीक्षण किया; दिसम्बर के आरम्भ में राजगढ़ को वापसी ।
१६६९, लगभग १ मार्च	शिवाजी राजगढ़ में, और बहुत शान्त ।
अप्रैल	सिद्दी ने शिवाजी के कुछ किलों पर घेरा डाला ।
९ अप्रैल	औरंगजेब ने मुगल साम्राज्य के अन्तर्गत मन्दिरों को नष्ट करने का सामान्य आदेश दिया; बनारस का विश्वेश्वर मन्दिर अगस्त १६६९ में ढा दिया गया, मथुरा में केशवराय का मन्दिर जनवरी, १६७० में ।
मई-अक्तूबर	शिवाजी ने जंजीरा के सिद्दी पर घोर आक्रमण जारी रखा ।
अक्तूबर	लोदीखाँ का कल्याण पर अधिकार बना रहा ।
लगभग १ नवम्बर	शिवाजी ने पुर्तगाली जहाज पकड़े, उन्होंने बदला लिया ।
१६७०, लगभग १ जनवरी	शिवाजी की मुगलों से अनबन । प्रतापराव औरंगाबाद से वापस लौटा ।
४ फरवरी	तानाजी ने कोंदाना (सिंहगढ़) लिया ।
२४ फरवरी	राजाराम का जन्म ।
	शिवाजी ने पुरन्दर वापस लिया (८ मार्च), कल्याण

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

	(लगभग १५ मार्च), लोहगढ़ (१३ मई), महूली (१६ जून), करनाल (२२ जून), रोहिरा (२४ जून।
अगस्त	शिवाजी ने मुगल राज्य-क्षेत्र पर आक्रमण किया; शिवनेर का घेरा असफल हुआ। जंजीरा पर महान आक्रमण।
३-५ अक्तूबर	शिवाजी ने सूरत लूटा (दूसरी बार)।
१७ अक्तूबर	दिन्दोरी (डिंडोरी) का युद्ध।
लगभग २५ अक्तूबर	मोरो पन्त ने त्रिम्बक को पकड़ा।
लगभग २४ नवम्बर	शिवाजी ने बम्बई के उत्तर में कूच की, २६ को वापस लौटे।
दिसम्बर	शिवाजी ने अहिवन्त आदि को लिया; खानदेश और बरार पर आक्रमण किये, करिंजा को लूटा।
१६७१, लगभग ५ जनवरी	शिवाजी ने सल्हीड़ पर कब्जा किया।
लगभग १० फरवरी	सिद्दी कासिम ने दाँदा (डाँडा) वापस लिया।
पूर्व फरवरी	महावत और दाऊद ने अहिवन्त का घेरा डाला।
अप्रैल-मई	महावत ने अहिवन्त आदि पर अधिकार किया।
सितम्बर	बहादुर और दिलेर ने सल्हीड़ का घेरा डाला; अक्तूबर में क्षेत्र छोड़ दिया।
सितम्बर	शिवाजी का राजदूत बम्बई में पहुँचा।
अक्तूबर	शिवाजी रायगढ़ में।
दिसम्बर का अन्त	दिलेर ने पूना लूटा, जनता का कत्ल किया।
१६७२, लगभग १० जनवरी	शिवाजी महाद में, दिलेर के विरुद्ध सेना का एकत्र करना।
लगभग १७ फरवरी	मोरोपन्त ने इखलासखाँ, मुहकमसिंह तथा अन्य मुगल सेनाध्यक्षों को हराने के बाद सल्हीड़ की माची का घेरा उठा लिया; फिर मुल्हीड़ ले लिया।
लगभग १५ फरवरी	शिवाजी रायगढ़ में।
लगभग १५ मार्च-८ मई	लेफ्टिनेन्ट ऊस्टिक का दौत्य शिवाजी से मिलने के लिए रायगढ़ में आया; विफल हुआ।
२१ अप्रैल	अब्दुल्ला कुतुबशाह मर गया; अब्दुल हसन सिंहासन पर बैठा।
जून	मुअज्जम का दक्षिण से प्रस्थान; बहादुरखाँ अगस्त १६७७ तक वाइसराय रहा।
५ जून	मोरोपन्त ने जव्हार नगर लिया, और रामनगर (लगभग ५ जुलाई)

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

जुलाई	मोरोपन्त ने नासिक जिला लूटा ।
२४ नवम्बर	अली द्वितीय की मृत्यु; सिकन्दर आदिलशाह गद्दी पर बैठा; खवासखाँ वजीर बना (३ वर्ष के लिए)
नवम्बर-दिसम्बर	बरार और तेलंगाना में मराठा आक्रमण को मुगलों ने विफल किया ।
२९ दिसम्बर	शिवाजी की बीजापुर से अनबन; उनका अभियान के लिए प्रस्थान ।
१६७३, ६ मार्च	अन्नाजी ने शिवाजी के लिए पन्हाला लिया ।
९ मार्च	शिवाजी रायगढ़ के लिये चले, पन्हाला पहुँचे लगभग १६ तारीख ।
१ अप्रैल	शिवाजी ने पार्ली प्राप्त किया ।
लगभग १५ अप्रैल	उमरानी का युद्ध ।
पूर्व मई	प्रतापराव ने हुबली को लूटा (दूसरी बार) । बहलोल ने कनारा उच्च प्रदेश से मराठा आक्रामकों को खदेड़ा, तब कोल्हापुर में मोर्चा जमाया और जून से अगस्त तक मराठों को दबाया ।
२ जून	शिवाजी तीर्थयात्रा से रायगढ़ वापस हुए ।
३ जून	अंग्रेज दूत निकल्ज ने शिवाजी से भेंट की ।
२७ जुलाई	शिवाजी ने सतारा लिया ।
१० अक्तूबर	(दशहरा) । शिवाजी ने कनारा अभियान के लिए कूच किया, १३ तारीख को सतारा पहुँचे, १३ तारीख को पांडवगढ़ लिया (शिवापुरयादी के अनुसार १७ को), बंकापुर लूटा ।
लगभग १५ अक्तूबर-१२ दिसम्बर	शिवाजी का कनारा में अभियान ।
नवम्बर	शर्जाखाँ ने विटोजी शिन्धे को लड़ाई में मार डाला ।
४-८ दिसम्बर	शिवाजी कदरा में; उनकी सेनाओं को आदिलशाहियों ने दो बार हराया ।
१६ दिसम्बर	शिवाजी कनारा से वापस लौटे ।
१६७४, लगभग २० जनवरी	कोंकण में उतरने के प्रयत्न में दिलेर भगा दिया गया ।
२४ फरवरी	प्रतापराव नेसारी में मारा गया ।
लगभग १ मार्च	शिवाजी की पत्नी काशीबाई का देहान्त
२३ मार्च	आनन्दराव ने सम्पगाँव का बाजार लूटा, फिर खिज्रखाँ से लड़ा ।
मार्च	दौलतखाँ नेमूचाकुण्डी खाड़ी में सिद्दी बेड़े को हराया ।
३ अप्रैल	नारायण शेनवी ने शिवाजी से रायगढ़ में भेंट की ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

८ अप्रैल	शिवाजी ने चिपलूण में अपनी सेनाओं का निरीक्षण किया; कारवार के निकट पहुँचे २२ तारीख; केलंजा पर अधिकार किया २४ तारीख ।
७ अप्रैल	औरंगजेब खैबर दर्रा के विद्रोह को दबाने के लिए दिल्ली से हसन अब्दल के लिए चला; वापस हुआ २७ मार्च, १६७६ ।
१२ मई	शिवाजी चिपलूण की तीर्थ यात्रा से रायगढ़ वापस हुए।
१६ मई	शिवाजी प्रतापगढ़ की तीर्थ-यात्रा के लिए चल पड़े, २१ को रायगढ़ वापस हुए ।
२८ मई	शिवाजी का यज्ञोपवीत संस्कार; वेद मन्त्रों के उच्चारण सहित विवाह किया, २९ तारीख ।
६ जून	शिवाजी का राज्याभिषेक; 'राज्याभिषेक संवत्' का आरम्भ ।
८ जून	शिवाजी ने पुनः विवाह किया, "बिना संस्कार" के ।
१२ जून	आक्सिनडन ने आठ मन्त्रियों से सन्धि पर हस्ताक्षर कराये ।
१८ जून	जीजाबाई का देहान्त ।
लगभग १५ जुलाई	मराठों ने पेदगाँव में बहादुरशाह का शिविर लूटा ।
लगभग २६ अगस्त	अन्नाजी का कुदाल में आगमन; मुहम्मदखाँ ने उसे बेकार कर दिया ।
२४ सितम्बर	शिवाजी का दूसरा (या तान्त्रिक) राज्याभिषेक ।
नव०-१५ दिसम्बर	शिवाजी ने बगलाना और खानदेश लूटे ।
१६७५, जनवरी का अन्त	दत्ताजी ने कोल्हापुर जिला लूटा ।
४ फरवरी	शम्भूजी का यज्ञोपवीत संस्कार ।
लगभग १५ फरवरी	मुगलों ने कल्याण लूटा ।
६ मार्च	शिवाजी का अभियान के लिए प्रस्थान; कोल्हापुर लिया, राजापुर पहुँचे (२२ तारीख) और चार दिन ठहरे, यहाँ अंग्रेज व्यापारी उनसे मिले; तब उन्होंने कुदाल के लिए प्रस्थान किया ।
८ अप्रैल	शिवाजी ने फौंदा का घेरा डाला, उस पर अधिकार किया लगभग ६ मई; उनके सेनापति ने कारवार नगर में आग लगा दी २६ अप्रैल
मई	शिवाजी ने शिवेश्वर, अंकोला, कारवार किला आदि पर कब्जा किया ।
मार्च-मई	शिवाजी ने बहादुरखाँ को झूठे शान्ति-प्रस्ताव भेज कर चकमा दिया ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

१२ जून	शिवाजी राजापुर होते हुए रायगढ़ लौटे।
जून-अगस्त	मराठों ने सूँडा प्रदेश पर आक्रमण किया।
जुलाई-दिसम्बर	जंजीरा पर महान आक्रमण विफल हुआ।
७ सितम्बर	शिवाजी रायगढ़ में; ऑस्टिन का दौत्य।
नवम्बर	बहादुरखाँ ने उत्तरी कोंकण पर आक्रमण किया।
११ नवम्बर	बहलोल ने खवास को बन्दी किया और बीजापुर का वजीर बन बैठा (दो वर्ष के लिए)।
१६७६, १८ जनवरी	बहलोल ने खवास को मार डाला। बीजापुर में गृह-युद्ध।
जनवरी-मार्च	शिवाजी सख्त बीमार; उनका पूर्ण स्वस्थ होना, ७ अप्रैल के सूरत के पत्र में वर्णित।
मई	मोरोपन्त ने रामनगर लिया; महीने के अन्त में रायगढ़ लौटा।
३१ मई	बहादुरखाँ ने बहलोल पर आक्रमण करने के लिए हलसंगी के पास भीमा नदी को पार किया।
१ जून	बहलोल ने बहादुर को हलसंगी पर हराया; इसलामखाँ मारा गया। (म० आ० ने १३ जून तारीख बतायी है)
१९ जून	तेनाजी पाल्कर को शुद्धि-संस्कारों द्वारा पुनः हिन्दू बनाया गया।
जून-दिसम्बर	जंजीरा पर आक्रमण पुनः किया गया।
आरम्भ अक्तूबर	नारायण शेनवी रायगढ़ में उपस्थित।
१ नवम्बर	शम्भूजी शृंगारपुर को रवाना।
दिसम्बर	सिद्दी सम्बल ने जैतपुर जलाया।
१६७७, जनवरी	हम्बीरराव ने हुसैनखाँ मियाना को यलबर्गा पर हराया।
लगभग ५ फरवरी	शिवाजी हैदराबाद पहुँचे, एक महीने रुके, लगभग १० मार्च को छोड़ दिया।
लगभग २४ मार्च-१ अप्रैल	शिवाजी श्रीशैल में।
४ मई	तिरुपती में एक ब्राह्मण को शिवाजी द्वारा पूजा के हेतु अनुदान देने की तिथि।
लगभग ५ मई	शिवाजी पेद्दापोलम (मद्रास के निकट) में पहुँचे; उनका रिसाला कांजीवरम् (९ मई) होता हुआ जिंजी पहुँचा।
लगभग १३ मई	जिंजी शिवाजी को बेचा गया; वह वहाँ आये लगभग १५ मई।
लगभग २३ मई	शिवाजी वेलोर के सामने पहुँचे, घेरा आरम्भ किया।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

२६ जून	शिवाजी तिरुवादी के निकट आये, शेरखाँ लोदी को करारी हार दी, जो बोनागिरि पत्तन को भागा (२७ तारीख), जिसका शिवाजी ने घेरा डाला ।
५ जुलाई	शेरखाँ ने अपना राज्य शिवाजी को सन्धि द्वारा दिया ।
लगभग १२ जुलाई	शिवाजी तिरुमल-वादी (कोलेरून नदी पर स्थित) में आये ।
लगभग २३ जुलाई	व्यंकोजी शिवाजी के शिविर से भागा ।
लगभग २७ जुलाई	शिवाजी तिरुमला-वादी से वापस हुए, टुंडुमगुर्टी में (३१ जुलाई), वृद्धाचलम (१-३ अगस्त), वणिकम-वादी (२२ सितम्बर), मद्रास के लिए दो दिन की कूच (३ अक्तूबर) ।
लगभग २ सितम्बर	मराठे और दमन के पुर्तगालियों में मुठभेड़ ।
अक्तूबर	शिवाजी का अर्नी पर अधिकार ।
लगभग ५ नवम्बर	शिवाजी घर को वापसी के दौरान में मैसूर पठार पर चढ़े ।
१६ नवम्बर	व्यंकोजी ने आहिरी के निकट शिवाजी पर आक्रमण किया ।
नवम्बर	दत्ताजी ने हुबली लूटा (तीसरा धावा) ।
दिसम्बर	शिवाजी का दूत पीताम्बर शेनवी गोआ पहुँचा ।
२३ दिसम्बर	लम्बी बीमारी के बाद बहलोलखाँ की मृत्यु ।
७ जुलाई	बहादुरखाँ ने कुलबर्गा लिया; और नालदुर्ग २ अगस्त को (म० आ० के अनुसार १४ मई) ।
अगस्त	बहादुर दकन से बुलाया गया, दिलेर को चार्ज दिया गया ।
सितम्बर	दिलेर ने गोलकुण्डा पर आक्रमण किया, मालखेड़ में हारा और भागकर नालदुर्ग में पहुँचा ।
नवम्बर	मसूद ने बीजापुर की ओर से दिलेर के साथ अप्रतिष्ठाकर सुलह की ।
१६७८, जनवरी	मोरोपन्त ने त्रिम्बक, नासिक आदि लूटे ।
लगभग १६ जनवरी	लक्ष्मीश्वर में शिवाजी ।
लगभग २६ जनवरी-२३ फरवरी	शिवाजी ने बेलवादी का घेरा डाला ।
२१ फरवरी	सिद्दी मसूद बीजापुर का वजीर हुआ ।
लगभग ४ अप्रैल	शिवाजी पन्हाला पहुँचे ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

लगभग २५ अप्रैल	मराठों ने मुंगी पैठन लूटा ।
मई	शिवनेर पर शिवाजी का दूसरा आक्रमण विफल हुआ ।
मई	शिवाजी रायगढ़ को लौटे ।
२१ जुलाई	वैलोर शिवाजी के हाथ में आया ।
लगभग ३० अगस्त	पीताम्बर शेनवी कुदाल में मर गया ।
१८ सितम्बर	मुअज्जम (शाहआलम) दकन का वाइसराय पुनः नियुक्त किया गया ।
अक्तूबर	दौलतखाँ ने जंजीरा पर गोलाबारी की ।
दिसम्बर	शिवाजी के पास गोआ से रघुनाथ शेनवी कोटारी दूत बनाकर भेजा गया ।
१३ दिसम्बर	शम्भूजी भागकर दिलेरखाँ के पास पहुँचा ।
१६७९, २५ फरवरी	शाहआलम औरंगाबाद पहुँचा ।
३ मार्च	मोरोपन्त ने धन देकर कोपल किला लिया ।
२ अप्रल	औरंगजेब ने हिन्दूओं पर 'जजिया' पुनः लगाया ।
२ अप्रैल	दिलेर ने भूपालगढ़ पर कब्जा किया ।
९ अप्रैल	आनन्दराव ने बालापुर लिया ।
१८ अगस्त	दिलेर ने बीजापुर पर आक्रमण करने के लिए भीमा नदी पार की, धूलखेड़ में १५ सितम्बर तक ठहरे ।
२८ अगस्त	शिवाजी ने खंदेरी टापू की किलेबन्दी की ।
सितम्बर	मुगलों ने मंगलवीर लिया ।
लगभग १० सितम्बर	शिवाजी ने खंदेरी टापू लिया और उसकी किलेबन्दी की ।
१९ सितम्बर	अंग्रेजों और शिवाजी का प्रथम नौ-युद्ध; दूसरा युद्ध १८ अक्तूबर ।
७ अक्तूबर	दिलेर बीजापुर किले के निकट आया, १४ नवम्बर को वापस लौट गया ।
३० अक्तूबर	शिवाजी सेलगूड़ में आदिलशाह की सहायता के लिए आये ।
४ नवम्बर	शिवाजी सेलगूड़ से मुगल सूबों को लूटने के लिए चले ।
लगभग १५-१८ नवम्बर	शिवाजी ने जलना लूटा, तीन दिन तक रनमस्तखाँ से युद्ध किया ।
लगभग २२ नवम्बर	शिवाजी पट्टा पहुँचे, और वहाँ दो सप्ताह ठहरे ।
२० नवम्बर	दिलेर ने अठनी लूटा । शम्भूजी अपने शिविर से २१ नवम्बर को निकल भागा ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

३० नवम्बर	शम्भूजी बीजापुर से भागा, पन्हाला पहुँचा लगभग ४ दिसम्बर ।
लगभग	मराठों ने खानदेश पर आक्रमण किया, धरनगाँव
२४-३० नवम्बर	को लूटा ।
लगभग	शिवाजी ने रायगढ़ (?) में निवास किया ।
४-२५ दिसम्बर	
१६८० लगभग	शिवाजी पन्हाला पहुँचे ।
१ जनवरी	
१३ जनवरी	शिवाजी पन्हाला में शम्भूजी से मिले ।
२६ जनवरी	उन्देरी पर दौलत का आक्रमण विफल हुआ ।
फरवरी	शिवाजी पन्हाला से रायगढ़ वापस हुए ।
७ मार्च	राजाराम का यज्ञोपवीत संस्कार ।
१५ मार्च	राजाराम का विवाह ।
२३ मार्च	शिवाजी की अन्तिम बीमारी आरम्भ हुई ।
४ अप्रेल	शिवाजी का परलोकवास ।

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

अनुक्रमणिका

अंग्रेज व्यापारी, सूरत की कोठी की रक्षा की ९३-९९, १७१-७२, कारबार में शिवाजी का मुकाबिला किया २३०, उदासीनता २६२, खंदेरी के विषय में शिवाजी से झगड़ा २६७-६८, शिवाजी के प्रति नौ-सैनिक युद्ध २६७-६९, शिवाजी से मद्रास का पत्र-व्यवहार २९६, उनके बन्दी राजापुरी व्यापारी ३२८-३२, राजापुर हर्जाना ३३२, ऊस्टिक का मिशन ३३४-३५, आस्टिन का मिशन ३४१-४२, निकल्स का मिशन ३३७, ऑक्सिनडन का मिशन ३३९-४०, नारायण शेनवी का ३३७-३८ और ३४३, राजापुर के व्यापारी शिवाजी से मिले ३४०-४१, अंग्रेजी कोठी के अभिलेखों की ब्यौरेवार सूची ३९१-९२
अठनी, मराठों ने लूटा २१६, दिलेर ने लूटा ३१९
अन्नाजी दत्तो, कोंकण का गवर्नर, ३०६, अंग्रेजों के विरुद्ध ३४०, ३४९-५०
अफजल खाँ, ३५, उसके द्वारा कपट-पूर्ण हत्याएँ ६२, शिवा से युद्ध ५८-६७, दन्त कथाएँ ६९, गीत ७०, साक्ष्य की आलोचना ७१; उसके जंक २१९, पुत्र देखिए फज्ल खाँ
अबीसीनियाई, देखिए सिद्दी
अबुल फतह, बध किया गया ८९
अबुल हसन कुतुब शाह २८१, शिवाजी से भेंट २८४, शिवाजी से अनबन ३०८
अब्दुल अजीज (शिवनेर का) १९०
—सईद ११०
—सिद्दी २३२
अम्बर, मलिक, १५, भूमि-कर की दरें, २४ टिप्पणी
अम्बर खिंड का युद्ध ८३
अली आदिलशाह द्वितीय, सिंहासनारूढ़ हुआ ४८, मृत्यु १९०, बंकापुर को प्रस्थान २२०-२२
अष्ट प्रधान (आठ मन्त्री) ३५२-५४
अहमदनगर पर आक्रमण, ५०-५१
अहिवन्त पर अधिकार १७६, १८१
अहीरी युद्ध, २९८-९९
ऑक्सिनडन (सर जार्ज) ने सूरत की रक्षा की ९३-९४, ९९
ऑक्सिनडन (हेनरी) शिवाजी के राज्याभिषेक पर २०७
आदिलशाह, देखिए मुहम्मद अली और सिकन्दर
आनन्दराव के अभियान १९४-९५, ३१८
आर्नी पर विजय २९६
आबा सोनदेव द्वारा मुस्लिम लड़की का अपहरण ५५
इखलास खाँ मिआना, दिन्दोरी में १७५, सल्हीर में, १८३
इनायत खाँ (सूरत का) ९३
उदयभान, मृत्यु १६४
उदयराज मुंशी १२१
उन्देरी टापू, सिद्दियों द्वारा अधिकार २७१
उमरानी का युद्ध, १९१-९२
एडमिरेल (नौ-सेनापति), शिवाजी के २५६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

औरंगजेब ने बीजापुर पर आक्रमण किया ४७, शिवाजी के प्रति पहला युद्ध ४८-५१, शिवाजी के विषय में उसकी राय ५३, १५१, शिवाजी की कैद की अवधि में उसकी नीति १४४-४६, शिवाजी का पत्र जजिया के विरुद्ध ३१४-१७
कनारा का वर्णन २१७, आदिलशाही आक्रमण २२१, में युद्ध २२२-२५, २३२-३६, आन्तरिक कठिनाइयाँ २३६-३७, शिवाजी की विजय २४०-४१, देखिए फोंदा और कारवार
कर्नाटक (पूर्वी), वर्णन २७३, आंतरिक झगड़े २७४, राजनीतिक भाग २७६, शिवाजी का आक्रमण २८७-८८, आक्रमण के काल में दशा २८८-८९, शिवाजी को लाभ २९७, उनके गवर्नर २९८, व्यंकोजी से समझौता ३००
कल्याण लिया गया ५२ व ५३, हाथ से निकल गया ५५, दोबारा लिया गया १६४, मुगलों ने लूटा २१३
कवोंजी गूजर—प्रताप राव
काय सावन्त, मृत्यु २५४
कार तलब खाँ पराजित हुआ ८३
कारवार, २२९, २३१, जलाया गया २४०
कारिंजा लूटा गया १७६
कावजी (सेनापति) ३७
कासिम खाँ मियाना ३०६
—सिद्दी २६०, डाँडा (दाँदा) पर पुनः अधिकार किया २६१
कुतुब शाह, देखिए अबुल हसन
कुतुबुद्दीन खाँ खेशगी ११५, वीरता २१३
कुदाल देसाई, २२३-२७, ३४५
कुनबी जाति, ११
कृष्णाजी भास्कर, ६४
कोंकण, प्रथम आक्रमण ५३, में युद्ध ८२, एक भाग पर शिवाजी ने अधिकार जताया १२३
कोन्दाजी फर्जन्द, पन्हाला पर अधिकार किया १९१
कोन्दाना लिया गया ३४, वापस किया गया ३७, पुनः लिया गया १६४ (सिंहगढ़)
कोपल ३०६-०७
कोल्हापुर २१३, २१५
कोली प्रदेश, अधिकार किया गया १८४
खंदेरी टापू, शिवाजी ने अधिकार किया २६७, के लिए युद्ध २६७-६९
खवासखाँ प्रथम १६
द्वितीय ५६, १९०, कुदाल में, २२४-२६, गद्दी से उतारा गया २१५, २७६, युद्ध २२४, हत्या की गयी २७९
खाँडोजी खोपड़े (अफजल की सहायता की) ५८, ६८
खानदेश पर धावा १७६, १८८, ३२३
खाने-जमा (बरार का) १७७
खान मुहम्मद, वजीर, हत्या की गयी ५६, किस प्रकार ६३
खिज्रखाँ १९५, २४०, हत्या की गयी २७९
खेलोजी भोंसले, मुगलों द्वारा मारा गया ३१
गल्लीवत २४९-५०, व्यूह कौशल २५०
गाईफर्ड, पी० ३२८-२९
गागा भट्ट २०१, तांत्रिकों द्वारा उपेक्षित २०९
गुराव २४९, व्यूह कौशल २४९-५०
गोआ, शिवाजी ने आक्रमण करने की योजना बनायी २३३, में देसाई शरणार्थी ३४४
गोपीनाथ, देखिए पंताजी गोपीनाथ

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

गोलकुंडा, देखिए अबुल हसन
घोरपड़े, वध २२५
चन्दौर पर्वत-श्रेणी में युद्ध १८१
चन्द्रराव, देखिए मोरे
चाकन ३३२, शिवाजी ने प्राप्त किया ३३५, शाइस्ताखाँ ने अधिकार किया ८१-८२
चारण या भाट, गौंधाली ७०
चौथ, उत्पत्ति ३४७, प्रभाव ३५०-५१
छत्रसाल बुन्देला, शिवाजी से भेंट की १८०
जंजीरा, देखिए सिद्दी
जजिया, शिवाजी का पत्र इसके विरुद्ध ३१४-१७
जमशेद (सिद्दी) ने बीजापुर सौंप देने का विचार किया ३०४
जयपुर अभिलेख, मूल्य १३६-३७
जयसिंह, दक्षिण में नियुक्ति १०३, चरित्र १०४-०५, शिवाजी के विरुद्ध युद्ध योजनाएँ १०५-०८, पुरन्दर अभियान ११०-२२, बीजापुर पर आक्रमण १२५, शिवा को आगरा भेजा १३२, शिवा के प्रति चिन्ताएँ १५१, मृत्यु १५९
जव्हार लिया गया १८४, १८६
जसवन्तसिंह शाइस्ता के साथ ९१, कोन्दाना का घेरा डाला १००, चला गया १०४, शिवाजी के विरुद्ध राजधानी में १४१-४३, दिलेर के विरुद्ध १६९-७७
जादवराव १४-१६, पोता १८६
जान मुहम्मद (फकीर) ३२०
जालना लूटा गया ३२०
जावली का वर्णन ३९-४०, अधीन हुआ ४१
जिंजी किला २७६, अधिकृत किया २८८
जीजाबाई, विवाह हुआ १४, त्याग दी गयी १९, पुण्यशील चरित्र ३०, शिवा को वरदान दिया ६५, शिवाजी के राज्याभिषेक पर २०२, मृत्यु २०९
जीव महाला ६५, ६७
जुन्नार किला—शिवनेर
जेधे कान्होजी २७, ५८, नागोजी ३०७
जौहर (सिद्दी) ने पन्हाला में शिवाजी का घेरा डाला ७६
तंजौर २७३-७५
तांत्रिक राज्याभिषेक २०९-११
तानाजी मालूसरे २७, ८५, मृत्यु १६४
तिकोटा, दिलेरखाँ द्वारा लूट, ३१९
तिरुमाला वादी में शिवाजी २९२
तिरुवादी में शिवाजी २९१
तुकाबाई मोहिते, विवाह हुआ १८
तेलिंगाना पर छापा १८७
तोर्ना लिया गया ३३
दाँदा-राजपुरी २५२-५४, २६१
दाऊदखाँ, शिवाजी के विरुद्ध ११४-१८, १६५, दिन्दोरी में १७४, १७७, अभियान १८०, उसका पुत्र जसवन्त के विरुद्ध १७७
दादाजी कोंणदेव, नियुक्ति १९, २०, पूना जागीर को सुधारा २२, माल-गुजारी प्रथा २३, मावलों पर नियन्त्रण २६ मृत्यु ३१
दाभोल पर अधिकार किया गया ८४, २१९, बीजापुरियों ने वापस लिया २३१
दिन्दोरी का युद्ध, १७४-७६
दिलेरखाँ पुरन्दर में १११-२२, शिवाजी ने भेंट की १२४, शिवाजी की हत्या करने की योजनाएँ १२९, मुअज्जम से झगड़ा किया १५९, १९६, शिवा के विरुद्ध अभियान १८२, १९६, वापस बुलाया गया १९६, मसूद के विरुद्ध ३०९, शम्भू जी को फुसलाया ३११, भूपालगढ़

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

पर अधिकार किया ३१३, बीजापुर पर आक्रमण किया ३१८
दीरी, घेरा हटाया गया ८६
देसाई, सावन्तवादी के २२४, गोआ में २२६, ३४४
दौलतखाँ (एडमिरल) २५६ टि०, २६३-६६, युद्ध २६७-७१
दौलताबाद पर शाहजहाँ का कब्जा, १६
धरनगाँव, लूटा गया २१३, ३२३, हर्जाना नहीं दिया गया ३४१
धार्मिक गुरु ८, शिवाजी की सबके प्रति धार्मिक सहिष्णुता ३६०-६१
नामदारखाँ, मीरा में आक्रमण हुआ ८६
नायक, वेदनूर के २२१ और टिप्पणी
नासिर मुहम्मद (जिंजी का) २७६, २८८
नासिरीखाँ, शिवाजी को हराया ५०
निम्बालकर (फाल्टन का) १४, अफजल ने जुर्माना किया ५६, विवाह ३२५
निश्चलपुरी, तांत्रिक पुरोहित २०६-११
नीलकण्ठराव (पुरन्दर का) ३७-३८
नेकनामखाँ १७८
नेताजी पाल्कर, सेनापति ५६, ६४, ६७, मुगलों द्वारा पीछा ८७, ८८, धावे ११६, 'द्वितीय शिवाजी' १२६, शिवा का साथ क्यों छोड़ा १३०, मुस्लिम बना लिया गया १५४, पुनः हिन्दू बनाया गया २८०, धावा २२०
नेसारी का युद्ध १६३
नौसेना (शिवाजी की), उसकी उत्पत्ति के कारण २४२, उनके नौसेना अड्डे और डाक २४४, घेरिया २४४, मालवन २४५, सिंधु दुर्ग २४६, नौसैनिक कबीले २४७, युद्ध-कला २४८, वास्तविक दुर्बलता २४८, जहाजों के वर्ग २४६-५१, शिवाजी की नौसेना की वृद्धि २५५-५६, व्यापारी बेड़ा २५६, सिद्दियों से युद्ध २५७-७१, पुर्तगालियों से युद्ध २५६-६०, अंग्रेजों से युद्ध २६७-६८
पट्टा—विश्रामगृह
पन्ताजी गोपीनाथ ६४-६६
पन्हाला, शिवाजी का प्रथम अधिकार ७५-७६, शिवाजी भीतर घिर गये ७६, शिवाजी आक्रमण करने में असफल हुए १२६-३३, उसे ले लिया १६१, किलेबन्दी की गयी ३२२
परमानन्द कवि ३८६
पल्लीवाना (पलावना) ८४
परेंदा मुगलों को बेचा गया ८३
प्रभावली (शृंगारपुर) ८४
प्रतापराव, सेनापति नियुक्त किया गया १६१-६२, उमरानी १६२, नेसारी (मृत्यु) १६३-६४
प्रतापगढ़ किले का निर्माण ४३
पार्ली लिया गया १६१, में रामदास ३६१
पीताम्बर शेनवी ३४७
पुर्तगाली २३३, (फौंदा) २३८, नौ-युद्ध २६०, शम्भूजी ने आक्रमण किया ३०५, शिवाजी के प्रति सम्बन्ध ३४३-४८, शिवाजी से सन्धि ३४६-४७, के ऐतिहासिक अभिलेख ३६२-६३
पुरन्दर किला, शिवाजी द्वारा अधिकार ३६, वर्णन ११२, घेरा ११३, की सन्धि १२२, शिवाजी ने पुनः ले लिया १६५
पूना, शाहजी की जागीर २०-२३, वर्णन १०६, विच्छिन्न दशा २१-२२, दिलेर द्वारा कत्ले-आम १८२
पेदगाँव—बहादुरगढ़ ५३, वर्णन १८६, लूटा गया २१२
पेन, लूटा गया ८६

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

फजलखाँ (अफजलखाँ का पुत्र) ६८, ७६, जयसिंह से मिल गया १०७, पराजित किया गया २१६, २२३
फतहखाँ, आदिलशाही ३७
निजामशाही १५
सिद्दी २५३, २५४, निर्वासित किया गया २५८
फिरंगी नर्सल, चाकन का ८१
फौंदा, घेरा असफल हुआ २३२, २३७, अधिकार किया गया २३६
बाँकापुर (बाँकपुर) १६५, २२०, लूटा गया २३६
बंगलौर, शिवाजी का घर २१, जीजाबाई का आगमन २१, रक्षा की गयी ३७
बगलाना पर धावे १७६-७८, २१३
बरार पर धावे १७६, १८८
बसरूर लूटा गया २२८
बहलोलखाँ, उमरानी में १६०, नेसारी में १६३, लड़ाइयाँ १६४-६५, राजपता पर बलात् अधिकार किया २१५, बेदनूर के विरुद्ध २२३, कनारा में २३५-३६, मृत्यु २३०, (इसी नाम का दूसरा आदमी) मृत्यु ३०४
बहादुर-गढ़—पेदगाँव, जिसे देखिए
बहादुरखाँ, शिवाजी के विरुद्ध अभियान १६६, १८२-८४, १८६-८८, उसका शिविर लूटा गया २१२, शांति के गलत प्रस्ताव द्वारा मूर्ख बनाया गया २१३, घूस दी गयी २८०
बाजी चन्द्रराव, देखिए मोरे
बाजी घोरपड़े, शाहजी को कैद किया ३५, बध किया गया २२५-२६
बाजी पासलकर २७, मृत्यु २५४
बाजी प्रभु, मृत्यु ७७
बार्सिलोर, देखिए बसरूर
बीजापुर, औरंगजेब ने आक्रमण किया ४७-४८, मन्त्रियों में परिवर्तन १६०, शिवाजी से मैत्री २१६ व ३०४-०५, में अव्यवस्था २३७, राजनीति २७६, मसूद ने अधिकार किया ३०४, गोलकुंडा से मित्रता ३०८, अधिकृत करने के लिए मराठा षड्यन्त्र ३११-१२, शिवाजी ने सहायता दी ३१७, दिलेर ने नष्ट किया ३१६
बुरहानपुर, धावा १७६
बेदनूर, नायक २२१, २४०-४१, कनारा भी देखिए
बेलवाड़ी, देसाइन घेरी गयी, ३०४
बेल्सर, बीजापुरी अड्डा ३७
बोनागीर-पत्तन २६१
भद्राप्पा नायक (बेदनूर का) २२२, २२३
भवानी का मन्दिर ४३
भीमगढ़ २३०
भील, रामनगर के २१२
भूपालगढ़, गोलाबारी की गयी ३१३
भौंसले परिवार, आद्य दशा १३, क्षत्रिय घोषित किया गया २००
मंगलवीर, मुगलों ने लिया ३१८
मन्त्री, शिवाजी के २१-२२, ३२-३३, ५६, ३५२-५५
मदन्ना (वजीर) २१६, हिन्दू नीति २७७, शिवा के पक्ष में २८१
मदुरा के नायक २७४-७७, लूटे गये २६२
मनोहर दास गौड़ (महूली), १६५-१६६
मराठा जाति ११, मराठा सरकार, उसका प्रभाव ३६२ और ३६५, मराठा असफलता के कारण ३६६-७४, मराठी भाषा १, ६-१०, साहित्य ६, एकाकी जीवन ३, सैनिक जीवन अंगीकार किया ४, चरित्र ५-१२, दोष १२
मराठा नौसेना, देखिए नौसेना
मराठी अभिलेख, आलोचना ३८३-८४, की सूची ३८८-८६
मलिक अम्बर, देखिए अम्बर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

मसूद (सिद्दी) शिवाजी के विरुद्ध २३२, राजप ३०४, उसकी कठिनाइयाँ ३०६, शिवाजी से अभ्यर्थना की ३०६, ३१७
महादेव पहाड़ी, देखिए शम्भु महादेव
महाबतखाँ, शिवाजी के विरुद्ध १८०-८२, दकन छोड़ा १८३
महाराष्ट्र, विस्तार १, वर्णन १०६, वर्षा २, फसलें २-३, गाँवों का एकाकीपन ३, पहाड़ी किले ५, संत ८, मेले ८-९, देखिए मराठा
महूली, लिया गया ५५, पुनः लिया गया १६५-६६
मालोजी भौंसले, जीवन १४, दान १५
मार्टिन (फ्रेंकोई) का शिवाजी से पत्र-व्यवहार ३०१
मावल जाति और शिवाजी २७, २८५
मावल देश २५, समाज २६, जीत लिया गया २७
मास्टर (स्ट्रीएन्शम), सूरत की रक्षा की १६९-७०
मियाना लोग १७५, ३०६-०७
मिस्री (सिद्दी) शिवाजी से मिल गया २६६
मीनाजी भौंसले ४८
मीरा डोंगर ८६
मुंगी-पेंठन, लूटा गया ३०८
मुअज्जम (शाहआलम) दकन में ९१, सुस्त १००, दिलेर से झगड़ा किया १६०-६९, शिवाजी से सुलह की १६१, औरंगजेब ने सन्देह किया १६७, १७४
मुधोल हत्याकाण्ड २२६
मुरादबख्श, शिवाजी को पत्र ३५-३६
मुरार बाजी, मृत्यु ११९
मुरारी जगदेव, शाहजी का आश्रयदाता १६
मुल्हीर १७८, अधिकार किया गया १८३
मुल्कगीरी ३६५
मुस्तफाखाँ ने शाहजी को गिरफ्तार किया ३४
मुहकमसिंह, कैदी १८३
मुहम्मद आदिलशाह, बीमारी ३३, मृत्यु ४८
—इखलास (खवास का भाई) २३१
मेलोडि, जयसिंह के पुर्तगाली एजेण्ट १०६
मोरे परिवार ४०, सदस्य मारे गये ४२, बाजी चन्द्रराव मोरे ४२ और ४५, जयसिंह से मिल गये १०७-४५
मोरो तानदेव होणप २३
मोरो त्रिम्बक पिंगले ५६, ६७, बगलाना में १७८, १८३, सूरत को धमकी दी १७४ व १८५, १८६, २१६, राजप के रूप में रहा ३०६
याकूतखाँ, सिद्दी सरदारों की सामान्य उपाधि २५९
यूसुफखाँ, शिवाजी के विरुद्ध ५१
येसाजी कंक २७, ५६, २८३, २८६
रघुनाथ बल्लाल कोर्डे, सब्निस ३३, मोरे को मार डाला ४१, मुराद के पास भेजा गया ३६, औरंगजेब के पास ५२, आगरे में १४९ टि०, सिद्दी के विरुद्ध ५३, २५४
रघुनाथ नारायण हनुमन्ते (तंजौर) २७८, २९८-०२
रनमस्तखाँ ने शिवाजी से युद्ध किया ३२१
राघो बल्लाल आत्रे, जयसिंह के पास भेजा गया १२१
राजगढ़ का निर्माण ३३
राज्य-क्षेत्र शिवाजी का, विस्तार ४३-४४, ५४, ५५-५६, १९७, २३२, ३४९-५०
राजापुरी, देखिए डाँडा (दाँदा)
रामदास स्वामी ३११, पार्ली में ३६१
रामनगर (कोली) १८४, १९७,

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

राजा निर्वासित किया गया २१६
रायगढ़ प्राप्त किया गया ४२, राज्याभिषेक का जलूस २०८
राजापुर, प्रथम लूट २१६ व ३२६, दूसरी लूट ३२६, अंग्रेजी व्यापारी कैदखाने में ३२६-३२, अंग्रेजों ने हर्जाना माँगा ३३२-३४, अन्त में नगर शिवाजी ने ले लिया २२३
रुद्रमल—वज्रगढ़
रुस्तमे-जमाँ प्रथम २० व ८७, शिवाजी द्वारा पराजित २१८-२०, बर्खास्त किया गया २२३, विद्रोह किया २३४, (राजापुर) ३२६
—द्वितीय, शिवाजी के विरुद्ध २३७
रेविंगटन (हेनरी) शिवाजी के विरुद्ध २१६, ३२६-३०
लखम सावन्त, शिवाजी के विरुद्ध २२०-२७, गोआ में शरणार्थी के रूप में ३४५
लगान व राजस्व व्यवस्था, दादाजी की २३, शिवाजी की ३५८-६०
लाखजी जादव १४, हत्या की गयी १६, लोदीखाँ १६५
वज्रगढ़—रुद्रामल
वाकनीस बखर ३८४
वलीगन्दपुरम् २७६, २६०
विंगुर्ला १६७, २१८, लूट २२७, २३१
विक्रमशाह १८४, १८६
विठोजी भौंसले १४, पुत्र १५ टि०
वेरुल—इलौरा
वैलोर का घेरा २८७, पतन २६७
वृद्धाचलम् में शिवाजी २६६
व्यंकोजी भोंसले ने तंजौर जीता २७५-७८, शिवाजी से भेंट २६३-६४, युद्ध पुनः आरम्भ किया २६८, प्रशंसा की गयी ३०२
व्यंकोजी दत्तो २५५
शम्भूजी भौंसले (शिवाजी का सबसे बड़ा भाई) १७, २१, ३७
शम्भूजी (शिवाजी का सबसे बड़ा पुत्र), पैदा हुआ ५६, जयसिंह से भेंट की १२४, आगरे में १४१, आगरे से पलायन १४७-५०, औरंगाबाद में मुअज्जम से भेंट की १६१, शिवाजी के राज्याभिषेक पर २०५, पुर्तगालियों पर आक्रमण किया ३०५, केशव भट्ट ने शिक्षा दी ३१०, दिलेरखाँ से मिल गया ३११, भूपालगढ़ पर कब्जा किया ३१३, वापस लौटा ३२०, चरित्र ३०६, ३११ और ३२३-२४
शम्भूजी कावजी, हनुमंत मोरे की हत्या की ४१, ६७, ८३
मोहिते, पकड़ा गया ४३
शम्भू महादेव पहाड़ी, तालाव १५
शर्जाखाँ, सैयद इलियास २२३, ३०८
शाइस्ताखाँ, दकन में नियुक्ति ७४, पूना पर अधिकार ८०, और चाकन पर ८१, पर रात्रि में आक्रमण ८८-८६, जसवन्त को प्रत्युत्तर ६१, मराठों को हराया २२२
शकावलियाँ, विवेचन १०५, ३८५-८६
शान्ताजी भौंसले, कर्नाटक का वाइसराय २६३, व्यंकोजी से लड़ा २६८-६६
शाह आलम, देखिए मुअज्जम
शाहजी भौंसले, जीजाबाई के साथ किस प्रकार विवाह हुआ १४, उसका परित्याग किया १८-१६, प्रारम्भिक जीवन १५, तुकाबाई से विवाह किया १६, राज्यक्षेत्र (१६३४ में) ३१, गिरफ्तार किया गया ३४, मुक्त किया गया ३७, शिवाजी को अस्वीकार किया ५७, मृत्यु १०१
शिवप्पा नायक (बेदनूर) २२२, २२३
शिवनेर १७, १८६, २१३, ३०८
शिवाजी, जन्म १७, पूर्व इतिहास की अस्पष्टता १७ व १६, बाल्यकाल

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

में शिक्षण १९, पूना की जागीर प्राप्त की २१, विवाह हुआ २१, उनकी शिक्षा २४-२५, उनके मावल साथी २७, उन्होंने किस प्रकार जनता का प्रेम प्राप्त किया २७-२९, वृत्ति का चुनाव ३०, विद्रोही नहीं कहे जा सकते ३२, आरम्भ में किलों पर अधिकार ३२-३४, मुरादबख्श को पत्र ३६, कोन्दाना की रक्षा की ३६-३७, पुरन्दर पर अधिकार किया ३७-३८, मोरों की हत्या ४१, जावली की विजय ४१, राज्य-क्षेत्र का विस्तार ४३ व ५४, अफजलखाँ को मार डाला ६०-७४
औरंगजेब के साथ पत्र-व्यवहार ४८, मुगलों से प्रथम युद्ध ४८-५३, उत्तरी कोंकण पर आक्रमण ५३-५४, प्रारम्भ के मन्त्री और सेनाएँ ५६, पन्हाला में घिरे ७६-७९, दक्षिण कोंकण पर प्रथम आक्रमण ८२-८७, शाइस्ताखाँ पर रात का आक्रमण ८७-९१, सूरत की पहली लूट ९२-९९
जयसिंह से पुरन्दर में युद्ध किया १११-२२, पुरन्दर की सन्धि की १२२-२५, बीजापुर पर जयसिंह के साथ आक्रमण किया १२५-३०, पन्हाला लेने में असफल हुए १३०-३१, औरंगजेब से मिलने के लिए राजी किये गये १३२-३४, औरंगजेब से मुलाकात १३७-४५, आगरे में कैद किये गये १४५, किस प्रकार निकल भागे १४६-४७ व १५४, मुगलों से सुलह की १६०-६१, पुनः युद्ध आरम्भ किया १६३-६६, सूरत की दूसरी लूट १६९-७०, दिन्दोरी की लड़ाई १७४-७५, खानदेश व बरार को लूटा १७७, सल्हीर को लिया १७८, छत्रसाल बुन्देला को सलाह १७८-७९, सूरत को धमकी का पत्र १८५, कनारा अभियान १९१-९५
राज्याभिषेक २०१-११, बीमारी २१५, बहादुरखाँ को मूर्ख बनाया २१४-१५, बीजापुर से मैत्री २१६, दक्षिण कोंकण में २१८, कनारा में २२३, कुदाल में २२३-२४, बसरूर लूटा २२८-२९, फौंदा के विरुद्ध २३१-३२, गोआ के विरुद्ध षड्यन्त्र विफल हुआ २३३, कनारा में षड्यन्त्र विफल हुआ २३४-३५, फौंदा पर अधिकार हुआ २३८-३९
सिद्दियों से संघर्ष २५६-७१, उनकी नौसेना २४७-५१, खन्देरी पर अधिकार किया २६६-६७
कर्नाटक अभियान की योजना तैयार की गयी २७७-७८, कुतुबशाह से भेंट की २८१-८२, श्रीशैल में २८६, जिंजी प्राप्त किया २८७-८८, शेरखाँ को हराया २९१, व्यंकोजी से भेंट २९३, उनके शिविर का वर्णन २९५, मद्रास को पत्र २९६ व ३००, मैसूर में विजयें २९७, घर को वापसी ३०३, वेलवादी का घेरा ३०४, तुंगभद्रा प्रदेश जीता ३०६, बीजापुर से मित्रता की ३०९ व ३१७, औरंगजेब से 'जजिया' के विरुद्ध प्रतिवाद किया ३१४, पुत्रों के लिए योजनाएँ ३१०
बीजापुर की सहायता की ३१७, जालना को लूटा ३२०, शम्भूजी को उपदेश ३२७, मृत्यु ३२४, स्त्रियाँ और बच्चे ३२५-२६, चित्र (२)
अंग्रेज व्यापारियों से सम्बन्ध ३२५-४३, पुर्तगालियों से ३४३-४८, प्रशासन प्रणाली और नीति ३५०-६०, चरित्र और प्रतिभा ३७५-७७, उनकी सेना ३५१-५२ व ३५५-५६, मन्त्री ३५२-५४, सहायक ग्रन्थ ३८३ व अग्रेतर

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

शृंगारपुर पर अधिकार ८४-८५
श्रीशैल २८६
शेरखाँ (कारवार का) २२८-३०
लोदी २६०, शिवाजी से मुठभेड़ २६१, उसका अन्त २६१-६२
श्यामराज नीलकंठ ३२
संत व फकीर, महाराष्ट्र के ८ मुस्लिम फकीर सम्मानित ३६१
सतारा, अधिकार किया गया १६१, शिवाजी ने ऊँचे स्तर पर वार्ता की ३६१
सभासद बखर, अशुद्ध साबित हुआ १३०, ३८४-८५
सम्पगाँव लूटा गया १६५
सम्बल (सिद्दी), मुख्य नौसेनापति बनाया गया २५६, शिवाजी के विरुद्ध २६३, झगड़ा किया २६४-६५, शिवाजी से मिल गया २६५
सल्हीर लिया गया १७८, मुगलों ने घेरा डाला १८२
सलावतखाँ (दकनी) ८३
सिद्दी, देखिए जौहर
सावन्तवादी, देखिए कुदाल
सावित्रीबाई (वेलवादी), लड़ी ३०४
सिंहगढ़, देखिए कोन्दाना
सिकन्दर आदिलशाह, गद्दी पर बैठा १६०
सिद्दी, देखिए फतहखाँ, सम्बल, मिस्त्री, कासिम, जौहर आदि
जंजीरा के ५३, १०७, १३३, २५२-५४, क्रान्ति २५८, शिवाजी से युद्ध २५३-६६
सिद्धोजी निम्बालकर ने शिवाजी का पक्ष लिया ३२१
सूँडा, देखिए कनारा
सूपा (पूना में) ४३
(सूँडा में) २४०
सूरत का वर्णन ६१-६२, पहली लूट ६२-१०२, दूसरी लूट १६६-७३, मराठों द्वारा आक्रमण की धमकी १८५
सैयद बाँदा ६६
सोनाजी पंत ३२, ४८, ५२
सोमशाह (रामनगर का) १८४
सोयराबाई, राज्याभिषेक में सम्मिलित २०५, मृत्यु ३२४
सिंहासनारूढ़ होना, शिवाजी का १६६-११
स्मिथ (ऐंथोनी) शिवाजी के शिविर में ६७, १०१
हंसानी मोहिते—हम्बीरराव
हनुमन्त राव मोरे ४१
हनुमन्ते परिवार, तंजौर में २७६, ३०२
हब्शी, देखिए सिद्दी
हम्बीरराव १६५ टि०, मुख्य सेनाध्यक्ष बनाया गया १६६
हलाल (सिद्दी) ७६, भाग गया १८६-८७
हुबली लूटा गया २२७, २३५, ३०६
हुसैनखाँ मियाना ३०६-०७
हूलगढ़ १७८
हैदराबाद, शिवाजी का आगमन २८१

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

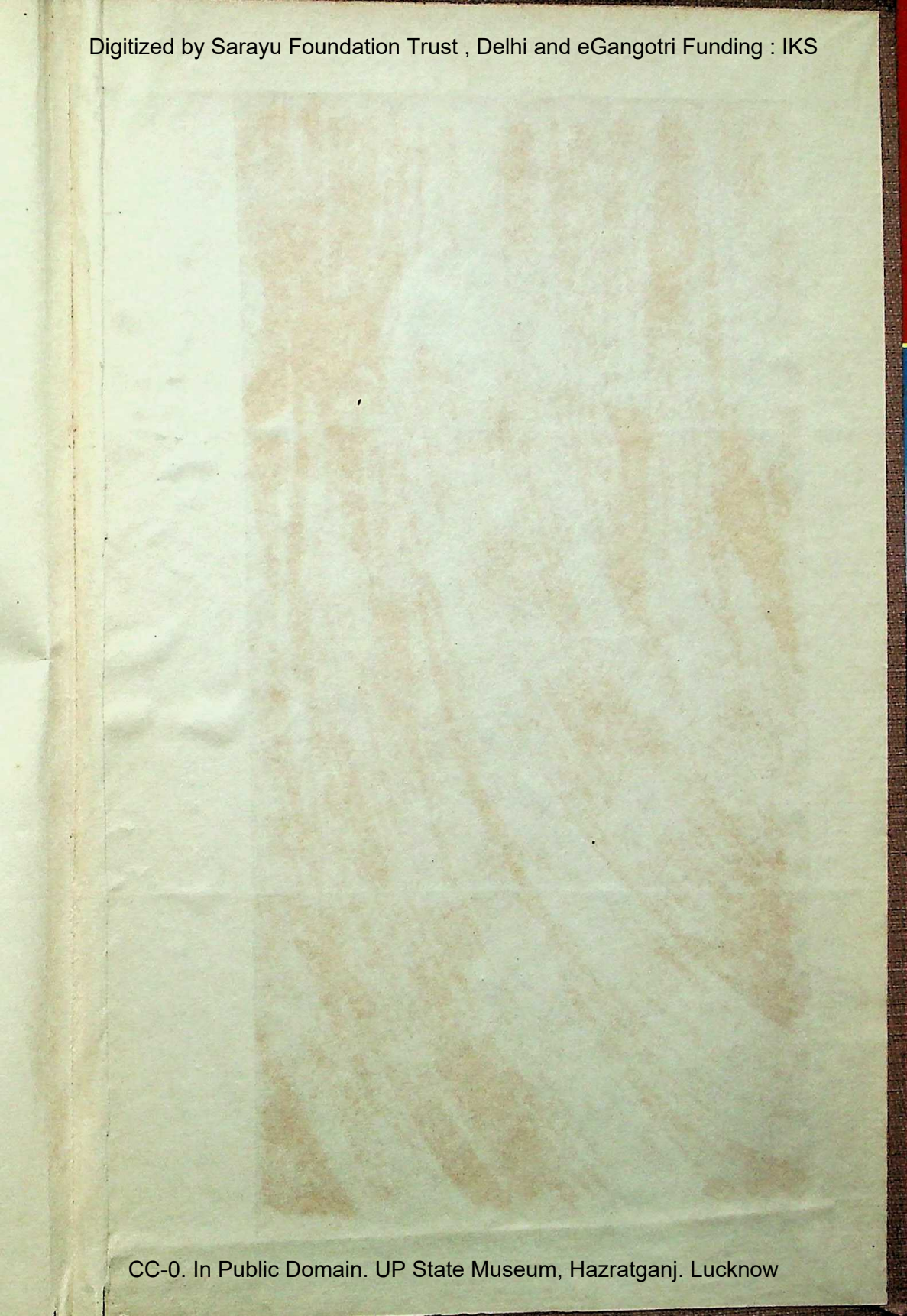

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow

Digitized by Sarayu Foundation Trust , Delhi and eGangotri Funding : IKS

CC-0. In Public Domain. UP State Museum, Hazratganj. Lucknow